खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

अठारहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९४१--४३ ई०]

द्वितीय भाग

संपादक

पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

उत्तरप्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०१५ वि०

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक—महतावराय, नागरी मुद्रण, काशी
प्रथम संस्करण, सं० २०१५, १००० प्रतियाँ
मूल्य [illegible]

विषय सूची

चित में अति बिसवास गहि, गहे भगत की टेक ।
माधौदास कहै प्रभु, टारे विघन अनेक ॥ १० ॥

इति करुणाष्टक संपूरण समापत ॥

विषय—

कृष्ण स्तुति ।

संख्या १६५. दानलीला, रचयिता—माधौदास, कागज—देशी, पत्र—३ (११९-१२१), आकार—७½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

। श्री दाण लीला लिख्यते ।

बरसाणे की भीम काम कुंडल अगवानी ।
बसत्यों । वस्या बीहा नगर में कीरत जाणी ॥
जिण में मध सुहागणी श्री राधा,
जिण को नाँव बन मै मै काकी करो ।
होडग बरसाणो गाँव दान दध को लागे ॥ १ ॥

अंत—

जब तो मोहनलाल ग्वाल सु जगड़ो
माग्यो दान लियो मन भावतो ।
दीनी दगड़े बतायो बीरज में राज सदा करो ।
श्री माधो दास बज जीयें दान दध को लगे ॥

—अपूर्ण

इसके आगे नंददास का एक पद है ।

विषय—

श्रीकृष्ण की दानलीला का वर्णन ।

संख्या १६६. रथलीला, रचयिता—माधोदास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तकप्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

जै जै जै श्री जगन्नाथ रथ विजै मुरारी।
बुद्धि प्रकाशक सदा कृष्ण सेवक सुखकारी ॥ १ ॥
नील गिरिवर सुंदर कृष्ण वृछि विराजे।
सपत द्वीप नवखंड मधि, सब ऊपर आजे ॥ २ ॥
कृष्ण वृष्छि आनंद मूल गुन पलव साखा।
वेद पुराण पत्र चारि ग्यान पुहप सुबासा ॥ ३ ॥

अंत—

कलियुग पाप हारनौ दुस्तर है भाई।
तर्यौ चाहै तो सावधान सुनौ येक सुगम उपाई ॥ १५३ ॥

+ + + +

वैष्णव संगति पाइकै मन भयो प्रकासा।
श्री जगन्नाथ कौ दासानिदासु गावै माधोदास ॥ १५५ ॥

इति श्री रथलीला समाप्त।

विषय—

माधौदास वैष्णव ने श्री जगन्नाथ जी के रथयात्रा का वर्णन सविस्तार किया है। इसमें लक्ष्मी ने विरह दशा में पवन को दूत बनाकर भेजा है।

संख्या १६७. पदावली, रचयिता—माधोदास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति—(प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०७ वि०, प्राप्तिस्थान-म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद (उ० प्र०)

आदि—

श्री हरि गुरू चरनार विंद वंदन करू भाई ॥
अरे मन सुनु परमारथा तुहि कहौ बुझाई ॥
जिहि प्रकार सुष पावही दुष दोष नसाई।
सदानंद जू चाहहु तो सूनो उपाई ॥
प्रथम सुमिरि वृंदावन अति सघन की सोभा।
भ्रमत मधर कुसुमावली मकरंद कीजोभा ॥

चलति लहरी यमुना जल सीतल द्रुम छाहीं।
सारस हंस मयूर आदि तहँ निर्ति कराहीं॥
कूजति कोकिल कलरवा सुनतै सुष पाईय।
तिहिं मैं कल्पद्रुम उतंग बहुरंग बिसाला॥
पत्र महा मर्कत मनी नव पल्लव प्रवाला।
हीरा मुक्ता जु पुहुप कली पदुमराग फलफूलहीं।
अमी बूंद संतत झरहिं ताप तिर हरहीं॥
सकल काम पूरन करै तिहि निगम बषानैं।
आलस तजि जे चिंतवहि तिहि को मनुमानै॥
तातर कंचन भूमि है मानिक गच ढारी।
सु कुसुम रेनु रंजित भई पट उर्मक हारी॥
तिहि ऊपर जो ... ... ॥

अंत—

॥ राग बिलावल ॥

राम नाम सब धर्म हमारे॥

प्रणत पाल चिंतामणि माधो नारायण गुण कर्म विचारे।
षट कर्म सहित वेद विदित व्रत सब कृत कै अभ्यागत पाले।
सोमपालजल मगन सीत रूत पंच अगिन ग्रीषम तन जाले।
इंद्री दमन भवन तजि वन बसि गया पिंड दै द्वै कुल तारे॥
'माधवदास' भक्ति बल जिनके जगते हरि के पास निन्यारे॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में माधोदास के राम और कृष्ण विषयक कुछ फुटकर पद हैं।

संख्या १६८. मनोज लतिका, रचयिता—माधोसिंह (उपनाम—छितिपाल, स्थान—अमेठी, अमेठी के राजा), कागज—आधुनिक, पत्र—४४, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३६, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १६१३ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), ना० प्र० स० काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः श्री वाले कवित्त।

आदि न अंत न मध्य कहं कर वर बेद विचार बखानत बानी।
ब्रह्म महेश रमेस दिनेश सुरेश भजै मुनि आतमज्ञानी।

विश्व रचै परिपोषन कै विनसै छन में गति जात न जानी ।
छोड़ि सबै "छितिपाल" रटै यह पूरन ग्रंथ करो महरानी ॥ १ ॥

तूलतम तामस के तारन तरनि त्रयताप के हरन वेद विविध विचारे हैं ।
छवि 'छितिपाल' छापवे कों छपानाथ द्वंद वंद के बंधैया मैया भृगु मुनिवारे हैं ।
चारि फल फलनि फबीले जदुनाथ हाथ दासन दिपति दने अवनि अधारे हैं ।
आनंद करन वोप अंजन हरन असरन के सरन अंब चरन तिहारे हैं ॥

सूरज कुल कछवाह ते प्रगट्यो बंधुल गोत ।
अरि तम दारन हित कह्यो दूनो भाव उदोत ।
रतनाकर सो कुल विदित विदित रतन मे भूप ।
प्रगट भयो 'छितिपाल' तहँ 'माधोसिंह' अनूप ॥

देश अमेठी पाइ रामनगर वर वाटिका रही सघन झलराइ ।

यह मनोज लतिका ललित गुन³ भू¹ पंडस⁹ चन्द¹ वत्सर पावन जानिये ।
गुरु वासर आनन्द माघ शुक्ल तिथि पंचमी २ दोहा

अंत—

कोऊ कहै निज वुद्धि उदै इन मत्त मतंगन की गति भानी ।
कोउ कहै लखि वात की चाल मरालन की अवली सकुचानी ।
यौंही अनेक कुतर्क करैं छितिपाल यही मन में अनुमानी ।
मंद चलै किन चंद मुखी पग लाषन की अँखिया अरुझानी ॥ २२५ ॥
नेकु नहीं रज की रज में दुति रंचकऊ नहिं हेम तमाल में ।
है नहीं केतकी केसरि में 'छितिपाल' कहाँ दुति वीजुरी जाल में ।
सोन जुही अउ चंपक में रुचिराई नहीं मनिमाल विसाल में ।
नीकी प्रभा तन तीकी लसे अति फीकी लगै दुति इंद मसाल में ॥ २२६ ॥

केसन के भार लंक लचत मृनाल गति अंगराग भारन उरोज सिथिलाई है ।
'छितिपाल' तैसियै रुचिर वरुनी के भार कछु खुले द्रिगन विचित्र अरुनाई है ।
सीकर प्रसेदऊ को सहिना सकन नेकु अधर सुरंग रंग भार गरुवाई है ।
चलैना उपाय प्रिय पास जाय हाय जेहि जाव को भार पाय पाय भर पाई है ॥२२७॥

इति मनोज लतिका ग्रंथ संपूर्णम् ।

विषय—

नख शिख का वर्णन किया गया है ।

संख्या १९९. मानबतीसी, रचयिता—मानमुनि, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७३१ वि०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर (राजस्थान)

आदि—

॥ अथ मान बतीसी लिखते ।

बुधि बचन बरदायनी, सिद्धि करण श्री काम।
सारद सौ माननि सुमिरि, हिय के पूरण हाम ॥ १ ॥
राग, सुभाषित, रसनिरस, तिहुअन में ए गूढ़।
जे जोगां सर जंगल, न लहै ले के मूढ़ ॥ २ ॥

\+ \+ \+

मन हरनी मृग लोचनी, स्यामा सुंदर वेस।
योवन मद भरि युवत सुं, पुलकित मदन विशेस ॥ ७ ॥
रमनी रूप के भेद हुइ, है गूढ़ फुन गूढ़।
ताको वर्णन 'मान' कवि कहि समझावे मूढ़ ॥ ८ ॥

मध्य—

इति श्री मान मुनि विरचितायाँ सयोग द्वात्रिंशकायां नायिका नायक योरन्योन्य प्रबंध चतुर्विध मिलन द्वितीयो न्यादः ॥

अंत—

सवैया

कामातुर कंत निज सनमाधि कननी को।
ले गयो पकरि बाँह सुख में सदन में।
दीपक सतेज आछी फूस नवी सेज परि।
हेत्र करि लीनी दीनी बीटिका बदन में।
वो गंध्रक देव जैसे मानत देखे सवाइ दोर।
रस राति राचे माचे मदन में।
मन हाम कांम पूरे प्रान प्रति नायिका।
सौ मिलि कै सफल जाने जीवित सुदिन में ॥ ३१ ॥

आदि सुराग सुभाषित सुंदर रूप अगूढ़ पुनि गूढ़ बत्तीसी ।
पंच संयोग कहे तनंतरि प्रीति कीरीत बखान रतीसी ।
संवत चंद[1] सिवाक्ष[3] समुद्र[7] शशियुत[1] वर्ष विचार इसीसी ।
चैत्र सिता तिथि छट्ठि गिराधिप 'मान' रचि यूं संयोग बत्तीसी ॥७७॥

॥ इति श्री मान बत्तीसी संपूर्ण ॥

विषय—

जैन मानमुनि ने स्त्री पुरुषों के संयोग का वर्णन—रात्रि, दीपक, शृंगार, नेत्र और मिलनादि—७७ सवैयों और दोहों में किया है ।

इसमें तीन उन्माद हैं पर प्रथम उन्माद के आरंभ का संकेत नहीं किया है ।

अंत में नाम 'संयोग बत्तीसी' है, पर पुस्तक के आरंभ में नाम 'मान बत्तीसी' लिखा है ।

संख्या २००. बाणियाँ, रचयिता—मीड़कीपाव । इनकी बाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र ।

संख्या २०१. शाहीदतुल तहकीक, रचयिता—शाह मीरान जी, कागज—देशी, पत्र—७०, आकार—८'५×५'४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४८७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत डा० मुहम्मद हफीज सैयद, १३, चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

गुफ्तार हजरत पीर दस्तगीर शाह मीरानजी तोहीद बारी ताला

विस मिल्लाह अर रहमान—अर रहीम तू सुभान
तूं दाना और बीना—तू सब तेहीं तैं तवाना
ये सबही आलम तेरा, तू राजिक सबही केरा
तुझसें और न कोई—न खालिक दूजा होइ ।
जे तेरा होय करम—तो टूटें सबै भरम
इस कारन तुझको धाऊँ, और तेरा लेउ नाऊँ ।
तुज नरता कौन जाने—और पूरी सिफत बखाने ॥
है तेरा अंत न पार, किस मुखसों करों अचार
सब हाल तुझ पर माना, तूं राखे क्यों रहना
जो तेरा अमर न जानै, उसने कौन नर मानै ।

(मुहम्मद साहब की तारीफ)

मुहम्मद नबी तेरा—उस पर ईमान मेरा
ना दुरुस्त दें उस बाज—सब आलम केरा ताज
जे उसके रुखों आवे—सो तेरा दरस पावे
इस भूल जे कोई थाके—ते दोजख माहीं राखे
ये नवी तुझ प्यारा—सब उम्मत तें सें सारा
वह नवी अव्वल नूर—बस आलम ये मामूर
तूरानी अहमद नांव—वह अच्छा जौक आराम

अंत—

वतोहीद है नरहान--न नफी न असबात।
वहाँ मैं तूँ केरे बात—ना कहने आवे घात।
अरे है कहिया न आवे, ना नहीं कहिया जावे।
यों कत क्योंकर सूझे--जिस कुरवत सोहै बूझे।
एताँ जैसा वैसा तो बूझै अच्छा जैसा।
अब तो सब सुख चाम—सुन तम्मत हुआ तमाम।
हग कहत रहिया नूर, तू शाही शैर जहूर।

तम्मत तमाम शुद किताब शाहदतुल तहकीक व तारीख ४ माह जमादिउल अव्वाल रोज चहार शम्बादर परगना नीलंगा नविश्ताशुद।

विषय—

'शाहीदतुल तहकीक' का विषय तसव्वुफ, अर्थात्—सूफी दर्शन है। इसमें क्रम से ईश्वर की वंदना, मुहम्मद साहब की प्रशंसा, गुरु या पीर का स्मरण और उपदेशों का वर्णन है।

संख्या २८२. १—अयोध्या पचीसी, २—मिथिला पचीसी, रचयिता—बारैठ मेदरामजी, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—८¾ × ६½ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६ परिमाण (अनुष्टुप्)—१६१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९७६ वि०=१९१९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी, सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

अथ अयोध्या पचीसी बारैठ मेदजी कृत लिख्यते॥

कवित्त

जौ हौं देस देस को नरेस तौहू वेष वृथा,
सुख कौं न लेस क्यों सुरेस की समृधि मैं।
मानि कथा काची सब राची हू न बुधि मेरी,
सरनि विचारि सांची जाँची यह निधि मैं।
मधुर मनोग्य नीर सरजू को मान करूं,
ध्यान धरौं रावरौं विहाँन साँझ मधि मैं।
और ठां कौ छत्रधारी कीजिये न रामदेव,
पत्रधारी करो तौ हू कीजिये अवधि मैं ॥ १ ॥

अंत—

ससि की ज्यूँ उमेद चकोरनि कै
जलधार उमेद ज्युँ चातुकही मैं।
रवि को ज्यूँ उमेद मलयंद कैं ज्यूँ
उनमत्त भ्रमै निस द्यौस छती मैं।
मकरंद उमेद मलयंद कैं ज्यूँ उनमत,
भ्रमैं निस द्यौस छती मैं।
जिसे ब्रह्म उमेद ज्यूँ वेदन की मिथुला,
की उमेद गुमेद के जीमैं ॥ २५ ॥

इति श्री मिथुला पचीसी वारैठ जी मेदराम जी कृत संपूर्ण समाप्तं ॥

मिति कार्तिक वदी ९ बुधवार लिषितं माचादी मझे। यह पुस्तक जैपुर की आई पुस्तक से लिषी गई ॥

मिती कुवार वदी ८ भौमवार सम्वत् १९७६ ॥ तारीख १७ सितम्बर १९१९ ईस्वी लिखा पंडित सूर्य्यनारायन मिश्र ॥

विषय—

अयोध्या और मिथिला की महिमा का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—'अयोध्या पचीसी' और 'मिथिला पचीसी' अलग-अलग रचनाएँ हैं। ये निम्नलिखित रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं:—

१—कुछ संस्कृत रचनाएँ
२—रसखान के कवित्त

३—श्रीकृष्णस्तोत्र—मिश्र सुखलाल

४—कलि पचीसी—पदमाकर

इनका उक्त हस्तलेख 'रत्नाकर संग्रह' (का० ना० प्र० स०) में है।

संख्या २०३. नेमनाथ ब्याहला, रचयिता—मोहनलाल, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—९¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

॥ ६० ॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

गोयम गण धर पै नमों सुगुरू नाम सुन सीस ।
नेम नाथ राज मती नाम जप निस दीस ॥ १ ॥
समुद्र विजय के परम लाडले आदव वंस दयाल ।
तोरण आए नेम जी पाए मोहन लाल ॥२॥जल॥
थड़ से ब्याहन आये नेमनाथ कुमर जी ।
समुद्र विजइ के परम लाडले विधना आप पढ़ाये । ने ॥ना०॥३
सोलंसहस मिल फगुवा पेलैं कालिंदी तट न्हाए ।
मुष विकस्यो सतभामा जी देप्यो अनुचिन ब्याह मनाये ॥ने४॥
समुद्र विजैमिन कृस्न मता कर चहुँदिस दूत पठाए ।
उग्रसेन लिष पतियाँ भेजै जानी सरम बुलाए ॥नेम०॥५॥

॥ दोहरा ॥

अपनी वंस संभाल कै अपना आप संभार ।
व्रत ले ले सोई गिरे भ्रम अनत संसार ॥ २४ ॥
तू तो मूरष दिपया संगी पाषंड करै बहुरंगी ।
लीन्हो जिणवर का उपदेसा कीयो संजम माहि प्रवेसा ॥२५॥

॥ दोहरा ॥

बचन रूप अकुस कियो मस्त दियो अहार ।
मन महिमता फेरियो चमक्यो चित्त उदास ॥ २६ ॥

विषय—

नेमनाथ की विवाह कथा का वर्णन ।

संख्या २०४. फूल बत्तीसी, रचयिता—मोहन सुंदर, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

दोहा

अवर कुणहै बापड़ो, जाकूं दीजै भार ।
सोई श्ररगै केवड़ो, जामे वास अपार ॥ १ ॥
जाकी बास सुहामणी, नंद मनरथो लुभाय ।
फागुण मास फूली रही, सदा सुरंगी जाय ॥ २ ॥
देख छबीली नायिका, रमा कानजी फूल ।
जाराो अगण मोगरो, वाय पास धनफूल ॥ ३ ॥

अंत—

नव रंग रंग सुरंग है, देही लागौ रंग ।
ए तो फूल की बासना, लेणौं कान्ह को रंग ॥ ३१ ॥
सन फूलन की मालकर, राधा हरि को नाम ।
'मोहण सुंदर' कहत है, मन धारी चित्राम ॥ ३२ ॥
समाप्ति इति श्री फूल बत्तीसी संपूर्णम् ॥

विषय—

बसंत आदि ऋतु के फूलों के वर्णन के ३२ दोहे हैं। कृष्ण रुक्मणी संवाद और राधा का अंग वर्णन भी है।

संख्या २०५ क. इयारी (यारी) साहब के शब्द, रचयिता—यारी साहब (? स्थान—दिल्ली), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१३½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजारामजी, स्थान और डाकघर—चितबड़ागाँव, जिला—बलिया

आदि—

॥ इआरी साहेब जी के सब्द ॥
॥ रामराग हेली ॥

जोती सरूपी आतमा घट घट रहो समाई हेली ।
परम ततु मन भावनो हेली । नेकु न इत उत आइ हेली ।

रूप रेष का बरनौ हेली। कोटि सूर प्रकास।
अगम अगोचर रूप है। कोउ पावै हरी कौ दास ॥ १ ॥
नयनन्ह आग देषीये रे हेली। तेज पुंज जगदीस हेली।
बाहर भीतर रमी रहो। सो वरी राषी सीस हेली ॥ २ ॥
बाजत अनहद् बसुरी हे। तीनवेनी का तीर।
राग छतीसी होइ रहो। गरजत गगन गंभीर हेली ॥ ३ ॥
कहे 'इयारी' घर ही मीलो। जाकंत षोजत दुरी हे।
आठ पहर नीरषत रही रे हेली। सनमुष सदा हजुर हेली ॥ ४ ॥

॥ राम राग सारंग ॥

विरहनी तुम दीन दीअरा वारु।
बिनु बाती बिनु तेल जुगति सो वीनु दीपक उजीआरु ॥
प्रान पीआ मेरे ग्रीह आयो रची पची सेज सँवार ॥ १ ॥
सुषमन सेज परम तत रसीआ पीअ नीगुंन नीरंकार।
गावहु री मीली आनंद मंगल 'इआरी' मीलीआ इआर ॥ २ ॥

अंत—

॥ राग नट ॥

उडु उडु रे विहंगम चढु अकास।
जाहाँ नाही चाँद सूरज नीसु बासर सदा अगमपुर अगम बास ॥
एते उरध अगाध नीरंतर हरस सोक नाही जम कै त्रास ॥
कहै इआरी उहां वधीक फाँस नाही फल पायो जग मग प्रकास ॥ १९ ॥

\+ \+ \+

विषय—

निर्गुन भक्ति का वर्णन किया गया है।

संख्या २०५ ख. रमैइनी, रचयिता—यारीसाहब (स्थान-देहली), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—११३/४ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा। दाता श्री महंत राजाराम जी, स्थान और डाकघर—बिटबड़ागाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ राग रमइनी इआरी जी कै ॥

घट में पान अपान दु भाई । अरध उरध आवै अरु जाई ॥
लै कै पान अपान मिलावै । वाही पवन ते गगन गरजावै ॥
गरजै गगन जे दामीनी दमकै । मुकुताहल रीमी झीमी तहाँ वरपै ॥
वा मुकुता मह सुरती परोवै । सुरती सब्द मीली मानीक होवै ॥
मानीक जोती बहुत उजियारा । कहै इआरी सोइ सीरजन हारा ॥ १ ॥

साहेब सिरजनीहार गोसाइ । जामें हम सोइ हम माही ॥
जैसे कुंभ नीर बीच भरीआ । वाहर भीतर पालक दरिया ॥
उठत तरंग तहाँ मानीक मोती । कोटीन्ह चन्द सूर की जोती ॥
एक कीरनी का सकल पसारा । आगम पुरुष सभइन्ह सो न्यारा ॥
उलटी कीरनी जब सूर समानी । तब आपनी गती आपुही जानी ॥
कहै इआरी कोई अवरी न दूजा । आपुही ठाकुर आपुही पूजा ॥ १ ॥

पुजा सत्य पुरुष का कीजै । आपा मेटी चरन चीत दीजै ॥
इनमुनी रहनी सकल का त्यागी । नवधा प्रीती बीरह वैरागी ॥
विनु वीराग भेद नही पावै । के तो पढी पढी रची रची गावै ॥
जो गावै ताकी अरथ वीचारै । आपु तरै अवरन्ह कह तारै ॥

अंत—

॥ राम साषी ॥

तारनीहार समरथ है अपर न दूजा कोय ।
कहै इआरी सतगुरु मीलै तौ अचलहीर मर होये ॥

॥ चौपाई ॥

सत्यगुर सत्यपुरुप है अकेला ।
पींड ब्रह्मंड के बाहर मेला ॥
दूरि ते दूरि उंच ते उंचा ।
बाट न घाट गली नाही कुचा ॥
आदि न अंत मध नाही तीरा ।
अगम अपार अति गहीन गंभीरा ॥
कछु द्रीस्टी तहाँ ध्यान लगावै ।
पल माह कीट भृंग होइ जावै ॥

जैसे चकोर चंद के पासा।
ऐसै धरती बसै अकासा॥
कहै 'इआरी' ऐसे मन लावै।
तब चात्रीक स्वातीजल पावै॥ २३॥

॥ राम राग बिलावल ॥

सुन्य का मोकाम मे बेचुन की नीसानी है।
जी की रीरूह ओह अनहद वानी है।
अगम की गम्य नाही झलक पीसानी है।
कहै इआरी आपा चीन्है सोइ ब्रह्मग्यानी है॥ २४॥

विषय—

आत्मज्ञान का वर्णन किया गया है।

संख्या २०५ ग. राम के कहरा, रचयिता—यारी साहब (स्थान दिल्ली) कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१३½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपि काल—सं० १८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री महंत राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जि०—बलिया

आदि—

॥ राम के कहरा साषी ॥

ओंकार अपार भजु तजु अभिमान कलेस।

अलिफ एक अविनासी देव। अविगती अपरंपार अभेव।
ताही धरो धरो ध्यान हजारा। सो सब ठौर रहा भरि पूरा॥ १॥
बे बिनु जिभा सुमीरन करै। उन मुनि सो मन ही धुनि धरै।
पुरन ब्रह्म जहाँ तहाँ आपु। ताही जाय कै कीजै जापु॥ २॥
ते ततु सोधी कै लीजै। मथन करत शोच नाही कीजै।
सुरती नीरती जौ राषै कोई। तौ लव लागै परगट होई॥ ३॥
से साविक दील पोजै देह। बोलनी हार जगत गुर जेह।
घट घट बोले रमिता राम। नाद बरन नरायन नाम॥ ४॥
जीम जुगति बिनु जोग न होई। वातन प्रेम न उपजै कोई।
नाद बरन जो लावै ध्यान। सो जोगी जुग जुग परवान॥ ५॥

हे हद मै हद क्यौ करि रेल। वे हद में मुकुता होय वेल।
सुम्य सहज में रहै समाई। ताका आवागमन नसाई॥ ६॥

अंत—

॥ केकहरा ॥

अलिफ एक हरिनाम विचार। बे भजु वीस्न तारन संवसार॥
ते श्रीभुवन सब घट में राजा। से सावीत जे चीत में साजा॥ १॥
जीम जगत पती हीदै राषहु। हे हलीम होए नरहरी भावहु॥
षे षालक छाड़हू सब झूठा। दाल दयाल सुमीरहु अनूठा॥ २॥
जाल जीव मह राषहु प्रीती। राम सुमीरू मन तजी जगचीती॥
जे जहूद तुम भजु हरि नाम। सीन से चेत जो आवै काम॥ ३॥
सीन सीव संकर भोरा नाथ। साद्स बुरी राषहु साथ॥
जाद् जरूर पाँच परधान। ते तमाम झूठ करी जान॥ ४॥
जे जालीम क्रोध समुझाव। ऐनालम सो रहु सतीभाउ॥
गैन गरूरी बुरा जो काम। फे फाजील जो सुमिरै राम॥ ५॥
काफ कीनाइती हीदैये मानहु। काम अरु क्रोध झूठ कै जानहु॥
गाफ गुरू का सिर पर हाथ। लाम लाज तुम छोड़हु साथ॥ ६॥
लाम अलीफ लाज मन धरहु। हमजा नरहरी सुमिरन करहु॥
ऐइयारी हरी हीए मै राषहु। बड़े इआइ सो सत्यै भाषहु॥ ७॥

विषय—

उर्दू वर्णमाला के 'अलिफ' से लेकर 'ये' तक के प्रत्येक अक्षर पर कविता करके ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या २०६ क. अर्थ पंचक, रचयिता—युगुलानन्य (स्थान—प्रमोदवन, अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—३९, आकार—१० × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९३७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री जानकी जीवनाय नमः

॥ दोहा ॥

बंदौ बाग विहार बलवर घन श्री गुरु दृष्टि।
विमल बोध अविरोध अविरोध मत बरसा वर वृष्टि॥ १॥

श्री सियवर रस रति रसिक परिकर प्रेम निवास ।
बंदौ मन बच काय करि कीजे कृपा प्रकास ॥ २ ॥

श्री श्री अवध अनूप पद असद दमन दिज ध्याय ।
श्री सरजू चित चरन हिय हरन नमो हरषाय ॥ ३ ॥

श्री सुंदर सुखमा सदन पद पंकज सियराम ।
बार बार बंदो हृदैदायक दुति विश्राम ॥ ४ ॥

श्री सर्वेश्वर सियावर अंशी अमल अनूप ।
अंस भूत सब जीव गम लघु दीरघ अनुरूप ॥ ५ ॥

सेषी सहज स्वरूप प्रभु निरउपाधि जिय जानु ।
शेष आपनो रूप गुनि रघुवर भोग्य प्रमानु ॥ ६ ॥

याके ज्ञान विवेक हित हेतु उपनिषत नाम ।
वरन मन हरन जुगल लखु राम ल्रोक अभिराम ॥ ७ ॥

पंच विंश अच्छर मधुर मीत मकार विराज ।
जीव आत्मा परखु तिमि पंच वीश महं साज ॥ ८ ॥

अंत—

युगलानन्य शरन सहज स्वाभाविक सुख गंग ।
धाम वाम चाहत अचल त्यागि कुदेस कुरंग ॥ ८ ॥

चित्रकूट चित्त में बसत श्री कौशल पुर संग ।
अपरलोक सम शोक वम ताते तजो प्रसंग ॥ ९ ॥

सोरठा

जय जय जय सियराम श्री सन्दुक आनंदघन ।
दायक अति आराम अति अच्युत आनंद बन ॥ १० ॥

श्री सरजू तीर तर शुचि निवास शत सुखद सुमिरत सिय रघुवीर ॥ जानि जगत मुद सब सुखद ॥ ११ ॥ श्री श्रीधाम विहाय हाय हमेशे हीय धरू तिहि हित वास सोहाय वपुष रहे लगि अचल करू ॥ १२ ॥

दोहा

श्री श्री जीवाराम सुखधाम गुरुपद कंज ।
ध्याय गाय सियराम गुन अति अनूप मदु मंज ॥ १३ ॥
युगुलानन्य शरन धरयो श्री करुणानिधि नाम ।
श्री प्रमोद बनवास वर दियो हियो आराम ॥ १४ ॥

इति श्री ५ स्वामी सिरताज श्री जीवाराम सुख धामानुगामी श्री युगलानन्य शरन विरचित अर्थ पंचक संपूर्ण सुभमस्तु ॥ मिती माघ वदी १३ संमत् १९३७ ॥

विषय —

श्री राम महिमा संयुत वेदांत प्रक्रिया का ग्रंथ है। यह ६ अध्यायों में है। प्रत्येक अध्याय का नाम 'विवेक' रखा गया है जिनका विवरण निम्नलिखित है : —

प्रथम विवेक

बद्ध लक्षण
मुमुक्षु लक्षण
मुक्ति लक्षण
नित्य मुक्त लक्षण

द्वितीय विवेक

परस्वरूपलक्षण
विभव स्वरूप लक्षण
अंतर्यामी स्वरूप लक्षण
अर्चा स्वरूप लक्षण

तृतीय विवेक

कर्म स्वरूप लक्षण
भक्ति स्वरूप लक्षण प्रपति स्वरूप लक्षण (प्राप्ति)
आचारज निष्ठा लक्षण

चतुर्थ विवेक

अर्थ स्वरूप लक्षण
काम स्वरूप लक्षण
मोक्ष स्वरूप लक्षण
पुरुषार्थ लक्षण

पंचम विवेक

जीव विरोधी }
ईश्वर विरोधी } उपाधि लक्षण
पक्ष विरोधी }
पुरुषार्थ विरोधी

परत्व विरोधी
उपाय विरोधी
पुरुषार्थ विरोधी

और अंतिम छठे विवेक में गुरू के समीप कोशलपुरी में बैठकर राम कथा का श्रवण मनन करते हुए और ग्रंथ निर्माण का कारण दर्शाते हुए पुस्तक समाप्त की गई है।

संख्या २०६ ख. उपदेश नीति शतक, रचयिता—युगलानन्यशरण, (स्थान—अयोध्या) कागज—देशी, पत्र—६, आकार—११¾ × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीता रामाय नमः ॥
अथ उपदेश नीति शतक लिख्यते ।

श्री सीता वर सुगुरू सुचि संत पदुम पद ध्याय ।
बरनो विशद विचार वर नीति सुपथ सर साय ॥ १ ॥
पुत्रपिता संवाद शुभ निर्विवाद अनुकूल ।
प्रश्नोत्तर पावन परम धरम रूप मुद मूल ॥ २ ॥
समन करन प्रतिकूल कुल करन कष्याय निकेत ।
युगला नन्य शरन सुनत होत श्रवस चित चेत ॥ ३ ॥
शूक्षम अर्थ लमत जहाँ तहाँ विचार न योग ।
युगला नन्य शरन श्रवम मिटे मनोमय रोग ॥ ४ ॥
चाह कीजिये कौन प्रति देत मुदित मन होत ।
तन मन पोषन रीति निज धर्म निरतजस जोग ॥ ५ ॥
विमल बोध वारिद जनक कौन संत गुरू नाम ।
युगुलानन्य विचार विनु पढ़त अमित मद साय ॥ ६ ॥

अंत—

समुझे बिना न कीजिये काहू साथ बिगाव ।
सुख बाधा भांतिन अमित ह्वै जैहे जिय जाव ॥ १२० ॥
झगरा बृथा विवाद विधि अपरन धारिय शीश ।
परमारथ व्यवहार मधि बूझिय यह मत बीस ॥ १२१ ॥
विधि निषेध सिरताज सिय राम भुलावन आद ।
युगला नन्य सुजान जन समुझि परिहरें बाद ॥ १२२ ॥

सकल शिरोमणि नाम गुन सुमिरिय वारहि वारू ।
युगला नन्य प्रयास बिन भवजल बारना धारू ॥ १२३ ॥
श्री सरजू तट अघट रस सदन समीप प्रदीप ।
कुटी सुनाम निवास थल कुंड अनूप समीप ॥ १२४ ॥
तेहि सुठौर आसीन ह्वै युगल अनन्य विचारि ।
परमनीति उपदेश मय शतक रच्यो हितकारि ॥ १२५ ॥
विमल बुद्धि युत जौन जन करि है हृदै विचार ।
युगलानन्य शरन अवस पै है प्रभु सुखसार ॥ १२६ ॥

इति श्री ४ सतगुरू स्वामी श्री सर्वोपरि युगलानन्य शरन विरचित उपदेश नीति शतक सम्पूर्ण ।

विषय—

नीति का आश्रय लेकर सूक्तियों के रूप में उपदेश वर्णन किया गया है ।

संख्या २०६ ग. जानकी सनेह हुलाश शतक, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान-अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र – ४, आकार-१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, पूर्ण, रूप – पुराना, पद्य, लिपि – नागरी, लिपिकाल-सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा काशी

आदि—

श्री सीतारामायनमः

अथ जानकी सनेह हुलाश लिख्यते

॥ दोहा ॥

रसिक राज रसराज नव उपदेशक सिरताज ।
वंदो श्री सतगुरु सुपद पंकज परम सुसाज ॥ १ ॥
श्री श्री युगल प्रिया मधुर नाम महा मुद धाम ।
उर दुराय राखत सदा चाखत रस अभिराम ॥ २ ॥
श्री श्री युगल किशोर प्रिय परिकर परम अनूप ।
प्रनमोतिन के पद कमल करन सुमंगल भूप ॥ ३ ॥
रसिक सनेही जे सरस श्री सीतावर खास ।
जिनके पद पंकजन मो महामोद रस रास ॥ ४ ॥
श्री सुवरन सोहन सदन अमित मदन दुति दैन ।
श्री जानकि वल्लभ भजे भाविक भाव सुचैन ॥ ५ ॥

श्री सीता सुचि नाम से सहित सनेह हुलास।
बरनो विशद विनोद हित अहित हरन अनयास ॥ १ ॥
श्री श्री सीता स्वामिनी नाम लोक अभिराम।
प्रीतम प्रेम प्रकाश कर निकर रहस्य आराम ॥ ७ ॥

अंत—

श्री सिय कुंज निवास सजि वाढ्यो नाम विनोद
तेहि थल बरन्यो बरन बर अपर बिसाय समोद ॥ १६४
श्री जानकी नवल चरन जासु यथा रथ नेह
अधिकारी रस रहस्य के सब विविगुन गन गेह ॥ १६५
इति श्री युगल प्रिया सुपद किंकर युगल अनन्य
लिखि सोधन युत ब्याह दिन सरजू तीर सुधन्य ॥ १६६

इति श्री ४ स्वामी महाराज श्री जीवाराम जी के सर्वोपरि प्रान प्यारे कृपा अवतार अखिल जगोद्धारन श्री ४ स्वामी अवध धामी युगलानन्य शरन विरचित श्री जानकी सनेह हुलाश शतक संपूर्ण शुभं ॥

दोहा

मास असाढ सुपक्ष सित संवत सत उन्नीश[19]
पुनः विंश[20] पर युगल[2] धरि तट सरि किला फनोश ॥ १
लेखनीय इह ग्रंथ को रामवल्लभा शरन।
श्री श्री युग्म अनन्य को लघु किंकर तट चरन ॥ २

विषय—

सीता राम की महिमा और नाम जप का उपदेश वर्णन।

संख्या २०६ घ. नवल अंग प्रकाश, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—९२ x ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाय नमः

अथ नवल अंग प्रकाश लिख्यते ॥ दोहा ॥

जयति सीय सर्वेश्वरी कृपा सहचरी चारू।
सुमिरो सहज सनेह सह दरसनि युगल बिहारू ॥ १ ॥

रसिक जानकी बल्लभी तत्सुख रहस निवास ।
बंदो बार हजार पद मंजुल कंज प्रकाश ॥ २ ॥
रसमय मधुर चरित्रतर रामायन सुख कंद ।
बरन बरन प्रति प्रीतिकर कामन कदन कुफंद ॥ ३ ॥
सो समूह सबधि अगम आसय गहर गंभीर ।
बरनि शकत नहि मोरिमति अति लघु पूरन पीर ॥ ४ ॥
केवल श्री सीतारमन सतगुरू सुपद प्रताप ।
हृदे अहेतुक आप सुख देहै कृपा कलाप ॥ ५ ॥
श्री सीता पति ध्यान नव नख सिख नेह-निकेत ।
बरनि बोध अविरोध मत सरसा बोभवसेत ॥ ७ ॥

अंत—

नेह निरूपन करन गुन यद्यपि मोहि न लेश ।
तदपि कही लघु लोल मति विवस कृपा आवेश ॥ १०८ ॥
जै जै युगल किशोर श्री जय जय गुरू रस राज ।
जयति अवध आनंद घन विपिन विनोद विलाश ॥ १०९ ॥
हरि वासर तिथि गुरू सुदिन प्रथम पहर सुचि सार ।
श्री सरजू तट गुफा मधि, विरच्यो विमल बहार ॥ ११० ॥
जेहि थल अमल संदेह कुछ तहाँ बनाइये नीक ।
युगलानन्य विचार करि परे न जाने फीक ॥ ११२ ॥
ॐ श्री युगल प्रिया सुगुरू रसिकन प्रान आधार ।
जिनकी कृपा कटाक्ष से धाम सुवास विहार ॥ ११३ ॥

इति श्री ४ श्री मन्महाराज रसिकाधिराज सिरताज श्री श्री स्वामी जीवाराम जी के सर्वोपरि प्रान प्यारे सुकुमारे परम कृपा पात्र कृपाल सर्व जीवोद्धारन कार औतार सर्वोत्कृष्ट श्री ६ स्वामी श्री युगलानन्य शरन विरचिता नवल अंग प्रकाश रस रास संपूर्ण शुभम् ॥

॥ दोहा ॥

लेखनीय मिद ग्रंथ सुभ राम वल्लभा शरन ।
शत उनीश युगबिंश पर संवत के आवरन् ॥ १ ॥
जेठ मास दसमी तिथि सोई । लखन कोट तट सरजू जोई ॥

विषय—

राम जी का नखसिख वर्णन ।

संख्या २०६ क. नाम परत्व पचासिका, रचयिता—युगलानन्य (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—१२ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाभ्यां नमः

अथ नाम परत्व पचासिका लिख्यते ॥ दोहा ॥
श्री सिय प्रीतम प्रेम प्रद परम प्रमोद निवास।
बंदि विसद गुरू पद पदुम बरनो नाम प्रकाश ॥ १ ॥
श्री सीतावर नाम पर तत्व सिरोमणि सार।
बंदौ बोध विहार वर वीज तीज तमपार ॥ २ ॥
सुधा सिंधु श्री नाम मन मूढ़ विहाय सहाय।
रहत निरंतर झीलरन रमत जाय छिन जाय ॥ ३ ॥
हृदे हुलास हजार हर सायत जपत सुनाम।
पावे सुजन सनेह सजि तजि तन तृगुन कलाम ॥ ४ ॥
वामा वदन विकार वन बूझत नहि मति मंद।
नाम विमुख दुःख दोह दिल लहत अमत पद पंद ॥ ५ ॥
राम रशिक रस रसितजन जजन योग गुन लोक।
नाम परत्व प्रकाश सुख समुझत सुजन निशोक ॥ ६ ॥
धन्य पुन्य पावन परम प्रेम प्रकाश निवास।
जाके जिय जग मग भई 'नाम परत्व प्रकाश' ॥ ७ ॥

अंत—

नाम-परत्व पचासिका परम प्रेम प्रद नाम।
पढ़त पढ़ावत सुनत नित होत अधिक अभिराम ॥ ५१ ॥
राम नाम रसना रटत कटत कदूरत काम।
लहत लाह लालन लजित मिटत मोहमद वाम ॥ ५२ ॥
नाम परत्व पचासिका श्री सरजू सुचि तीर।
विरच्यो युगल अनन्य सद शरन जपत रघुवीर ॥ ५३ ॥

इति श्री ६ मान्महाराज रशिकाधिराज श्री श्री सतगुरू स्वामी श्री ३ युगलानन्य शरन विरचित नाम परत्व पचासिका संपूर्ण शुभमस्तु ॥

॥ दोहा ॥

शत बत्तीस युगविंशपरता संवत के माह ।
राम वल्लभाशरन लिखि नाम परस्व उछाह ॥ १ ॥
माधौ मास पुनीत अति लछिमन कोट मुकाम ।
श्री सरयू सरितीर वर अति अराम सुखधाम ॥

विषय—

नीतिमय उपदेशों सहित रामभजनोपदेश और रामभक्ति की महिमा वर्णन की गई है ।

संख्या २०६ च. निंदक विंसतिका, रचयिता—युगला नन्य (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—२, आकार १२ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६२५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ॥

अथ निंदक विंशतिका लिख्यते ॥ दोहा ॥

श्री सियवर चिद घन परम हरन हजारन खेद ॥
बंदो विशद सनेह सजि जेहि खोजहि सह वेद ॥ १ ॥
श्री गुरू मारूत सुवन शिव शिवा सारदा शेष ।
सबहि सप्रेम प्रनाम करि परिहरि गुन कृत द्वेष ॥ २ ॥
निंदक विंशति का रूचिर रशिकन प्रद सुख शान ।
युगला नन्य शरन रचत सुनत मोह मल हान ॥ ३ ॥
बूझे बिना वेकूफ नरबकहिं वहंती बैन ।
युगलानन्य विचार युत पर पावै चित चैन ॥ ४ ॥
आशिक सोई खूब है नेही निज महबूब !
युग अनन्य निंदा जगत जानत हृदे हबूब ॥ ५ ॥
जौं लौं निंदा नगर में करत न सुमन प्रवेश ।
तौ लौं सौदा शौक प्रिय पावत रंचो न लेश ॥ ६ ॥
निंदक के पद पंक रूह पूजहु प्रेम समेत ।
सब विधि हितकारी समुझि सानुकूल सुख खेत ॥ ७ ॥
निंदक नृपति समान नित रहत पाप धन देश ।
बचन सबल सेना सजे चतुरंगिनी हमेश ॥ ८ ॥
निंदा नौबति रैन दिन बजत सनेही द्वार ।
सुनि सानंद सकोच नहि सुमिरत गुन हितकार ॥ ९ ॥

निंदक बबही निपुनतर गढ़ि गुढ़ि दारू अकाम।
रचत पूतरी छवि भरी जेहि लखि सुख नियराम ॥ १० ॥
निंदा नेग विवाह को गारी प्यारी प्रान।
नेहिन को चहिये अवस सि०(?य) वर मिलन प्रधान ॥ ११ ॥
निंदक कलित किसान सम गोड़त भूमन मित्र।
गोड़त बीज सनेह नव उपजत कम विचित्र ॥ १२ ॥
निंदक शिकलीगर सदृश करत जमनिका नाश।
अमल अनूपम मन मुकुर जामधि रूप प्रकाश ॥ १३ ॥
निंदक हँसि हँसि हित कियो दियो अलौकिक चैन।
बदन प्रसंसे योग नहि नमो नमो दिन रैन ॥ १४ ॥
निंदक के घर निकट ही सदन सवारो मीत।
जहँ निसिवासर धवल धुनि, निंदा गीत अभीत ॥ १५ ॥
जिनके विमल विवेक नहिं निंदक निंदे सोइ।
युग अनन्य उर रीझ के वलिहारी बहु होइ ॥ १६ ॥
जन्म अनेकन ते लियो पातक बोझ अतोल।
सो उतारि हलुको कियो धनि निंदक अनमोल ॥ १७ ॥
करो सोई आचरन सद जो सुनि निंदे लोग।
वेद विरोध विहाय मल वचंस वढे निरोग ॥ १८ ॥
जल पावक पवमान घन सम निंदक दुतिवंत।
युगलानन्य प्रमोद प्रद असद दमन गुनवंत ॥ १९ ॥
निंदक दाता ईश सम सब विधि मोहि देखात।
सुकृत दान अनुदिन करत सपनेहु नहि अलसात ॥ २० ॥
निंदक नाविक चतुर तर तुरित उतारत पार।
निंदा नाव चढ़ाय जन लगत न रंचक वार ॥ २१ ॥
निंदक दीपक सिखा सम नासक तिमिर तमाम।
शशि समान सीतल करन, दायक हिय आराम ॥ २२ ॥
निंदक निर्मोही नहीं प्रति पालत नित प्रीति।
युगलानन्य शरन सतत निंदा वचन विनीति ॥ २३ ॥
अहो धन्य गुन गन्य ते त्रिगुन पार सुख धाम।
जिनके चित चिघनित रूचत निज निंदा बदनाम ॥ २४ ॥
निंदक विंसतिका विमल सदा निवारन योग।
जिज्ञासुन मन मोद कर समन सकल भ्रम रोग ॥ २५ ॥

इति श्री ५ स्वामी जीवाराम सतगुरू मोद धाम परम किंकर प्रान प्यारे सद्गुनमि और श्री ४ श्री मद्युगलानन्य शरन विरचिता निंदक विंसतिका संपूर्ण शुभ॥ दोहा ॥

संवत शत उन्नीस[१९] पर पंचवीस[२५] के माँहि ।
रामवल्लभा शरन लिखि कार्तिक शितचित चाहि ॥ १ ॥
श्री सीता रामो जयति

विषय—

२५ दोहों में निंदक की स्तुति वर्णन ।

संख्या २०६ छ. निन्दक विनोदाष्टक, रचयिता—युगलानन्य (स्थान—अयोध्या), कागज—नवीन, पत्र—१, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल-सं० १९२५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ अथ निंदा विनोदाष्टक लिख्यते ॥

छंद मंजु

निंदा नेह निदान निरामय नेही जन जिय जाने ।
जिनके जिगर वीच मनहर महबूब हमेश समाने ।
छाके छैल सुछबि अंतर मदमस्त दुरुस्त दिवाने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने । १
सोए सजन सनेह सदन जग युगल होश नहि आने ।
धोये हाथ हिसावहि रस सन सन मुख तापन आने
खोये लाम खलता चारों फल वोये विरह बयाने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने । २
आसै असल दुष्ट वालों का विधि हरीश नहि जाने
सुर मुनि गुनि सुनि सीस अकथ कहि थकि मतिमौन प्रमाने
सुनिये दार दीन दुर्मति रत वदत श्रान को आने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने । ३
जाहिर जगत जीव जितने तितने निंदहि सुख माने ।
व्यर्थ निरर्थ बड़ाई सुनि जन मोद समुद समाने
विशद रसिक अनुराग निरत तिनकी नति धिगत जमाने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने । ४
हानि लाभ की रीति विना वाकिफ झगरा सठ ठाने ।

मध्य—

समुझे मरम नहीं अंतर वाहर लंपट लपटाने ।
वाह वाहकी दाह दहैं नहि लहैं शौक सर साने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने । ५

अंत—

प्रीतम प्रेम पाथ पाये बिन भरम भदेश भुलाने।
साँचे सकल ज्ञान सोहवत पै तीखे तीरन ताने
दुर्लभ दमक दशा दुखिया दुचिताई दुरित दवाने।
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने। ६
निंदक नर नाचीज नहीं तज बीज किये रस छाने।
विमल विचित्र वर धन पन अंतर रुचि पर धाने।
बूझे विना वकें बावर समुझेरे खेद विहाने।
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने। ७
निज औगुन गुन सुमन सम्हारत सिमटत खेर खजाने
राग द्वेष तम मेघ मिटे फिरि फिरि जग आवन जाने
निंदक नेह निपुन कारन प्रिय प्रेमी सदा सनमाने
युगलानन्य सुनिंदा विन को निंदा सुख पहिचाने। ८
निंदक जन दुख दमन छंद वसु मधुर मनु सुचि सुनिये
याको भाव विचारि हरे दुचिताई जग ठग दुनिये
सीताराम सनेह सजे तिनकी बानी नित गुनिये
युगलानन्य विश्व अंतर काहू विधि भाल न धुनिये। ९

इति श्री श्री श्री मध्युगलानन्य शरन विरचित निंदा विनोदाष्टक संपूर्ण ॥ शुभं

दोहा

संमत सत उन्नीस[१२] पर विश पंच[२५] के माहि
रामवल्लभा शरन लिखि लखन कोट सरि पांइ। १

विषय—

९ छंदों में निंदकों का वर्णन किया गया है।

संख्या २०६ ज. प्रकाश भक्ति रहस्य, रचयिता—युगलानन्य (स्थान—अयोध्या), कागज—नदोन, पत्र—२, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीता रामाभ्यां नमः॥

॥ अथ प्रकाशक भक्ति रहस्य लिख्यते ॥

दोहा

श्री जानकी सनेह सर सुभग हंस अवतंस।
सुमरि सुधा सत सदन छवि मदन अनंत प्रशंस ॥ १ ॥
वरनो विमल विनोद वर सुचि उपदेस सप्रेम।
जेहि सुनि गुनि मंगल अमल अति अनूप छनछेम ॥ २ ॥
मुनि नायक लायक अधिक गायक गुन गंभीर।
सायक सत रघुबीर जस विवसन हित तूनीर ॥ ३ ॥
अमल अगस्त्य निरस्त गुन विषम विस्व हितकारि।
नित प्रति पूछ्यो प्रीति नति, सहित सुप्रश्न विचारि ॥ ४ ॥
तीछन मति संतत सुरति नाम सुतीछन धीर।
पूंछी प्रश्न विनीत ह्वै हरन हजारन पीर ॥ ५ ॥
कृपासिंधु स्वामी सुहृद शील सुभाव दयाल।
भक्ति देश उपदेश मम कहि हरिए जगजाल ॥ ६ ॥
सुनि वानी सानी सुधा बोले श्री रिषिराज।
सुनो सरस सिद्धान्त भव शांत करन सिरताज ॥ ७ ॥
भक्ति रहस्य उपाधि विन वर धन हिये हुलास।
श्री शंकर मुख श्रुत कहौं परम प्रमोद निवास ॥ ८
एक समे श्री अंबिका जाय सदा शिव पास।
प्रश्न प्रधान कियो कलित भक्ति रहस संकास ॥ ९
महादेव दीनन दरद दुरित दमन दुति दैन।
श्री सीता वर भक्ति रस कहिये गुन गन ऐन ॥ १०
प्रान प्रिये सिय राम जस सुभ रस रंग निधान।
अति दुर्लभ सुर मुनिन को विना कृपा गुन खान ॥ ११
श्री सिय श्याम उपासना सर्वोपरि सब भाँति।
जेहि धारे आनंद रस सहज होत चित शांति ॥ १२
प्रभु प्रतिकूल सखेद सठ प्रथम भ्रमत बहु काल।
सो प्रसंग सुनु सुमुखि शुभ श्रवन सुखद मुद माल ॥ १३
कोटिन अर्बुद अर्व बहु उद्भिज जोनिन बीच।
भ्रमत धामत वात घुन सहत तहत मल मीच ॥ १४
पुनि स्वेदज कति कल्प लगि देह पाप दुख मूल।
अंडज वपु धाको मिलत नित पुनि संकट शूल ॥ १५
विपुल दिवस संकट सहत लहत धेनु तन जौन।
तहँ माया मोहादि मधि भूलि खेद दुख पौन ॥ १६

अंत्यज जोनिन को लहै सहै कष्ट कृत दाह ।
कबहुँ होत पुनि शुद्र वपु कृत प्रेरित अमचाह ॥ १७
बहुरि कर्म संजोग बस॰ वनिक वपुष यहि होत ।
तिनहुँ न चेत्यो मंद मति सोवत सनसि सोत ॥ १८
पाछे सुकृत सहाय से छत्री तन कमनीय ।
पावन प्रभु पावन निमित सकल दोष दमनीय ॥ १९
छत्रिहु भये न हरि भज्यो विफल विकल्प विहाय ।
खेद विविध सहि चर्म वपु विप्र लह्यो हुलसाय ॥ २०
सोउ तन तृष्णा तिमिर तर तरनी पाय पुनीत ।
नहिं सुमिरत सिय राम पद पंकज मरस सनीत ॥ २१
वेद विमुख वर नित विशद वंदित सुर समुदाय ।
द्विज कल काय अनर्थ हित नासत विष फल खाय ॥ २२
संत सोहावत संग बिन विप्र वपुष करि स्वार ।
तेहु अधमाधम गति लहे तिन पर अति धिक्कार ॥ २३
ताते समुचित शिवे शिव सदन सरीर सुपाथ ।
सिय बल्लभ सुमिरत सतत कीजे कलित कठाय ॥ २४
चौरासी संकट नसे बसे सुनाम सुधाम ।
लसे रसे मुद मोद मन पसे उपाधि दवाम ॥ २५
जौ लौं पापन को नहीं होत विनास विशेष ।
तौ लौं श्री सिय राम पद भक्ति उदय नहिं लेश ॥ २६
सब पापन को मूल शत शूल सदन प्रभु भूल ।
तेहि नासे सत संग सजि तजि पथ पर प्रतिकूल ॥ २७
सुचि संजम समाधि शुभ परिहारे असत अशेष ।
करे कर्म संकल्प बिन प्रकटे विरति विशेष ॥ २८
निज निर्वेद अखेद लहि भेद भेद द्युति द्रोह ।
पावत परम प्रमोद प्रिय प्रीतम हतु विमोह ॥ २९
पुनि ज्ञानहु निज रूप पर पावत विगत पियाश ।
पुनि विज्ञान निरीह लहि होत अधिक प्रतिकाश ॥ ३०
सबमे सिय बल्लभ बिसद विभौ विलोके नैन ।
राग द्वेष नानात्व तजि रहै मगन चित चैन ॥ ३१
चिद चित विश्व व्यापक विशद रूप प्रभा हिये हेरि ।
हर सावत हरषित रहे वर वेदांत निवेरि ॥ ३२
विपुल दिवस या विधि मनन करत विभूति विचित्र
सप्त भूमि दृढ़ता लहत होत चित्त सम चित्र ॥ ३३

श्री सिय पिय कल कृपा सौ षटगुन सहित अनूप ।
लहत भक्ति अनपायनी मन वच पारख रूप ॥ ३४
भक्ति सजीवनि मूरि छबि भूरि अमित गुनखानि ।
पाप परम प्रभु बस करन हरत बिरसता खानि ॥ ३५
श्री सीता वर रस रहस रैन दिवस यकतार ।
निरखि बसत सुख सदन नित निर्विकार गुलजार ॥ ३६
अकथ रूप श्री भक्ति किमि कहौं अगम जियजानि ।
शिवे सदा शिवदासु रति निखिल निकाई खानि ॥ ३७
लाभ न भक्ति समान कछु कह्यो सत्य वर बैन ।
अपर चाह नहि रहत पुनि सपनेहुँ उर औन ॥ ३८
और अनूपम युक्ति यक सुनुसिष सहित सनेह ।
श्री शंकर शुचि संत सद सेवत सुरति सुगेह ॥ ३९
निशिदिन सिय पिय सुमिरिये त्यागि सुदेव कदंब ।
श्री सुख सागर बिन वृथा झीलर सर अवलम्ब ॥ ४०
जिन सेषी ध्यावो धवल समल भजन बिसराय ।
सौम्य सुमनि कीजे कलित सेवन उपल विहाय ॥ ४१
ताते सुमिरन जानकी रमन करो चितलाय ।
युगुला नन्द अनंतसुख समुदित होत थिराय ॥ ४२
सरनागत की आस सजु परिहरि साधन खेद ।
धाम नाम अवलंब युत लहे रहस वर वेद ॥ ४३
प्रभु प्रसन्नता सबहिं सुर नर प्रसन्न सब भांति ।
औरन की करुना किये मिटत न संसृति भ्राति ॥ ४४
ताते निसदिन गिरि सुते सुमिरन कर सियराम ।
सहजहि भक्ति बिचित्र छवि मिलिहिं तोहि सुखधाम ॥ ४५
सुनि श्री भक्ति रहस्य मुनि शिवा समेत उछाह ।
बार बार बंदन करन लगे सुपद निज नाह ॥ ४६
युगुलानन्य सरन रच्यो भक्ति रहस्य रसाल ।
श्री शिव मुनिवर कृपा बल समन सकल श्रम साल ॥ ४७
जे जन जसी सनेह से सुनि है संत सुयास ।
तिमि पढि है मन प्रेम पगि पैहें परम प्रकाश ॥ ४८
भक्ति रहस्य प्रभाव पर प्रेम छेम दातार ।
करिये सदा विचार जिय तजि विष वलित विहार ॥ ४९
अरतालिस दोहा मधुर विविध विविध व्योहार ।
युगुलानन्य शरन रच्यो सरजू तट सुख सार ॥ ५०

इति श्री श्री शिवाशिव अगस्त सुतीक्षण संवादे प्रकाश भक्ति रहस्य श्री ५ स्वामी महाराजरसिकाधिराज श्री श्री युगलानन्य शरन विरचित संपूर्ण संवत् १९२१

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

रामभक्ति की महिमा और उपदेश वर्णित।

संख्या २०६ क. प्रश्नोत्तरी प्रकाश, रचयिता—युगलानन्य शरण (स्थान—अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१३ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीता रामाभ्यां नमः ॥

अथ प्रश्नोत्तरी प्रकाश लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

पूरन परम प्रकाश पर परानंद गुन ग्राम।
वंदो सीताराम श्री चरन सरोज ललाम ॥ १ ॥
श्री सतगुरु मुद मोद प्रद पद पंकज उर ध्यान।
वार वार पाँचो सरस नाम रूप हर्षाय ॥ २ ॥
परिकर निकर विभूति कर वंदो सहित हुलास।
दीजे दया निकेत मोहि नाम नेह अभिलाश ॥ ३ ॥
अमर गिरा मब विधि कठिन पढि न सकत सब जीव।
तिन हित भाषा साधु शुचि करहिं समोद अतीव ॥ ४ ॥
वस्तुबोध किल चाहिये काज न भाषा संग।
भाजन सुवरन मनि मृदुन मांझ चोल चट रंग ॥ ५ ॥
गुरु सुचि सिष संवाद सह प्रष्णोत्तरी अनूप।
पढत विचारत सम लहत पावत मंगल रूप ॥ ६ ॥
अति अपार संसार मधि मगन कृपा निधि दास।
केहि शरनागत के गये होय कृपाल निकाम ॥ ७ ॥
श्री सीतावर पद पदुम पोत पवित्र विचित्र।
ताही को अवलंब करि परिये पारस मित्र ॥ ८ ॥

अंत—

विजन देश गत क्लेश प्रभु कौन परम मुद देत।
निर्विकार सिय लाल को रहस सदन संकेत ॥ १८ ॥

काल काल कटुता हरन कौन एक रस तात।
कल नामन मतिहीन जहँ सुमिरन सरस सोहात ॥ ११९ ॥
आशन विशद विनोद प्रद रुज नाशक आराम।
जेहि विधि चिंतन एक रस सहज सीय सह श्याम ॥ १२० ॥
अधिष्ठान आनंद को सिय वल्लभ गुन गाथ।
युगलानन्य शरन शतत भजु सियवर निज नाथ ॥ १२१ ॥
पूरक रेचक कुंभ कहुँ बोध समेत कृपाल।
कहि दहिए दारुन दुखहिं दीजे मोद विशाल ॥ १२२ ॥
सकल प्रपंच विधान को त्याग सुरेचन नीक।
सिय वल्लभ संबंध दृढ़ चिंतन पूरक ठीक ॥ १२३ ॥
कुंभक निज पर रीति रस मिलन वियोग विहीन।
युगलानन्य शरन सुभग प्रानायाम प्रवीन ॥ १२४ ॥
गुरु सिष सुभ संवाद वर प्रश्नोत्तर रमनीय।
विरच्यो दोहा एक शत चौबीस दुष दमनीय ॥ १२५ ॥
सकल पदारथ कोश इह संशय रहित विचारु।
बुध विवेक बल बूझिहैं अर्थ अनूप अपारु ॥ १२६ ॥
श्री कामद गिरिराज श्री मंदाकिनी सुतीर।
विरच्यो पढ़ि सुनि मोद बहु लहिहैं सुजन गभीर ॥ १२७ ॥

इति श्री श्री श्री श्री स्वामी महाराज सिरताज श्री महंत जीवाराम जी के श्री सर्वोपरि प्रान प्यारे कृपापात्र युगल रस सकात्र सर्व जीवोद्धारन श्री श्री श्री श्री श्री श्री सत गुरु स्वामी श्री युगलानन्य शरन निरचित प्रश्नोत्तरी संपूर्ण शुभं ॥

॥ दोहा ॥

श्री सावन शुक्लाष्टमी संवत शत उन्नीस।
तापर विंश द्वितीय पुनि सरितट किला फणीश ॥ १ ॥
पाठनीय लिखिनीय इहराम बल्लभा सौम्य।
श्री अनन्ययुग गुरु दियो जानि आपनो सौम्य ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ संस्कृत के प्रश्नोत्तरी ग्रंथ का हिंदी अनुवाद है। इसमें गुरु शिष्य संवाद के रूप में आध्यात्मिक विषय का वर्णन किया गया है।

संख्या २०६ ञ. फारसी वरनमय झूलना, रचयिता—युगुलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—३, आकार—११½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११,

परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीतारामाय नमः ॥ अथ फारसी वरनमय झूलना छंद लिख्यते ॥
सियाराम सुखधाम पद परम पावन हृदे ध्याय श्री गुरु चरण चित लाओ।
दिया दिव्य दुति वरे हर तिमिरहारी महामोद मंगल मधुर मनः पागे ॥
धिया ध्येय दृढ़ ध्यान नहि पलक भूलोधवत धाममधि छावनी सुछकि छायो।
भनै 'युगम आनन्य' निज नेह मंदिर निमिष निहरि के कहुँ मति कभी जाओ ॥ १
अलफ आह दा दाहद हमेश मैंनू सितमगार केवल्ल नू चाह दीहौं।
छवेयार दिलदार के जोश माहीं फिकिरि जिकिरि जग जाल वहावहीं हौं।
अधिक हाल विहाल जो मील मेरा उसे जनन से खूब छपाव दी हौं।
भनै 'युगम आनन्य' आमोद हरदम सिया राम के संग सुख पावही हौं ॥ २
वे क्या निशान सुख खान के हाक हा मित्र बुझाय महबूब प्यारा।
बाल बाल देविच्च विलंब होई कहि सखुन दी मार नहि सुमन हाथ।
बान बार ही बार वियोग भगे जगे जिय जौक दुःख सिंधु पारा ॥ ३

अंत—

दोहा

हरफ फारसी मन रमन छंद झूलना बीच।
विरच्यो श्री सरयू सुतट नागरु मलिन कुमीच ॥ ३४
सावन मन भावन सुखद निधि अामावश शाम।
पूरन यह अद्भुत बरन दायक दिल दुति दाम ॥ ३५
भली रीति सों वाचिये सावधान होय याहि।
कठिन देश भाषा वलित बाँचत सुख सर साहि ॥ ३६
काहू विधि से गाइये सुजस सियावर स्वच्छ।
सब साधन की आस तजि पाइय प्रेम प्रतच्छ ॥ ३७

इति श्री ५ सद्गुरु सिरताज श्री महाराज श्री श्री स्वामी जीवाराम सुखधाम जी के श्री ५ सर्वोपरि परम कृपापात्र परम कृपागार श्री सर्वोत्कृष्ट श्री स्वामी युगलअनन्य शरन विरचित फारसी वरन मय झूलना छंद संपूर्ण ! माघौमा शुक्लपक्षे संवत् १९२२ ॥ लेखनीय रामवल्लभाशरन।

विषय—

फारसी वर्णमाला के एक एक वर्ण को लेकर उसी के साथ एक एक झूलना जोड़कर रामचरित्र वर्णन किया गया है।

संख्या २०६ ट. मणिमाला, रचयिता—युगुलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या) कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—१२३/४ X ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१ परिमाण (अनुष्टुप्)—२०९, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीता रामाय नमः ॥ अथ मणिमाला लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

स्वस्त श्री सीता रमन पद पंकज उर लाय ।
बरनो विशद चरित्रचय चिंतामनि छवि छाय ॥ १ ॥
श्री श्री सिय वल्लभ विभव विमल विचित्र विहार ।
श्रुति सत शुचि सिद्धांत सुख सार रहस धार ॥ २ ॥
महा मधुर मनि मोद मनि मृदुतर मनि सुकुमार ।
मदन मनोहर मनि नवल मनि श्री राजकुमार ॥ ३ ॥
मजेदार महबूब मनि मोहन मनि रघुबीर ।
अमित महल माधुर्यमनि नाजुक मनि निर्मोल ॥ ४ ॥
परम प्रेम मनि छेम मनि हरित हेममनि स्वच्छ ।
रास विलास हुलास मनि अवध किशोर प्रतच्छ ॥ ६ ॥
नित्य नेह मनि मेह मनि नाजुक मनि निमोल ।
निखिल नाह मनि नाज मनि नायक मनि मृदु बोल ॥ ७ ॥
विशद बोध मनि विरति मनि सुरति महामणि राज ।
रघुकुल मनि पर वारिये मनि कदंब सिरताज ॥ ८ ॥

अंत—

पढ़त पढ़ावत सुनत सुख पैहैं सुजन सचेत ।
युगुलानन्य शरन तिन्हें उदय होय हिय हेत ॥ १११ ॥
श्री मनि माल प्रकाश निधि विविध भाँति रुचि साथ ।
श्रवन मनन करिये सदा सुमिरत सिय रघुनाथ ॥ ११२ ॥

इति श्री ४ स्वामी महाराजाधिराज गरीब निवाज रसिकाधिराज श्री जीवाराम महंत श्री के सर्वोपरि प्रानप्यारे कृपापात्र सर्वोत्कृष्ट सर्व जीवोद्धारन श्री ५ सतगुरु स्वामी श्री युगुलानन्य शरन विरचित मनिमाला संपूर्ण ॥

॥ दोहा ॥

संवत शत उन्नीश वर विंश द्वितीयाधारि ।
सावन द्वादसि पक्षतम पुस्तक लिखा विचारि ॥ रामवल्लभा शरन ।

विषय—

रामनाम माहात्म्य तथा राम चरित्र वर्णन ।

संख्या २०६ ट. मनबोध शतक, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान—प्रमोदवन, अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—९, आकार-१२ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ अथ मनबोध शतक लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री सीता वर पद कमल अमल पराग सुभाल ।
धारि संत श्री गुरु नमो चरन सरोज रसाल ॥ १ ॥
पवन तनै आमय असद नाशन चरन मनाय ।
पुनि परिकर पद प्रनति करि हिय सब विधि हुलसाय ॥ २ ॥
श्री सुचि संतन सुमुख सें सुन्यो रहस रमनीय ।
सो निरूपि वरनो कछुक सकल शोक समनीय ॥ ३ ॥
विमल बोध अविरोध गुन चिन्ह निरोध समेत ।
समुझो मन बोधक शतक शमन करन रस प्रेत ॥ ४ ॥
अधिकारी संबंध सुचि विषय प्रयोजन चारि ।
नामनेह निशदिन निरत अधिकारी निरधारि ॥ ५ ॥
+ + +
नाम अमल याको धर्यो श्री गुरवर 'मनबोध' ।
'युगलानन्य' विचारि चित रहे न रंच विरोध ॥ ८ ॥
प्रभु प्रतिकूल मसूल अघ मूल अधर्म निकेत ।
प्रथम दंभ दुरमति दरद देन सुनो सजि चेत ॥ ९ ॥
अखिल अमंगल मल सदन कहन वदत अति लाज ।
जाके वस बुध अबुध सब बोरत सुजस जहाज ॥ १० ॥

अंत—

नाम रूप दोऊ अचल अगल अनादि अभंग ।
भेद भावना वदहि जे ते मति मलिन कुरंग ॥ १८३ ॥

नामिन की संगति सजे नाम गाथ विस्वास ।
तेहू अधिकारी धन्यतर अतर तरावन खास ॥ १८४ ॥
मन बोधन मेरो कियो दियो महामुद मूल ।
सुनत गुनत मंगल अमल मिटत मोहमद मूल ॥ १८५ ॥
श्री सद्गुरु पद पंक रुह परम पराग सुधारि ।
श्री प्रमोद वन मधि रच्यो शतक अधिक छविकार ॥ १८६ ॥
वार वार बंदो सुगुरु श्रवध नैन जा नीर ।
श्री सीतावर रस रसिक सहित हरन भवभीर ॥ १८७ ॥
चंचल चित चष अचल करु धरु चिंतामनि नाम ।
मानुष वपुख विचित्र तर समुझ सुखद परिनाम ॥ १८८ ॥

॥ सोरठा ॥

मैं मति मंद अजान मोह मदन ममता सदन ।
पै निज नाम प्रधान कोट बोट लीन्हौ बदन ॥ १८९ ॥
उर उमंग दिन रैन चैन चारु सरजू निरखि ।
फुर सुरंग गत मैन ऐन अनूप मनिज परखि ॥ १९० ॥

इति श्री ४ स्वामी जीवाराम महाराज सिरताज के परम प्यार कृपा औतार सर्वोपरि स्वामी श्री ४ सतगुरु श्री ३ युगलानन्य शरन विरचित मनबोध शतक संपूर्ण शुभं ॥ आषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे संवत १६२२

विषय —

मन को संबोधन कर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या २०६ ड. मोद चौतीसी, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान-अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—२, आकार—११$\frac{1}{2}$ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीता रामायनमः ॥ अथ मोद चौतीसी लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री सुषमाकर सीयवर कलित कंज पद ध्याय ।
श्री सत सत गुरु चरन रज शीश धारि हरखाय ॥ १ ॥
मधुर मंजु शुचि छंद मधि वरन करन कल्यान ।
वरनो अति अनुराग जुत तजि तम तीर तरान ॥ २ ॥

मंजु छंद

क का कोशलपति कौशल्या नंदन काम विमोहन हैं।
कठिन कार्मुक भंजन कारन करुना कृत कत कोहन हैं।
काशीस्वर वंदित पद पंकज कामद काल विपोहन हैं।
युगलानन्य कसौटी रस जस सुठि सुंदर सुभ सोहन हैं ॥ ३ ॥
ख खा खल रिपु खलक भलक कर खारिज ख्याल खुनाशी हैं।
खटका खौफ फजीहत फाहिस शमन सुमन अविनाशी हैं।
खालिक खुदी खराब खाव गुन नाशक प्रेम प्रकाशी हैं।
युगलानन्य खजाना खाहिश खिलवत खैर मवाशी हैं ॥ ४ ॥

अंत—

क्ष क्षत्रपती नायक मनि रघुनायक छबि छाको।
छोनी सुछबि अजूब आठवी तेहि दिशि निशि दिन भाको।
छैल छबीली रंग रंगीली रमा अंग रस ढाँकी।
'युगुलानन्य शरन' छाया माथा के तरस न ताको ॥ ३६ ॥
संपूरन शुख राम नामगुन रूप कलित छबि छाई।
चौतिस वरन विहार 'मोद चौतीसी' नाम सोहाई।
पढ़त पढ़ावत प्रेम बढ़ावत सुनत श्रवन सुखदाई।
युगुलानन्य शरन गुन गावत छावत सुख समुदाई ॥ ३७ ॥

इति श्री ५ स्वामी श्री महाराजाधिराज रसिक सिरोमनि जीवाराम जी के परम प्यारे कृपापात्र श्री ६ युगलानन्य शरन विरचित मोद चौतीसी संपूर्ण लेखनीय लघु किंकरानुकिंकर राम वल्लभाशरन ॥

विषय—अक्षरानुक्रम से रामयश वर्णन।

संख्या २०६ ढ. वरन उभंग, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—३, आकार—११¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीतारामाय नमः ॥ अथ वरन उमंग लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

स्वस्ति श्री सुखमा सदन मंगल मोद निधान ।
नाम रूप गुनधाम जस वंदौं प्रद सुखखान ॥ १ ॥
श्री सुचि सीता कुंड कल कीरति अगम अपार ।
सो मेरी मति किमि कहै फली विषम व्यवहार ॥ २ ॥
श्री सत्या सुचि सरल शत सरसिज समसिय कुंड ।
जेहि सनेह सजि सेवकरि कटत मोह मद मुंड ॥ ३ ॥
बरनौ चौतिस बरन जुत कीरति कुंड अनूप ।
जाके श्रवन मनन किये नाश होत तम कूप ॥ ४ ॥

॥ सोरठा ॥

महामोद दातार कुंड सरस सोभा सदन ।
अमित मदन छबि सार निरखो तजि तामस गदन ॥ ५ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

क्षाम कलपना कतल करि क्षोभ लोभ निसराय ।
क्षेम लहो लालन ललित सजग कुंड गुमगाय ॥ ४० ॥
श्री सीता कल कुंड प्रिय कथित ककहरा स्वक्ष ।
पाँचत वोध निरोध मन पावन प्रेम प्रतक्ष ॥ ४१ ॥
कुंड समीप निवास सजि विरच्यो 'वरन उमंग' ।
'युगलानन्य सरन' पठन सुनत सुदंपति रंग ॥ ४२ ॥

इति श्री ७ सतगुरु महाराजाधिराज श्री स्वामी जीवाराम मोद धामजी के परमप्यारे कृपामय कृपापात्र श्री ७ युगलानन्य सरन विरचित वरन उमंग संपूर्ण शुभमस्तु॥ मास फाल्गुनो पक्ष सित हरिवासर को लेषि । संमत यक उनवीस[१९] सत अरू अकीश[२१] अवरेखि ॥ १ ॥ लेखनीय पाठार्थी रामवल्लभासरन ॥ सोधि पढो श्री संतजन जानि मोहि पिडापरन ॥

विषय—

'क' से लेकर 'क्ष' तक के अक्षरों पर दोहा, चौपाई तथा सोरठे रचकर सीता कुंड (अयोध्या) की महिमा का वर्णन किया गया है ।

संख्या २०६ ए. वरनमाला, रचयिता—युगुलानन्य (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—११½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण

(अनुष्टुप्)--२७३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाय नमः

॥ दोहा ॥

जै श्री सहस प्रकाश निरवधि अवध विहार।
निरत निरंतर निखिल गुन मंडित सियहिय हार ॥ १ ॥
श्री सतगुरु गुन ज्ञान पद प्रेम समेत मनाय।
बरनो विमल बरन नवल नेह उछाह सजाय ॥ २ ॥
दोहा चौपाई सुभग सरस सोरठा छंद।
श्री सद्गुरु महिमा मिलित कहौ मनोहर पद ॥ ३ ॥
श्री सद्गुरु उज्जल बरन चरन नलिन उर ध्याय।
सकल काज सिधि होत द्रुत दुर्मति दुरित दुराय ॥ ४ ॥
श्री सुख सागर गुरु सदा अघरन तारक ईश।
युगुलानन्य सरन सदा प्रनमत पदधरि शीश ॥ ५ ॥

चौपाई

क कर कृपा कोश सुखदाता। कर्म रेख खंडन जन त्राता ॥
काम कोह कुल मूल निवारक। करुनानिधि दयाल तमतारक ॥
काल कराल ध्यान से बांचे। कंज मंजु गुरु पद चित राँचे ॥
कलुख कलेश लेश नहिं ताहीं। कलिमल तजि जे गुरु रस चाही ॥

अंत—

छंद

कलिकाल कठिन कराल मधि रिधि सदन नाम नरेश हीं।
जेहि ध्याय गाय समाय सुख समार पार विशेष हीं ॥
सब भाँति अचल उछाह संयुत युग अनन्य हमेश हीं।
रशना रमिय धुव मानि मनसिज राम नाम परेश हीं ॥ १७९ ॥

दोहा

विसद बरन माला मधुर अति अनूप कमनीय।
विरची श्री कामद निकट रसित रहस रमनीय ॥ १८० ॥

सुमति सुबाला धारि दुति दिन प्रति लहै अनूप ।
श्री सतगुरु गुन संकलित ललित रसाल स्वरूप ॥ १८१ ॥
श्री हनुमत गुरु संत की कृपा कोर कछुपाय ।
बरनदाम अभिराम रस बरनी सहस सुभाय ॥ १८२ ॥
कविगन चूक छमा करन समुझि राम रस लीन ।
छंद प्रबंध न होश मोहिं कलित काव्य गति हीन ॥ १८३ ॥
जौन समै सियवर कृपा जैसी हिये प्रकाश ।
तौन समै तैसी सुमति कही कथा अनयास ॥ १८४ ॥
'युगलानन्य सरन' सतत श्री सतगुरु पद आस ।
धारन करि विहरत सुधा सागर नाम हुलास ॥ १८५ ॥
जै जै श्री सरजू अवध जै जै श्री गिरिराज ।
जै जै सियकल कुंज नित जै जै गुर महाराज ॥ १८६ ॥

इति श्री ५ स्वामी सद्गुरु महाराज श्री जीवाराम मोद धाम लघु किंकर श्री युगुलानन्य विरचिता बरनमाला संपूर्ण ।

विषय—

अक्षरानुक्रम से रामनाम माहात्म्य वर्णन ।

संख्या२०६ ख. बरन बिचित्र, रचयिता—युगुलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—११½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि - देवनागरी, लिपिकाल—१९२२ वि०, प्राप्तिस्थान— आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीतारामाभ्यांनमः ॥ अथ बरन बिचित्र लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री सीता वल्लभ सुपद पावन प्रेम निधान ।
श्री गुरु चरन सरोज जुत बंदो समन गुमान ॥ १ ॥
मेरी मति अतिही अलप जलप योग नहिं ज्ञान ।
श्री सतसंग प्रभाव बल भाखों गुन सुख खान ॥ २ ॥

॥ अरिल छंद ॥

काम भरम भव भान भुलावा चाहिये ।
काम कल्पना काल जाल जग दाहिये ।

किसमत से तन अमर अगम को पायके।
हरि हां 'युगुलानन्य' की मती नाम सुध्याय के ॥ ३ ॥
कुल परिवार विकार वहावो बोध सें।
कूल सरितवर रहो सुचित्त निरोध सें।
केलि ललित लय लाल लखो मन मारि के।
हरि हां कै दीप ना विहाय विषय वन जारि के ॥ ४ ॥
कोलाहल शत शब्द सुनो क्या खूब है।
कौन करार सम्हार सुहृद महबूब है।
कंज मंजु मनि खिले न संमय आनिये।
हरि हां 'युगलानन्य शरन' कह हिय इग मानिये ॥ ५ ॥

अंत—

क्षुधा पिपासा सहतनाम रटनाइये।
क्षुराधार सम वाम बूझि सुखछाइये।
क्षेत्र सुतन पहिचानि बीजवर बोइये।
हरि हाँ क्षै करि रिपुदल खूब सेज सुख सोइये ॥ १५ ॥
क्षोनी रहस रसाल प्रीति पिय परखिये।
ममको क्षौर कराय नेह निधि निरखिये।
पक्षं कलिकृत कलित नाश जो चाहिये।
हरि हाँ स्वच्छ हरद विच वृत्ति दोष दुःख चाहिये ॥ १६ ॥

इति श्री सीताराम गुन रंजन प्रेम निकेत। कलित ककहरा कलनयुत सुनतपढ़त प्रभु हेत ॥ इति श्री ६ महाराज सिरताज स्वामी श्री जीवाराम जी के सर्वोपरि परम प्यारे परम कृपा मय कृपालु दीनबंधु श्री ५ स्वामी श्री युगलानन्य शरन विरचित वरन विचित्र संपूर्ण शुभं।

॥ दोहा ॥

माधौ मासे पक्ष शित लषन कोट सरतीर।
रामवल्लभा शरनय नेखनीय करि धीर ॥ संवत १९२२ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में अक्षरानुक्रम से रामचरित्र की महिमा वर्णित है।

संख्या २०६ थ. वरनविहार, रचयिता – युगलानन्य शरण (स्थान — अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र —३, आकार—११३/४×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाय नमः ॥ अथ वरन विहार लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

श्री सदगुरू पद पंकरूह सियवर सहित सुध्याय ।
संत अनंतहि वंदि वर वरनत वरन निकाय ॥ १ ॥

अरिल छंद

छवि मय अमल सुनत श्रवन सुख देत ।
ताहित तेहि मधि वरनिये वरन विचित्र समेत ।
प्रीतम प्यार परप सुमुख सुजन सजहि मुदमानि ॥
नीरस रस कवितादि गुन मोहित जग जस जानि ॥ ३ ॥
कौन लाह दिलदार कर कारन लौकिक मान ।
'युगलानन्य सरन' सुजस गावत हिय हुलशान ॥ ४ ॥

॥ अ० छन्द ॥

अभै अकार विकार विभंजन वीज है ।
सकल वरन वर वीच विलच्छन चीज है ।
वासुदेव वर विना मूल लखि लीजिये ।
हरि हाँ सुधा सार धिय धरि मनन मन कीजिये ॥ ५ ॥

अंत—

श्री श्री कामद गिरि नृपति निकट सियापुर मांझ ।
विरच्यो 'वरन विहार वर' सुख प्रद भोग्दु सांझ ॥ ६५ ॥
मास मधुर माधव सरस श्याम पक्ष सुखसार ।
तिथि नौमी मंगल सदन भौमवार दिलदार ॥ ६६ ॥
पढ़े पढ़ावै प्रेम से करै विचार यकांत ।
युगलानन्य सरन लहै बोध विरति रति शांत ॥ ६७ ॥
मत मेरे दिशि देखिवी लखवी रहस रसाल ।
गुन ग्राही संतत सुजन करैं कुजन प्रतिपाल ॥ ६८ ॥
श्री सीता रघुवीर गुन नाम धाम रुचि देहु ।
सब संतन सन विनय मम निर्बाहो निज नेहु ॥ ६९ ॥

इति श्री ६ स्वामी सिरताज युगल स्वरूप श्री महाराज श्री महन्त जीवाराम मोदधाम किंकरानु किंकर श्री ६ स्वामी श्री युगलानन्य शरन विरचित वरन विहार संपूर्ण शुभमस्तु ।

फाल्गुन मासे कृष्णपक्षे दशम्यां १० भौम वासरे। संवत १९२१ दसखते रामवल्लभासरन।

विषय—

रामभक्ति का उपदेश।

संख्या २०६ द. वरनबोध, रचयिता—युगुलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—२, आकार—११¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९२१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाय नमः॥ अथ वरन बोध लिख्यते॥

॥ दोहा॥

श्री सीता सुषमासदन श्याम राम अभिराम।
करुना निधि पद पंकरुह पुनि पुनि करौं पनाम॥ १॥
सुरपति मनि दुति सुवन सुख सौंपन सहज सुजान।
आरत हरन दयाल दिल पुरुषोत्तम प्रसुघान॥ २॥
श्री मारुत नंदन चरन, नलिन महामुद मूल।
प्रनमौं सदा सनेह सें समन करन श्रम सूल॥ ३॥
श्री गुरू ज्ञान निधान पद पंकज सुरुचि समेत।
बंदौ सतत कृपायतन भवनिधि दुस्तर सेत॥ ४॥
गुरु गनपति गिरिजा गिरा गिरि नायक पद कंज।
सहित सनेह प्रनाम करि वेदु प्रेम मुद मंज॥ ५॥
श्री सियवर परिकर परम प्रेम नेम निज धाम।
वार बार वंदन करौं दायक दिल आराम॥ ६॥
वरन अर्थ सियराम जस सहित कहौं कछु गाय।
सुमन मोद मंगल करन हरन हजारन हाय॥ ७॥

अंत—

श्री सरजू तट वास मम अचल अडोल अशंक।
करि है कहा कुचाल करि कलिकारन पटु पंक॥ ६६॥
नाम धाम आधार वस बसे नाक तो राय।
युगुलानन्य सरन सुजन कहो सहित सतभाय॥ ६७॥

बार बार सब संत सन याचो नाम सु धाम ।
अचल नेह दीजे दया वारिधि पद आराम ॥ ६८ ॥
संवत् दिगवर वरयुत आसिनि असिति विचित्र ।
तिथि अमावश मध्य दिन पूरन वरन पवित्र ॥ ६९ ॥

इति श्री ५ स्वामी महाराज सिरताज रसिक सिरोमनि श्री महन्त जीवाराम जी के सर्वोपरि कृपापात्र श्री ६ महाराज गरीब नेवाज श्री ३ युगुलानन्य सरन विरचित बरन बोध संपूर्ण शुभस्तु ॥ मधुमासे कृष्णपक्षे परिवा १ तिथौ सवत् १६१२ श्री ३ सतगुरू श्री युगुलानन्य कृपाल ता किंकर लघू लेखनीय सुखमाल । रामवल्लभा सरन लेखनीय ।

विषय —

रामभक्तिमहिमा का वर्णन ।

संख्या २०६ ध. बरवाविलाश भावना रहस्य, रचयिता—युगुलानन्य शरण (स्थान—अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१२३⁄४×६३⁄४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी ।

आदि—

श्री सीतारामाय नमः बरवाविलाशभावना रहस्य लिख्यते ॥

॥ छंद बरवा ॥

कनक महल मधि जागे रागे रंग ।
ललीलाल अनुरागे मनसिज जंग ॥ १ ॥
सुमन सेज सुचि सोहन मोहन मैन ।
विलशत आलस भरे उनींदे नैन ॥ २ ॥
झमकि झुकनि रुकि बोलनि सुधि बिसराय ।
चमकि चपल चषफेरनि मृदु मुसकाय ॥ ३ ॥
ललकि लगावन लोने अंग सुरंग ।
बलकि अगावन अनुछन चाह अनंग ॥ ४ ॥
मधुर कंज कर परसहिँ बरसहि प्रेम ।
सरसहिं सखी सलोनी छवि दुतिहेम ॥ ५ ॥
रैन रहस रस बातें बदहि सधीर ।
नैन अधिक अलसाते राते हीर ॥ ६ ॥
सौं समूह सोहावन सखी समाज ।
भारे आगे आनि सरस रसराज ॥ ७ ॥

नेक न निरखैं नैन न सुरत उछाल।
'युगलानन्य' अली हग लखि कहैं वाह ॥ ८ ॥

अंत—

हिय हरिलेत हरित दुति युगल किशोर।
जिय जानत सुष सब विधि अकथ अथोर ॥ १३२ ॥
युगल किशोर विराजे कनक निकेत।
युगलानन्य अलीगन हग दिल लेत ॥ १३३ ॥
कलित कुतूहल कोटिन कहै कवि कौन।
'युगलानन्य' प्रेम पथ परसन पौन ॥ १३४ ॥
श्रुति नित नेति पुकारत आरत होय।
सियवर विमल विहार कहै किमिकोय ॥ १३५ ॥
रसिक उपासक श्रीगुन नवल निधान।
प्रेमाधीन कहहिं कछु मन मगतान ॥ १३६ ॥
सब फल ललित अमल फल नखसिख ध्यान।
'युगलानन्य' जगत जहि समझु सुजान ॥ १३७ ॥

इति श्री श्री श्री श्री श्री स्वामी सिरताज महाराज श्री श्री महंत जीवाराम जी के सर्वोपरि प्रान प्यारे कृपापात्र कृपाल सर्वोत्कृष्ट जीवोद्धारण श्री श्री श्री श्री श्री श्री सद्गुरू स्वामी श्री मयुगलानन्य शरन विरचित वरवाविलाश संपूर्ण शुभं ॥ दोहा ॥ भाद्रमास तम पक्ष पुनि संवत शत उन्नीश। पुनि विंशूपर युग्य धरि सरि नट किला फणीश ॥ लेखनीय इह ग्रंथवर रामवल्लभाशरन। गुरु प्रशद आनंद उर पायो भव भय हरन ॥ २ ॥ श्री सीताराम ॥

विषय—

श्री सीताराम का प्रेम और रहस्य का वर्णन।

संख्या २०६ न. वर्णविचार, रचयिता—युगलानन्यशरण, स्थान—अयोध्या, कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—१२ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ट)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ अथ वरन विचार लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरू पद पंकज परम प्रेम क्षेम दातार।
बंदि विनै बहुवार रचि वरनो वरन विचार ॥ १ ॥

संत अनंत सनेह रसवंत नाम लैलीन।
तिन सरसीरुह सुपद मम वंदन परम प्रवीन ॥ २ ॥
सर्वोपर परमेश परनाम धाम अभिराम।
श्री सीतावल्लभ नमो मोद वलित वसु जाम ॥ ३ ॥
वरन विचार विचित्र वर बोधन वाम विकार।
वनिता विषम विकार वन दहन करन दवसार ॥ ४ ॥
अधिक अंगनासे नही भवनिधि गोता दैन।
ताहित ताको निंदिये निशिवासर गुन ऐन ॥ ५ ॥
हिमु रितु सम जड़ता निमित शिशिर झकोरन चित्र।
कामादिक कुसमन सुहित सजन वशंत विचित्र ॥ ६ ॥
कोटिन ताप कलाप दुख दरद दायनी वाम।
ग्रीषम रितु सब विधि सबल हरनि हृदै आराम ॥ ७ ॥

+ + +

कक्का काम कोश कटु कामिनि। कहर कृपान कला जम जामिनि ॥
कल्मष कोटि कोट कलिकाली। कलियुग जहर जननि जग जाली ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

क्षार समान महान मुद मलिन कारनी तीय।
छाया माया माननी मत परसो निज हीय ॥ १४ ॥
"युगलानन्य शरन" "रच्यो विचार" विचित्र।
विरति सुरति बोधन विशद रसद सुनत सुपवित्र ॥ १५ ॥
नाम रमत राहत रहस रंग रमेस अनूप।
"युगलानन्य शरन" लह्यो ललित लाह निजरूप ॥ १६ ॥
श्री सरजू तट वास नम अंचल सुनाम प्रसाद।
सियवर गुन गावों मगन मानस विगत विवाद ॥ १७ ॥

इति श्री ६ स्वामी महाराज रशिकाधिराज जीवाराम मोदधाम जी के परम प्यारे कृपापात्र श्री ६ युगलानन्य शरन कृत वरन विचार संपूर्णशुभमस्तु ॥

॥ दोहा ॥

लेखनीय किंकर लघू रामवल्लभाशरन।
एक ऊन[१९] सत बीस[२०] है[२] सो संवत अघरन ॥ १ ॥

कृष्ण पक्ष मधुमास मधि तिथी सप्तमी जानि ।
सरजू तट विमलापुरी लखन कोट परमानि ॥ २ ॥

विषय—

'क' से लेकर 'क्ष' तक के प्रत्येक अक्षर पर दोहा चौपाई रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या २०६ प. विरति विनोद, रचयिता—युगलानन्यशरन (स्थान—अयोध्या), कागज—नवीन, पत्र—३, आकार—११३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री सीतारामाय नमः

॥ दोहा ॥

श्री सद्गुरू गुन निधि पवन सुवन सिरनाय ।
सब संतन सन सुनति सजि हरदम हियहुलसाय ॥ १ ॥
श्री सिय पिय प्रेमास्पद पद पंकज जिय ध्याय ।
वरनौं विरति विकाश हित वरन हरन हिय हाय ॥ २ ॥
जो सुख सर्वोपरि सुधा सहस सदृश वद वेद ।
तौन मोद अविनोद हर विरति वीच विन खेद ॥ ३ ॥
सब साधन सुख स्वाद वल वरधन विरति विचित्र ।
जेहि जोहत जगजात जरि सलभ समान अमित्र ॥ ४ ॥
विरति विध्न कारक कठिन युग विन वाम विचारू ।
ताहित दोउन मैं सतत दोष दगन निरधार ॥ ५ ॥
विषय विवर्धन विन विष वीज विशेषन वीच ।
कोटिक सिव सिय विरतिनद धवल धोइये कीच ॥ ६ ॥

अंत—

लला लालच लहर विच रेमन भूलि न डूब ।
लोक वासना विषम विष बूझि विरति रस खूब ॥ ३० ॥
व वा वाही दिवस की कीजे सुरति सचेत ।
वादा पूरा कीजिये गहि विराग प्रभु हेत ॥ ३८ ॥
स सा सोहवत संत शुभ सात्विक करू होशयार ।
सुनिये सुयश सनेमचित परिहरि विषय बजार ॥ ३९ ॥

ष षा षाहिस खलक की कीजे दूरि सुवेग।
खुदी खोदि आमिद पद पाइय अकथ अलेग ॥ ४० ॥
हहाहर सायत हृदै हेरिय हरित स्वरूप।
हशमत हुस्न सनेह सुख सदा अजूब अनूप ॥ ४१ ॥
क्ष क्षा क्षोनी सातवीं तिमि आठमी उदार।
क्षन क्षन छकि रहिये सुधा पीवत नाम बहार ॥ ४२ ॥

इति श्री ५ महाराजाधिराज श्री स्वामी युगुलानन्य शरन कृत विरति विनोद संपूर्ण शुभ मस्तु फाल्गुन मासे कृष्ण पक्षे ८ सम्वत १९२१

विषय—

अक्षरानुक्रम से दोहों में वैराग्य का वर्णन किया गया है।

संख्या २८६ फ. विरति शतक, रचयिता—युगलानन्य शरन (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—४, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥ अथ विरक्ति शतक लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री सीता वल्लभ विशद चरन हरन संदेह।
ध्याय सुगुरु पद पंकरूह दायक दसा विदेह ॥ १ ॥
श्रीवर विरति समेति जे संत अनंत समान।
बंदौ तिनके सुपद रज महामोह तम भान ॥ २ ॥
विमल विराग विहीन सब साधन वृथा कलेश।
ज्ञान ध्यान नाहक सुमन करो विचार विशेस ॥ ३ ॥
अखिल भाँति आनंद प्रद असद दवन निर्वेद।
जेहि जिय जागे भाग बस समन करे कुल खेद ॥ ४ ॥
ताको मरम सुफीन तर अतर तरावन हार।
युगलानन्य शरन सुधी समझे कहा गवार ॥ ५ ॥

\+ + +

पिता पुत्र संवाद वर बरनो व्यास विचित्र।
जेहि सुनि सिर धुनि मुनि पावै ताप अमित्र ॥ ८ ॥

अंत—

जगत तजे बिन जीव की मिटे न कबहु भ्रांत ॥ १६४ ॥
अजपा नित निर्वेद को रहिये करत विचार ।
लहिये श्री पर पद असद दमन विहाय विकार ॥ १६५ ॥
श्री भीषम वर बैन सुनि पंडु सुवन मन मोद ।
पायो विविध प्रसंसि गुन धार्यो विरति विनोद ॥ १६६ ॥
'युगलानन्य शरन' 'विरति शतक' विरचि रुचिसाथ ।
श्री कामद गिरि राजकृत निकट जपत रघुनाथ ॥ १६७ ॥

इति श्री ५ स्वामी सतगुरु महाराज श्री श्री जीवाराम महंत जू के परम रसिक सिरोमनि सर्वोपरि अखिल जीवोद्धारन धर्मावतार श्री ५ श्रीयुगलानन्य शरन विरचित विरति शतक संपूर्ण ॥

॥ दोहा ॥

मास अषाढ़ सुपक्ष सित संवत शत उनीस ।
पुनि विंसूपर युगल युत सरितन किला फनीस ।
राम वल्लभा शरन लेखनीयम् ।
विरति शतक दोहा कलित सत पैसठ छबिखान ।
श्री युगलानन्य शरन हृदै धारत संत सुजान ॥

विषय—

भीष्म और पांडवों के संवाद के रूप में सांसारिक माया मोह त्याग कर भक्ति का उपदेश किया गया है ।

संख्या २०६ ब संत विनय शतक, रचयिता—युगलानन्य शरण (स्थान—अयोध्या), कागज—आधुनिक, पत्र—३, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ वि० प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री सीता रामाय नमः ॥

अथ संत विनय शतक लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री सतगुरु सिरताज पद बंदो बारहि बार ।
दीजे युगल अनन्य को नाम नेह निज सार ॥ १ ॥

श्री श्री सिय रघुबीर के प्रान पियारे बीर।
श्री हनुमंत दयाल है दीजे नाम गंभीर ॥ २ ॥
श्री मुनिराज अगस्त्य जू अति कृपाल गुन ऐन।
अनुग समुझि मोहि दीजिये नाम रमन दिनरैन ॥ ३ ॥
श्री नारद तारद विशद सिय पिय जस दातार।
युगलानन्य अजान को दीजे नाम अधार ॥ ४ ॥
वंदौ सनकादिक चरन हरन अमंगल मूल।
दीन खीन लखि दीजिये नाम प्रेम अनुकूल ॥ ५ ॥
श्री मुनि शुभलच्छन सहित सरस सुतीक्षन पाय।
वंदि सदा जाँचो इहै नाम सनेह सुभाय ॥ ६ ॥

अंत—

तीनों समै सनेह सह जोजन शतक सनेम।
पढे सुने कछु दिन अवस पावै नाम सुप्रेम ॥ १२१ ॥
संतन की कीरति कलित ललित सुनत सिय लाल।
और कहो किमि नहि सुने समन सकल जगजाल ॥ १२२ ॥
मान मोह मत्सर मदन कदन सुजस सुचि संत।
युगलानन्य शरन हृदे दायक दुति सिय कंत ॥ १२३ ॥
श्री सरजू तट गुप्त हरि निकट कपट पट त्यागि।
सेवों संत प्रसाद से नाम धाम पन पागि ॥ १२४ ॥
सरजू तीर सुमध्य दिन प्रतिपद फागुन माश।
सुकुल पक्ष शशि दिन भयो पूरन शतक विलाश ॥ १२५ ॥

इति श्री ५ स्वामी सिरताज महाराज रसिकाधिराज सतगुर श्री श्री जीवाराम जी के सर्वोपरि परम प्रान प्यारे परम कृपापात्र सकल जीवोद्धारन श्री ६ सतगुरु स्वामी श्री युगलानन्य शरन विरचित संत विनय शतक संपूर्ण ॥

॥ दोहा ॥

मासे जेठे पक्ष पुनि स्याम तिथौ छवि लेख।
रामवल्लभा शरन यह सतगुरु प्रति अवरेख ॥
संवत शत ओनीस पुनि विश युगल श्रुत जानि।
रामानुज कल कोट तट श्री सरजू सुख खानि ॥ २ ॥

विषय—

भक्तमाल के अनुसार संतों के नाम लेकर उनकी वंदना की गई है।

संख्या २०७. देवीजी के छुप्पय, रचयिता—रघुनाथ, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य—७, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् महेश्वरप्रसाद वर्मा, ग्राम—लखनौर, डा०—रामपुर, जिला—आजमगढ़

आदि—

\+ + +

होहु दयाल "रघुनाथ" को दुर्गा दुर्गति नासनी ॥ ३ ॥
घटा प्रलै सम गरजि गगन में तरजि सुनाई।
घने अर ''सुचि सब्द हरै निसु दिन अन्याई ॥
भर्मी जोगिनी झुंड गुंड गहि डुंद मचावै।
डंकिनि भूत पिचास रागनाना बिधि गावै।
है नमुह तव सैन वर अहो सनुदल त्रासनी ॥
हो दयालु 'रघुनाथ' को दुर्गा दुर्गति नासनी ॥ ४ ॥
उदित कोटि रवि सरस तेज दैतन्ह को जारयौ।
उदधि सुअन सम सिथल कियो संतन दुष टारयौ ॥
उमानाम के कहे तीनहु ताप पराही।
रोग सोग संताप निकट तेहि आवत नाही ॥
दयासिंधु महिमा अतुल संकर हिए हुलासनी।
हो दयाल 'रघुनाथ' को दुर्गा दुर्गति नासनी ॥ ५ ॥

अंत—

घट घट की तुम हेतु सबै जानत महरानी।
तव सेवा है सुफल अंत चारो फल दानी ॥
आदि अंत नहि कबहि कोउ पावत अवसाना।
अमित प्रभाव प्रतछ वेद नित करत बषाना ॥
सोक हरो दाया करो अहो मातु सुष रासनी।
हो दयाल 'रघुनाथ' को दुर्गा दुर्गति नासनी ॥ १८ ॥
कियो न कबही देर जनन को दुषद देषि कै।
गहे हाथ तिरसूल कातमी सत्रु पेषि कै।
अपनी वोर निहारि आइ कै क्रिया करो तू।
कर क्रिपान करि क्रोध दुष्ट के गर्व हरो तू।

सर्वकला परतछ तू अहो अंब सुष रासनी ।
हो दयाल 'रघुनाथ' को दुर्गा दुर्गति नासनी ॥ ३९ ॥

—अपूर्ण

विषय —

देवी की स्तुति की गई है ।

संख्या २०८. रघुराज विलास, रचयिता—महाराज रघुराज सिंह (स्थान—रीवाँ), कागज—आधुनिक, पत्र—५०, आकार—८ X ६.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१९ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः···

अथ मंगलाचरन ॥

॥ राग भैरव ॥

जय मुकुंद माधव मधुसूदन मायापते मुरारे ।
कालिय मर्दन कृष्ण कृपाकर जय केशव कंसारे ॥
खल खंडन नवखंड पते कृत खांडव दाह खरारे ।
गोवर्द्धन धर गोपी नायक जय गोविंद वकारे ॥
जय सुचक्र धर नन्दक धारक दरवर कर दुरितारे ।
दीनोद्धार दीन प्रिय पावन सारस्वं संसारे ॥
प्रभो पार्थ सारथे महारथ जय विकुंठ दनु जारे ।
जय कपि मित्र पवित्र सेतुकर राघव दश कंठारे ॥
जय जटायु उद्धारण कारण शमित सकल देवारे ।
जय विरंचि वैरंच सुरासुर वन्दित भूरि भवारे ॥

अंत—

राग ललित

येहि विधि प्रभु रघुराज विलास करत निज जन दुष हरत ।
विविध अवतार धारि संतन सुषद दुष्टन दुषद जाय ।
पुनि छीर सिंधु सैन करत निज दासन संसार सागर पार
हमारि दूजो न अैसो और दयाल देषि परत ।

जो विन हेतु ही कृपा करत जै जै श्री निवास विरद विकास
रघुराजदास लीन्हौ उधारि ॥ २०० ॥

इति सिद्धि श्री सामराज महाराजाधिराज श्री महाराजा रघुराज सिंह जू देव जी··· कृते रघुराज विलास श्रीमद्रामायने प्रकरने संपूरन शुभमस्तु ॥

मिती भाद्र वदि ८ संवत १९३९ ॥

विषय—

रामचरित्र के साथ साथ समस्त अवतारों का वर्णन ।

संख्या २०६. प्रेमप्रमोद, रचयिता—रघुवर (स्थान-जुगराजपुर, बरेली), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२९ वि०, फ० सन् १२८०, ई० सन् १८७२, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

अथ पोथी प्रेम प्रमोद लिष्यते ॥ सीताराम ॥
प्रथम बंदौ गुरू चरन चरन सरन धरि ध्यान ।
गुरु की महिमा अमित है को करि सकै बषान ॥ १ ॥
गुरू सिष दीन्हो सिष्य को सिष सिषि भयो प्रवीन ।
मरजादा सब शिष्य की सो गुर के आधीन ॥ २ ॥
बंदौ उमा महेस को भेस दया को रूप ।
गजनायक सिधि सदन है महिमा अधिक अनूप ॥ ३ ॥
प्रेमहि बस औतार नर धरेउ सकल कल सुषकंद ।
सिंधु तनै आयध गहे ता भगनी लिये संग ॥ ४ ॥

\+ \+ \+

नगर येक जुगराजपुर तहँ नेवास सुषधाम ।
कुल कायथ सेवक प्रभु 'रघुबर' है मम नाम ॥ १२ ॥
तालुक राजापूर है प्रगन हवीना वास ।
जिला बरेली सुमिल है सुंदर सकल सुवास ॥ १३ ॥
गुरुपद रज उर ध्यान धरि श्रुति पुरान मत सोध ।
नाम करन यहि ग्रंथ को कीन्हा प्रेम प्रमोम (द) ॥ १४ ॥

सन बारह[१२] सै असी[८०] है सम्बत देव बताय।
वोनईस[१९] सै वोनतीस[२९] में सो लिपि कहेऊ बुझाय ॥ १५ ॥
यक सत येक हैं दोहरा वरन वरन के भेद।
कृपा गौरि गनेस की अग्या चारिऊ वेद ॥ १६ ॥

अंत—

परजादा सोई नारि को गवनै नही परभवन।
भवन भवन की श्रवन में बैठि रहै सुधि मौन ॥ ९६ ॥
ननद पियारी बोल की बोल सहौना जाय।
कहौ न देवर कुमति को कहौ तौ सासु रिसाय ॥ ९७ ॥
चली अली सी पारसी लई नागरी जान।
सादर पहुँचत हीं दुई पान जोरि सनमान ॥ ९८ ॥
तरी आरबीकानि हौ चारि वेद है साथ।
चलौ मिलौ ब्रिजराज कौ पुरवहु भो अभिलाष ॥ ९९ ॥
वेगि उठी सिंगार करि प्रेम नेम लिये साथ।
सदा सोहगिल राधिका जाके पति जदुनाथ ॥ १०० ॥
भजिये माया ब्रह्म को निसुदिन आठौ जाम।
भजिये राधे कृष्ण कौ औ भज सीताराम ॥ १०१ ॥
सीताराम सीताराम

विषय—

सखियों द्वारा राधा कृष्ण के प्रेम का वर्णन किया गया है।

रचनाकाल

सन बारह सै असी है सम्बत देव बताय।
वोनइस सै वोनतीस में सो लिपि कहेऊ बुझाय ॥ १५ ॥

संख्या २१० क. प्रेमपारसागर, रचयिता—रघुवर सखा, कागज—देशी, पत्र—७४, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९२, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः

॥ राग जैधुनि ॥

जै जै गुरुदेव तिहारी सरना।
दीन्ही संपचक गरे तुलसी को माला प्रभु उर्ध्व पुंड्र श्री तिलकमस्तक पै धरना।
जमकी त्रास छुटि गई सुनत श्रवन है सुमंत्र हिए मे बसाइ दीन हरि चरना।

वेद पुरान शास्त्र सबकी बात सुनी मैंने रामरूप गुरू मेरे सिष्य तरना।
पाहि पाहि रघुवर सषा सरन स्वामी तेरे हूजिए दयाल नेक नजर फेरना ॥ १ ॥

धरा गरूवानी धरै नहिधीर।

वसुमति गइ सरन विधिना के पाहिपाहि हरिए मेरी पीर।
काल नेमि कर अंस कंस षल प्रबल पातकी अधम सरीर।
चारि बदन लै सकलदेवसंग छीर समुद्र तट गान गंभीर।
सब्द रूप मे कहा महा प्रभु गोकुल जन्म होइ बनौ अभीर ॥
जमुना तट बृंदावन वासी बहुतक सुरनर धरी सरीर।
"रघुवर सषा" गोलोक नेवासी देवकी गर्भ बसे बलबीर ॥ २ ॥

अंत—

राधे की प्रीति कृष्ण मन करषै।
हरि हरि रटत राधिका राषी नैनन बीच मेघ झरि बरषै।
लषत ध्यान करि रूप लाडिली गद गदांग पुलकित तन हरषै।
छनक बीच जब परत रूपकी पतत भूमि तल हियरा धरषै।
सुरति सुरजु मे दृढ हरि बँधिगे मनु निरधनी रतन लहि परषै ॥
कान्ह वियोगी सषियन्ह कारन्ह मुरछित लतानि रसविनु अरषै।
"रघुवर सषा" सषिन्ह की लीला सुमिरत जोगध्यान मन परषै ॥ ९८ ॥

\+ + +

सुनतै हाल विकल भे लाल।
हा राधा राधा प्रिय लाडिलि कंपित गात गिरे ततकाल।
मुरछित होत अचेत छिनै एक मगन भए गहिभवन वेहाल।
धरि धीरज कहइ मै राधिकहि तन दुइ प्राण एक कर ख्याल।
तुम जनि विलग जनियो ऊधो मो राधे हृद बसे बिसाल।
जे राधे की सषो सकल मिली रासथली जिन्ह रची रसाल।
ते सब लीन होहिंगी मोमे ऊधो कछुक वितन ने काल।
नंद असोदा कीन तपेस्या सो पूरण कीन्ही बनि बाल।
"रघुवर सषा" अनंदित गाथा प्रेम लक्षणा कर यह ताल ॥१४१॥

इति श्री कृष्ण चरितामृत कुंडी रघुवर सषा बिरंचित प्रेमधार सागर संपूर्ण ॥

विषय—

श्री कृष्ण चरित्र (जन्म से लेकर उद्धव संवाद तक) का वर्णन संक्षेप में किया गया है।

संख्या २१० ख. प्रेमषार सागर, रचयिता—रघुवर सखा, कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९२, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी।

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः राग जै धुनि ॥
जै जै गुर देव तिहारी सरना ॥

दीन्ही संख चक्र गरे तुलसी को माला प्रभु उर्ध्व पुण्ड श्री तिलक मस्तक पै धरना।
जम की त्रास छूटि गई सुनत श्रवन है सुमंत्र हिए मे बसांइ दीन हरि चरना ॥
वेदहूँ पुरान शास्त्र सबकी बात सुनी मैंने रामरूप गुरू मेरो सिष्य तरना ॥
पाहि पाहि "रघुवर सषा" सरन स्वामी तेरे हूजिए दयाल नेक नजर फेरना ॥१॥

धरागरूवानी धरै नहिं धीर।

वसुमति गई सरन विधिना के पाहि पाहि हरिये मेरी पीर ॥
काल नेमि कर अंस कंस खल प्रवल पातकी अधम सरीर ॥
चारि वदन लै सकल देव संग छीर समुंद तट गान गंभीर ॥
शब्द रूप मेकहा महाप्रभु गोकुल जन्म होइ बनौ अभीर ॥
जमुना तट वृंदावन वासी बहुतक सुरनर धरी सरीर ॥
"रघुवर सखा" गोलोक निवासी देवकी गर्भ वसै बलवीर ॥ २ ॥

अंत—

देखो नेह के हाथ विकाने मुरारी।
जोइ जोइ नेह कीन तनमन ते तहँ तहँ प्रगटे खरारी
दास मलूकह माल बनाये चोर धरेसि भारी जगत की लाज नेवारी।
भक्त तिलोक के वने हैं टहलुवा अंतर जामी हारी।
जानि गये प्रभु ध्यान न आवै संतन काज संवारि सुधारि।
कविरा के गोन लदावन कारन रूपधरे वनजारी
प्रह विचारि पुकारि लुटाये सुषित भये हैं विषारी जुलाहा नाम संवारी।
कर दरपन छुइ लिये हरि नृप की सौज विचारी।
सेन भगत की लज्जा राखी नरतन भये नरहारी जगत पति पतित उधारी।
प्रेम निधी कोमलाल देषाए मग मे किये उजियारी।
बंदी छुड़ाइ मलेछ चेताये कान्ह कथा केरी वारी महाप्रभु भक्त उधारी।

यहि विधि बहुत सहाय किये हरि साधुन की रखवारी।
अवधकि कै हरि सएन किये मनु रघुवर सषा की बारी
जगावो राधा प्यारी

विषय—

सूर सागर के अनुसार कृष्ण का बाल चरित्र, यशोदा का प्रेम मय प्यार दुलार और गोपी उद्धव संवाद वर्णित है।

संख्या २११. फुटकर साषी और कायावेली, रचयिता—रजबजी, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ रजब जी की फुटकर साषी लिषते ॥
॥ गुरुदेव को अंग ॥

गुरु अषिर धर साध कवि सबनि करौं अस्तुति।
रजब की चक चूक परि षिमा करौ है सुति॥
सरीर सबद की एक गति त्रिविध भांति तन होय।
भले बुरे विचि बध बयन दोस न दीज्यौ कोई॥

\+ + +

अथ कायाबेली ग्रंथ अरथ संजुक्ति लिषतं ॥ राग सुहौ ॥ पद ॥ साचा सतगुरु राम मिलावै ॥ सब कुछ काया मांहि दिषावै ॥ टेक ॥ अर्थ साषी मैं ॥ सबद् माल ताला अक्षा अर्थ द्रव घरि मांहि ॥ रजब गुरु कूंची बिना हस्त सुझावै नाहि ॥ १ ॥

सांचा गुरुदेव ब्रह्म कौं मिलावै ॥ एक गुरु है आरसी सिष चषि अटके वारि। जन रजब चसमां गुरु काढै मैली षारि ॥ २ ॥

काया भंडार मैं सब कुछि सब विधि है ॥ जो ब्रह्मंडे सो प्यंडे ॥

अंत—

तुक ॥ काया मांहै जै जै कार ॥
अर्थ जै जै ब्रह्मराज सदा अनंद ॥
तुक ॥ काया माहैं अगम अगाध ॥
अर्थ ॥ काया की सौंज सो अगम अगाध ॥
भाव भगति सो अगम अगाध ॥

परमेश्वर का कृपा सो अग्म अगाध ॥
ब्रह्म जोति सो अग्म अगाध ॥
तुक ॥ काया मांहि तूर बजाइ ॥
अर्थ ॥ तूर अनाहद सबद अषंड धुनि षंड नहि ॥
तुक ॥ दादू प्रगट पी मिलै ॥
अर्थ ॥ पीव परमेश्वर क्रिया करि मिल्या
तुक ॥ गुरु मुषि रहे समाइ ॥
अर्थ ॥ गुरु प्रसादि शमाइ रहे ब्रह्मजोति में मिलि रहे ॥

इति कायाबेली ग्रंथ अर्थ भाव सहत संपूरण

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में रजबदास जी की थोड़ी सी फुटकर साखियाँ तथा 'कायाबेली (टीका)' नाम की छोटी सी रचना है। इनका विषय निर्गुण ब्रह्म की चर्चा है। 'कायाबेली' में यह दिखलाया गया है कि जो ब्रह्मांड में है वही पिंड (शरीर) में है। ज्ञान प्राप्ति के लिये सद्गुरु की परमावश्यकता है।

संख्या २१२. छिताई की कथा, रचयिता—रतनरंग, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—६'८×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२००, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६८२ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

···अधिक भोग ते वाढै रोग ॥
अति हासी ते होइ विगार—ज्यौ कोरौ पड़ौ व्योहार ॥
अति सरूप सीता कौ हर्ण-अधिक विषै रावन कौ मर्ण ॥
अधिक दान वलि गयौ पतार-अति कछु पै न भलौ संसार ॥
त्यौ सौरसी अधिक सुषराउ-सुनौ चितेरे कियौ उपाउ ॥
द्यौगिरि थान राम द्यौ राउ-समदि चितेरौ कियौ पसाउ ॥
वरस चारि चितेरो रह्यौ-पुणि बाहुरि दिली सामह्यौ ॥
दई भेट रामद्यौ भुवाल-भीम सेणि कपूर रसाल ॥
बहुतनिक रतन निमोलिक जरे-लै हैवति कै आगै धरे ॥
कहिये द्यौगिरि की कैफीति-रामदेउ पूछै षैरीत (खूब खैरियत) ॥
वूझै दिली कौ नरणाऊ-कैसे भौ कंन्या कौ व्याहु ॥
अरु मुह देषि कहै सुलितान-वुझै कछू अहमति का ज्यान ॥
मुह दुवरौ गयौ कुम्हिलाइ कीयो दूवरो द्यौगिरि राइ ॥
नाइ सीसु तिहि कीयौ सलामु-अबहि नहीं कहिवे कौ कामु ॥

अंत—

रिपुदल भंजन भुवन असेस—करै राजु सौरसी नरेश।
अहि निसि छिताई हीयै—जिसैं भुजंग हेम मणि लीयै॥
जैसे जती जोग अभ्यास—ज्यौ पतिव्रता कंत की दास॥
ढोल समुद साजि दलु गयौ—देस असेसु समुद बिग लयौ॥
मात पिता जिय अति सुष लह्यौ—धौगिरि दुर्ग बहुरि सामह्यौ॥
कीयौ समौ कंचन कै तोल—ओछे देषि न रायर बोल॥
'रतनरंग' कवि देषि बिचारि—करी कथा सों अमृत सार॥
ज्यों मंदिर दीपक बिनु नेह—साइर सीप स्वाति बिनु मेह॥
त्यौं बिनु कलस कथा आरंभ—लीनी बरणि कथा कवि रंग।
इतिनी कथा सुनै दै कान—तिनकौ फुरै गंग स्नान॥
चरित छिताई आयौ छेह—जयौ सकल मै त्रिभुवन देह॥

इति श्री छिताई कथा संपूर्ण समापता॥ लिषितं पठनार्थ महाराज कुवार श्री हरी सिंघ जी लिषितं श्री राम कायथ फागुन वदि ४ चंद्रे संवत् १९८२ मधे सुभं भवेतु

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ में अलाउद्दीन की देवगिरि विजय की कथा का वर्णन है। देवगिरि में राजा रामदेव राज करता था। उसके समय में दिल्ली नगर से एक चित्रकार वहाँ गया और चार वर्ष रहा। जब वह आने लगा तो रामदेव ने अलाउद्दीन के लिये बहुमूल्य भेंट और भीमसेनी कपूर भेजा। जिस समय अलाउद्दीन भेंट देख रहा था और कपूर की प्रशंसा कर रहा था उस समय उसके ऊपर देवगिरि की एक दासी हँसी और कहा कि जिस कपूर की तुम भूरि भूरि प्रशंसा कर रहे हो वह हम लोगों के लिये एक तुच्छ पदार्थ है। बाद में चित्रकार ने देवगिरि की राजकुमारी छिताई का भी चित्र दिखलाया जिसे देखकर अलाउद्दीन मूर्छित हो गया। फलतः देवगिरि पर चढ़ाई हुई और विजय के रूप में अलाउद्दीन की अभीष्ट पूर्ति हुई। कथा एतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। काव्यों में छिताई का उल्लेख वीरसिंहदेव चरित्र (केशव कवि कृत) और पद्मावत (जायसीकृत) दोनों में है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रेम कथा काव्यों की एक धारा सूफी धारा से भिन्न चल रही थी। उसका प्रमाण छिताई कथा मे भी मिलता है।

संख्या २१३. प्रेमरत्न, रचयिता—रत्नकवि, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—५·६ × १०·८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४४ वि०, १७८७ ई०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः

॥ अथ प्रेमरत्न लिष्यते ॥

॥ सोरठा ॥

अविगत आनंद कंद परम पुरुष परमातमा ।
सुमिरि सुपरमानंद गावत कछु हरि जस विमल ॥ १ ॥
पुनि गुरुपद सिर नाय उरधरि तिन्हके वचनवर ।
कृपा तिनहि करि पाय 'प्रेमरतन' भाषत 'रतन' ॥ २ ॥
अगम उदधि मधि जाय पंगु तरी विनु जिमि तरन ।
जैसीय रुचि मन पाहि अमित कान्ह जस गान कीय ॥ ३ ॥
पै मो मन विश्वास पुरवत पूरन काम प्रभु ।
उर पुर सकल निवास निज जन कौ अभिलाष लषि ॥ ४ ॥

अंत—

ठारह[१८] सै चालीस[४०] चतुर वरष जव विरत भय ।
विक्रम नृप अवनीस भये भयो यह ग्रंथ तव ॥
माह माह के माहि अति सुभरी दीसत पंचमी ।
गायो परम उछाह मंगल मंगल वार वार ॥
कह्यौ ग्रंथ अनुमान भय सत अरसठ चौपाई ।
तिहि अर्धरू अठजान दोहा सोरह सोरठा ॥
कासी नाम सुधाम (पुरी) सदा शिव की सुषद ।
तीरथ परम ललाम सुभग मुक्त वरदान छन ॥
ता पावन पुर माहि भयौ जनम या ग्रंथ कौ ।
महिमा वरनि न जाय सगुन रूप रस जस भरी ॥
कृष्ण नाम सुख मूल कलमल दुष भंजत भजत ।
पावहि भव निधि कूल जाके मन यह रस रमहि ॥
कुरुक्षेत्र सुभथान ब्रज वासीहि हरकौ मिलन ।
लीला रस की खान 'प्रेमरतन' गायो 'रतन' ॥ १६ ॥
इति श्री रतन विरचितं 'प्रेमरत्न' समाप्तः
श्री ला० गिरधारी लाल साकीन महल्ला पीअरी ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'प्रेमरत्न' है। इसमें कुरुक्षेत्र के पर्व पर श्रीकृष्ण तथा ब्रजवासियोंके मिलन का वर्णन है। गोकुल से मथुरा जाने पर कृष्ण ब्रजवासियों से पुनः मिलने

का वचन दे गये थे, किंतु परिस्थितियों की विषमता के कारण वे वापस न आ सके और मथुरा छोड़कर द्वारिका चले गए। एक समय जब सूर्यग्रहण पड़ा तो स्नान के निमित्त ब्रजवासी और श्री कृष्ण भी कुरुक्षेत्र गए और एक दूसरे से मिलकर सुखी हुए।

संख्या २१४. रामरछ्या, रचयिता—रमइराम, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—७३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—सरल चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशा साऐ नमः श्री रामरछया ॥

जैत जैत श्रीचकंधर (? चक्रधर) अभीनाशी वानी जाते टुटे
भ्रम का कोट। शंभु प्रताप शाधु की महीमा रापो कआ शतगुरु का वोट।
अजर मंडल को रावला शेत दीप अशाथान।
नीराकाल ले आशन शोहे हंशा नीवान।
अधर शुरती की डोरी एक टक ध्यान शमाधी।
वीना अंक को अछर अजपाजाप अवराध।
नीरंकाल की छाआ भआ त्रीभुवन अंजोर।
शोधर सद्दा अनंदीतां पालान पकरै चोर।
अलप पुरुप चौकी करै फीरै दोहाई धाम।
रोम रोम नाराऐन रछया सीताराम।
कहरवान हरी को प्रचंड। चौदह भुवन फीरो नौषंड।
चक्र सुदरशन रछया करै। भ्रम व आर दोष शव जरै।

चौदह भुअन त्रीलोक मह चलत पंथ शोधीर।
चक्र सुदरशन रछया करै रछया राम रघुवीर।
श्री गुरु चरन प्रताप ने छुटे मनका धोष।
ग्वो वान श्री क्रीशुन को पावो मन शंतोष।
गुर पद आस शरोस भले दीढ़ कै गह वीस्वास।
मंत्र वो शीश हाथ दे होत कशट दुख नास।
देह नीमल करै प्रान संकट हरै।
जैत जैत श्री चक्रधर राम रछया करै।
हाट के बाट मो मध्य के घाट मो रोम के दोश मो रामरछया करै।
शांझ शवाह (? सुबह) मो धुप अरु छाह
मो दग दस रैनी दीन राम रछ्या करै।

अंत—

चक्र शुदरशन जा शीर शोहंग । शो तौव सव जीव मन मोहंग ॥
मारो दुशट करो नीर बीश । ऊलटा चक्र फीरै चहुदीश ॥
गहुर ग्यान हनुमान हकारी । रछ्या "रमीताराम" गोहारी ॥

\+ + +

पहुमी अगीनी शभ तीरथ भरमा । फीरी फीरी गुर चरोनो परीकरमा ॥
दोही शयत अपंडीत राश्रा । रछाराम ते नृीमल काश्रा ।
राम रछ्या शुनै चीत कै सव देवता रंछं
राम रछ्या पढै शीर प्रनाम गुर वरदाऐकं ।
"भगत रमै आराम" रछ्या शीधी शकल फलदाऐकं ॥
प्रताप तेरो भग्त वछल शंत चरन गुरन्मोन्मह मंत्र वाशठी जो जपे
नर हरन शंकटता शुकं होत कशट ते नरक तारो सव दोष वीनाशकं

इती श्री राम रछ्या रमइराम क्रीती पढ़ंते शुनंते भगती मुकुती लभते श्रीगुर कै चरनारवींद के म्मस्तते इती शपुरंन रामरछ्या क्रीत जो देषा शो लीषा म्म दोष न दीअते बोलो जै शीताराम जैशीताराम ॥ १ ॥

विषय—

रामका माहात्म्य वर्णन किया गया है ।

संख्या २१५. भक्तमाहात्म्य, रचयिता—रमनदास, कागज—देशी, पत्र—५९, आकार—८¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी । दाता—श्री शिवदासराय जी स्थान व डाकघर—लिलकर, जि०—बलिया द्वारा—श्री कुलदीप-नारायण राय जी, 'झड़प, अध्यापक, स्थान—लिलकर, जिला—बलिया

आदि—

\+ + +

देषी तहा तब मुनिमन लोभा ॥
मन महु आर्जुन करही बीचारा ।
ठाकुर काज करउ अनुसारा ।
सुमन लेप हम इछाकीना । रपवारा तब देहय कीना ॥
बोलेउ बानर वेगी अती काके दूत चली आइ ।
हनुमान के उपवन नत मारो रीसाइ ॥

बोले आर्जुन कवन ते कीसा । केहि केवल पालहुवल रीसा ॥
मन अत काटी वोलु संभारी ।

देषसी नाही धनुधारी ॥

तव भागेष आसीत भै माना । हनुमान के पास पराना ॥
सुनहु पवन सुत अजगुत भैऊ । उपवन माह दुत एक गैऊ ॥
केदली वन वह करत उजारी । कहइ वचन मे सेवक मुरारी ॥
सुनी हनुमान कोप मन कीना । कर मह एक सैल तव लीना ॥
वागही पैठी वोलु रीसीआई । काके दूत कहा चली आई ॥

॥ छंद ॥

मध्य—

वह स्राप दीजै मोही कह अटकु ''सनही जरी जाउ जै ।
नीज पाता से कह वुझी वाते राव कुल नीज तजै ॥
नही होइ मम उधार भ्रम वीचारी डर महा ।
कहु दास रमन प्रचारी मन मे अजनी करनी तह तहा ॥

अंत—

एक समे मुनि नारद आग्रे करत''।
गावत हरिगुन गाव मन पहुँचे कास ''त ॥
राजा हरषी दंडवत कीना । चरन पषारीमुनि के दीन्हा ।
नीगुरा सदा षोट है भाई । तोहरे देह पाप बहु आई ।
दीछा बीना न तरमो कोई । ब्रह्मा वीस्न महेस होई ।
नीज पसंग मुनी कह दीना । वाचालागी काम मद दीना ।

भीआ जानी बोह अधम सुभाऊ ।
ऐगुन आठ सदा गुन राऊ ।
ताडन तेत्रीय तब होई ।
दीलनाडी नामी न जोई ।
राजा के मन सीप आई ।

\+ \+ \+

—अपूर्ण

विषय—

भक्तों का वर्णन किया गया है ।

संख्या २१६ क. कवित्त, रचयिता—रसखान, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९९, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९७६, सन् १९१९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः

॥ अथ रसखान ॥

॥ कवित्त ॥

गाइ दुहाइ न पावै कहूँ न कहूँ यह मेरी गरी निकस्यो है।
धीर समीर कलिंदी के तीर पस्यो रहै आजुही डीठि पर्यो है॥
जारस पान विलोकनि ही सहसा ढरी राँग सो आँग ढर्यो है।
गाइनु घेरत हेरतु सो पट फेरतु टेरतु आनि अर्यो है॥ १॥
डोलिबो कुंजनि कुंजनि को अरु बेन बजाय कै धेनु चरैबो।
मोहनि ताननि सौं रसखानि सखानि के संग कौ गोधन गैबो॥
ए सब डारि दिये मन मारि बिसारि दियो सिगरे सुख पैबो।
भूलिहै क्यों करिनेह नहीं को दही कहि कै मुसिकाइ चितैबो॥ २॥

अंत—

सोई है रास मै नैसक नाचि कै नांच नचायो कितौ सबकौं जिन।
सोई हैरां रसखानि किते मनुहारनि सूधे चितौ तन हौ छिन।
तो मैं धौ कौन मनोहर भाउ विलोकिहहै अरु हाहा करै किन।
औसर ऐसो मिलै न मिलै फिरि नंद की मौंडो कनौड़ो करै किन॥ ९३॥

इति श्री रसखानि कवितावली समाप्तं॥

यह पुस्तक जैपुर की आई पुस्तक से लिषी गई॥ मिती कुवार वदी ६ भौमवार संवत् १९७६॥

तारीख १० सितंबर सन् १९१९ ईसवी लिखा पंडित सूर्यनारायण मिश्र।

विषय—

राधा कृष्ण का सिंगार तथा भक्ति वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत कवित्त सवैए निम्नलिखित रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में हैं:—

१—कुछ संस्कृत रचनाएँ, २—श्री कृष्ण स्त्रोत्र-मिश्र सुखलाल कृत, ३—अयोध्या पचीसी-बारैठ मेदराम जी, ४—कलि पचीसी-पदमाकर।

हस्तलेख रत्नाकर संग्रह में है।

संख्या २१६ ख. दानलीला, रचयिता – रसखान (स्थान—वृंदाबन), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६·४ × ४·८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) -१६, परिमाण (अनुष्टुप्)-४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ दान लीला

आवत हो रस के बसके तुम जानत हो रस होत कहा हो।
नेक अबै रस भीजन दै हो दिनादस के अलबेले लला हो॥
अंत वही दिन आवैगे तुम गुआलिन ही संग सखा हो।
लेंध गे कहा इन बातन ते धर जाव लला अबही लरका हो॥
आइहो आज नई बृज में कछु नैयेन नचाये के रार मचैहो।
जानत हो हमहू छलके दध बेचन जाव सो जान न पैहो॥
ले हो चुकायै सबै तुमसे 'रसखान' भले मन में पछतैहो।
जो तुम छोड बडे घर के अइलात कहा हो जगातन दैहो॥

अंत —

मेरो को करे निआव हौ तो तिन लोकराव
तुम्ह घेरी येहि चाँव दाँव भलो पाये है।
वृंदावन कुंज माह कदम की छाह चलो
अंक भरे मेर लैहो जैसो मन भायो है।
हिहा मन मानिक कच पोतन की जगात हो
लगायो गोरस तो डेर डेर खाहु पीयो।

वेर वेर देख..............
नो रूप दानि कान्ह आयो है॥
... ...।

नव लख गाय सुनि हम नंद के तापर दूध दही न अघाने।
माँगत भीष फिरो ,बनही बन झूठि बातन के मन माने॥
औरन के नारीन को मुख जोअत लाज गहो कछु होहु सयाने॥
भले जु भले घर जाहु चले बस आउ बिंदाबन दा जाने॥ ६॥
इति श्री दानलीला संपूर्णम्॥

लिषी वैशाष वदी ३ सनिवार स्वाती नक्षत्र हर्षण जोग ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'दानलीला' है। इसमें कृष्ण का दही बेचने जाती हुई गोपियों को रोकने और उनसे गोरस दान लेने की कथा का संक्षेप में वर्णन है।

कथा कवित्त सवैयों तथा उत्तर प्रत्युत्तर के रूप में है।

संख्या २१७. बृजेंद्रप्रकाश, रचयिता—रसानंद (स्थान—विश्वपुर, बृजमंडल), कागज—देशी, पत्र—११३, आकार—११ × ७३⁄४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२५, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९१ वि०, सन् १८३४ ई०, लिपिकाल—सं० १९७६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

श्री बृज मंडनो जयति ॥ अथ बृजेन्द्रप्रकाश लिष्यते ॥

॥ छप्पै ॥

माथें मंडित मुकट शिषंड तिलक गोरोचन।
दर्पित शत कंदर्प दर्प मद घूर्णित लोचन।
कुंडिल मकराकार डुलत झलमलत कपोलनि।
तडिदिव कटि पट पीति मत्त इभ मदहकत डोलनि।
मुष कंज मंजु मुरली कुणित श्रवन सुरस आनंद श्रवन।
जय गोकुलेश मृदुलेश जय गोप भेश गोपीरवन ॥ १ ॥

× + +

॥ अथ राजवंश वर्नंनं ॥

प्रघट भयौ ससि वंस तें जादव वंस अपार।
तिही वंस अवतंस नृप प्रगटे सिनि सिनिवार ॥ ३ ॥
मन वच क्रम श्रद्धा सहित जे पूजत गिरिराज।
ह्वै प्रसन्न गिरिधर दियौ व्रज मंडल कौराज ॥ ४ ॥
है अनेक नव षंड मैं देस अनूपम और।
पै तिन मैं बृजदेस है सकल देस सिरमौर ॥ ५ ॥
तिही वंस प्रघट भये श्री वदनेस नरेस।
पूजि चरन गिरिराज के कियौ राजबृज देस। ॥ ६ ॥

छंद हनूफाल

है ब्रज नृपति वदनेस । मेट्यौ प्रजानिकलेस ॥
धारयौ धरन निजुधर्मं । आचरत शुभकुल कर्म ॥ ७ ॥
ग्रह ग्रह प्रमोद अपार । नित होत मंगल चार ।
गढ रचे चारि ललाम । गनि 'वैरि' 'डीग' सुनाम ॥ ८ ॥
तीज्यौ 'भरथपुर' जानि । चौथी 'कुम्हेरि' बखानि ॥
पालक प्रजा चितचाइ । संपति धरें बहु भाइ ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

भए पुत्र वदनेस ग्रह बीस दोइ उतपत्ति ।
तिनके गुन असनाम कौ वरनि कहौं वितपत्ति १०० ॥

छंद पद्धरी

कहि प्रथम पुत्र सूरज्ज नाम । परताप सिंघ परताप धाम ।
पुनि मेद भवानिय सिंघ वीर । ये उभय सहोदर गुन गंभीर ॥ ११ ॥
बहु वीर नराइनि वीर रूप । अस लाल सिंघ सुत अति अनूप ।
सुलतान सिंघ हुव अतिअमान । जिहि आन गहै सुलताँन राँन ॥ १२ ॥
खुस्याल सिंघ उद्दार चित्त । हर हाल माहि पुशहाल नित्त ।
सुत सभाराम हुव सभाजीत । कहि मानसिंघ भट रन अभीत ॥ १३ ॥
जिमि रिपु गुमाँन मरदन गुमाँन । तिमि अषय सिंघ बल अष जाँम ।
हुव देवी सिंघ जु देव रूप । तिमि जोध सिंघ जोधा अनूप ॥ १४ ॥
बलराम राम बल तेजवंत । बलराम चरन सेवक अनंत ।
कहि उदय सिंध अरु रामकृष्ण ॥ १५ ॥
सकतेस सिंघ हिम्मति अनूप । जिनकी हिम्मिति है शक्तिरूप ॥

मन कौ वलेल हुव सुत दलेल । गहि सेल दुवनि वगमेल ठेल ॥ १६ ॥
असि उग्र सवाई राम पुत्र । जिहि जुद्ध जुरत सकपकत शत्रु ।
जो उभय बीस सुत गिने एह । प्रगटे सुआइ बृजराज गेह ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

जेठौ सुत सूरज बली जिनि जीते बहु देस ।
आपु अछित जुवराज पद दीनौ ताहि बृजेस ॥

+ + +

श्री सुजान वदन्नेस सुत कीनैं समर अपार ।
कछु इक सूदन कवि कहे 'चरित सुजाँन' मझार ॥ २१ ॥

॥ छंद पद्धरी ॥

तिहि पुत्र पाँच जग विदित नाम । हुव धर्म तेज छबि सील धाम ।
गनि प्रथम सिंघ नाहर उदार । जिनि कृष्ण भक्ति कौं मानि सार ॥ २२ ॥
रवि चंद सरोवरि आदि और । वापियौ कुंज बृज ठौर ठौर ॥
दूजौ सु जवाहर सिंघ बीर । धर्मंग्य तेज गुन कौ गंभीर ॥ २३ ॥
चढि फरकन गरपै कुपित होइ । मेवाति सकल डारी बिलोइ ॥

× × ×

इहि भाँति राज षट वर्ष कीन । तिहि अंत समय सुरलोक लीन ॥
लघु अनुज तासु रतनेस नाम । हुव भूप तेज परताप धाँम ॥ २६ ॥
तिहि पाछैं अति उद्भट सरीर । हुव नवलसिंह नृप गुन गंभीर ॥
जिनि प्रथम सिंघ दल को दबट्टि । जित्तियै जंग अरि ठट्ट कट्टि ॥ २७ ॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

ता पाछैं भूपति भये श्री बलदेव सुजान ।
रॉन खाँन सुलताँन सब मानत तिनकी आँन ॥ १५ ॥

× × ×

जिनके सुत बलवंत नृप प्रघट भरथ पुर थाम ।
राजत तिनके गुन गननि आगै करहु बषान ॥ १७ ॥

अंत—

॥ अथ ग्रंथ प्रयोजन ॥

॥ छंद अरिल्ल ॥

जब ते श्री बलवंत वसुमती पति भए ।
तब ते घर घर प्रजा लोग सुख मैं छए ॥
नित प्रति मंगल घटा मोद झर लावती ।
नगर भरथपुर लसत मनो अमरावती ॥ १ ॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

नृप ब्रजेन्द्र के हुकम को मानि हियें विस्वास।
'रस आनंद' साहित्य मय रच्यौ 'ब्रजेंद्र प्रकास' ॥ २२ ॥

\+ + +

श्री गुपाल गुरुदेव के बंदौं चरन सरोज।
'रस आनंद' तिनकी कृपा रचि कविता रसचोज ॥ १ ॥

॥ अथ ग्रंथारंभ ॥

॥ दोहा ॥

आलंबन शृंगार के बृजदेवी बृजभूप।
ताही नाइक नाइका बरनत सुकवि सरूप ॥ २ ॥
रचि विरंचि पचि वेद मत प्रकृति पुरुष संजोग।
निगुन रूप तजि सगुनमय करत विविधि विधि भोग ॥ ३ ॥
ताते प्रथमहि नाइका प्रकृति प्रभाव बखानि।
बहुरयौं पुरुष प्रभाव मैं नाइक रूप प्रमानि ॥ ४ ॥

॥ अथ नाइका निरूपणं ॥

जाकी दुति देषैं द्रगनि उपजैं रस की चाह।
ताही कौ कहि नाइका बरनत हैं कवि नाह ॥ ५ ॥

॥ कवित्त ॥

भूलै नाहिं तनकौ सुनत की सरूप वाकौ
कनकौ तुलै न रती पलक पलान मैं।
मधुराई बचन कराई कोर कज्जल की
तैसी उजिलाई दंत पंत मुसिकान मैं।
कुज (? कुच) कठिनाई कर कंज कोमलाई
रस आनंद ललाई झलकाई तरवान मैं।
गति थिरताई चप चीच चपलाई
भरी भौंह नवकाई और सुधाई अधरान मैं ॥ ६ ॥
अथ उत्तिम दूती लक्षिनं

॥ दोहा ॥

मोहै मन कौं सुधा सम मधुर बचन कहि जोइ।
उत्तिम रचनाँ कौं रचै दूती उत्तिम सोइ ॥ २५ ॥

पायौ सोम सीतल तें ब्याल कौ प्रभाव लाल
रोम रोम प्रघट सुभाव पायौ रूप कौ ।
पायौ दृग आरत निहारत तिहारौ मग
उघरत झपत करत आँसू टपकौ ।
एते पै नहाय 'रस आनंद' तिहारौ पायौ
पायौ है सुमन फल जीवन अलप कौ ।
उर उनमाद पायौ बैनन विवाद पायौ
रसना प्रसाद पायौ प्यारे नाम जप कौ ॥ २६ ॥

× × ×

अथ कवि की प्रार्थना ॥

॥ दोहा ॥

बृज मंडल में 'विश्वपुर' कौशिक मुनि कौ धाँम ।
गंगा यमुना मध्य सो 'रस आनँद' कौ ठाम ॥ २ ॥

॥ छप्पै ॥

धर्यौ आदि अवतार को हिरन्याक्ष विनाँशन ।
धरनि धरी तहँ तीर्थ धरनिधर उग्र प्रकाशन ॥
ता सरवर कौ नीर मंजु मुनिमन सो सोहै ।
पाप ताप कौं दवन अवनि सुरसरि सौं सोहै ॥
जहँ चक्रवाक स्यारस सरस 'रस आनँद' क्रीड़ा करत ।
विगसंत कमल तिनके दरस जन्मांतर के दुख टरन ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

नृप बृजेंद्र कौ सुजस सुनि माँनि हियें विस्वास ।
'रस आनंद' तनि (?तजि) विश्वपुर कियौ भरतपुर वास ॥ ४ ॥
गुन गाहक चाहक रशिक मोदी जी बलदेव ।
अति उदार साहस सहित ब्रज बिहार के सेव ॥ ५ ॥
तिनसौं प्रघटे मित्रता मन पायौ बहु मोद ।
नृप ब्रजेंद्र हित ग्रंथ को कीनौ मंत्र बिनोद ॥ ६ ॥
समझि मनोरथ ग्रंथ कौ नृप आज्ञा प्रमाँन ।
श्री गुपाल के मंत्र मधि दियौ कविहि स्वस्थान ॥ ७ ॥
श्री गुपाल के दरस तें पायौ मोद अनंत ।
राजत तहाँ महंत श्री जुगलदास गुनवंत ॥ ८ ॥

× × ×

सुमिरि रूप गुण दंपती अपनी मति अनुसार।
श्री वल्लभ पद रज कृपा भयौ ग्रंथ विस्तार ॥ १० ॥
संवत् अष्टादश[१८] सतक नब्बै[९१] एक प्रमाँनि।
आस्वनि दसमी शुक्ल पष त्यौं रविवार वषाँनि ॥ ११ ॥
पाइ विजय दसमी सुदिन नृप बलवंत उदार।
नजरि गुजारन हेत यह कीनौ ग्रंथ तयार ॥ १२ ॥

+ + +

आदि ही नाइका भेद विचछ्छन लछ्छिन रूप कौ राच्यौ विजास है।
फेरि कह्यौ सुखदाइक नाइक जो चित चाइक सौतिहि पास है।
हाव विभाव अनुभाव औ सात्विक स्थाई समेत नवौ रस रास है।
श्री बलवंत रिझावन कौ 'रसआनंद' कीनौं 'वृजेंद्र प्रकास' है ॥१७॥

सिद्धि श्री जदुवंसावतंस श्री मन्महाराजाधिराज श्री वृजेन्द्र बलवंत सिंह जी देवाग्या प्रवर्तक रस आनंद विरचिते वृजेन्द्र प्रकासे ग्रंथ समाप्त वर्ननो नाम पंचदशो प्रकाश ॥ १५ ॥ समाप्तं ॥ शुभमस्तु कल्याण मस्तु ॥ मिती श्रावण कृष्ण मावास्या ॥ संवत् १९७९ हस्ताक्षर बटुक प्रसाद कायस्थ।

विषय—

नायक नायिका भेद वर्णन।

ग्रंथ में १५ अध्याय (प्रकाश) हैं जिनका ब्यौरा नीचे दिया जाता है :—

रचनाकाल

संवत् अष्टादश सतक नव्वै एक प्रमाँनि । आस्विनि दसमी शुक्ल पष त्यौं रविवार बखाँनि ॥ ११ ॥

संख्या २१८. कृष्णजन्मोत्सव, रचयिता रसिकदास, कागज—देशी, पत्र—१ आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तकप्रकाश जोधपुर

आदि —

श्रीकृष्णाय नमः ॥ श्री हरिः ॥

जनमु सुत को होत ही आनंद भयो नंद राइ ।
महा महोछो आजु कीजै बढ्यो मनु न रहाइ ॥ १ ॥
विप्र वैदिक बोलि कैं करि स्नान वेठे आइ ।
भाव निर्मल पहरि भूखन स्वस्ति वचन पठाइ ॥ २ ॥
जात कर्म कराइ विधि सौं पितर देव पुजाइ ।
करि अलंकृत द्विजन कौं द्वै लाख दीनी गाइ ॥ ३ ॥

अंत—

दे बधाई नंद भूखन बसन हार अघाइ ।
नंद दीने पहरि फूली फिरति रोहिनि माइ ॥ २१ ॥
सकल व्रज तब भई संपति रमारूप बसाइ ।
करन लीला रसिक पीतम रहे व्रज में छाइ ॥ २२ ॥

॥ श्री गोपीजन वल्लभो विजयतेतराम् ॥

विषय—

२२ दोहों में कृष्ण राधा गुणगान ॥

संख्या २१९. कवित्त रसिकराई कृत, रचयिता—रसिकराई, कागज—देशी, पत्र—१, आकार ६'८ × ५'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्री हरिः ॥ कवित्त ॥

कछु न सुहाइ जो पै समुझाई रहै,
मन मुरझाई सो बुझाई केसे छिन में ।

बिरह अगनि जाकी लगनि कठिन अति,
रसिकी पनि निसु दिन रहे जिन में।
अधिक उसास सुलगावत रहत
पास ताही तें उदास भइ रहति सोतिन में।
कहत 'रसिक राइ' रहतु न कछु अब जा बन
तुम मिलोगे कुल सबई दिन में॥ १॥

अंत—

कबहूक करे आरि तूही भूलि आगे आलि,
कबहू देति गारि सखी सों रिसाति हैं।
कबहूक हसति उसति अधर न फुनि,
कबहूक देकें सेन मे नई तरति हैं।
कबहूक फेरति बदन पर हाथ फुनि,
कबहूक सखी साथ बातनि लगाति है।
कहतु 'रशीकराई' छिनु छिनु मुरि जाई,
किये नारि नीची येह नारिकोन जाति है॥ १६॥

विषय—

शृंगार रस के कवित्त

संख्या २२०, गीताभाषानुवाद, रचयिता—रसिक बिहारी लाल, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—५ × ६.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२१ वि०, प्राप्ति-स्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधा रमणो जयति॥ धृतराष्ट्र उवाच॥
धर्मक्षेत्र कुरु क्षेत्र में मिलजुद्द के साज।
संजय मो सुत पांडवन कीने कैसे काज॥ १॥
संजय उवाच॥
पांडव सेना व्यूह लषि दुर्योधन ढिग आय।
निज आचारज द्रोण सों बोल्यौ ऐसें भाय॥ २॥
पांडव सेना अति बडी आचारज जू देषि।
धृष्ट द्युमन तुम शिष्य ने व्यूह रच्यौ जु विशेषि॥ ३॥
सूर धनुषधारी बडे अर्जुन भीम समान।
द्रुपद महारथी और पुनि है विराट युयुधान॥ ४॥

अंत—

जोगेश्वर श्री कृष्ण जू अर्जुन है ता ठौर ॥
तहाँ विजय अरू जीव है अष्ट संपदा और ॥ ८० ॥
यह गीता अद्भुत रतन श्रीमुख कियौ बखान ॥
बार बार निरधार करि परा भक्ति कौ ज्ञान ॥ ८१ ॥
भक्ति वस्य श्री कृष्ण जू यह कीनो निरधार ।
करै भक्त इच्छा सवै यहै वेद कौ सार ॥ ८२ ॥
हरि अर्जुन संवाद यह अद्भुत है यह ख्याल ।
पुत्र हेत वर्णन कियौ 'रसिक विहारी लाल' ॥ ८३ ॥

इति श्री भगवत गीता भाषा श्री कृष्णार्जुन संवादे सन्यास योगा नाम अष्टादशो-ध्यायः संवत् १६२१ मिती वैशाख सुदि ५ शुभमस्तु

विषय—

श्री मद्भगवत् गीता का भाषानुवाद ।

संख्या २२१. रुक्मिनी मंगल, रचयिता—राघोदास उपाध्याय, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—३·५×८.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०० वि०, लिपिकाल—सं० १८०० वि०, प्राप्तिस्थान—श्री महेशप्रसाद मिश्र, ग्राम—लिबहावरा, डा०—अतरामपुर, जिला—इलाहाबाद

आदि—

श्री कृष्णाय नमः

लक्ष्मीपति पद कमल हिये हठ ध्याइये ।
सीताराम उदार चरण मन लाइये ॥
प्रथम लीजे नाम सुखि पाइये ।
गणपति चरण मनाइ सुमंगल गाइये ॥
लै शारद कर नाम सो विधिहि मनाइये ।
सुर नर मुनि गण देव तो जस गाइये ॥
भूपति भीषम राज सो कुंडिनपुर वसै ।
तनया तासु कुमारि तौ मोहँहि प्रियवसै ॥

अंत—

छंद

तनै संतत निरषि राघोदास हिए धरि बूझई ।
दुख रोग शोग अनेक संकट निमिषि मह सब हंमई ।

यह कथा परम अपार पुन्या सुनै जो मन लाइकै ।
सो जाय वैकुण्ठ लीजे विविध सुख जग पाइकै ॥

संवत गए दसअष्ट[१८००] सद (?त) गुरुवार सावन पंचमी ।
कीन्ही कथा आनंद राघोदास हिय धरि लछिमी ॥
वास संवत मास पावन जास सुनि सब पाप को ।
वरना जो मंगल धाम पूरन काम रुकमिनी नाह को ॥
इति श्री राघोदासो उपाध्याय विरचिते रुकुमिनि मंगल संपूर्णम्

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ 'रुक्मिनी मंगल' में कृष्ण रुक्मिनी के विवाह की कथा है। यह ग्रंथ व्रजभाषा तथा बरवै छंद में लिखा गया है।

संख्या ७२२. लक्ष्मी चरित्र, रचयिता—रामकृष्ण (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ वि०, सन् १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा सदावर्ती, मोहल्ला—आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्रीगणेशायेनमः

॥ अथ लक्ष्मी चरित्र लिख्यते ॥

॥ चौपई ॥

कहै नारायन बाल कन्हाई । सुनहु लक्ष्मी कहौ बुझाई ॥
मैं तुमसे कछु पूछो जाना । अयन अंत कहो परिमाना ॥
कहा करहु तुम केहि विधि माहा । कैसे निस्तार करु नर नाहा ॥
सत्य बात आपन सब कहहु । केहि कै गृह तुमही परिहरहु ॥
सुनि लछिमी तब मन बिहरानी । कहो बात सुनु सारंगपानी ॥
जब मैं पुर तपेस्या साधी । अब मैं आय चरन तुव राधी ॥
जुग जुग मोहि चरन तुव आसा । जौ दयाल चिर पुरवहु आसा ॥
सबै हेतु जानहु चतुराई । मोहि का पूछहु जन सुखदाई ॥
लछिमी कर निज राखेउ नाउ । सेवा करब रहौ तुव ठाऊ ॥
मैं कृपिनी तुम ठाकुर मोरा । चरन कमल पद सेवो तोरा ॥

॥ दोहा ॥

हरता करता आपुहि त्रिगुन सो आपु समान ।
सब जीव आपु प्रकिसित जनि पुछहु भगवान ॥

अंत—

॥ चौपाई ॥

लछिमी चरित पढ़ै मनलाई। लछन हीन सोउ धन पाई ॥
नारायन लछमी संवादा। सुननहि जाइ सकल विषादा ॥
लक्ष्मी नारायन सुमिरौ मीती। मनसा वाचा मनधरी प्रीती ॥
मूल मंत्र जो विधि मोहि दीन्हा। सोइ उचार नाम तुम लीन्हा ॥
'राम कृश्न' कह लछिमी वानी। सुमिरौ प्रतिदिन सारंग पानी ॥

॥ दोहा ॥

लछिमी नारायन चरित सो को मेटनीहार।
कविजा सव वस कीन्हे लछन केर विचार ॥

इति श्री लक्ष्मी चरित्र संपुरनम् सुभम् मीती चईत सुदी १० सवत् १९१२ वार बुध के रोज संपुरणम् ॥

विषय—

लक्ष्मी के निवास योग्य गृहों तथा नर नारियों का वर्णन किया गया है।

संख्या २२३. चंद्र चंद्रिका (विहारी सतसई की टीका), रचयिता—रामचंद्र (?), कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—९'१ × ५'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३५४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०४ वि० से पूर्व, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ मूल दोहा ॥

सघन कुंज छाया सुखद सीतल मंद समीर ॥
मनु ह्वै जात अजौं वहै वा जमुना के तीर ॥ १० ॥

॥ टीका वारता ॥

प्रोषत पतिका है ऊंहि कुंज मै सुष स्याम के संघ कीये हैं
ते अजहुं ह्वां जात वही मनु हो जातु है ॥

॥ प्रस्न ॥

विरह मैं सब दुषद वस्तु होत है सो छाया सुषद कैसैं भई ॥

॥ उत्तर ॥

जब व्हां जात है तब वाही को रूप होति है तब सुषदाई है ॥

॥ प्रश्न ॥

वा जमुना के तीर जात ऐसे जो कही तो जानीये है की यह व्हां
नही है घर बैठी कहै है तो विरह है सुषद कैसे प्रश्न रही ॥

॥ उत्तर ॥

वा नाईक की सुष देनवारी छाया सीतल मंद समीर सषी सो
मन मै ठ्ई ठ्ई जात है सो मो को दिखाई देत है ऐसे धुनी है ॥

अंत—

॥ मूल दोहा ॥

सम रस मर सकोच स विवस न ठिकु ठहराई ॥
फिरि फिरि उझकति फिरि दुरत दुरि दुरि उझकति आई ॥
सषीकी उक्ति सषी सौ औत्सुक्य वय की संधि समान लक्ष सहन
मध्या है ॥ प्रश्न ॥ ह्यां कह्यौ है की एक ठिकु नहीं ठहरातु है
तहा दुरि दुरि कै देषा (? षा) ते में ठहराव की रीत है ।

॥ उत्तर ॥

प्याउ सष्ट तै वाहूँ मै वह आवन भाव राष्यो है ॥ धुनि यह कि कबहू आवति है कबहू जाति है फिर फेकै झुकनि कौ अर्थ कि पाछे को फिरि फिरि के देषति है ।

+ × ×

—अपूर्ण

विषय--

प्रस्तुत 'चंद्र चंद्रिका' विहारी सतसई की गद्य पद्य टीका है। टीकाकार ने सतसई के दोहों को विभिन्न मरीचिकाओं—अध्यायों—में सपादित किया है। कदाचित् १५ मरीचिकाएं हैं जिनमें से कुछ प्राप्त होती हैं और कुछ नहीं। ये मरीचिकाएं इस प्रकार हैं:—

(१) कृष्णचरित्र
(२) शिख नख
(३) सुकीयादि वर्णन
(४) सुकुमारता

(५) अंग भूषन वसन
(६) लक्षिता मान वर्णन
(७) आगमत पतिका
(८) प्रवत्सभर्तिका
(९) रित
(१०) ढूंज
(११) ......
(१२) अनेक वर्णन
(१३) चेष्टा
(१४) परकीया विलास
(१५) ....

विशेष ज्ञातव्य—'चंद्र चंद्रिका' के रचयिता रामचंद्र का कोई जीवनवृत्त प्राप्त नहीं होता। प्रत्येक मरीचिका के अन्त में लिखा है:—

'इति श्रीमन माहासाह कुमार श्री बाबूरामचंद्र विरचितायां''' हो सकता है कि रामचंद्र ग्रंथकर्त्ता न होकर किसी अन्य ग्रंथकार के आश्रयदाता रहे हों। ग्रंथ के आदि अंत के अंश खंडित होने के कारण रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। हस्तलेख में एक पुराना चिट्ठा रखा है जिसमें सं० १९०४ का उल्लेख है। अतः प्रस्तुत ग्रंथ का लिपिकाल सं० १९०४ से बहुत पहले हो सकता है।

ग्रंथकर्त्ता ने सतसई के दोहों का विषयानुकूल वर्गीकरण किया है, किन्तु यह वर्गीकरण वैज्ञानिक नहीं है।

टीका का गद्य अव्यवस्थित है।

संख्या २२४. वाणियाँ, रचयिता—रामचंद्र। संख्या ५९ के विवरण में इनकी वाणियाँ दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र।

संख्या २२५. झूलना, रचयिता—रामचरणदास (निवास स्थान—अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६'१ × १२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

रमतीत राम॥ अथ स्वांमी जी श्री रांमचरण जी महाराजि की वांनी अण भो॥ अथ झूलणां लिष्यते॥ प्रथम गुरुदेव को अंग लिष्यते॥

स्तुति

रमतीत राम गुरुदेव जी फुनि तिहुं काल के संत ।
जिनकूँ राम चरण की वंदनवार अनंत ॥ १ ॥

अंग

गुरुपीर क्रिया करि ,भीर करी तव काल की चोट न पावता है ॥
संसार का फंद सो काटि सबै निज आपणी ओण बचावता है ॥
अघराज कै आसिर जाइ छिपै तव जंवक काहा करावता है ॥
जन राम चरण सरणि सदा सुप आनंद मांहि समावता है ॥ १ ॥

अंत—

बैराग सुहाग कठणियारो कोई बात सरै नहीं आवता है ॥
सुषि राम मया गुरुदेव दया कुछि आपणी बुधि उपावता है ॥
तीनों तीन मिलै प्रमभाग पुलै बिन येक नहीं निरबावता है ॥
'जनराम चरण' वजाइ कहै नहीं साग बैराग कुहावता है ॥ ४ ॥
बैराग जहाँ कोई राग नहीं विषै भोग सैं दोष जणावता है ॥
संसार तरक फरक फिरै तन मन का सुष न भावता है ॥
पुर घर का वास निवास तजै वनकूल रती नहीं छावता है ॥
'जन राम चरण' सरणि गहो येह हलछि बैराग कुहावता है ॥

इति विक्रत को अंग संपूरण ॥ अंग ६ भूलणां २६ ॥ अंग ॥

कल् काल भगत की चाल यागे जाकी संगति यह निवास है रे ॥
पान फूल सुगंध घुरे विजिया जाहाँ पुन तमाकू की बास है रे ॥
तांहां ग्यान बैराग भजन को पंझना नाचनां कूंदनां हांसि है रे ॥
जांहां रांडिया भांडिया आइ मिलै विषिया रस गाइ विलास है रे ॥
इति भेष को अंग संपूरण ॥ अंग ७ भूलणां ॥ २१ ॥

इति भूलणां परवम संपूरण

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'भूलना' है। इसमें स्वामी रामचरण जी के ज्ञान, भक्ति और वैराग्य विषयक भूलने दिए गए हैं। 'भूलना' में निम्नलिखित अंग हैं—

(१) गुरुदेव को अंग
(२) सुमरण को अंग
(३) विचार को अंग

(४) साधु संगति को अंग
(५) बिरह को अंग
(६) भेष को अंग

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचयिता रामचरणदास जी के सत्रह ग्रंथों का पता लग चुका है। 'भूलना' इनकी नवीन प्राप्त कृति है। ये अयोध्या के महंत तथा संवत् १८४४ में वर्तमान थे।

संख्या २२६. सुदामा की कथा, रचयिता रामदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, लिपिकाल—सं० १७८५ वि०, सन् १७२८ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसादजी साहु, गोलवारा, मोहल्ला-सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

प्रथमहीं गुरु के चरन मनावौ। जेहीं प्रसाद हरी के गुन गावौ॥
प्रथमही नारद भगत सुदामा। वीप्रदास कलजुग भा नामा॥
वेनीदास काएथ कुल ग्रामा। तेन्ह के सीष हरीजन रथकामा॥
कीछु प्रसाद हरीहर कह भयऊ। राम नाम लए लाए रहेउ॥

॥ दोहा ॥

अब एक अधम महा जड उपदेसा सारीदास।
अगर हरी के कुल महा कह वानी रामदास॥

देवी पीत्र देवता जेते। अगर नीवारा समन्हौ सेते॥
जो जम कहीं सकल बरीआरा। सो वपुरा का करइ हमारा॥
रामदास आनंदीन आछे। कोउ न डरैं राम के पाछे॥
आनाथन के नाथ मुरारी। तुह देषत अस हाल हमारी॥
पुनी जो भगत सुदामा एका। तेहं कीह्न रामनाम कै टेका॥
दारीद्र वस्य ते भए वीहाला। तन पर चीर न जुरै अहारा॥
तेन्ह कै नारी देषी दुष कहइ। जाहु द्वारिका जह प्रभु अहइ॥
प्रत दीन कस्ट सहा न जाई। आपहु जाइ वेगी अतुराई॥
दुइही दुया कै वार न लाइही। दुषी देषी तनमन पछताइही॥

॥ दोहा ॥

धाइ मीलही अलाप कै करुनामए जगदीस।
छेम कल्यान पुछीके दीहही कछु वकसीस॥

बहुत दारीद्र व्याप जब इन्हके । करत वीलाप कहही से तेहींते ॥
पुर्वील पाप बहुत हम कीन्हा । प्रगट दरीद्र संतावै लीन्हा ॥
गुर दीज अनक संत दुष दीन्हा । भक्ती भाव राम नाम न लीन्हा ॥
हरी जस सुनत स्रवन न कीन्हा । जसी पुरष कह अपजस दीन्हा ॥
थतीहारे कै याती जेती । चोरी भाव पाप मैं केती ॥
पंथीक जन कह पंथ न लाएउ । पुछत पंथ ताही वेलाएउ ॥
सतीवंती पती वरता नारी । तेन्ह कह जानी कहा वीवीचारी ॥
गुन देषत जो ऐगुन करेउ । तेही ने दुस्ट भाव चित धरेउ ॥

॥ दोहा ॥

ह सभ पाप कीन्ह मै तौ वीधनै अस कीन्ह ।
अनक ण्त जनमगा आपन कबहुं न दीन्ह ॥

अती वीह्वल तन झाँझर भयउ । कै वीलाप भामी पीअसै कहेउ ॥
जाहु जाहु जनी लावहु वारा । दीन दुखानंधी मीत्र तोहारा ॥
मागी जाची तंदुल दीहु आनी । सुमीरी चले जह सारंग पानी ॥
गए द्वारीका तब तेही ठांउ । धाइ मीले प्रभु सुनो जन नाउ ॥
ब्रह्म रुद्र दरवार न पावही । भगतनाम सुनी आगे आवही ॥
भगत हेतु भए हरन गोसांई । प्रेम प्रीती मीले जनकी तांई ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

रामदास के सामने कीन्हक आदर कीन्ह ।
दीनी दुषी मन गद्द्वारा छोरए लाइकै लीन्ह ॥

ज जग जीवन श्रम नहीं होते । कवन जुगुती कैसे कै रहते ॥
कवन जुगुती कवने परकारा । कैसे चलतहही एही संसारा ॥
सुनु सुनु नीद्रा मन गै वाने । सुनी बुधी जात सभै औग्याने ॥
जेसे मती बुधी हीन वीकारा । राज पंडीत जो ससारा ॥
पावन नाम वेद जन गावही । मुढ अचेत समुझी वैलावही ॥

॥ दोहा ॥

जो जेही भाव कहो केउ श्रवन होइ जीव आन ।
रामदास गल गरजै सुमीरी नाम भगवान ॥

नैन प्रवाह दुअहु के चलइ । वोह दरीद्र वोह दारा धरइ ॥
धीर न काहूं ही कैसेहु होइ । अती प्रीअ प्रेम बीआकुल सोइ ॥

भगती हीन भगत दुष भएउ। दीनबंधु तव मन गहवरेउ ॥
पाटंबर धन आसन दीन्हा। चरन पषार रुकुमीनी कीन्हा ॥
भोजन बीपीरीत भाँती करावा। जो जनके इछा मन भावा ॥
तव प्रभु पलग सुपेती डासी। नाना पुहुप सुगंध नेवासी ॥

॥ दोहा ॥

तेही पर सैन करावा गेडुआ उसीसे दीन।
दुष नासा सुष पलटा दीज तव नीद्रा लीन्ह ॥

रुकुमीनी पुछही प्रीती बीचारी। दीन दआनिधी देव मुरारी ॥
प्रीती बहुत तुह दीज कै करहु। तन मन प्रान एक होइ रहहु ॥
महा बीभुछीत वस्त्रौ नाही। सो न जुरै जे नीसदीन पाही ॥
द्रवहु दआ कै तेही कछु देहु। देहु तवही जगमह जस लेहु ॥
प्रभु जहा बीनु दीहे न देउ। देउ ताही जाकर कछु लेउ ॥
कीछु मै जौ कछु मोही चढावै। चारी पदारथ सो नीधी पावै ॥

॥ दोहा ॥

सभै कला सभइ महा मोही सनमुष जग होइ।
कुल बीद्या धन गरजै सभ अभीमगनक होइ ॥

रुकुमीनी कहा सुनी दीज मोते। बीनु लीन्हे प्रभु देही न तुहते ॥
औरे तुह प्रभु के कछु, देहु। देहु तवहिं वदले कछु लेहु ॥
बीनु दीन्हे वोन्ह ते न पावहु। जौ गुन सुजस कोटी ऐक गावहु ॥
बीप्र वचन रुकुमीनी सो कहइ। मोरे कहहु कवन नग अहही ॥
कवन मीस्टान अंबीत फल होते। जो प्रभु इछा कीन्हा मोते ॥
प्रभु ही जोग जाही सुष मानै। मोही दारीद्री ही सभ केउ जानै ॥
एक अधार मोरे सुनु कहउ। नीसी वासर हरी सुमीरत रहउ ॥

॥ दोहा ॥

अवर कीछौ नही मोरे जो हरी सेवा होइ।
सेवा सुमीरन जाही के सो हरी सनमुष सोइ ॥

दीज तंदुल लै सकुचत जाही। आसीत वचन जेतनु कह, कहही ॥
लीन्हा वरबस देत न जाना। मुष पसारी प्रासा, भगवाना ॥
दुइ मुठी तीसरी जव जाना। रुकुमीनी टेका कर भगवाना ॥
पुनी चरनन्ह गही लागी धाइ। जै जै दीन दआल जदुराइ ॥
तीन लोक तुह देष गोसांइं। हम कह रहवै कवनी ठांइं ॥

॥ दोहा ॥

रामदास जन एह कहा गती जानु न कोइ ।
चारी पदारथ देत तहा भाव भर्ग्ती भल होइ ॥

बीप्र नगर फीरी देषत रहइ । प्रीह एह कंचन को करइ ॥
प्रीह हेरत प्रीहनी नही पाइ । काही कहौ अब केही गोहराइ ॥
मानसरोवर देषा जाइ । रीतु बसंत जह रही लोभाइ ॥
नर नारी दीज के अस्नाना । दीज कौतुहल देषी भुलाना ॥

॥ दोहा ॥

देषी चरीत्र नगर करा भाषत दीज मतीभाउ ।
केइ एह नगर बसावा नीपती कहा तेही नाउ ॥

जाही जाही दीज पुछै लएउ । तब तेइ सभ कहते भएउ ॥
इ पुर बीप्र सुदामक अहइ । जह जह सभ केउ ऐसे कहइ ॥
पुर बजार देषही दीज सारा । पुछत दीज गो महल दुआरा ॥
गन गंध्रप देषही परतछा । अतीबीचीत्र मंदील गै देषा ॥
लागै चहुँदिस कंचन चोषा । ठांव ठांव बर रतन झरोषा ॥
जह जह नजरी परै दीज जाइ । तन मन देषी ठगौरी आइ ॥

॥ दोहा ॥

दीव्य मनोहर मंदील तह आछै दीज नारी ।
सषी मध्य तह आहै सुदाम दीज कै नारी ॥

चरन गहे रह पतीब्रत नारी । हे सामी मइं तुम्र बहु आरी ॥

× + +

—अपूर्ण

(प्राप्त प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि)

विषय —

सुदामा की कथा का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अंत से खंडित है । रचनाकाल और लिपिकाल का पता नहीं चला । यह रचना लखनसेनीकृत 'बारहमासा' के साथ एक हस्तलेख में है । दोनों की स्याही तथा लिपि एक ही हैं । 'बारह मासा' का लिपिकाल संवत् १७८५ वि० है । अतः प्रस्तुत रचना का लिपिकाल भी वही हो सकता है ।

रचयिता का नाम रामदास है । इन्होंने अपने नाम और कुल का वर्णन इस प्रकार किया है:—

॥ दोहा ॥

अब एक अधम महा जड दपदेसा सारीदास ।
अगर हरी के कुल मह कह वानी 'रामदास' ॥

विशेष वृत्त कुछ नहीं मिलता । ग्रंथ की रचना साधारण कोटि की है । इसकी भाषा अवधी है । ग्रंथ की प्राप्त पूर्ण प्रति की प्रतिलिपि कर दी गई है ।

ग्रंथ का नाम नहीं दिया है, केवल विषय को देखकर सुदामा चरित्र नाम रख दिया है ।

संख्या २२७ क. ब्रह्म विलास, रचयिता—बाबा रामभरोसादास जी (स्थान—रतनपुरा, बलिया), कागज—देशी, पत्र—१२१, आकार—११ X ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३११, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१८-२१ वि०, लिपिकाल—सं० १९३६ वि०, प्राप्तिस्थान—पंडित ब्रह्मदेव शर्मा आचार्य, स्थान—रतनपुरा कुटी, डाकघर—रतनपुरा, जिला—बलिया

आदि —

अथ ब्रह्म विलास ॥ रतनपुरा निवासी महासै रामभरोसादास जी द्विज वर्णन मुद्रित किआ श्री संमत् १९१८ भादौं कृष्णाष्टिमी ८ के रचा चकरा निवासी रामदत्त मिश्र ने लिखा संमत १९३६ कार्तिक कृष्ण एकादसी ॥ सोमार ॥

श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीमते रामायनमः ॥ श्री सरस्वत्यै नमः ॥

श्री पोथी ब्रह्म वेलास ब्रह्म निरूपणो कथा लिष्यते ॥ सतगुरू सेवक संवादे सांख्य जोग सतसंग रामभरोसादास भक्त्यनुरूपं ज्ञान योगं स्वरूपं मंगलं कर्तारं सरण सरण पुकारं सद्गुरु बार बारं ॥

श्री गणपति गीरिजा नंदन मंगल रूप सोहाय ।
पारब्रह्म जस कहन चहौं अक्षर देहु सुधि आय ॥
नाम रूप गुण शुभ करण असुभ विनास निहार ।
एक दंत गज वदन सुष लंबोदर बुधि अपार ॥
उमा सुवन सीद्धेश्वर सभ देवन का ईश ।
करहु कृपा हरिजस कहौं तव पद नंवौ सीस ॥
सक्ति सरस्वति सारदा सुमिरौं चरण मनाय ।
वाणी विमल मोही दीजिए पशु पद देहु लगाय ॥

गुरुपद रज बंदन करौं सिष्य सुषद गुणषानि ।
हृदयें सब्द लषाइए देहु विमल बरदानि ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

षष्टीसन चौसठी मह मास अषाढ प्रकास ।
सीत पक्ष अरु सुभ तिथि सुदिन सुमंगल बास ॥
गुरु की कृपा कटाछ से बरनो ब्रह्म विलास ।
श्री गुरु कृपाराम हिय रामभरोसादास ॥

इति श्री भक्तिभाव बैराग्य भागवत जस चरित्र कलिमलापहरन कपिलदेव करदम मुनि संवादे सांष्यजोग सतसंग ब्रह्मनिरूपन ब्रह्मबेलास हरिगीत रामभरोसादास विरचिते ॥

॥ दोहा ॥

रतनपुरा एक नग्र है रामकृपा तहाँ कीन ।
ब्राह्मन के गृह जन्म भए गुरु चरन लवलीन ॥
ब्राह्मन कै कछु करम नही एक आम्म विस्वास ।
राम नाम प्रताप तें रामभरोसा दास ॥
गंगा सरजु बीच में मध्यवरहि आदेस ।
भृगु से पश्चिम रतनपुर ता पश्चिम अवधेस ॥

॥ नग्र नाम जानना ॥

॥ दोहा ॥

संमत् इंदु १ ग्रह ९ राम ३ रस ६ वैसाष सीत भृगुवार ।
चउथि रोहिनि द्वादस घटी सोभन जोग संचार ॥

॥ वार्त्तिक में जानो ॥

संवत् १९३६ मीती वैसाष सुदी चौथि छ घड़ो दीन चढे वैकुंठवास भया रोहिनी नछत्र सोभन जोग वर्तमान रहा ॥ दास भरोसाराम को जानो ॥ दसषत रामदत्त मिश्र चकरा निवासी ने किआ संमत् १९३६ कातिक कृष्ण एकादशी चंद्रवार को समाप्ति भया ॥

॥ दोहा ॥

जो प्रति देषा सो लिषा कछुक दोस नहि मोर ।
बार बार बिनती करों दोस न दीहैं मोर ॥

विषय —

सांख्यशास्त्र का वर्णन किया गया है । इसमें जितने विषय हैं वे नीचे लिखे जाते हैं:—

३२	बरन पैदा बरनन	पत्र	९९
३३	आदि सृष्टि	पत्र	६१
३४	रुद्र अवतार	पत्र	६२
३५	पंथ धर्म चारि बरन	पत्र	६४
३६	बर्णं धर्मं बरनन	पत्र	७०
३७	पुजा लक्षन गारहस्त कै	पत्र	७१
३८	भक्त बिज्ञानी विचार	पत्र	७६
३९	आतमा पहिचान	पत्र	८२
४०	कपिलदेव माता सत्संग बरनन अवतार बरनन	पत्र	८५
४१	राम अस्तुति ऊँ श्रीजैति भगवानरूप प्रति जुग बरनन	पत्र	९०–९४
४२	नव प्रकार भक्ति संख्या	पत्र	९६
४३	संत समता भाव बरनन	पत्र	१००
४४	हरिराम फल बरनन	पत्र	१०६
४५	कवित्त बरनन दीन को दानी	पत्र	१०८
४६	जुग प्रमान भक्ति बरनन	पत्र	१०९
४७	नाम साक्षीय	पत्र	११३
४८	कविता गुरू सेवा बरनन	पत्र	११७
४९	कवित्त स्व अस्थान दीनता बरनन	पत्र	११६

रचनाकाल

॥ दोहा ॥

षष्ठी सन चौंसठी मह मास अषाढ़ प्रकास ।
सीत पछ अरू सुभ तिथि सुदिन सुर्मगल बास ॥

संख्या २२७ ख. ब्रह्मविलास, रचयिता—रामभरोसादास (स्थान—रतनपुरा; तहसील—रसड़ा; जि० बलिया), कागज—देशी, पत्र—७४, आकार—६$\frac{3}{4}$ × १०$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२१ वि०, लिपिकाल—सं० १९३५ वि०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामतेनी सिंहजी, स्थान—भीमपुरा, डाकघर—औराईकलां, जिला बलिया

आदि—

श्रीगणेशायनमः ? श्रीमते रामायनमः

श्रीगुरवेनमः श्रीसरोसत्यनमः ॥

श्री पोथी ब्रह्मविलास ब्रह्मनीरूपण कथा लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु सेवक संवादे सांख्य योग सतसंग ।
रामभरोसा दास भगत्य निरुपं ज्ञानयोगं ॥
सरुपं मंगलं कर्तारं सरण सरण पुकारं सद्‌गुरु वारं वारं ।
श्रीगणपति गीरीजानंदन मंगलरूप सोहाय ॥
पारवरम्ह जस कहन चहो अक्षर देहु सुधि आय ।
नाम रूप गुन सुभ करण असुभ वीनासनी हार ॥
एक दंत गजवदन मुष लंवोदर बुधी अपार ।

× × ×

सांख्य जोग सतसंग सो चरीत्र वरनन चहों ।
विमल अमल परसंग प्रभु गुण अगम अगाधी ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

षष्ठी सन चौसठी यह मास अषाढ़ प्रकास ।
सीत पछ अरू सुभ तीथी सुदीन सुमंगल वास ॥
गुरू की कृपा कटाछ से वने ब्रह्म वेलास' ।
श्री गुरू 'कीपाराम' हीय 'राम भरोसादास' ॥

इति श्री भक्ति भाव वैराग भगवत जस चरीत्र कलीमलापहरन कपीलदेव कर्दम मुनि संवादे साषी जोग सतसंग ब्रह्मनीरूपन ब्रह्मवेलास हरीगीत रामभरोसादास वीरचीते

॥ दोहा ॥

रतनपुर एक नग्र है रामकीपा तहा कीन्ह ।
ब्राह्मण के ग्रीह जन्म भये गुरू चरन लवलीन ॥
ब्राह्मण कै कछु कर्म नही एक आस वीसास ।
राम नाम प्रताप ते रामभरोसादास ॥

श्री संमत १९१८ मीती भादो कृष्न पछे तिथि अष्टमी जन्म ॥ ८ ॥

श्री मन्महाराज श्री ब्रह्ममुरती ब्रह्म अवतार श्री महाराजधीराज प्रथीराज राम-भरोसादास के कृप्या से वास्ते रघुवीर सींघ के लीषा सीव सरनलाल कायथ साकीन मौजे भीमपुरा परगने सीकंदरपुर जीला आजमगढ़ में लीषा गया । दोहा एक सै साठी १६०

चौपाई पचीस से पएतीस २५३५ पोथी बनाया गया। दोहा ॥ दुइ महस्र अवपाव सै चौपाई परमान। दोहा एक सै साठी है छंद सोरठा जान ॥ श्री रामचंद्राए नमः ॥ श्री संमत १९३५ मीः वइसाप वदी १ वारवीइफे के संपुरन हुआ ॥

विषय—

कपिलदेव जी का कर्दम ऋषि और उनकी स्त्री एवं अपनी माता देवहुती को सांख्य योग का उपदेश करना।

रचना काल

षष्टीसम चौसठी मह मास असाढ़ प्रकास।
सीत पछ अरू सुभ तीथी सुदीन सुमंगलवास ॥

संख्या २२७ ग. गीतरतन, रचयिता—बाबा रामभरोसादास जी (स्थान—रतनपुरा, जिला—बलिया), कागज—देशी, पत्र—३७, आकार—११×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५१, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ वि०, प्राप्तिस्थान—पंडित ब्रह्मदेव शर्मा आचार्य, स्थान और डाकघर—रतनपुरा, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अस्तुति श्री रामजी कै

श्री जैति जैति जैराम निरंजन ब्रह्म निरीह अनूप हरी ॥ १ ॥
सब्द सरूप अगोचर अविगति अलष अनादि अजीत हरी ॥ २ ॥
व्यापक ब्रह्ममंड अषंड अनामी अनुभव गम्य अपार हरी ॥ ३ ॥
गुन रहित विकारं अपरंपारं तारं तन धरि दास हरी ॥ ४ ॥
जोति प्रकासं सब उर वासं सांति सरूप सनाथ हरी ॥ ५ ॥
बानी स्रुति गावत पार न पावत ध्यान न आवत रूप हरी ॥ ६ ॥
सुन्य अकारं सब्द उचारं अंस पवन परकास हरी ॥ ७ ॥

अंत—

आधी रैन सघन अँधियारी बीति गए हरि आए री ॥ टेक ॥
सीस मुकुट मकराकृत कुंडल आयुधधारि भुजचारी ॥ १ ॥
सोभा अधिक सुदेस सुहावन भादो घटा अनुकारी।
देषत मातु पिता के आगे बोलन लागे परारी ॥ २ ॥
पूर्व पुन्य तुम आपनि समुझो मन में करहु विचारी।
करि तप जोग पुत्रवर मांगेव सो फल आजु संवारी ॥ ३ ॥

\+ + +

जमुना पैठि चरन छुए धाइ पतिनिज हुदैं विचारी।
उतरि पार गोकुल में आए राममरोस हितकारी ॥ ६ ॥

इति श्री पोथी गीत रतन समाप्त ॥

॥ दोहा ॥

कातिक कृष्ण एकादसी चंद्रवासर रतनपुरा निवासी रामभरोसादास श्री एक पुस्तक मुद्रित किया ॥ सो भव सेतु बनाया ॥

विषय—

रामकृष्ण की भक्ति विषयक पदों का संग्रह है।

संख्या २२८. बारहखड़ी, रचयिता—रामरंग, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—५·६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०९ वि०, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिंदी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आरंभ—

कका काम वर क्रोध कूं छाडि दीजें,
पीजें अमी प्याला गुरु प्यावता हैं ॥
तुम्हे पाच नारी देवै दुष भारी,
मोह लोभ मिलि भ्रम उपजावता है।
मेरी तेरी के ममत मैं डालि मनुवा तुम्है
रात दिन नाच नचावता है।
रामरंग शत गुरू की जो सरन जावैं
शो तो वहुरि भौ जलि नही आवता है।

अंत—

डडा डोलि चारयों दिशा डोलि आया ॥
विजा बोल तै बोलि नां बात बूझी ॥
झता आप भूल्या भया रूप क्रित्मत ॥
ज्यों सत चेतन पाहन बूत पूजी ॥
कीये बर्त्त तीर्थ पूज्या नेम संध्या ॥
विना ज्ञान आत्म मिटी नाही दूजी ॥
रामरंग शत गुरू मिल्या अभैदाता ॥
मिट्या भर्म भ्रांता रांम राह सूझी ॥

—अपूर्ण

\+ + +

विषय—

ककहरा के रूप में रचना करके ज्ञानोपदेश वर्णन ।

संख्या २२६. गुणसागर, रचयिता—रामराइ (स्थान—आगरा), कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—६'६ × ५'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६७८ वि०, प्राप्ति-स्थान—म्यूनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति ॥ अथ गुण सागर कवि ताइर लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री अषल मूरति परम गुरू आदि अंत विस्तार ॥
जीव जंत्र जल थल सकल करत जगत निसार ॥
एक रूप बहु रूप रचि रूपहि रूप अपार ॥
जल थल महि मंडल सकट प्रगट जोति आभार ।
घट चौरासी लछि मधि वहै जोति सब ठौर ।
जहाँ तहाँ मूरति वहै आवत दृष्टि न और ॥
रचना एक अनेक गुन वरन वरन है इार ।
ये निगुनी गुन एक तुव कहि न सकै संसार ॥

अंत—

दोहा

अब हौं बरनौ कांवरू त्रिया राज इक साथ ।
परैं बंद नर तीय कैं ज्यौं मरकट नट हाथ ॥

चौपाई

मधुर बचन और कोमल बानी-कोमल काया सुरति रसदानी ॥
चुंबन आलिंगन भुज कसै-सुरत समैं नाइक अति हसै ॥
... ... नारि-कीनैं त्रिया पुरिष की हार ॥
आलिंगन चुंबन अरु वंडै-काया बात पुरुष की हडै ॥

॥ दोहा ॥

अति मिलब विस्वासनी प्रान पुरुष के षाइ ।
तब लगि तिया न परिहरै जब लगि पियनि रजाइ ॥

देस देस की कामिनि अपनी अपनी रीति।
पै वेस्या बिस्वासनी लियो जगत सब जीत ॥

इति श्री गुण सागर विचित्र काव्य देस देस नारि कृति बरनो नाम समाप्तंमो पंड

॥ समापतः ॥ संपूर्ण ॥

विषय—

'गुणसागर' का मुख्य विषय कामशास्त्र है। प्रस्तावना भाग में कवि ने अपना परिचय दिया है। इसके बाद पुरुष वर्णन, स्त्री वर्णन, केलि क्रिया (आसनादि) तथा अंत में देश विदेश की स्त्रियों के लक्षण लिखे हैं। इस प्रकार गुण सागर में कोकशास्त्र का विस्तारपूर्वक निरूपण हुआ है।

यह ग्रंथ दोहा, चौपाई तथा छंदों में रचा गया है। भाषा इसकी ब्रज है।

रचनाकाल

संवत सोलह[१६] सै गनै अठहत्तरि[७८] अधिकाइ।
वदि आषाढ़ तिथि पंचमी कही कथा रामराइ ॥

संख्या २३० क. रसिक सिरोमनि, रचयिता—राजारामसिंह, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—६¾ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१६, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १८३० वि०—प्राप्तिस्थान—आर्य-भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः ॥ श्री मन्मोहनो जयति ॥

अथ रससिरोमनि ग्रंथ लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

बिघन हरन आनंद करन राधा नंद कुमार।
तिन्हैं परस पर होत है आनंदित श्रंगार ॥ १ ॥

नायका लछन

चित विच रस कौ भाव अति उपजत देषैं जाहि।
कवि जन रसिक प्रवीन जे कहत नायका ताहिं ॥ २ ॥

उदाहरन

अंग सलौनैं भरे रुचि सौनें से कोमल गोरे लिए अरुनाई।
नैन छके से रसीली चितौनि बसे मुसिक्यानि सुधा सी मिठाई ॥

बैन सुनै सरसै सुख श्रीमनि है मनमोहन चारु निकाई।
होत निहारत मैन अखाँनि लसै छवि और ही और सुहाई ॥ ३ ॥

अंत—

गलबाँहीं किये सँग नागरि कै रस की बतियाँ करिकै हँसिबौ।
मुष ऊपर आइ लटैं लटकीं अति नैन बड़े भ्रकुटी कवि बौ।
सुभ काँननि कुंडल सोहत हैं अरु ओठनि पै मुरली लसिबो।
मन मोहन मोमन माँहि सदा हुँहि वानिक सौंक करियै बसिबौ ॥३२९॥

॥ दोहा ॥

दृग दरसन रसना सदा करत रहौ गुन गान।
मन मन मोहन रावरो धरत रहौ नित ध्यान ॥ ३३० ॥
कूरम कुल नरवर नृपति छत्र सिंह परवीन।
रामसिंह तिहिं तनय यह बरन्यौ ग्रंथ नवीन ॥ ३३१ ॥
बरन बरन विचारिनी कै समझियौ गुनधाँम।
सरल ग्रंथ नवीन प्रगट्यौ 'रस सिरोमनि' नाँम।
माघ सुदि तिथि पूरना पष पुष्य अरु गुरुवार।
गिनि अठारह[१८] से बरस पुनि तीस[३०] संवत सार ॥ ३३३॥

श्री मन्महाराजाधिराज महाराजा रामसिंहजी कृत रस सिरोमनि ग्रंथ संपूर्णं मिति ॥

॥ शुभमस्तु ॥

विषय—

नायिका भेद वर्णन।

रचनाकाल

माघ सुदि तिथि पूरना पष पुष्य अरु गुरु वार।
गिनि अठारह[१८] से बरस पुनि तीस[३०] संवत सार ॥

संख्या २३७ ख. सहसनाम चौपही, रचयिता—महाराज रामसिंह, कागज-देशी, पत्र—७, आकार—७'७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०० पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा गोपालदास, चैतन्यगोड़, बनारस

आदि—

॥ श्री राधाकृष्णाभ्यानमः ॥

अथ सहस नाम चौपही लिख्यते ॥

॥ चौपही ॥

वंदन नंद नँदन कौ करि कैं।
उनके चरन कमल उर धरि कैं॥
करो एक है नाम हजार।
भक्तन कौं सो सुखद अपार॥ १॥

अद्भुत उत्तर अखिलाधार।
अमल उग्रहा अमिताचार॥
अमर अमोघ अनुत्तम उत्तम।
अंबुज आदिस्येश उरुक्रम॥ २॥

अंत—

नाम महातम एक जीभ सों वरनन करियै कैसे।
अपनी मति अनुसार तऊ कछु कहियतु जैसे तैसे॥
सहस नाम यह पढै पढावैं सुनैं सुनावैं नीकैं।
सकल काम पावैं मन मोहन हियैं बसैं सबहीकै॥ ७४॥

श्री मन्महाराजाधिराज महाराजा रामसिंह जी कृत सहस्रनाम चौपही संपूर्णमिति॥

॥ शुभमस्तु॥

विषय—

कृष्णभगवान् के सहस्र नामों का चौपाई में वर्णन।

संख्या २३१. रामअष्टक, रचयिता—स्वामी रामानंद, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१२½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान और डाकघर—चिटबड़ागाँव, जि०—बलिया

आदि—

राम अष्टक

अवधपुरी निज धाम कही नीकट सरजु गंग हैं।
दसरथ नंदन असुर गंजन श्रीरामजी पूरन ब्रह्म हैं॥ १॥
सथ्य सीता भ्रात लछुमन धनुषधारी श्रीराम हैं।
चीत्रकूट तपलोक कहीये श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं॥ २॥
लंकपुर छनमाह जारो आग्याकारी हनुमान हैं।
रावन मारी वीभीषन थापो श्री रामजी पूरन ब्रह्म हैं॥ ३॥

सोरह कला जुगचारी प्रगटो सात द्वीप नवषंड है ।
आदि अंत मध्य षोजी देषो श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ४ ॥
भाल तीलक वीसाल लोचन आनंद कंद श्रीराम है ।
सामली सूरति मधूर मूरति श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ५ ॥
अष्ट सीधी नव नीधी दाता भक्ति युक्ति वरदाएक ।
ज्ञान जोग सरूप सुंदर श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ६ ॥

अंत—

चेतनी होइ चेतमाल चेतहु जोग जुगती लीला रची ।
करही करता रमही मुक्ता श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ७ ॥
ब्रह्माविस्नु महेस नारद कोटि अठासी देवता ।
इंद्रादिक सनकादि गावही श्रीराम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ८ ॥
राम अस्टक पढ़त नीसुदिन सत्यलोक सो गंछीत ।
'रामानंद' अवतार अवध श्री राम जी पूरन ब्रह्म हैं ॥ ९ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्रीरामचंद्र जी की स्तुति की गई है ।

संख्या २३२. अष्टकाल, रचयिता - दासमंजरी (संभवतः, टीकाकार), कागज—देशी, पत्र —४८, आकार—७ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दीपचंद जी, ग्राम-मोनेरा, डाकघर—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर

आदि—

श्री राधारमण जी ॥ श्री चैतन्य चंद्राय नमः ॥

चौपाई

बंदौ गुरू गोविंद पद नीके । जिहि सुमिरे बांछित होय जी के ॥ १ ॥
बंदो श्रीमत रूप सनातन । श्री गोपाल भट्ट जगपावन ॥ २ ॥
श्री रघुनाथ भट्ट सिरनाऊँ । जीव गुसाईं कृपा मनाऊँ ॥ ३ ॥
दास गुंसाईं करूना कीजै । जुगुल प्रेम मोहि पूरन कीजै ॥ ४ ॥
बंदौ बृज मंडल तीरथवर । नंद गाँव बरसानों गिरिवर ।
बंदो जुगल कुंड सुषरास । जहाँ दुहुन को नित्य निवास ॥ ५ ॥

\+ \+ \+

अष्टकाल लीला मन भाई । श्रीमत रूप सनातन गाई ॥
मंगल रूप ते ग्यारह श्लोक । सुमिरत हरत भक्त के शोक ॥ ४७ ॥
अष्टकाल के ग्यारह श्लोक है ताको प्रथम श्लोक मंगलाचरण को है ॥ ४२ ॥
श्री राधा प्राण बंधोश्चरण कमलयोः केस सेषाद्य गम्या ।
या साध्या प्रेम सेवा वृज चरित परै गढि लौल्यै कलभ्या ।
सास्यान्प्राप्ता पयाता प्रथयितु मधुना मानसी मस्य सेवां ।
भाव्यां रागाध्व पान्थैव्रंज मनु चरितं नैत्यितं तस्य नौमि ॥ १ ॥

अस्यार्थ—श्रीराधाजी के प्राणबंधु श्रीकृष्ण तिनके चरणार्विंद की जो प्रेम सेवा सो ब्रह्मा सिव शेषादिक कौं अगम्य है क्योंकि वे अपने अधिकार मो नियुक्त है। जब अपनो अधिकार छोड़ि वृज वासिन को आनुगत्य लेहि और रागात्मिका देह पावै तब प्रेम सेवा जो साक्षात् सेवा सो पावै उनते अधिकार छूटत नाँही" अधिकार नें अवरोध ते उनकों प्रेम सेवा साध्य है, वृज विषैं मधुर वात्सल्यादि चार भाव हैं ॥ सो जब कोई साधक काहू भाव जुक्त होय कैं ॥ गाढ लोभ करिकैं मानसी सेवा मो मन लगावैं ॥ तब प्रेम सेवा पावै ॥ सो मानसी सेवा राजमार्ग के पथिक है तिनही करिभावनीय है ॥ ऐसी जो मानसी सेवा ताके विस्तार करिवे कों श्रीकृष्ण जो वृज में लीला करत हैं॥

अंत—

अमित जु वृज विहार रसगायौ । तोको दिन दरसन करवायौ ॥ ३३ ॥
अलंकार पुनिछंद सुजिते । हौं नीके नहिं जाँनत तिते ॥
लीला रसवस है यह कौन । जाते कीजै दया प्रवीन ॥
पारोदक कोऊ अज्ञान । शालिग्राम करावै स्नान ॥
तऊ साध जन मस्तक धरें । चरनामृत कहैं पाँनहिकरैं ॥
साधु चरन रज मोर विभूषन । करौ दया न लहौ मम दूषन ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

"रूप मंजरी" पद कमल तिन को करिके ध्यान ।
कर संछेपहि वरनियो काल अष्टमाध्यान ॥ ३९ ॥

इति श्रीमद्गोस्वामी रूप सनातन कृत अष्टकाल संपूर्ण ॥

विषय —

श्री राधा और कृष्ण की अष्टकाल की क्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है ।

संख्या २३३. चतुर्वृत्ति वर्णन, रचयिता—रूपसाहि (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२,

पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६९ के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री रामजी सहाय ॥ श्री दुर्गाजी सहाय ॥

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ नवरस वर्नन ॥

जहाँ विभाव अनुभाव मिली सात्विक अरू वेभिचार ।
स्थाई इनतें पुस्ट जहाँ तहाँ पूरन रस सार ॥ १ ॥

॥ इति लछन ॥

॥ अथ भेद ॥

सो रस है द्वै भाँति को प्रथम अलौकिक नाम ।
दूजौ लौकिक कहंत कवि समुझत भेद ललाम ॥ २ ॥

॥ अथ अलौकिक ॥

ब्रह्मानंद अपंड जो हिय हुलसत लहि ग्यान ।
सांत अलौकिक रस कह्यौ जानत साधु सुजान ॥ ३ ॥

॥ अथ लौकिक ॥

लोक विषय सुनि निरषि कै हिय अनंद जो होइ ।
तिनि भांति को सुकवि कहि लौकिक रस यह सोइ ॥ ४ ॥

॥ लछन ॥

स्वाप्नीक[१] मानोरथिक[२] पुनि औपनाम कहि मानि ।
स्वप्न मनोरथ जनित कहि नट नाटक उर आनि ॥ ५ ॥

अंत—

॥ द्वयोः क्रमतें जथा ॥

कहत 'सभासद' सकल सुनि दूत वैन यैसो अनुगात मगप्रेम सों भिराइयै ।
प्रमूदित मनमूष दसन वंसन दुति हंसि हंसि अजित अषिल गून गाइयै ॥
सूंदर सरूप सोभा वारिनिधि मैं मगन यौझक निमिष द्रिग प्रेम वरसाइयै ।
कुसुमेसत्रेस पद्मानिकेत छंडि जगत के भेस ए हमेस उर ध्याइयै ॥७६॥
करत विलास हास एक समैं स्यांमा स्याम प्रगट पमांन मान दै दै दुहुँ वोरहीं ।
वीर लषि वीर आजु आनंद उमंग अंग रतिपति कोहै मोहैं द्रिग कोरहीं ॥
प्यारी मुषचंद आगे लोचन ललित तान प्रफूलित कंजमंजु सोहैं जनु मोरहीं ।
समगुन सील रूप भारती अनूप 'रूपसाहि' चित चोरी जोरी जुगल किसोरहीं ॥७७॥

॥ अथ आरयो साखकी लछन ॥

भैय विभत्स अरु रुद्र रस आरभठी पहिचानि ।
सांत सु अद्भुत वीररस सुकवि सात्वकी मानि ॥ ७८ ॥

॥ द्वैयोः क्रमते जथा ॥

भयकर काली काल फंन वमंत रुधिर की धार ।
दलतमलत उचकत फिरत निर्तत नंद कुमार ॥ ७९ ॥
पढे नाव हरि नांम की निराधार आधार ।
करि उछाह जग उदधि को आयो पार अपार ॥ ८० ॥

इति चतुधा व्रत्ति कथनं ॥

विषय—

नवरस और कैसिकी, भारती, आरभटी तथा सात्विकी नामक चार वृत्तियों का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—इस रचना की विशेषता यह है कि इसमें रस के दो भेद—लौकिक और अलौकिक माने गए हैं । शांत रस को अलौकिक रस में गिनाया गया है । यह ज्ञान-जनित होता है जिसका पान साधु जन करते हैं :—

ब्रह्मानंद अपंड जो हिय हुलसत लहि ग्यान ।
सांत अलौकिक रस कह्यौ जांनत साधु सुजान ॥ ३ ॥

संख्या २३४. रैदास जी की वाणी, रचयिता—रैदास, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस (हस्तलेख सं० ८७३)

आदि—

अथ रैदास जी की वाणी लिष्यते ॥

॥ साषी ॥

हरि सा हीरा छाडि करि करै आन की आस ।
ते नर जमपुर जांहिगे सति भाषै रैदास ॥ १ ॥
अंतरगति राचै नहीं बाहर कथै उदास ।
ते नर जमपुर जांहिगे सति भाषै रैदास ॥ २ ॥

अंत—

आरती

आरती कहा ले जोवैं ।
सेवगदास अचंभौ होवैं ॥ टेक ॥

बावन कंचन दीप चढ़ावै जदि वैरागर दृष्टि न आवै ॥ १ ॥

+ + +

अष्टादस अठसठ च्यारे षांणी । हू बरतन है सकल संसारे ।
कहै रैदास नांम तेरौ आरती । अंतरगति हरिभोग लगारे ॥ ४ ॥

॥ १० ॥ म२ ॥ राग ॥ १४ ॥ इती रैदास जी का पद संपूर्णं ॥

विषय—

निर्गुण भक्ति और ज्ञानोपदेश वर्णन ।

संख्या २३५. राधाकृष्ण रसतरंगिनी, रचयिता—लक्ष्मणदास रूलिंग चीफ बहादुर (स्थान—छुई खदान स्टेट), कागज—आधुनिक रूलदार, पत्र—१४, आकार—८ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९४, पूर्ण, रूप—खंडित, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्रीगणेशाय नमः सरस्वतीय नमः श्रीगुरूभ्यो नमः श्री राधाकृष्णभ्यो नमः ॥

॥ अथ लिष्यते बंदना ॥

॥ दोहा ॥

श्री राधा तू बडभागिनी मेरे मन बस कियौ ऐन ।
'लछिमन' विन ढूंढत फिरौ रेन न मिलै दिन चैन ॥ १ ॥
नंदनदन सव छंद तजि मोकों विनती कोंन···
'लछिमन' विन ढूढत फिरौं सपना आपरा तव त···

+ + +

केश पकडि देवकी के लीन्हौं । कछु कान बहिन के न कीन्हां ॥

अंत—

॥ पद कहरवा ॥

मोकों चैन परत नाहिं सजनी ।
देखे विन ब्रजपति नैन ॥

खोजत सी दिन फिरती सपनावत दग लगे रैन ।
जाग उठत तव आली वनमाली विन दहै तन मैन ।
हम भरन जमुन जल जाती हरषाती मधुर सुनि बैन ।
आया निकट तव प्यारे खोलै घुघट तव हँसि दैन ।

गावत वंशी बजावत करैं तैसी रसीले पुनि सैन।
'लछिमन' मन बस्यो मेरे छबि वाके सम त्रिभुवन हैन।

॥ दोहा ॥

मन अटकी मेरी बड़ी देखे बिन पड़त न नैन।
'लछिमन' दिन उठ ढूढती पड़ी सपनावत रैन॥

॥ छंद ॥

जो यह लीला गाय पाय रस हरष बढ़ावै।
जौन सुनै चित लाय भक्त पदवी सोइ पावै॥
इहाँ सुख सब भोगे सोई जाय अंत प्रभु पास।
दरसन के नित आसकर गुन गावत 'लछिमन दास'॥
ख्याल (ख्याल) सब मिलि करौ॥

इति श्री राधाकृष्ण रसतरंगनी श्री नृप लछिमन दास विरचितायां दधि दानलीला संपूर्णम् यह दधिदान लीला और तीजा है।

विषय—

जन्म से लेकर दानलीला तक राधा कृष्ण चरित्र वर्णन किया गया है।

रचना काल

औनैस[१९] सौ चौदावार[१४] पुनि गुरू दिन हो।
भादो सुदि तिथिपरवा बजे दस तेहि छन हो।
पूरा भयो तेहि वेर कृपा हरिगुरू करि हो।
बार बार कर ओर प्रभू पद सिर धरि हो॥ १० ॥

संख्या २३६ क. कान्ह की बारहमासी, रचयिता—लखनसेनी, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—७¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सरल चौबे और रामनरेसन चौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार (दखिनटोला), जिला—बलिया

आदि—

···ले आशान्ह सुषे ' माशा। जेही बीधी देइ शो करे वेलाशा।
दुखी सुषी गीरह आपन आऊ। परदेश अभ कीन्ह छाउ॥
छाइन्ह महील बोचोपारी। रची रची छाईन्ह चरहु दुवारी॥
पाके कटहर बडहर केरा। पाके पान तमोली नींफेरा॥
पाके आम सुरश अमराऊ। अमीरत फल एक भव सो ठाऊ॥
मोरे हीरीदंआ बीजौरा फरीआ। अनेक जतन मे पीअके धरीआ॥
गेंदुर चीर मै ए धरब उतारी। शुदिन देवश पीअ देपु उघारी॥

॥ दोहरा ॥

आठो अंग रस भीनीही पंड..............।
तब सुष होइही प्रापती जब घर आइव कान्ह ॥

शावन में घन कीन्ह पआना । कान्ह न देषो तोहरे वाना ॥
आचर फारी पुकारो मेवा । वरीसु ताहाँ पीअ पाहन थेघा ॥
पहीले पीअ मोर देइ मनाई । पाछे मेघ वरीशइ जाइ ॥
ताहा वरीशइ जाहां स्री गोपाला । शमुभी शनेह पीआ आऊ हमारा ॥
पलंग ले धवरहुर डाशी । वीवीध शुगंध शपेलीन्ह वाशी ॥
अगर चंदन कपुर के भरी । मंदील रहा वासना पुरी ॥
चारीउ कोन वरे गनीआरा । ताहानो शुभे नीसी अधीआरा ॥

॥ दोहरा ॥

चीत्र विचित्र भरोषा ताहा वहै मधुर वताश ।
कान्ह भवर भैवल शई चंदर चांदनी के पाश ॥

भादो चन्हे माश अवगाहा । वीरह शमुद्र वुडत हो नाहा ॥
वीरह शमान शमुभ भो मोही । वुडो मरो पीअ पातष तोही ॥
जे गुन वाधेइ मोर सरीरा । शे गुन घीचां न लावइ तीरा ॥
गरजै मेघ पीरीसी कंपा । शम''''''शीर उपर भंपा ॥
लौ वव कं नीशु अधीआरी । डशै चाह जनु नागीनी कारी ॥
पीअ पीअ करत कास वीष चन्हां आ । गरुर कहा नीरवशी करीआ ॥

॥ दोहरा ॥

आए न आइ कान्ह घर लेउ न जीअरा राषी ।
तीरीआ न जीये पुरुष वीनु होई वीधाता शाषी ॥

मास कुआर शवेते भीरा । कही थाह जल कही गंभीरा ॥
लोपी गए गए वीजुली चमकाई । ठाव ठाव वादर शे दुराई ॥
जेही भीतीं चंदन चरचु गोपाला । शुभीरी शनेह पीअ आउ हमारा ॥
अपना पीआ के छडीआ जुडी । जेही ते परम हंस गो उडी ॥

॥ दोहरा ॥

मारीशी हीरीदेए हथ दे वीरहीनी गइ मुरछाए ।
कान्ह जो गए वीदेश हो काम''''लाए ॥

कातीक चन्हे वारह की शाषो । मारे कान्ह काम सर वाषी ॥
पन मुरछै पन जाइ जीकरारा । पन पन नएन होत रतनारा ॥
बाट बटोही चला वीदेशा । राधा कान्ह कह पठउ शदेशा ॥

वेदन मोर कहन पाए लागी । तुम्ह वीनु जरे बीरह की आगी ॥
आन आग होइ हाथ वतावो । वीरह की अगनी सुधीक शुलगावों ॥

॥ दोहरा ॥

पथिक कहब सदेशा जश कीछु देषी के जाइ ।
जश दुष बाटै राधिका तश दुष परैं जनी काइ ॥ ४ ॥

अगहन अगीनी वरे थनहारा । शीतल होइ जो आवै गोपाला ॥
रैनी छव माश गवाएउ रोई । मोर अश दुष तीरीआ जनि होई ॥
जारी शरीर छडावो षेहा । लागो जाइ शाम को देहा ॥
कत बीओग कतीक दुष सहउ । आगे जे तरुनापा रहऊ ॥
दीन दीन घटै तरुनापा हीता । आगे है मरने की चीता ॥

॥ दोहरा ॥

" दल भजनम मानुष के जौन वीओगीनी होइ ।
जाकर पुरुष मदील वशैं शोइ शोहागीनी जोइ ॥

सुन सषी पूस मास के रंगा । जहीआ होतेउ पीअ के शंगा ॥
नेती षदोहीन्ह पहीस पटोरा । मुष लवंग कशतुरी वोरा ॥
शेज कान्ह कै डशीतौं जहीआ । शीतल पवन डोलावो तहीआ ॥
अधर सुपेती वोढीतीउ अंगा । जतमन उपज तक करतेउ रंगा ॥
षन ही अलीगन षन होइ दाता । षनषन उपजु वीरह कै वाता ॥
षन पीअ वाह शीश तर देई । पान षीआइ अधर रस लेई ॥

॥ दोहा ॥

शगरीउ रैनी शुष वेलशेते जे न पारै शेज ।
अब शो रैनी कान्ह वीनु वीहरत आवै करेज ॥

माघ मास धनी करु अशनाना । मीरीग मद तीलक रहै तश कान्हा ॥
पाती लीषत आशु ढरी आई । हुहै शंजोग तौ दैइव मेराई ॥
डाशन नेह जौ दैब डशाई । तरुनी तीरीआ जस शीध रगाई ॥
वीथकन लागे जे रशी होई । ··· ··· ··· ··· ॥
जेही वीर षेलु धमारी । गोपी शंग नाचु वनवारी ॥
आशु कान्ह मैं शपना देषी । आए कान्ह शदा हम लेषी ॥

॥ दोहरा ॥

पाछील कथा समुझी के राधा मन ही अनंद ।
जबही कान्ह घर आइबी तवही शपुरन चंद ॥

फागुन सुनु शषी दुरजन माशा। मै दगधी पीअ करै वेलाशा ॥
पराश पुरुष शे हरष न होई। जबलेग पुरुष शंग नहो होई ॥
नीरदआ जाती जे कान्ह अहीर। नही आने पर वेदन पीर ॥
गोपी शभै कहै शमुझाई। शुप शनेह रैनी तुअ आई ॥
बीरीछी चन्ही कोइली कुहुकाई। शे शुनी वीरहीनी रही तवाई ॥
अब शो चांद छीन भै रहा। 'लपनशेनी' कवी ते अश कहा ॥

लपनशेनी कवी उपर वो राजा चितवै वाट।
जबही कन्ह घर आइव तवही सपन उदघाट ॥

चैत मास नीसरै नूव लासा। (पुहुपबाउ लेइ ?) बरे बतासा ॥
फरी फली परासही लागी। तेही भीतर से नीसरी आगी ॥
सुनी के बीरहीनी रही लोभाई। तेही भीतर कोइली कुहुकाई ॥
सुगंध फूल सभ वीरीछन्ह केरा। दीआलेसी काम जनु हेरा ॥
हेरत पंथ गए दुर नैना। घन घन मारग जोहे वैना ॥

लछन केरी सजीवन रावन के गुनवान।
हनीवत केरी सजीवनी होहु संघाती कान्ह ॥

चढै वेसाप काम के दूता। भौंरा कवल रस पीअै बहुता ॥
सीतल चंदन वहै पवनारी। अतो सीतल पीअ कै अंकवारी ॥
मधु माधौ रीतु आइ तुलानी। कीसुन वरन जमुना कै पानी ॥

अंत—

राजा मन माह जपी के लाए रहे अनो धीआना।
वरीस देवस के बीते तव घर आइत कान्हा ॥

जेठ मास वेनी बहुत पंभारा। अवधपुरी घर आउ गोपाला ॥
काग बचन एक बोलु अमोला। प्रथम पहर पुरुब दीस बोला ॥
पान घात नीसान कोन छीका। राधा कान्ह बोलत... का ॥
टुटै कंठ पुहुप के माला। फरकी फरकी उठै थन हारा ॥
फरके नएन नैन दुनो वाही। फरकै पान अधर मुष माही ॥
वासी सुपारी पाक पाना। चंदन रगरी कसतुरी आना ॥
नएन वएन उठै अंगीराई। कुकुती के बंधन छुटीछुटी जाई ॥
आजु कान्ह घर होइतही मोरा। घी कै वाह सुते तो कोरा ॥

'लपन सेनी कवी' गाव राधे कान्ह घर आऊ।
जासो आन्हती उतारल गोपीन्ह मंगल गाऊ ॥

एती स्री कान्ह के बान्ह मासा जो देषा सो लिषा मम दोष न दीयते पंडित जन सो बीनती मोरी टुटल अछर जेहु सभ जोरी ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री कृष्ण के परदेश चले जाने पर राधा के बारह मास के विरह का वर्णन किया गया है ।

संख्या २३६ ख. बारहमासा, रचयिता—लखन सेनी, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १७८५ वि०, सन् १७२८ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, मोहल्ला—सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ श्री गनेसएनमह ॥

चढ़े असाढ़ सुषही केमासा । जेही बीधी देइ सो करै बीलासा ॥
दुषी सुषी घर आपन आऊ । गइ परदेस अभागे छाऊ ॥
छाऐन्ही मंदील औ चौपारी । रचा रची छाऐन्ही बरह दुआरी ॥
पाके कटहर बड़हर केरा । पाके पान तबोलान्ह केरा ॥
पाकही आम सुरग अमराऊ । अंम्रीत फल ऐक धरब सुठाऊ ॥
हमरे हीदै बीजौरा फरीआ । अनेक जतन कै पीअ के धरीआ ॥
सेदुरी चीर जो धरब वोहारी । धन सुदेवस पीअ देषब उघारी ॥
देषत नाह धरा हीअ लाइ । हमअ गमोरी रहब अलसाइ ।

॥ दोहा ॥

आठ अंग रस भांनही पंडव अधर मुख पान ।
तब सुष होइही आपती जब घर आइब कान ॥

सावन मेघन्ह कीन्ह पआना । कान्हन देषौ तुम्हरे बाना ॥
आचर फारी पुकारौ मेघा । नह बरीसहु पीअ पाठन थेहा ॥
पहीलेह मोर पीअ देहु मंगाइ । पाछे मेघ बरीसहु जाइ ॥
तहं बरीसहु जह स्री गोपाला । आवथु सभरी सनेह हमारा ॥
पलगा लै धवराहर डासी । बीबीध सुगंध सुबेदी बासी ॥
अगर चंदन कपूर कै धुरी । मंदील रहे बासमा पुरी ॥
चारीहु सीरह बरै मनीचारी । तहवा देषी नीसी अंधारी ॥

॥ दोहा ॥

पीअ विचीत्र भरोषा तह वह मधुर बतासा ।
कान्ह भवर भै विलसव चंद्रवदनी कै पासा ॥

भादव चढेउ मास अवगाहा । वीरह समुद बुडती हौ नाहा ॥
थीर भा समुद वीरह भा मोही । बुडी मरौ पीअ पातव तोही ॥
जेही गुन बाधेहु मोरी सरीरा । सो गुन धीची लगावहु तीरा ॥
गरजइ मेघ प्रीथमी कंपा । समुद लहरी भीह ऊपर भंपा ॥
लवका लव कै नीसी अँधारी । डसै चहै जनु सांपीनी कारी ॥
पीअ संमरत काम वीष चन्हीआ । गहरी कहा सो नीव्रीस करीआ ॥

॥ दोहा ॥

आइन जाहु कान्ह घर लेहु न जीअरा राषी ।
नीआ न जीअै पुरुष वीनु होहु वीधाता साषी ॥

चढेउ कुआर सकेतेउ नीरा । कतउ थाह जल कतहु गंभीरा ॥
लोभी गए वीजुरी चमकाइ । नव नव बादर चले दुराइ (?)॥
हुलसै कुमुद चंद कै जोती । तारागन जम निरमल मोती ॥
मेघ कटक चहुंदिसी गा फटी । इंद्रक धनुप रहा गुन टुटी ॥
हरषीत भै जे कुहुक मजुरा । तेन्हकर सवद गए बडी दुरा ॥
अदरी अगौरौ दीजै पाना । बीढइ सो नद समीप स्थाना ॥
आजु मंदील जो होत गोपाला । मेलतीउ कंठ पुहुप कर माला ॥
पुन्य कलस धरतीउ थनहारा । जेही नीत चंदन पेवरु गोपारा ॥

॥ दोहा ॥

'लषन सेनी' अस गाथा राषा न तजु प्रान ।
बारह मास जब पुजही तब घर आइव कान ॥

कातीक चढेउ मास कै साषी । मागेउ कान्ह बान वीष राषी ॥
बन मुरछै बन जाइ विकरारा । वीरही नैन होइ रतनारा ॥
बाट बटोही चला वीदेसा । राषै कान्ह कै पठौ संदेसा ॥
बेदन मोरी कहव पगु लागी । तुम्ह वीनु मरै वीरह कै आगी ॥
आन आग होइ हाथ बताइ । वीरह आगी गैजही सुलगाइ ॥
दुबन की अगीआ गैजही लाई । प्रंवीत सांच वीनु कुमोलाइ ॥
बारीउ मास गवाएउ रोइ । नैनक काजर लेउगा धोई ॥

॥ दोहा ॥

देषी जातहहु पथीक असगै कहेहु बुझाइ ।
जत दुष बाट राधी कही अतजनी होषै काही ॥

अगहन अगीनी वरै थनहारा । सीतल हो जौ परसु गोपारा ।
सीतल चंदन दहयौ नारी । अती सीतली पीअ कै अकवारी ॥
अपने पीअ कै छही ऑजुडी । जेन्ह वीनु परम हंस गा उडी ॥

॥ दोहा ॥

'लखन सेनी' अस गावा राधा न तजु प्रान ।
बारह मास जब पुजही तव घर आइव कान ॥

सुनु सषी पुस मास के रंगा । जहीआ होतीउ पीअ के संगा ॥
नेत पटोंगी पहीरु पटोरा । मुष लवंग का पुर तबोरा ॥
सेज कान्ह कै डासी नाह । सीत तुसार न जानी जाह ॥
सुतीअ रैनी कान्ह के संगा । जत मन उपजु करी तत रंगा ॥
सामीक हीदे मोर थनहारा । ऑतर रहै फुलकर हारा ॥
षन आलींगन षन नषघाता । षन मुष लागी रहसी कह बाता ॥
षन पीअ वाह उर्सा से देही । पान षीआइ अधर रस लेही ॥

॥ दोहा ॥

सुतीअ रइनी कान सग तजै न पारी सेज ।
अब सो रैनी कान्ह वीनु वीहरत अहै करेज ॥

माघ मास घनी कर अस्नाना । अंग मद चीअ उरेहेन्ही काना ॥
लीषतेह नैन आसु भरी आऊ । इहौ संजोग जौ दै अभैराऊ ॥
तरुन ओीआ जसी सीझ रसोइ । वीथकम लागु जौ रसीआ होइ ॥

॥ दोहा ॥

देषी जात इहु पथीक अस गई कहेहु बुझाइ ।
जत दुष वाट राधी कही अतजनी होषै काही ॥

फागुन सुन सषी दुलभ मासा । मै दगधीउ जग करै विलासा ॥
अपने रंग रंग नही होइ । जौ लही पुरुष संग नही जोइ ।
मोरदै जाती जो कान्ह धहीरा । डरै नैनन हसुती मुइ चीरा ॥
जमुन तीर हरी षेलु धमारी । गोपिन्ह संग नाचु बनवारी ॥
सोरह सहस गोपी करही अलंदा । सब धनीतारा हम धनी चंदा ॥
अब सो चंद षीन भै रहीआ । वीरह वियोग माही दुष कहीआ ॥

॥ दोहा ॥

लषन सेनी अस गावा राधा न तजु पान।
वरह मास जव पुजही तव घर आइन कान्ह ॥

चैतमास नीकरै नव रासा। पुहुप त्राउ लै वहै वतासा ॥
कारी कली परासही लागी। तेही भीतर सै नीकसी आगी ॥
त्रीष चढी कोइली डीडीआई। तेही रीतु वीरहीनी रही लोभाई ॥
सुगंध फूल सव रूषन्ह केरा। दीवा लेसी काम जनु हेरा ॥

॥ दोहा ॥

आइन जाहु कान्ह घर लेहु न जीअरा राषी।
त्रीआ न जीऔ पुरष वीनु होहु वीधाता साषी ॥

चढे वैसाष कामकै दुता। भवर कमल रस पीअही वहुता ॥
मोरे लेपे नीरस वैसाषा। दीन के तवत भइ उजरी राषा ॥
राष उडाइ लेइ नही भोगी। लाइ वीभुती होउ जट जोगी ॥

॥ दोहा ॥

हनीवत केरी सजीवनी होहु सकती के वान ॥
जैसे जीए लछीमन तसन जीआवहु कान ॥

जेठ मास पर उएउ भाना। अवधी पुजी घर आइव कान्हा ॥
काग वचन एक कहइी अमोला। प्रथमही पहर पुरवहीसी वोला ॥
पान पात गोसान दीसी छीका। राधे सगुन पान सव नीका ॥
छुटै कसनो फुल कर हारा। फरकी फरकी उटै थनहारा ॥
वासी सुपारी पाकै पाना। त्रीगमद अगर कस्तुरी साना ॥

॥ दोहा ॥

लषन सेनी असगावा कान्ह घर आऊ।
जासो आरती उतारी गोपीन्ह मंगल गाउ ॥

इति श्री वरहमासा कथा संपुरन ॥ संवत १७८५ समै वैसाष सुदी पंचमी पोथी लिषा सीवराज सिंघ काएथ मुकाम आजमगढ ॥

विषय—

श्रीकृष्ण के प्रवास के समय राधा के वियोग का बारहमासा का वर्णन किया गया है।

संख्या २३७. राजनीति, रचयिता—लल्लूजी लाल (आगरा निवासी). कागज—देशी, पत्र—४५, आकार—९".५ × ६".२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, कलकत्ता से प्रकाशित

परिमाण (अनुष्टुप्) -२१८४, पूर्ण, रूप प्राचीन, गद्य, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत मुरारीलाल जी केडिया, मुहल्ला—नंदन साहु की गली, बनारस

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

॥ अथ राजनीति लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

गज मुष सुख दाता जगत दुख दाहक गण ईश ।
पूरण अभिलाषा करौं शंभू सुत जगदीश ॥

काहू समय श्री नारायण पंडित वे नीति शास्त्रनि ते कथानि को संग्रह करी संस्कृत में एक ग्रंथ बनाय वाको नाम हितोपदेश धरयौ । सो अब श्रीयुत महाराजाधिराज परम सुजान सब गुणखान भगवान कृपानिधान मारकुइस वेलेजली गवर्नर जनरल महाबली के राज में और श्री महाराजा गुणवान् अतिज्ञान जान गिलक्रस्त प्रतापी की आज्ञा सों संवत् १८५९ में श्री लल्लू जी लाल कवि ब्राह्मण गुजराती सहस्र अवदीच आगरे वारे ने वाको आशय लै ब्रजभाषा करि वाको नाम राजनीति राख्यो ॥

अंत—

तातें हौं कहतु हौं की तेरी दुष्ट पत्नी तौ गई ॥ पै तू अब ही सकाम है ॥ याते नयौ ब्याह कर ॥ कह्यौ है कूआँ को नीर बड़ की छाह तुरित बिलोयो घीव, खीर को भोजन, बाला स्त्री ये सब प्रान को पोषतु है ।

\+ \+ \+

॥ इति श्री लाल कवि विरचित नीति ग्रंथ ॥

विषय—

हितोपदेश का आधार लेकर प्रस्तुत रचना लिखी गई है । संपूर्ण रचना निम्नलिखित पाँच अध्यायों में है :—

१—मित्रलाभ २—सुहृद भेद ३—विग्रह ४—संधि ५—लब्धप्रनास ।

संख्या २३८. कवीत्त रमायन, रचयिता—कविलाल, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—७¾ X ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस । दाता—श्री सरलचौबे, स्थान और डाकघर—सहतवार, जिला—बलिया

आदि—

कवीत्य रमाऐन ॥

दीन्हे अनुसासन जनक भूप धासन्ह,
बीबीधी भांति आसन सींगासन धरायो है।
भेजेवो चोपदारे धायो धावनी हजारेशो,
पुकारे वार वारे शारे दलमो जनायो है।
शाज शाज शाजै महाराजे दीप दीपन के,
शहीत समाजे वाजे गाजे करि आयो है।
बैठे 'कवीलाले' रंगभूमि में बीशाले महा,
महामहीपाले लाले आले छवी छायो है॥

॥ दोहा ॥

गाधी तनै दशरथ तनै पठएवो जनक वोलाए।
कनक सींगासन जगमगेवो बैठारेवो दोउ भाए॥

अंत—

कवीत्य

षोटषोइ क्षत्री छत्रपती छीत पती होए कै,
जती कै स्वरूप धै कै जग में पुजावई।
षोट शोइ जती जो जती को शरूप त्यागी,
कर में कुठार ले सभा में छली आवई।
ऐहो 'कवीलाल' षोट सोइ जाके क्रोध उर,
कुल की न जाने गुन आने मन गावई।
लवन कैशे षोटो छोटो छोटो है,
पीनाक तोरे भुज मुष मोर भुप दोहीता वीवाहई।
अरे मुढ बालक न जानत शुभाव मेरो,
तेरो काल फेरो ढेरो फेरो कीन नाचो है।
ताते तु वीषम वीषो बोलत हव नीशंक,
ठाढ़े शंक नहीं देषो नीज आचो है।
एहो 'कवीलाल' मुनी रावरो शक्रोधन,
सो छाडो न कुठार धार वार बहु बाचो है।
अब आइ रोशे मम दोजे जमो देई,
कोई छत्रीन को कीन्हो शो करत वाके शाचो है॥

—अपूर्ण

विषय—

जनकपुर के धनुष यज्ञ का वर्णन किया है।

संख्या २१६. बारहमासी, रचयिता—लालदास (स्थान—बांसबरेली), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—६३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

पहिला महिना असाढ़ लागा बरषा रित आई।
पीतम मेरा स्याम सलोना पाती लीषवाई॥

कहो वे कैसे नही आए। यैसे चतुर स्याम चेरी ने विलमाए॥
डाल गले जादू की फासी। श्री राधा गोपी त्याग दई वरवारी कुवजासी॥१॥

सावन तो मन भावन लगा दावन से लागी।
स्याम तेरे दावन से लागी॥
जब तो प्रीत करी छिन छिन पै अब,
कांहे त्यागी सुनो तुम उधो मेरी सों।
लाज सरम किन गई प्रीत जब कीनी चेरी सों।
यही मोही आवत है हांसी॥ २॥

भादो को अँधियारी कारी। पीतम की प्यारी॥
अन्न नहि भावै नींद नहि आवै कपटी कुटील अहीर।

स्याम को जानत हो सुधो चलत बेर डार गये फासी॥ श्री०॥ ३॥
लागे क्वार कनागत आए सब कोई धर्म करे। सावरो स कोई धर्म वरे।
मै तो धर्म करोगी वा दीन प्रीतम नजर परे मिलावे है कोई यैसा लै अक्रूर चले
मथुरा को वा दिन को वैरी वुधवा की किन्ने मारी॥ श्री०॥ ४॥

कातिक कौतुक करत कृष्ण तेरे सब काहू जानै।
आषिर जात अहीर स्याम तेरे कुवजा मन मानै॥

कंस की आषिर को चेरी। याही से दिन रैन आप मेरी फरकत है दहनी॥ ५॥
अगहन तो मन भमकन लागे धधकत है छाती उधो हाथ संदेशा भेजा बांचो नीपाती
लीषो कुछ तुम वी पीतम को जो नहीं आवै। कल जीवन नही पाईगे हमको॥ ६॥
पूस पासतें बिगर गये मेरे प्रीतम से प्यारे। कानम लागे दूत कियो हरि नैन सो
न्यारे हमन हरि जाने बृजवासी॥ श्री०॥ ७॥

माघ मनोरथ लाग रहे कोई बूझैगे दिल की।
गोपी उठी कराहि साच जब उधौ ना जानी।
रोम सब ठाढे होय आये मेरे स्याम देहु मिलाय।
सकल सब गोपी समुझाई को येसी ना चहिये ॥ श्री ॥ ८ ॥

अंत—

फागुन ही को लगत अंग मै होय रही विसमै।
पाती बाचत कुसल कहो हरि गोपिन के समै ॥
लगी मोही साहु करन चोरी।
मेरे जीयत कृष्ण वादी संग षेलत है होरी ॥
षबर मेरी लीजो कैलासी ॥ श्री० ॥ ९ ॥

चैत चिता मै जलती। बलती जमुना मै गिरती।
कहियो मदन गोपाल संग ले आवै,
चेरी को उनै कछु बातन की डरना।
हम तो हैं दरसन के भूषे और नहीं करना।
नाथ को यैसी ना चाहिये ॥ श्री० ॥ १० ॥

नये जन्म वैसाष पत्र को घर घर लिये डोले।
उधो जी ने जाय स्याम सो यैसी टहराई ॥
फौज सब काहे को रोकी।
अंग मास गये सूष सकल सब व्याकुल है गोपी ॥ श्री० ॥ ११ ॥

जेठ मास मे मिले कृष्ण श्री राधा गोपी से।
'प्रेमदास' आनंद भजन कर कह गये बारह से।
परम पद कहे सुने दास बांस बरेली के,
'लालदास' बारहमासी गावै ॥ १२ ॥

विषय—

कृष्ण के वियोग में बारह महीनों में होने वाले गोपियों के विरह का वर्णन किया गया है।

संख्या २४० क. नेमिनाथ जी का मंगल, रचयिता—लाल, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१०३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १७४२ वि०, लिपिकाल—सं० १८६९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

अथ नेमनाथ जी का मंगल लिष्यते ।

अरी गुणगणधर देव मनाऊ हाँ । राजा द्रौपति दा मंगल गाऊ हाँ ।
अरी सब बातै सुनत सुहाई हाँ । अरी जादौ पति कुल वंस बधाई हाँ ।
जादौ पति कुल बंस बधाई गाऊ सारदाहि मनाईया ।
हो हो कृपाल मात मुझ ऊपर नेम कुमर जस गाईया ।
गाऊं तो मंगल नेम जिनका श्रवन सुनत सुष दाईया ।
होत उछाहणवार द्वारिका घर घर आनंद वधाइ हाँ ॥
अरी जहँ जंवू दीप सुहाया हाँ । अरी जहँ भरथ क्षेत्र जु बनाया हाँ ।
अरी जहाँ सोरठ देस मंझारा हाँ अरी तहाँ द्वारिका नयर ।
बसाया हाँ । जहाँ वसत छप्पन कोट जादौ जरासंधु संघारिया ।
चक्र आयो हाथ हरि के सबन मंत्र विचारीया जादौ वंस
कुल मैं को बली है सबकी पर ष्याली जीयै सबन को
बल देष कै तब राज एक छत्र कीजीयै अरी कोई कोई कहै पांडव भारी हाँ ॥

\+ × +

अरी सत्रह[१७] सै अधिक वयाला[४२] हाँ १७४२

अंत—

देवगण सब संग ले करि आपु सिवपुर को गये अरी जे भूपति देषी सबन सिर नाई हाँ । अरी केतीक गये घर वारा हाँ अरी केतीक जरे संसारी हाँ । अरी केतिक राजन धरी संक्या हाँ केतेक राजन धरी संक्या भीत भय संसार के सहेस साथ राज जलई दीक्षा संग नेमकुमार कै श्री कृस्न और बलभद्र दुषकर फेर घर कौ आईया । निर्वाण कल्याणक प्रभू को लाल मंगल गाईया ।

अरी यह संवंत सुनहु रसाला हाँ अरी सत्रह[१७] सै अधिक वयाला[४२] हाँ अरी भादौं तीज उजारीहाँ अरी तादिन यहु गीत सुहाहि हाँ । यह गीत मंगल नेम का सहजाद पुर पै गाईया । नौरंग साहब जी कै वारै 'लाल' मंगल गाईया ॥ ६ ॥ इति श्री नेम नाथ जी का मंगल संपूर्णम् सं० १८६९ श्र० ब० १४ आ० लिषतं पूज्य जी वरषि सुष्य मनी आर्य्या हेत कणलि मध्ये लिपीकृता शुंभ लेषक पाठकयो शुभमंस्तु ॥

विषय—

एक बार ब्रज में विवाद हुआ कि इस समय कौन सबसे बली है तो लोगों ने कृष्ण, बलभद्र, पांडव, आदि का नाम बताया । उसी समय किसी ने नेमनाथ का भी नाम लिया तो नेमनाथ बुलाए गए और वसुदेव के द्वारा परीक्षा करने पर वे सर्व संमति से बली ठहराये गए । तब कृष्ण ने कहा कि यदि सबसे बली यही हैं तो अब यही राजा होंगे । तब

बलभद्र ने कहा कि नहीं, यह तो आदि पुरुष हैं। इन्हें राज्य से कुछ काम नहीं। तब कृष्ण ने कहा कि यदि इनसे राज्य से कुछ काम नहीं है तो इनका विवाह कर दीजिए। उसी समय जो गीत गाया गया था उसी का भाव इसमें है।

रचनाकाल

सत्रह[१७] सै अधिक बयाला[४२] हाँ अरी भादौं तीज उजारी हाँ।

संख्या २४० ख. नौमंगल, रचयिता लाल, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—१०½×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०? वि०, लिपिकाल—सं० १८८४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

अथ नौ मंगल लिख्यते ॥

एरी गुरु गण धर देव मनाऊँ हाँ।

जदुपतिदा मंगल गाऊँ हा।

एरी यह बात सुनत सुष दाई हा। जदुपति वं[illegible] वधाई हाँ ॥ १ ॥
जदुपति कुलवंश वधाई गाऊँ सारदेव मनायके।

हो हो कृपाल जु तात मुजपर नेम कुवर जस गायके।
गाँऊ तो मंगल नेम जिनके सुनत वचन सुष दाईया
हो तो उछाह नगर धारा वत घर घर आनंद बधाइय ॥ २ ॥
एरी जहाँ जंबू दीप सुहायो हाँ।
एरी जामें भरथ षेत्र बनायो हाँ।
एरी था सोरठ देष मझारा हाँ।
द्वारावती नगर वसाया हाँ ॥ ३ ॥
एरी यह संवत सुनहु रसाला हाँ सत्रह सै अधिक उजाला हाँ
एरी भादौं शुदि छवि विसाला हाँ ता दिन गुथी गुनमाला हाँ।

अंत—

अंत का राजन भरी संका भीत अवलसार के सहंस राजन लई दिक्ष्या संग नेम कुमार के। श्री कृष्ण और बलभद्र दुषकर फेर घर को आईयो तब कल्यानक भयो प्रभु को लाल मंगल गाईयो। इति अष्टमो मंगल ॥ ८ ॥

एरी संवत सुनहु रसाला हाँ सतरा मे अधिक उजाला हाँ—
एरी भादौं वदि छवि विसाला हाँ नादिन गुथी गुन माला हाँ
इस गीत मंगल नेम जिनको सहि जाद पुर मे गाईया—
नगर वाले गरग गोती अनक चूर कहाइया पति माहि वैठोई

चुकता चास्यौ चकनवाइया नौरंग साहबजी के
वारे 'लाल' मंगल गाइया । इति श्री नौ मंगल समाप्तं
संवत् १८८४ मिति चैतवदि ७ मीलिषतं । पं० कृपासागर कृपावती
मध्यै अमर चंद के पास मै लिषी ।

विषय—

सत्य भामा, रुक्मिणी, जामवंती; गौरी आदि जादव कुल की अंगनाओं के साथ नेमिनाथ के विहार का वर्णन किया गया है ।

रचनाकाल

एरी संवत सुनहुँ रसाला हाँ सतरा सै अधिक उजाला हाँ—
एरी भादौं वदि छवि (? छटि) विसाला हाँ तादिन गुथी गुन माला हाँ ॥

संख्या २४१ क. विक्रम विलास या नवरस, रचयिता—नेवजीलाल दीक्षित (लाल), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय (रत्नाकर ग्रंथमाला), काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः अथ विक्रम विलाश लिष्यते ॥
विधुन मयंगम सिंहो नवम हो बुद्धि वल्ली आल्लस्स ।
आनंद कमल सूरो पूरो दसुहो हिरम्मे ॥ १ ॥
जयति मल्लकल्याण सुव सुजस धर्म धुअधीर ।
भूमण्डन भूपाल मनि 'षेमकरण' वरवीर ॥ २ ॥
षेमकरण भूपाल सुअ जेठो 'भूपति साहि' ।
धुअण धुरंधर धीर मति सबै सराहत जाहि ॥ ३ ॥
षेम करण भूपाल सुअ सबै सराहे जोग ।
तिण मे विक्रम साहि सुअ भयो पुरंदर भोग ॥ ४ ॥
विक्रम साहि कुमार गुण गने सो गुनी सुजान ।
पै पहिले निसि नषत गनि करो सुमति परिमान ॥ ५ ॥
राजकुमार सुराम जिमि कीर्ति लक्षि पहिहेतु ।
रसन अमायरतन लषि विरचायो यहु सेतु ॥ ६ ॥
संज्जण के सुप देत यहु दुज्जण के हिय दाहु ।
दियो देव कह सुधा शुभ कियो कबंधयो राहु ॥ ७ ॥
'कथा माधवानल' करी नाटक 'उषाहार' ।
तृप्ति ना मानी 'लाल' तब नवरस कियो विचार ॥

निरस न जानै भाव रस रसिक भजे रसभाव।
गाड़ी चलै न सलिल मह सूषे चलै या नाव ॥ ९ ॥

अंत—

॥ अथ प्रोषित पतिका लक्षणं ॥

गयौ कौनहु काम ते जाको पिय परदेस।
प्रोषित पतिका सो कही ताबिन दुषित भेस ॥ ८१ ॥

॥ यथा ॥

आए न कंत बसंत समै हु यौ परदेस को नेमु हो लीन्हा।
फूली लता चितयो चहुवोरष मानो सजाल मनोभव कीन्हो।
रापितही कुल कानि सहो सवु जान्यो न जोवन को सुष चीन्हो।
आली कहा कहौ और दसा इन्ह चैत की चादनी हू दुष दीन्हो ॥८२॥

इत्यष्ट नायका परिच्छेद

\+ \+ \+

॥ प्रिअनाम रस या प्रिय रस ॥

स्थाई भाव सनेह जह उपकारादि विभाव।
सो जानहु पिअनाम (?) रस प्रगट आदि वर भाउ ॥ ६२ ॥
चरित गाम (? राम) सुग्रीव को सौरी नंद ब्यौहार।
इत्यादिक मह जानि अहु पिअरस को अवतार ॥ ६३ ॥
विवरण भयरस भाव को वोर न पावै 'लाल'।
योंही ते सब जानियहु रस औरस उरसाल ॥ ६४ ॥
जहा आपुन जानि कै कियो कछू अविचार।
तहा कृपाकरि सोधियहु सज्जन सबै सवारि ॥ ३६५ ॥

इति श्री लाल कवि विरचिते विक्रम विलास रसांतर परिच्छेदः समाप्तं संवत् १८७२ मंगलं लेख''' जेठ कृष्ण पक्षे एकादसी बुधवार सर्वजित नाम संवत्सरे।

विषय—

नायिका भेद वर्णन।

इसमें निम्नलिखित परिच्छेद हैं:—

५	परकीया लक्षण	पत्र ९ से १२ तक
६	गनिका परिच्छेद	पत्र १२ से १२ तक
७	नायिका लक्षण	पत्र १२ से १५ तक
८	इति चतुरविधि विप्रलंभ	पत्र १५ से २० तक
९	चतुर विधि शृंगार लक्षण	पत्र २० से २१ तक
१०	नवरस लक्षण परिच्छेद	पत्र २१ से २२ तक
११	रसांतर परिच्छेद	पत्र २२ से २४ तक

संख्या २४१ ख. विक्रम विलास, रचयिता—लाल, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६ X ९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४, खंडित, रूप—पुराना (जीर्ण), पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—१६४० वि०, लिपिकाल—सं० १७२१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

भोह विलास। छुँवहि बहु विधि बालक······
छुहल हास ॥ ५० ॥
पुरुष सामुहे मीजिकर······
ई। दे कन गुरिया कान मंह अंचल डारि······
एहि विधि भाषा वेष ते औरो करो सुभाइ ॥ ··
सिजभूत के काहिन होई छराइ ॥ ५२ ॥ देषि दृश···

+ + +

सोलह से चालिस ये संवत अवधारु।
चेतमस शित पछ पुष्य नवमि भृगु बारु—

अंत—

विवरन में रसभाव को ओर न पायो लाल।
याही ते सब जानि अहि रस औ रसिक रसाल ॥ ६ ॥
पुआ यान मे कियो कछु अविचारि
तहा कृपा करि सोधि अहु सज्जन सवे सवारि। ६०।

इति श्री विक्रम विलासे लाल विरचिते रसान्तर वर्णन ॥ इति

सोलह से चालिस में संवत अवधारु।
चेतमास सित पछ पुष्य नवमि भृगुवारु ॥ ६१० ॥
संपूरन करि ग्रंथ लाल कवि आशिष दीन्हो।
विक्रम साहि कुमार जियो जिन्ह जग जसु लीन्हो ॥ ८०१ ॥

इति श्री विक्रम विलासे लाल कवि विरचिते कथा समाप्त ॥ संवत् १७९१ मिति बैसाष सुदि ५ शुक्रवार थाने अवरंगावाद राज्येसाहि जादे माजाम: लिषितंस्वहस्त महापात्र लाला जेतसिंह शुभमस्तु ।

विषय—

नायिका भेद का वर्णन है।

रचनाकाल (आरंभ में)

सोलह[१६] से चालीस[४०] में संवत अवधारु।
चेत मास शित पछ पुष्प नवमि भृगुवारु ॥

रचनाकाल (पुष्पिका में)

सोलह[१६] से बालिस[४२] में संमत अवधारु।
चेत मास सित पछ पुष्य नवमि भृगुवारु ॥ ६१० ॥

संख्या २४२ क. हरि चरित्र (दशम स्कन्ध भागवत), रचयिता—लालचराम (निवास स्थान - रायबरेली), कागज—आधुनिक (पीलेरंग का), पत्र – १९६, आकार—१३ × ९½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) – १९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७६३, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल--१७२७ वि०, लिपिकाल—सं० १९५८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री ठाकुर शिव बालक सिंह, ग्राम—असना, डाकखाना—मनियर, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमह''' ॥ श्रीशुभ समत १९५८ साके १८२२ तस्य समये श्री बाबुराम गोविंद सीघ साः आसाना आना दरवाजा पर श्री नागा जी का नीकठ मे स्री पोथी भागवंत कथा की लालचगोसांइ जी के लीष्नाः सुरू कीआ मी: कातीक सुदी पचमी ५ रोज सुक्र ॥

॥ चौपाई ॥

अव लोकव इदर बसे जाके। प्रथमे चरन चीतवो मे ताके ॥
गनपर्ता के मैऐ चरन मानावो। सुरस कथा गोपाल गुन गावों ॥
प्रथम पीतामह स्रीष्टी उपाई। तुम प्रसाद गनेस गोसांई ॥
संक्र सुमीरी डंडवत कीन्हा। भमम चाआई चीतावन लीन्हा ॥

+ + +

संमत सत्रह सौ सातईस जहीआ। कथा अरंभ कीन्ह मै तहीआ ॥
मास असाढ़ कथा अनुसारी। हरीबासर रजनी अंधीआरी ॥

सकल संत कह नाएउ माथा। बली बली जैहो आदोनाथा ॥
कथा रसाल नीगुन ताके। सरब जीव मह रचना जाके ॥
राए बरबली उत्तीम वासा। लालचराम नाम कै वासा ॥
भगती भाव तपकै अनुहारी। गुरु प्रसाद कछु कहेव सवारी ॥

\+ \+ \+

अंत—

क्रोधवंत पर जरीत भुआरा। कवन जीवन फल जन्म हमारा ॥
कोठी बरीस पुनी आइव होई। ऐह गती बहुरी ना पावेव सोई ॥
जरासेंधु पुनी वचन सुनावही। बहुत संवतोष कै वचन बुझावही ॥
जौ संग्राम क्रीस्न पह जइ हो। ईसो नीति कत जीव गवऐ हो ॥
जौ जीब षेम कुसल सो अैहो। कै वीश्याह जुवती पुनी पई हो ॥
कीजै राज सत्य सुक्रीत वंछीत अस। सुत दारा देषन राषे बस ॥

॥ दोहा ॥

इही वीधी वचन कहेव नीप सीसुपालही समुझाए।
तजी संग्राम जदुपती से रथ लै चलहु पराए ॥ २६६ ॥

\+ \+ ×

तब संभारी क्रोधबहु कीन्हा। वजर सामान सक्ती कर लीन्हा ॥
काल डंड सम सो सर फठीकारा। सर आवत स्रीपती वीच ही मारा ॥
दुइ षंड सकती भैऐउ।··· ··· ···

—अपूर्ण

विषय—

भागवत दशम स्कंध का हिन्दी में अनुवाद किया गया है।

॥ रचनाकाल ॥

संमत सत्रह[१७] सौ सातईस[२७] जहीआ। कथा अरंभ कीन्ह मै तहीआ ॥
मास असाड़ कथा अनुसारी। हरीवासर रजनी अंधीआरी ॥

संख्या २४२ ख. हरि चरित (दशम स्कंध भागवत), रचयिता—लालच हलवाई, कागज—देशी, पत्र—१८०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४७५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी, रचनाकाल—सं० १५८५ वि०, लिपिकाल—सं० १८९४ वि०, प्राप्तिस्थान—ठा० विश्वनाथ सिंह जी, स्थान—गाढ़ा, पो०—रतनपुरा, जिला—बलिया।

आदि—

तुअ प्रसाद गन नाथ गोसाई ॥

संकर सुमिरी ढंड कर लीन्हा । भस्म चढ़ाई चींतवन कीन्हा ॥
जटा मुकुट सीव सदा उदासी । तुअ प्रसाद पायौ अविनासी ॥
उतपति प्रलय जाहि ते होई । गढै सवारे भंजै सोइ ॥
सर्वभूत के अंतर जामी । तेहिते प्रनवौ सभ के स्वामी ॥
विघ्न हरह संतन्ह सुषदाई । चरन गहे लालच हलुवाई ॥

\+ ÷ +

॥ दोहा ॥

भग्ती हेतु जन लालच हरषित बंदौ पाय ।
श्री गोपाल गुन गावौ बुधि दै सादर माय ॥

पंद्रह[१५]सै पचासि[८८]जहिआ । कथा अरंभ कीन्ह हम तहीआ ॥
मास असाढ कथा अनुसारी । हरीवासर रजनी नजिआरी ॥

अंत

तुम जो इह निज पुत्र पठावा । नरनारायन देषन आवा ॥
भुमी कै भार जे हरीही सिधायो । माया लीला इहइमन लायो ॥
अब जदुबंस ऐलीक भौ आई । जेही धर भार सहा नही जाई ॥
सरग पुन्य है वेगीन आवहु । अब तुम प्रथीमी वीलंभ न लावहु ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु यह बालक सौ पाले आए जदुराई ।
दीन्हेउ पुत्र वीप कंह भ्रीगु को सोक नसाइ ॥

इति श्री हरी चरीत्रे दसम स्कंधे श्री भागवते महापुराने भ्रीगु को पुत्र दान मो नाम नबेमो अध्याये ॥ ९० ॥

इति श्री हरि चरीत्रे दसम स्कंधे श्री भागवते महापुराने मुक्त दाए नो सरव कामना सीधीरस्तु श्री समतसरे १८९४ साल समै नाम चइत कीस्न पछ ऐकादसी वार सनीस्च कहं लीषी तैआर कीन्ह सकल साधु जन के सेवक गोपाल दास कायस्थ मौकाम असुराइनी घर गाव के दछिन तरफ सींगारी के मींठा इमली के नीचे ॥

विषय—

भागवत दशम स्कंध का भाषानुवाद ।

॥ रचना काल ॥

पंद्रह[१५] सै पचासि[८५] जहिआ। कथा अरंभ कीन्ह हम तहीआ ॥
मास असाढ कथा अनुसारी। हरी वासर रजनी उबियारी ॥

संख्या २४३ (क), सभा विलास (संग्रह ग्रंथ), रचयिता—लाल कवि, कागज—देशी, पत्र—८३, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८७० वि० = सन् १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनमः अथ सभा विलास लिख्यते ॥
विघनहरन गणराय मूषक वाहन गज वदन।
गनपति चरन मनाय तबै काज किछु कीजीये ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

आन न भावत आदरहू मय से गह्यो सुमलिन्द।
कृष्ण चरन अरविंद को पियत सदा मकरंद ॥ २ ॥
समता अमता को मिटे उपजो समता ज्ञान।
रमे जु रमता राम सो जमता गहै न मान ॥ ३ ॥
साध सक्यो न तू साध संगलायरस क्यौसमाध।
विषै विषाध उपाधि तज हरि कोपल आध राध ॥ ४ ॥
नीगमरू गीता ने कह्यौ परमपुनीता नाम।
बित्यौ जन्म जुजात है भजले सीताराम ॥ ५ ॥
मन की मिटे मलीनता होय लीनता साथ।
नीकी यहै प्रवीनता भजीयै दिनानाथ ॥ ६ ॥
जीन पायौ हरि रसा मरम मिटे भ्रम दोय।
गह्यो धर्म अपकर्म तज मान् परम गति होय ॥ ७ ॥

मध्य—

आए आदर नाकरै जात रहे पछताय।
घर आयौ नाग न पूजई बांबी पूजन जाय ॥ १३८ ॥
नीबल सबल के पक्ष ते सबलन मै अमलान्।
देत हिमायत की गधियैरा (वत) को लात ॥ १३९ ॥

बहुत द्रव्य संचै जहाँ चोर राज भय होय।
काँसे घर बीजरिपरत कहत सब कोय ॥ १४० ॥
ओछे नर के पेट में रहे न मोटी बात।
आध सेर के पात्र में कैसे शेर समात ॥ १४१ ॥

॥ अथ प्रश्नोत्तर ॥

काहा न अबला करि सकै कहा न सिंधु समाय।
काहा न पावक मै जरै काल काहे न खाय ॥ ३५३ ॥
सुत नहि अबला करि सकै मन नहि सिंधु समाय।
धर्म न पावक मे जरै नामन काल नहि खाय ॥ ३५४ ॥

\+ + +

वैरी बंदुआ वार्नाया ज्वारी चोर लबार।
वटपारी रोगी ऋणी नगर नारि कौ यार ॥
नगर नारि को यार भूलि परतीती न कीजै।
सौ सौ सोगंध खाय चितमय एक न दीजे ॥
कह गिरधर कविराय घरे आवै अनधेरी।
हित की कहै बनाय जानियै पूरो वैरी ॥ १ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

प्रथमे ताकौ सुमिरियै जिन दिनौ गुरज्ञान।
ज्ञानी गुर गावै सदा ध्यानी धर जौ ध्यान ॥ १ ॥
अंबर थाम्यौ थम विन धरती अधर धराव।
मनुष रूप है अवतरजौ देखत कलि के भाव ॥ २ ॥
वा विन तीनौ लोक मे नाहो दूजौ कोय।
मन मे निश्चे जानिये होनी होय सु होय ॥ ३ ॥
अब कछू बरनौ रीति रस रस ही जग को जीय।
रसना रस कौ अस कहै सुनि सुख पावै होय ॥ ४ ॥
हिय हुलास या ग्रंथ कौ राख्यौ नाम विचार।
यामे सिगरे राग के रचे रूप शृंगार ॥ ५ ॥

\+ + +

प्रान परयौ षट्राग सुनि तब उपज्यौ वैराग।
बारे तरुने वृद्ध को तातें भावत राग ॥ ७ ॥
जग को धीरज राग है राग रूप की खान।
तम भंजन सो राग है राग प्रेम के प्रान ॥ ८ ॥

सुख कौ दाता राग है राग रूप को भोग।
याही ते सब कहत हैं राग रंग संयोग ॥ ९ ॥
राग हरै सब रोग कौ राग चहै रस भोग।
बिरही झुरैं अुराग को उपजै महा वियोग ॥ १० ॥

\+ + +

भूपाली बिरहन खरी केसर बोरे चीर।
भयो विरह के ज्वाल तें पीरो सबै सरीर ॥ ६६ ॥
विरह ज्वरा तन गूजरी रोवत छूटे केस।
काम दे कानन लगे तिनहि दियो उपदेस ॥ ६७ ॥
संग्रह करि कवि लाल ने रच्यौ काव्य रसरास।
धरयौ नाम या ग्रंथ कौ याते सभा विलास ॥ ७१ ॥
यद्यपि काव्य भूषन सहित दुर्जन दोषत ताहि।
बिगरे देत बनाय है सज्जन सोधु धराहि ॥ ७२ ॥
खं ऋषि[७] वसु[८] चंद्रहि[१] गगनौ संवत को परवान।
माघ शुक्ल नवमी रवौ कियौ ग्रंथ निर्मान ॥ ७३ ॥

इति श्री सभा विलास संपूर्णम् ॥

विषय—

दृष्टांत, नीति, पखाने (कहावतें,) अन्योक्ति, नेत्र, श्लेष, प्रश्नोत्तर, कूट, कहमुकरी (अपन्हुति) तथा राग रागिनियों के स्वरूपादि विषयों पर तुलसी, गिरधरराय, अहमद, वाजीद, रहीम आदि नाना कवियों के दोहों, सोरठों, कुंडलियों, अरिल्लों एवं बरवों का संग्रह किया गया है।

॥ रचनाकाल ॥

खं[०] ऋषि[७] वसु[८] चंद्रहि[१] गगनौ संवत को परवान ॥
माघ शुक्ल नवमी रवौ कियौ ग्रंथ निर्मान ॥ ७१ ॥

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल संवत् १८७० है। लिपिकाल नहीं दिया है। ग्रंथ एक संग्रह मात्र है जिसमें अनेक विषयों पर नाना कवियों की रचनाओं का संग्रह किया गया है। अंत में राग रागिनियों के स्वरूपों का भी वर्णन है। जो स्वयं संग्रहकार कविलाल की रचना जान पड़ती है। इसका नाम 'हिय हुलास' रखा गया है। 'कवि लाल का विशेष वृत्त ज्ञात नहीं होता। संक्षिप्त विवरण में 'लाल' नाम के कई रचयिता हैं', पर इनमें से प्रस्तुत कवि 'लाल' कौन है यह नहीं प्रकट होता।

प्रस्तुत रचना बालकृष्ण कृत 'प्रतीत परीक्षा' और प्रेमदास कृत 'बारहमासी' के साथ एक हस्तलेख में है। लिपिकर्त्ता ने लिखने में बहुत अशुद्धियाँ की हैं। 'प्रतीत परीक्षा'

का रचयिता 'बालकृष्ण' है जिसको 'रामकृष्ण' लिखा गया है। यह रचना (प्रतीत परीक्षा) पहले मिल चुकी है।

संख्या २४३ ख. हियहुलास रागमाला काव्य, रचयिता—लाल कवि (संग्रहकार), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८¾ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, रचनाकाल—सं० १८७० वि०=सन् १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० चंद्रभान सिंह जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जि०—बलिया। वर्तमान पता—मैनेजर भारती प्रेस, बलिया, यू० पी०।

आदि—

पोथी हीय हुलाश रागमाला काव्य।

राग रागीनी नाम

भैरव रागे १	मालकौश रागे २	हिंडोल रागे ३	दीपक रागे ४
रागीनी नाम ५	रागीनी नाम ५	रागीनी नाम ५	रागीनी नाम ५
भैरवी १ बंगाली २	टोडी १ गौरी २	रामकली १ पटमंजरी १	देशी १ नट २
वैरारी ३ मधुमाधवी४	गुनकली ३ षंम्हावती ४	देशाषा ३ ललीता ४	कान्हरा ३ केदारा ४
शींधवी ५	कोकभ ५	वेलावल ५	कामोद ५

श्री रागे ५	मेघ रागे ६	जुदा ६
रागनी नाम ५	रागनी नाम ५	
धनाश्री १ श्रशावरी २	भुपाली १ गुंजरी २	शोरठ १ वीहाग २
मारु ३ वशंत ४	दशाषी ३ मलारी ४	जाजवंती ३ नात ४
मालश्री ५	तनक वियोगिन ५	परज ५ शारंग ६

॥ दोहा ॥

प्रथमे ताके सुमीरीए जीन्ह दीन्हो गुर गयान।
गीयानी गुन गावै सदा ध्यानी धरै जो ध्यान ॥ १ ॥
श्रवरथाम्वौ थम वीन बरनो श्रधर धराये।
मनुष रूप होये श्रवनरे यदेखत कलौ को भाए ॥ २ ॥
वा वीनु तीनो लोक मे दूजो नाही कोए।
मन मैं निशचै जानीए होनी होए शे होय ॥ ३ ॥
श्रव कीछु वरनो रीत रश रश हो जग को जीव।
रशमा रश को जेसु कहै मुनी सुष पावै जीव ॥ ४ ॥
'हीए हुलाश' या गरंथ कौ राष्यौ नाम वीचार।
वामे सगरे राग कै रचै रूप शींगार ॥ ५ ॥

आही नाद अनहद भयो ताते उपजे वेद ।
पुनी पावो वा वेद मे सकल स्रष्टी को भेद ॥ ६ ॥
प्रान परे व षट राग सुनी तव उपज्यौ वैराग ।
वारे तरुने वृष को ताते भावत राग ॥ ७ ॥
जग कोधीरज राग है राग रूप कोषान ।
तन मंजन सारा जग गहै राग परेम कौ षान ॥ ८ ॥
सुष को दाता राग है राग रूप को भोग ।
वाही ते सभ कहत है राग रंग संजोग ॥ ९ ॥
राग हरै सभ रोग कौ राग चहै रस भोग ।
वीरही करैजु राग कौ उपजै महा वियोग ॥ १० ॥

॥ अथ रागरागीनी नाम ॥

भैरों वीधन भैरवी[१] बंगाली[२] वैपुरारी ।[3]
मधुमाधवी[४] अरु शींधवी पाँचो वीरहीनी नारी ॥ ११ ॥
टोडी[१] गोरी[२] गुनकली[3] पंवावती[४] कोकम्भ[५] ।
मालकौश की रागीनी गावत अती दुरम्भ ॥ १२ ॥
रामकली[१] पटमंजरी और कहौ देशाष[3] ।
वैनारी हिंडोल की ललित[४] विलावल राष ॥ १३ ॥
देशी[१] नट[२] अरु कान्हरा[3] केदारा[४] कामोद[५] ।
दीपक की पीयारी सबै महापरेम परमोद ॥ १४ ॥
धनासरी[१] आशावरी[२] मारु[3] वहु वसंत[४] ।
श्री राग की रागनी माल[५] श्री अंत ॥ १५ ॥
भुपाली[१] अरु गुजरी[२] देशी[3] राग मलारी[४] ।
तनक[५] वियोगिन कामीनी मेघराग की नारी ॥ १६ ॥

॥ अथ रागगुन वनन ॥

भैरों[१] शुर शुरतां कहै कोल्हु चलै जु धाए ।
मालकवश[२] तव जानीए पाहन पघल वहाए ॥ १७ ॥
चलै हिंडोला अति शुनत राग हिंडोल[3] ।
वरषै जव घन धार अती मेघराग[४] की बोल ॥ १८ ॥
श्रीराग[५] के शुर सुने सुषेवीछ हराए ।
दीपक[६] दीपकवरी उठै जो कोउ जाने गाए ॥ १९ ॥

॥ अथ राग अलाप समय व ॥

पछीलै पहर नीशी शमै भैरो[१] राग वषान ।
मालकौश[२] तव गाइन जवलौं निकशै भान ॥ २० ॥

एक पहर बीत चढ़ै तक कहत रागहींडोल[3] ।
ठीक दुपहरी मेव दीपक[4] के शुर बोल ॥ २१ ॥
शीरीराग[5] चौथे पहर जब लौं दिन अथवाइ ।
मेघराग जबही भलौ जबै मेघ लवाई ॥ २२ ॥
फागुन मे वैराग सब जागत आठो जाम ।
अशट जाम म मीशी शमैए एक जाम बिश्राम ॥ २३ ॥
भैरो शरद[1] कौशीक[2] शीशीर अवर हिंडोल[3] वंशन ।
दीपक[4] ग्रीषम हेम[5] श्री मेघसुपावस[6] अंत ॥ २४ ॥

॥ अथ वाजेवन्न ॥

जग मे सब शुरता कहे बाजे साढे तीन ।
थाल त· · ·तु कुंतपुनी अरधताल शुर हीन ॥ २५ ॥
थाल नगारौ ढोल डंफ अवर पषावज जान ।
तारसंबुरा वीन है बहुरी रवाव बषान ॥ २६ ॥
फुँक नफीरी वांशुरी शुरनाइ कर माव ।
ताल पंजरी झांझ सब बाजै दीए बताव ॥ २७ ॥

॥ अथ गान आशन ॥

बैठे आशन उटकी तब होए शुध अलाप ।
पलते लेट शुर भरै मानो महा कलाप ॥ २८ ॥

॥ अथ भैरो सरुप व्रन्न ॥

भैरोधीव छबीक्षीर जटा शेत वशन ग्रीनैएन ।
मुंडन को माला गरे शीध रूप सुष देन ॥ २९ ॥

॥ सवइया ॥

शीव मुरती भैरों कौ भाव बन्यौ तीरनै (न) मुंड को मालगने ।
पट सेत सबै तन में पहीरै हीरदे भगवान को ध्यान धरै ।
तीरशुल बीराजत है कर मे सभ भामीन को मन लेत हरै ।
तन क्षार लगे दुती दुन भइ चौत चाहनो मे जीव जात छरै ॥ ३० ॥

॥ अथ रागनी शरुप ॥

शीव पूजत कैलाश पर दोउ कर मे ताल ।
शेत चीर अंगीआ अरुन रुप भैरवी बाल ॥ ३१ ॥
भशम जटाल कर गहे हाथ लिए त्रीशुल ।
बंगाली व्याकुल भई गई समै सुधी भुल ॥ ३२ ॥
कानन फुल दुपहरीआ कर कंचन शींगार ।
शीश केश सोहत छुटे शेत वसन वैरार ॥ ३३ ॥

कंचन तन लोचन कमल नागरी महाअनुप ।
पीए पै बैठी हँसती है मधुमाधवी एह रूप ॥ १४ ॥
पुहप कदम कानन धरै पहीरै बशत्र लाल ।
कोर धवत अशुल कर लीए शीधवी बाल ॥ १५ ॥

॥ अथ माल कौश शरुप वरन ॥

मालकौश लीले वसन श्वेत छरी है हाथ ।
मोती को माला गरे शगरी सखीआ साथ ॥ १६ ॥

॥ सवैइया ॥

कौशिक की उपमा है भलो तन गोरे वीराजत है पट लीलो ।
माल गरे कर शेत छरी रस परेम छक्यो जीव छैएल छबीलो ।
नागरी रूप उजागरी लै संग डोलत है सुशोगरबीलो ।
कामीन को मन मोहत हैं मन भावन रुप अनंग रशीलो ॥ १७ ॥

॥ अथ रागनी सरुप ॥

टोडी कर बीना गहै गावती पीए के हेतु ।
चंचल छबि म्रीग लोचनी पहीरे बशतरशेत ॥ १८ ॥
गोरी छवी अति साँवरी अंब कोअ धरे कान ।
सीरषातन तप कामको गावती भीमतान ॥ १९ ॥
छुटे केश तन गुनकली बैठी पीए के पास ।
नीचे ग्रीव करीरही अती ही चीत उदाश ॥ ४० ॥
षंभावती गोरे वदन गावती कोकील बैएन ।
अती आतुर चातुर खरी कामवती दीन रैएन ॥ ४१ ॥
कोकभ्व कामीनी नीश समै जागत पीएक संग ।
रतीमान कै छीन तन अंग अंग मे रंग ॥ ४२ ॥

॥ अथ हिंडोल मत ॥

पीत वशन हीडोल के है जु हिंडोरे मांही ।
सषी झुलावती चाव सो गाइ गाइ मुसुकाही ॥ ४३ ॥
कीन्ह बनाव महा छवी सुंदर भावत बैठो हिंडोल ही डोलैं ।
झोक झुलावत और दुंदुसव गावती है सखीआमुष खोलै ।
गोर से गात दीपात षरो मानो दामीनी शी दुती देषती डोलै ।
बशतर पीत लीए रशरीत अनंग सो सोहै हंसे मृदु बोलै ॥ ४४ ॥

॥ अथ रागनी सरूप ॥

रामकली गोरि बरन कंचन सी सब देह।
पीक बानी गावती पढी पीए के परम सनेह ॥ ४५ ॥
बीरह भरी पटमंजरी मन मलीन तन छीन।
सखी सीष अति देत है भई परेम आधीन ॥ ४६ ॥
पीए के कर पर कर धरे अति ब्याप्यौ तन काम।
तन दुखल देशाख है महाबीरहनी वाम ॥ ४७ ॥
ललीत गरे माला पुहप सुंदर तरुनी जान।
गोरी छबि बरनतर अरुन नेपुन काम के बान ॥ ४८ ॥
कामदेव कवौ ध्यान धरी गावनी गीत संगीत।
करत सींगार बीलावली ते लै बरनन पीत ॥ ४९ ॥

॥ अथ दीपक राग सरूप बरनन ॥

दीपक गज की पीठ पर बैठेव बागौ लाल।
मुकुत माल सोभीत गरे यह दीपत सींगारी बाल ॥ ५० ॥

॥ सवैइया ॥

दीपक के परताप बडो चढी बैठो गेएद की पीठी बीराजै।
अंबर राते शरीर सबै मुकुतान की माल गरे छवी छाजै ॥
संग सखी सब सोहती है तीनी मांही जो आग गेएद सो गाजै।
सावरो रूप सरूप बन्यौ दुती देखत दुष सबै तन भाजै ॥ ५१ ॥

॥ अथ रागनी सरूप ॥

देशी अती वरनतर हवे काम सताई नारी।
पनी को टेल जगावतो भीशो कै धरत वारी ॥ ५२ ॥
अरुन बरन सगरे बसन नटवारी नट नारी।
दोऊ कांधे कर धर पीए तन रही नोहारी ॥ ५३ ॥
शीशपत्र गजदंत को कर बांकी तन वारी।
मोर कंठ के बरन है रूप कान्हरौ नारी ॥ ५४ ॥
शीश जटा सब तन लटा गरे जनेऊ नाग।
केदारौ इहै रूप है धरे ध्यान वैराग ॥ ५५ ॥
कामवंत कामोद है पीत वसन तन ताश।
अंवतरै बेठी हंसती बीछरी पीऊ के पास ॥ ५६ ॥

॥ अथ शीरी राग बरनन ॥

शीरी राग के कर कमल भुज रूप पटराज।
परष अठारह कौ बरन कंठ रसाल ॥ ५७ ॥

॥ सवैइया ॥

वरष अठारह कौ वरनो मुष देषत ही सबके मन भावै ।
वाम सबै वस कै अपनी गुन गाय के भावते भेद बतावै ॥
रातौ जो बागौ वीराजत है कर वारीज फूल लीए मुसुकावै ।
मुष के रूप सरूप बन्यौ सबही में भलो शीरी राग कहावे ॥ ५८ ॥

॥ अथ रागनी सरूप ॥

धना शीरी वीरहीन बड़ी हीरदैए वीरह अपार ।
सब तन पीअरो होए रह्यौ नीपट छीन तन वार ॥ ५९ ॥
चंदन टीको भाल पर गरे वैहूल कौ हार ।
छवी अति सुंदर सावरी आसावरी कुमार ॥ ६० ॥
मारू के माला गरे पीए परेम मदमात ।
तरुनी सुंदर सावरी बैठी अती अलशात ॥ ६१ ॥
मोर पछ शीर पर धरे वशतर पीत वशंत ।
कान फूल जो अंब को चहुँदीश भमर भरमंत ॥ ६२ ॥
माल शीरी दुरबल वदन सखी हाथ पर हाथ ।
चहुओर पती को तकती चहै मदन कौ साथ ॥ ६३ ॥

॥ अथ मेघराग सरूप वरनन ॥

स्याम वसन जो मेघ है गहे हाथ तरवार ।
अती आतुर चातुर घरवौ गावत शुरत वीचार ॥ ६४ ॥

॥ सवैइया ॥

मेघ मलार महा अती सुंदर इंदर की छवी आपु बन्यौ है ।
जैसो जहाँ चहीए जोई अंग सो तैशीव भाती में आपु बन्यौ है ।
काम कौ आतुर है अती ही तीए की रती क्यौ चीत चाव बन्यौ है ॥ ६५ ॥

॥ अथ रागनी सरूप ॥

भुपाली वीरहीन खड़ी केशरी लाए चीर ।
भैयो वीरह के ज्वाल ते पीरौ सबै शरीर ॥ ६६ ॥
वीरह ज्वरात तन गुंजरी रोवत छुटे केश ।
कामदेव कानन लगे तीन ही दीवौ उपदेश ॥ ६७ ॥
देशकार कंचन वरन खेलत पीए के संग ।
हीए हुलास है काम कौ चढैव औ जोवन अंग ॥ ६८ ॥
बीन गहे गावत बहुत रोवती है अल वार ।
तन दुरबल वीरहा दहै वीरहीन नारी मलार ॥ ६९ ॥

सेज बीछाए कमल दल लेश नही मनमारी।
लेत उसांस दशीघरी तनक वीयोगिन नारी ॥ ७० ॥

इति श्री हीए हुलाश शंगरह करी कवीलाल ने रचेव काव्य रसरास।
परेव नाम या ग्रंथ को वाते सभा विलास ॥ १ ॥
पदवी काव्य भूषन सहीत दुरजन दोषत ताही।
बीगरे देत बनाई है सजन साधु सराही ॥ २ ॥
संख्या वसु चंदर ही गनै समत को परमान।
माधौ शुक्र नौमी रच्यौ ग्रंथ नीरमान ॥ ३ ॥

इती श्री सभा वेलास गरंथ कौ कांट रागमाल वरनन हीए हुलास परकरन समापती शुभमसतु ॥

—ग्रंथ की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

राग रागिनियों के नाम, गुण, अलाप समय, वाद्ययंत्र और स्वरूप आदि वर्णन किए गए हैं।

रचनाकाल

संख्या वसु चंदर ही गनै समत को परमान।
माधौ शुक्र नौमी रच्यौ ग्रंथ नीरमान ॥

संख्या २४१. हरिवंशपुराण भाषानुवाद, रचयिता—लालजी साह (निवास स्थान—सहजादपुर), कागज—देशी, पत्र—२२१, आकार—६·५ X १२·७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल म्यूज़ियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री नृसिंहाय नमः ॥
अचिंत्यमव्यक्त ममादिमव्यर्य जनार्दनं वामन रूप धारिणम् ॥
लोकत्रये रक्षक भक्तवत्सलं लक्ष्मी नृशिहाय नमो नमस्ते ॥
× × ×
वद्रीवन वस्तीजह राची ॥ तहते श्री तीरथपतिप्राची ॥
पुर जहिजाद नाम है तासु ॥ सुर मंदिर संतन जुतवास ॥
वसहि वरन सब निज निज प्रीता। सुरसरि निकट प्रवाह पुनीता ॥
जथा राज सब प्रजा सुखारी। कलजुग प्रथम चरण अनुसारी ॥
श्री शीतल प्रसाद तह साहू ॥ लालजी तासु तनय शुभ लाहू ॥
× × ×
अष्टादश[१८] शत अरु ओंचासा[४९] ॥ संवत् कुहुज साठ शुभ मासा ॥
सुर गुरुवार योग शुभ तारा। यथा बुद्धि कीन्हे अनुसारा।

अंत—

कह लग कहौं विविध इतिहासा ॥ होइ ग्रंथ जो करहु प्रकासा
अग्रराज रिष कुवर सुहाये ॥ नागराज की सुता विवहाये ॥
सतरापुत्र गोत सब सारे ॥ अग्रवंस प्रपिताम हमारे ॥
हुकमचंद द्विजपद अस्नेहा ॥ भाव भक्त गुरु सिवन संदेहा ॥
ब्राह्मनवंस नाम सुष लाला ॥ लिष्यो कथा कहि वंस दयाला ॥

॥ दोहा ॥

कहत सुनत पूछत गुनत हरषत अनभव साथ ॥
बंदो सबके चरन मै अग्रंनहरि गाथ ॥

॥ कवित्त ॥

देषे होरास विलासन हू श्रुति स्वप्न कथा कहिवो किम भावै।
गोपी पराभवनाथ कहे द्विज साथ की वारह सी वहरावै ॥
कृष्ण लषी छवि छंद लषी सुभ लाल हिये अनभौ उपजावै ॥
विप्र गिरा करि मोपै कृपा हरिवंस प्रवृत्ति करी सुपावै ॥

इति श्री हरिवंशे महापुराणे
श्री लालजी साह कृते सर्वार्थ संक्षेप वर्णनाम सर्गः ॥

इति श्री हरिवंशपुराण संपूर्ण ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ 'हरिवंश महापुराण' का हिंदी अनुवाद है। इसमें सृष्टि के अनेक मन्वन्तरों तथा राजवंशों की विस्तृत कथाएँ वर्णित हैं। श्री कृष्ण चरित्र अपेक्षाकृत अधिक विस्तारपूर्वक दिया गया है।

अनुवाद दोहा चौपाई छंदों में हुआ है, कहीं कहीं कवित्त भी हैं।

संख्या २४५. रशालै० (नायिका भेद), रचयिता—लालमनि, कागज—देशी, पत्र—५०, आकार—९$\frac{3}{4}$×३$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित दयाशंकर मिश्र, गुरूटोला मोहल्ला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

... ...सुनोदासिक की यह रीति।
नायक चारि प्रकार के वरनत कवि करि प्रीति ॥
... ...कूल है उपपति दुछन लेपि।
वैसक सो सठ जानियो दासिक धृष्ट विसेषि ॥

\+ \+ \+

॥ सामान्या लछन ॥

॥ दोहा ॥

लालच की सूरति सकल विधि ने रच्यो बनाइ ।
सामान्या लक्षन इहै बरनत त्रवि कविराइ ॥ ४७ ॥

॥ कवित्त ॥

काहू सोफुलेल पान मागती है काहू तन काहू तन लिश्रेए भूषन गढ़ाइकै ।
काहू तन असन वसन आछो काहू तनि काहू तन मागति तमोल तानै गाइकै ।
सषी सवै ताहि को सराहती है बाल 'लाल' ऐसे वसि करति है नितही रिझाइकै ।
पाग पटुका औ पाइजामा लगि लेति छानि बैठति है आली नेकु जाके ढिगजाइकै ॥१६॥

॥ दासी लछन दोहा ॥

टहल करति अति ही डरति ठकुराइनि कह हेरि ।
कवि कोविद तेहि कहत है सुनहु सो लछन चेरि ॥ ४८ ॥

॥ कवित्त ॥

टहल करै को नहि आलस करति गरे परिसेवा करिबे की मानो प्रेम फासी है ।
जोहति रहति मुषइहै जाके सुनो सुष ठकुराइनि ठाकुर सो होति न उदासी है ।
साहेब के जाने और मन मैन आनै सदइहै ठान ठानै मनमुदित विलासी है ।
एके गुन लेषि अत सवै है सुलछन यो कहति विछन सकल गति दासी है ॥ १७ ॥

मध्य—

॥ परकीया अन संभोगित दुखिता ॥

॥ कवित्त ॥

नैन ते नैन औ वैन ते वैन सुनो छतिआ छतिआ सो लगाई ।
प्रीतम कै अंग के सब चीन्ह लषी सब प्यारी तै सोधि लिआई ।
बात दुरेही दुरेही कहै जेहि भांति पिआ हम सो लपटाई ।
वै अब अंक नषछितवंक भली विधि प्यारी तै छांनि लिआई ॥ ११८ ॥

॥ सामान्या अन संभोगितदुषिता ॥

॥ कवित्त ॥

अलकै तिहारी छुटी काहे तनि एरी वीर तेरे काज प्रीतम के पाइपरी आइकै ।
तिलक सो टूक टूक भइ तिय तेरे तन गिरि परी आली जब उठी चली धाइकै ।

आये स्रम सीकर सो आइ ढिग तेरे दौरि पलकैं ए मूदि आवै काहे तें बनाइकै ।
मागिवे कों मोती माल कह्यो प्यारे लाल जू सो पायो नहि माल नैना रहे है लजाइकें ॥११९॥

+ + +

॥ प्रोषित पतिका लछन ॥

॥ दोहा ॥

जाको पिय परदेस गों सुनहु कोनहु काज ।
प्रोषित पतिका वाल सों विकल विरह के ज्वाल ॥ ११३ ॥

॥ मुग्धा प्रोषित पति का ॥

॥ कवित ॥

गोनो लियाये भयो दिन चारि गयो परदेस सो प्रान प्रिया है ।
देषत ही दुलही मुष सो पछिताति सवै लषि बीच जिया है ।
सासु द्यौरानी जेठानी सुनो अपसोस सो आपि नही सों किया है ।
जानति भेद नही रस को सो भई चित चकित देषि तिया है ॥१७२॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

बरनी नवरस रीति राधा राधा रमन के ।
बयो बरनो करि प्रीती अति गिलान बीवत्स रस ॥ २७ ॥

॥ दोहा ॥

हिता हिता अनहिता सो और अनहिता सो रीति ।
स्याम दान भय भेद पुनि और उपछा प्रीति ॥ २८ ॥
पर नित सिक्षा जानिवो और चेष्टा नारि ।
पदुमिनी चित्रिनि हस्तिनि और संषिनी विचारि ॥ २९ ॥

॥ हितासषी के वचन ॥

लिए वात मरजी सुनो करै षुसामदि हेरि ।
सोई सषी सोहिता है कहत सो कोविद टेरि ॥ ३० ॥

॥ हिता के वचन ॥

॥ कवित्त ॥

वातन में तरकारी करै सो मुगोरी फुलौरी अनेग बनैए ।
तोसो बराबरि कोन करै लषि साजन और अनेग निहैए ।

पूरी सखोमी अचार विचार मिठाइ अनेग रामोई मेलए।
भूषन कै लषिए मरते सो बलाइ लेउ नंदलला के जेवैण ॥ ३२ ॥

॥ जथा हिता अनहिता के वचन ॥

॥ कवित्त ॥

नारी नर बदा बदी तोहि सो करावैं वैर अटक न कांते तोसो करति अहीमई।
तिम सुरसरि·· म औरो सुनो जिज माह लाज मौन मह काज आवत नहीं दई।
पै सुनी दै चित ठौंस राषे तोसों सांनै नि···अरदारी आया कीने कुन भलो भई।
सोन कीन्हो है अन्हान छूट तो न मैत मान मेरे जान न्हान कों·········॥

—अपूर्ण

विषय—

नायिका भेद वर्णन किया गया है। इसमें निम्नलिखित विषय हैं :—चार प्रकार के नायक, स्वकीया, परकीया, सामान्या तथा चेरि भेद ये चार नायिका वर्णन। मुग्धा के भेद उपभेद और उदाहरण, मध्या के लक्षण और उसके भेदोपभेद, प्रौढा के लक्षण और भेद, मान के लक्षण और भेद, जेष्ठा कनिष्ठा वर्णन, सुरति गोपना के लक्षण और भेद, विदग्धा के लक्षण और भेद, लक्षिता के लक्षण और भेद, अन्यसंभोग दुषिता के लक्षण और भेद, अनुसयना के लक्षण और भेद। खंडिता, उत्कंठिता वासकसज्जा, स्वाधीन पतिका, विप्रलब्धा, प्रोषितपतिका, अभिसारिका, अभिसंधिता और प्रवस्तभर्तिका नायिकाओं का वर्णन। गर्विता नायिकाओं के लक्षण और भेद, मुदिता और कलहन्तरिता के लक्षण और भेद। अभिलाषा चिंता, स्मृति गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, जड़ता, व्याधि और मरण इन वियोग शृंगार की दश अवस्थाओं का वर्णन। हाव, भाव और नवरस का वर्णन। हिता अनहिता वर्णन। साम, दाम, भय, भेद उपेक्षा आदि मान मोचन वर्णन। पद्मिनि, चित्रनी, शंखिनी और हस्तिनी नायिकाओं का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अत्यंत जीर्णावस्था में है। आदि मध्य और अंत के बहुत से पत्रे नष्ट हो गए हैं। अब भी जितना शेष है उसके आरंभ के तीन पत्रे आधे आधे रह गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथ काव्य और विषय की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। रचयिता का नाम लालमनि है। यह नाम जहाँ तहाँ दोहों और कवित्तों में दिया हुआ है, जैसे :—

॥ कवित्त ॥

ता दिन ते पलका पै परै पलको न लागै ता दिन ते
टकटकी नैनन में ठई रहे।
ता दिन ते भवन न भोजन सोहात कछु
'लालमनि' कीन्हो उपचार भई है।

आषिन ते चल्यो जात आसुरी सो एते मान
ता दिन ते वासुरी न अधर में लाई है।
हांकन न बछरू को जात है डहर वीच
छोहरी महर की कहर करि गई है॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

जो अपनी अंषियन लषो सो सांचो अति होइ।
स्रवनन सुनो सो 'लालमनि' होइ न होइ सो होइ॥ ५१॥

—इत्यादि।

विशेष परिचय अज्ञात है।

संख्या २४६. बारहमासा द्वादशानुप्रेक्षा, रचयिता—लाल बिनोदी, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८'४ × ११'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४४ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि –

॥ अथ बारह मास श्री नेमिनाथ द्वादशानुप्रेक्षा संबोध लिष्यते॥
विनवे उग्रसेन की लाडिलडी कर जोरि कै नेमि कै आगैं खरी॥
तुम काहे पिया गिरिनारि चढौ हम सेती कहो कहा चूक परी॥
यह वैस नहीं पिय संजम की तुम काहें को ऐसीव चित्त धरी॥
कैसे बारह मास वितावहु गे समुझावहु मोहि यहै सिगरी॥
तुम आगैं असाढ में क्यों न लियो व्रत काहे कौं एती वरात बुलाई॥
छप्पन कोटि मिले जदुवंस ते व्याहन आए निसान वजाई॥
संग समुद्र विजैवलि भद्र मुरारिहु की तुम लाज न आई॥
नेमि पिया उठि आउ घरै इन वातन मैं कहो कौन वडाई॥

मध्य—

पिय सांवन मैं व्रत लीजे नहीं घनघोरि घटा जुरि आवहिंगी॥
चहु ओरि मा मोर झिंगार करैं वन कोकिल कूकि सुनावहिंगी॥
पिय रैनि अंधेरी मैं सूझे नहीं कछु दामिनी कोध डरावहिंगी॥
पुरवाही की झोंक सहोगे नहीं छिन मैं तप तेज वुडावहिंगी॥
यहि जीव कौं कोइ न राषनहार कहो किंह की शरणागति जइयै॥
काल वली सब तै जग मैं तिहि कौं निसि वासर देषि डरेइयै॥

इंद्र नरेंद्र धनेंद्र सबै जब आनिपरे जब बाधि बजइये ॥
तातैं कहा बर्ने सावन को सुनि राजुलिविप्रु को यों समुझइये ॥

× + +

आवैगो चैतु वसंत सुहावनो फूलैंगी वेलि सबै बनराई ॥
फूलैंगी कामिनी जाके पिया घर फूलैंगे कांत त्रिया सुषदाई ॥
षेलहिगी ब्रज के बन मैं सब बाल गुपाल कुमार कन्हाई ॥
नेमि पियाकिन आवो घरै तुम काहे कौं जोगु करोगे इसाई ॥

अंत—

बारह मास ए पूरे भए जब नेमि को राजुलि आइ सुनाये ॥
नेमिहु द्वादस भाति सबै अनुप्रेक्षा सों राजुलिकौं समुझाये ॥
राजुलि हूं तब संजम ले तप कै सब बंधन कर्म तुडाए ॥
नेमिजिनंद और राजुलिके प्रति उत्तर लाल विनोदी नै गाए ॥

इति बारह मासा द्वादशानुप्रेक्षा

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ जैन धर्म से संबंध रखता है। ग्रंथ की कथा इस प्रकार है कि विवाहोपरांत जब भगवान जिनदेव योग साधन के निमित्त गिरिनार पर्वत पर जाने लगे तब उनकी भार्या राजुल (या राजमती) ने उन्हें रोकना चाहा। राजुल ने जिनदेव से वर्ष पर्यन्त घर पर ही रहने और संयम करने का अनुरोध किया, परन्तु वे इस बात पर सहमत न हुए। अंत में राजुल भी तप करने के लिये उनके साथ चली गई। वर्ष के प्रत्येक मास के ऊपर राजुल की एक एक उक्ति है। उसी प्रकार जिनदेव का भी उत्तर साथ साथ चलता है। उत्तर प्रत्युत्तर में अनुराग और विराग, भुक्ति और मुक्ति दोनों के भिन्न भिन्न चित्र सामने आते हैं। ग्रंथ की रचना बहुत कुछ रम्भा—शुक संवाद जैसी है।

संख्या २३७, मंगल, रचयिता—लाल स्वामी (हित), निवासस्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र ३, आकार—५'४ × ८'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ लाल स्वामी कृत मंगल ॥ राग विलावल ॥

बलि बलि श्री हरिवंश निकुंज निवासई ॥
उपकारक अवतंस सुजस परकासई ॥
सुजस स्याम प्रकास कीन्हो रीतिरस मंडित मही।
गुन गोप्य गहर गंभीर लीला जा कृपा सुलभ लही ॥

पद नाम प···सरस तन मन परम गति मतिहंस की ॥
विधु व्यास रंदन'''वंदन जै जै श्री हरिवंश की ॥ १ ॥

अंत—

श्री हरिवंश प्रसाद स्वाद सुष (जो) लहै ॥
मधु मादिक उनमाद सुपरमित को कहै ॥
को कहै'''परम सुष की अमित सुष जो पावई ॥
रसन साइक सक सुत मिति सोभ कहत न आवई ॥
प्रभु प्रान पालक "लाल वल्लभ" रहत प्रति मति वाद तें ॥
गुरु गोपी नाइक भक्ति दाइक हित हरिवंश प्रसाद तें ॥ १० ॥

॥ पूर्ण ॥

विषय —

प्रस्तुत "मंगल" में राधा वल्लभी संप्रदाय के संस्थापक श्री हित हरिवंश जी की प्रशंसा है।

विशेष ज्ञातव्य –

प्रस्तुत "मंगल" के कर्त्ता लालस्वामी हरिवंश जी के पुत्र श्री गोपीनाथ जी के शिष्य और सनाढ्य ब्राह्मण थे।

"गुरु गोपी नाइक (नाथ) भक्ति दाइक ·····।

संख्या २४८. बजरंग चालीसी, रचयिता—लोकमनिदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार- ७¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८, अपूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्री सरल चौबे और रामनिरेखन चौबे, स्थान व पोस्ट—सहतवार, जिला—बलिया

आदि --

··········· सुनन को रसिआ।
राम लषन सीता मन बसीआ ॥

भीम रूप धरि असुर बीडारो। रामचंद्र के काज सवारो ॥
ल्याई सजीवन लषन जीआए। रामचंद्र के कंठ लगाए ॥
रघुवर कीन्हा बहुत बडाई। कहेउ भरत समान हो भाई ॥
सहस नाम तुम्हरो गुन गाई। श्रीमुष अपनो राम बनाई ॥
तुम उपकार सुग्रीव को कीन्हा। राम मीलाई राज तुम दीन्हा ॥
तुम्हरो कहा बिभीषन मांना। लंकेस्वर भौ सब जग जांना ॥

दुइ सहस्र जोजन जो भांना । जनमत ही तुम फल सम जांना ॥
कुदी धरेउ मेलेउ मुष नाही । जलनीधी लाघेउ अचरज नाही ॥
दुर्गम काम जगत कर जेते । सुगम अनुग्रह सुमीरत तेते ॥
राम दुआरे तुम रखवारे । तुम अग्या बीनु नहीं पैठारे ॥
तुम्हरो भग्ती राम कह भावै । जन्म जन्म के दुष मीटावै ॥
सब सुफल है तोहरे सरना । तुम रछक काहू के डरना ॥
अपनी पैज संवारे आपै । तीनौ लोक हांकते कांपे ॥
भुत प्रेत नीकट नहीं आवै । महावीर जब नाम सुनावै ॥
नाशै रोग हरे दुष पीरा । भजै नीरंतर हनीवत बीरा ॥
संकट शे हनीवंत छोड़ावै । अवरी मनोरथ जो कोइ गावै ॥
मन बच क्रम जपै कोइ ध्यावे । नेक दृष्टि चितवै सोइ पावे ॥
तुमशे शेवक कबही न हारे । दुष्टन की जरी मूल उपारे ॥
लोक जगत परताप तोहारा । है परसीधी जगत उजीआरा ॥
राम पीआरे संभु दुलारे । भक्त जनन्ह के तुम रखवारे ॥
अस्टशीधी नव नीधी के दाता । इह वर देहो जानकी माता ॥
दुर्लभ मोके तुम्हरी दाया । शवसूलभ भो सनमत भाआ ॥
राम रसाएन तुम्हरे पासा । जद्यपि होतू सहज उपासा ॥
काहुशन कछु नही परोजन । शाहेब छाडी अवर नहीं जोजन ॥
तद्यपि राम नीहोरे सुनेउ । सेवक दोष पेरो नहि गुनेउ ॥
कीपा करहु रापहु जनि गोई । लोहाशे कंचन शम होई ॥
जब लगी जीएउ सुमीरो हरिनाउ । अंतकाल रघुपति पुर जाउ ॥
जौ फीरी जन्मौ भग्ती मै करेउ । और बर्नचीत नाही धरेउ ॥
वीनती करौ अधीक तुम पाही । अंबर बोसीला रापत नाही ॥
शरनन परेउ दआ करि हेरो । 'दास लोकमनि' चेरो तेरो ॥
जो कोई पढ़ै बजरंग चालीसा । शांघ्य काज होए विस्वासी ॥
संपूर्ण जो देषा सो लीषा मम दोष न दीयते ॥

—प्राप्त प्रति की पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

हनुमान जी की स्तुति की गई है ।

विशेषज्ञातव्य—प्रारंभ का पत्र लुप्त हो जाने से ग्रंथ अपूर्ण है । रचनाकाल लिपिकाल नहीं दिये हैं । रचयिता का नाम ग्रंथांत में इस प्रकार दिया है :—

शरनन परेउ दआ करि हेरो । 'दास लोकमनि' चेरो तेरो ॥

अन्य परिचय अज्ञात है ।

प्रस्तुत रचना कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में है। अन्य रचनाओं के नाम स्तोत्रवाले विवरण पत्र में दे दिये गये है।

संख्या २४६. रसचंद्रिका, रचयिता—वंशमनि यावंशराज (निवासस्थान—चयनपुर), कागज—देशी, पत्र—१३६, आकार—७½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१२८, अपूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, प्राप्ति स्थान—आर्य्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री ईश्वरी शहाइ ॥

॥ छपै छंद ॥

जेहि वदेउ अज प्रथम जगत हित उतपति कारण।
जेहि वंदेउ मघवा दैत्य दुर्वार विदारण।
जेहिं वंदेउ सुर सिद्ध नाग गंधर्व सकल गण।
त्रिपुर दहन हित जंपेउ ईश गणनाथ चरणमन।
सो हसु सिद्धिदायक विशद वंश सदा सुषधाम कर।
लैत नाम गणनाथ के सो होत सदा कल्यान बर ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

पारासर्य्यं कुलोद्भवं द्विज···लोक मणि नामाभिधं,
सूनुस्तस्य बभूत् बुद्धि निपुनोर्वूलाकिसर्म्मावरं।
श्रीमद्वंशमनिश्च तस्य तनयो इष्ट प्रशादादीमांकुर्वे,
श्रीरसचंद्रिकां रसयुतां सम्यक् सतां हेतवे ॥ २ ॥
श्रीवास्तव कुलशंभवं सुविमलं शद्बुद्धि विद्यान्वितं,
कायस्थं सुचि सुंदरं द्विज नतं साहिमल्ल दासाध्यधं।
तस्या पत्य अग्रोरभूत निपुनो जो सौ कनिष्ठौ सुतो,
नामः श्री रघुनंदनो नितिनुतो सर्वज्ञ सर्व प्रियं ॥ ३ ॥
नगर चयनपुर के नीकट वीरभानपुर ग्राम।
ताको पति सुत लोक मनि विशद कुलाकी नाम ॥ १ ॥
ताके सुत भये तीनि·········जस रूप।
मानिक चंद प्रसिद्ध जग वंशराज गुण भूप ॥ २ ॥
गया गया के निकट पहरानामेक ग्राम।
कानगोई ते·········

"रघुनंदन" कहि "वंश" प्रति हरषि विनति अनुरीति।
सरसैया प्रति दोहरा करिये कबित्त विनीति ॥ ४ ॥

ताके हित "रस चंद्रिका" कियो स्वमति अनुहारि ।
छमि हो चूक परी जो कछू लहो सुजन सुधारि ॥

॥ दोहा ॥

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोइ ।
जातन की झाँई परे स्याँम हरित दुति होइ ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

सोई हरो भव बाधा सबै मेरी राधिका नागरि नाम जोई ।
जोई ध्यावत सेस महेश गनेश सुरेश न पावत पारवोई ।
वोई गातन की परछाँही परे दुति स्याँमलहू की हरीत होई ।
होइ कै सुमनोहरि राधे सदा करी "वंश" हिये अभिराम सोई ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

मध्य —

वन बागन पिक बट परा तकि विरहिनि मत मैन ।
कुहू कुहू करि करि उठै करि करि राते नैन ॥ १४ ॥

॥ यथा कवित्त ॥

नैन मतो करि राख्यो भलो लषि कै विरही तिय मारिवे को ।
वन बागन हूँ वट पार किये कल कोकिल नैन पुकारिवे को ।
राते ही नैन मो माते रहे निसिवासर हूँ मोहि नारिवे को ।
करि बारही वार कुहू कुहू "वंश" पुकारि उठै हिय हारिवे को ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

अंत —

प्रगट भये द्विजराज कुल स्ववस वसे ब्रज आइ ।
मेरे हरौ कलेश सब केशव केशवराइ ॥ ४६ ॥

॥ कवित्त ॥

पालिवे को अमर विदारिवे को दानवनि अधम उधारिवे को नरतन धारे हैं ।
प्रगट भये हैं द्विजराज कुल "वशमनि" स्ववस बसे हैं ब्रजनंद जू के बारे हैं ।
कै कै हरि अमित विलास सँग गोपिन के गोपन के संग केते असुर सँघारे हैं ।
साई तौ शकल मेरो जगत कलेश हरौ जोइ केशोराइ क्लेश यदुकुल टारे हैं ॥४६॥

॥ दोहा ॥

मोहू दीजै मोष ज्यौं अनेग पतितन दीयो ।
जौ बाँधेहि सँतोष तौ बाधौ अपनेगुननि ॥ ४७ ॥

॥ कवित्त ॥

ऐसी तौ न बूझियै दयाल प्रभु दीनन के विरुद उदार तेरो हेरि किन लीजिए।
जैसे तूँ उधारयो है अनेक जग पातकिन तैसे ही सुधारि प्रभु मोहू गति दीजिए।
हूजिए दयाल वेगि सुनत पुकार वंश भव बँद छोरिबे को विलबु न कीजिए।
जौ पै निजु बाँधेही प्रबोध पावो महाराज तौ तूँ बाँधि आपने गुनन प्रभु लीजिए ॥४७॥

॥ इति सांतरस वर्णनं ॥

॥ अथ नृपस्तुति वर्णनं दोहा ॥

- अपूर्ण

विषय—

विहारी के दोहों पर कवित्त सवैये रचे गए हैं और उनको नायिका भेद के क्रम से लगाया गया है। ग्रंथ में बारह अध्याय हैं जो इस प्रकार हैं :—

(१) पहला अध्याय —स्वकिया वर्णन ··· पत्र १ से १२ तक।
(२) दूसरा ,, —स्वकिया परकिया नायिका···,, १२ ,, २५ ,,
(३) तीसरा ,, —अष्ट नायिका वर्णन ··· ,, २५ ,, ४२ ,,
(४) चौथा ,, —संयोग श्रृंगार वर्णन ··· ,, ४२ ,, ४६ ,,
(५) पाँचवा अध्याय —षोडस हाव भाव वर्णन ,, पत्र ४६ से ५० तक।
(६) छठवाँ अध्याय —संयोग वियोग वर्णन ,, पत्र ५० से ७४ तक।
(७) सातवाँ अध्याय —प्रवास विरह वर्णन ,, पत्र ७४ से ७९ तक।
(८) आठवाँ अध्याय —अभिलाप, स्वप्न जड़ता वर्णन पत्र ७९ से ८५ तक।
(९) नवाँ अध्याय —नायिका वर्णन ,, पत्र ८५ से १०३ तक।
(१०) दसवाँ अध्याय —ऋतुवर्णन ,, पत्र १०३ से ११५ तक।
(११) ग्यारहवाँ अध्याय —प्रस्ताव (प्रास्ताविक ?) पत्र ११५ से १२७ तक।
(१२) बारहवाँ अध्याय —रसादि तथा नृपस्तुति वर्णन पत्र १२७ से १३६ तक।

विशेपज्ञातव्य - ग्रंथ में अंतिम अंश 'नृपस्तुति वर्णन' नहीं है। रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं।

रचयिता ने अपना वृत्त दिया है जिसके अनुसार उनका नाम वंशमनि है परंतु रचना में यत्र तत्र वंशराज भी नाम आया है। इनके पिता का नाम बुलाकी शर्मा तथा पितामह का नाम लोकमनि था। ये तीन भाई थे जिनके नाम दिए तो हैं; परंतु स्याही उखड़ जाने के कारण वे ठीक ठीक पढ़ने में नहीं आते। ये पाराशर गोत्रीय त्रिपाठी ब्राह्मण थे। त्रिपाठी का उल्लेख प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका में हुआ है। इन्होंने अपने ग्राम का नाम वीरभानपुर दिया है जो चयनपुर के निकट बतलाया है। शायद चयनपुर एक स्टेशन भी है जो गया और बनारस के बीच कहीं पर है। इनके आश्रयदाता का नाम रघुनंदन था जो श्रीवास्तव

कायस्थ थे और जिनके पिता का नाम साहिमल्ल दास था। रचयिता ने अपना वृत्त तथा अपने आश्रयदाता का वृत्त आरंभ में संस्कृत के दो श्लोकों तथा हिंदी के चार दोहों में दिया है। ऐसा ज्ञात होता है कि उत्तरार्द्ध के दो दोहों में आश्रयदाता का परिचय रहा होगा; परंतु ये दोहे ग्रंथ पर नवीन जिल्द बँध जाने के कारण जिल्द के नीचे दब गए हैं। जिल्द को किसी कदर अलग भी किया गया फिर भी कागज का कुछ अंश उखड़कर अक्षरों के ऊपर ही रह गया। अतएव अक्षर कतई पढ़ने में नहीं आते। केवल प्रारंभ का एक चरण पढ़ने में आता है जो इस पकार है :—

गया गयाधर के निकट पहरा नामेक ग्राम।
कानगोइ ते··· ········ ················· ॥

इससे यह पता लगता है कि संभवतः आश्रयदाता पहरा ग्राम के रहनेवाले रहे होंगे और कानुनगोई का कार्य करते रहे होंगे। प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा तो रचयिता के काल का कोई पता नहीं चलता, परंतु एक दूसरा ग्रंथ श्रीधर मुरलीधर कृत भाषा भूषण की अंत की पुष्पिका में एक उल्लेख इस प्रकार है :—

'भवानी शंकरौ विजयते। संवत् १८०८ मार्ग शुक्ल प्रतिपदायां वंशराज त्रिपाठिनालेखि' ॥ इससे प्रकट होता है कि प्रस्तुत रचयिता ही 'भाषा भूषण' के लिपिकार हैं। अतः इस दृष्टि से रचयिता १८०८ के लगभग वर्तमान थे। 'भाषा भूषण' का विवरण लिया गया है।

रचयिता ने बिहारी के दोहों पर कवित्त सवैये लिखे हैं जो काव्य की दृष्टि से उत्तम हैं। ये कवित्त सवैये इन्होंने आश्रयदाता के कहने के अनुसार रचे।

संख्या २५०. पंछीनामा, रचयिता—वजदी (निवास स्थान—दखिन), कागज—देशी, पत्र—१५१, आकार—८'४×५'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५८६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—डा० एम० एस० सैयद साहब, चैथम लाइन, इलाहाबाद

आदि—

(तीसरे पत्र से उद्धृत)

हिकायत मुसाफिर व कताअल तरीक

शेख अत्तार आरानाए शोजसाज—क्या केते हैं तुरफा नक्ल आं गुदाज ॥
किस मुसाफिर को मिलिया की राहजन—लूट लेकर उसको लायाथर कुदन ॥
मात अजां दौड़ा खाने को तेग—तासते सरकार उसका बे दरेग ॥
अजकजा भूका अथा बेचारा ऊ—ला देते रोटी उसी रहजन की जो ॥
हात जे खाना था रोटी जो लगूं—लेके आया तेग रहजन तो लगूं ॥
देखकर पूछन लगिया रहजन कि जो—किन दिया रोटी कहा···॥
बाद अजां यह राहजन शमशेर··· -पेश आया उजरख्वाही सोनिपट ॥

कह मुसाफिर जा तूं अब आजाद है—मारना रोटी खिला बेदाद है ॥
पस कहें हैं आजिजी से शेख इहाँ—कै खुदामंदे करीमें महरबाँ ॥
मैं तो तेरा रिस्क खाया सब उमर—पास मुझे भी फज्लसों आजादकर ॥
यूं दुआ माँगें है गर्चेशेख अपस—बख्श दे 'वजदी' को एफरयादरस ॥

अंत—

मुनाजात हजरत वजदी अले अर्रहमत

या इलाही तुझसे यों धरता हूँ आस—जो जहाँ इस मुश्क सों होवे लिबास
बूयसों उसके अच्छी हरकोई मगन—हर इकस्म के दिल को दे उसके लगन ॥
या इलाही कर मेरी महनत को चीज—कर तूं इस गुफ्तार कोहरदिल अजीज ॥
हर किसी पढ़ने पै इसके जौक दे—जिनसे ते उसकी ज्यादा शौक दे ॥
दे मुझे तू इसके पढ़ने पै अमल—दूर कर सब दुनियायेदगल ॥
···ए गनी—कर मुझे कुंदे कना अत का धनी ॥
दे बहक्के हुरमते हजरत रसूल—इसमशक्कत को मेरे फैजे कबूल ॥
ए अजीजां मैं तो लिए सा कुछ रंज--शेख के आसराका खोलिया हूँ गंज ॥
यों बलायत के बदक्सानी रतन—सिद्क कर लाया हूँ मुल्के दक्न ॥
हाथ में जिसके अछेगा नक्द जौक—होयगा उसका खरीदारी पै शौक ॥
इस तिजारत का मुझे बसयो नफा—जी करें मुजको दुआ दिल सों सफा
ताके बक्शे जाँय मेरे सब गुनाह--होवे उजला दे मेरा नामा सिआह
इस मने होता है यारब मेरा काम—शुक्र है जो हुई 'पंछी बाजा' तमाम ॥
अब किया तारीख का दिल में हिसाब—तब हुआ मीजान में क्या खास किताब ॥

॥ तमाम शुद ॥

विषय—

'पंछीनामा' का विषय इसके नाम से विदित हो जाता है। इसमें नाना प्रकार के पक्षियों को संबोधित कर कही गई बड़ी सुन्दर उक्तियाँ हैं। रचना उपदेशात्मक है और सूफीमत से संबंध रखती है। एक स्थान पर एक एक कर के सब पक्षी एकत्र होते हैं और यह विचार करते हैं कि उन्हें अपना एक राजा चुन लेना चाहिए। हुदहुद पक्षी बतलाता है कि राजा होने योग्य एक सी मुर्ग है जो अमुक स्थान पर रहता है। हुदहुद के साथ एक पक्षी उसकी खोज में निकलता है और निश्चित स्थान पर उसे पा लेता है। यह एक रूपक है, जिसका तात्पर्य है कि हुदहुद गुरु या पीर एक दूसरे पक्षी, मुरशद का परमात्मा रूपी सीमुर्ग से साक्षात् करा देता है।

मूल विषय के साथ-साथ बीच-बीच में बहुत सी हिकायतें अर्थात् कथाएँ भी आती हैं, जैसे—इलियास, खिज्र, महमूद या सुलेमान की कथाएँ। इन कथाओं में कुछ ऐतिहासिक, कुछ पौराणिक और कुछ कल्पित हैं।

प्रस्तुत "पंछीनामा" का मूल-ग्रंथ फारसी में है जिसका नाम "मुंतकुल तैर" है और जो शेख फजीउद्दीन अत्तार नामक सूफी की प्रसिद्ध रचना है।

इसकी भाषा दखिनी है और उर्दू के अधिक निकट है।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत "पंछीनामा" फारसी के मूल ग्रंथ "मुंतकुल तैर" का दखिनी में अनुवाद है। मूल रचयिता प्रसिद्ध सूफी शेख फजीउद्दीन अत्तार हैं। वजदी ने इसका दखिनी भाषा में अनुवाद किया :—

"खिवद कर दखिनी जबान में लेके आऊँ
तारहे दुनियाँ मने मेरा भी नाँव ।"

इसका "पंछीनामा" या "पंछीबाचा" नाम है :—

"नाम मैं इसका "पंछीबाचा" रखा
यादगारे खल्के आलम को दिया ॥"

इसकी भाषा में कहीं कहीं हिंदी रूपों की झलक है अन्यथा उर्दू का प्रभाव अधिक है।

वजदी के जीवन के विषय में कुछ ज्ञान नहीं होता। इन्होंने केवल यही लिखा है कि वदख्शाँ का रत्न (अर्थात् मूल फारसी ग्रंथ की रचना भूमि) मैंने दखिन में आकर बेचा है। इसका बदला मैं यही चाहता हूँ कि सब लोग इसे प्रेम से पढ़ें और मुझे दुआएँ दें जिससे ईश्वर के यहाँ मेरे अपराध क्षमा हो जायँ। इससे ज्ञात होता है कि ये दखिन में ही रहे होंगे।

ग्रंथ के रचना काल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या २४१ क. शनिचरित, रचयिता—बदुनाथ, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) २०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४०, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—देवनागरी, लिपिकाल—संवत १८७५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥ अथ बदुनाथ कृत शनि चरित लिख्यते ॥ छप्पै ॥

गवरि नंद आनंद कंद षल पष विहंडन।
शशि शेषर नितबंध पाद सुरवृंद उमंडन ॥
सुर उआरे मद प्रचंड वेतंड तुंड तर।
सिंदुर रंजित गंड सुंड मोदक सुमंडि करि ॥
काल दंड उदंड सम विघ्न व्यूह घनरूह हर।
मति मंडन बदुनाथ उर जयति गुंड भरभंड कर ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

लंबोदर इक दंत मुष मंगल करण गणेश ।
एक वेर हू मुष कहत काटत सकल कलेश ॥ २ ॥
गुंग वेद चार्यौ पढै लंघत गिरि गुरु पंगु ।
गोकुलेश वहुनाथ नहि करत दया नौ भंगु ॥ ३ ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

उज्जैनि नगर रमनीय एक । जहां वसत एक तैं एक नेक ॥ ५ ॥
जहां चारि वर्णनी के लसन्त । अति चारु चारि आश्रमी वसंत ॥ ६ ॥
जहां परम रमणीय नारि । तिन पै जु डारिये सुरी वारि ॥ ७ ॥
जहां पढ़त खेद तजि वेद विप्र । षट अंग भेद जानंत छिप्र ॥ ८ ॥

मध्य —

प्लवंग छंद ॥ शनिरुवाच ॥

जो पुनि श्रद्धा वान समाहित शुचि मनौ । लोहमयी प्रतिमाहि समर्पै विधिघनौ ।
समीपत्रतिज तेल मांष वहु लोह है । करै दान वृष स्यामधेनुपय औह है ॥ ९ ॥
ताकौं पीड़ा कभौं नहीं मै करत हौं । ताहि सदां वहु कष्ट पष्टि उद्धरत हौं ।
जो मोरे दिन माफ इही अस्तुति करै । पुस्प अंजली जोरि जपै पूजै धरै ॥ १० ॥
दशा सु अन्तर्दशा जन्म नक्षत्र मैं । पूजै वेद विधान कष्ट वहुगात्र मैं ।
ताकी पीड़ा करौं दूरि ग्रह और तैं । इह दीनौं वर तोहि नृपति वहु ठौर तैं ॥ ११ ॥

अंत—

तव कन्या वा सेठ की व्याहि विक्रमाजीति
मनीराम नृप की सुता जो परणी वहु प्रीति ॥ ८२ ॥

उभैनारि संग आपनैं लई विक्रमाजीति, नृपतैं श्रीपति सेठ तैं लै आज्ञा परतीति ॥८३॥
तव नगरी उज्जैनि कौ आयौ नृप हर्षाइ, तहाँ आइ वहु भाँति के भोगे भोग वनाइ।८४।
पूछि पूछि पंडितन कौं कीनी शुनि की सेव, उग्र प्रतापी······

—अपूर्ण

विषय -

उज्जैन नगरी के वर्णन से आरंभ करके विक्रम का चरित्र और उनके व्याह की कथा, तथा शनिदेव का प्रश्नोत्तर आदि का वर्णन है ।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत ग्रंथ सिंहासन बत्तीसी की एक कथा का पद्यबद्ध रूप मालूम पड़ता है । रचना सुन्दर है । भावों को व्यक्त करने में यदा कदा मुहावरों से भी काम लिया गया है ।

कवितावद्ध कथा कहने की जो प्राचीन परंपरा चली आ रही थी तदनुसार ही इसका प्रणयन हुआ है।

रचनाकाल अज्ञात है, परंतु लिपिकाल विक्रम संवत १८७५ दिया है। भाषा ब्रज है।

संख्या २५१ ख. आनंद रसवल्ली, रचयिता—वटुकनाथ, कागज—देशी, पत्र-४०, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५०, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८७५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। श्रीरामजी सहाय।
अथ वटुकनाथ कृत रसवल्ली लिख्यते।

दोहा

जय श्री गणपति विमल मन जय सारद मति दीप।
रस पोषन आनंदकर जय जय मदन महीप॥ १॥
चरण कमल गुरु देव के वंदो वारंवार।
जिनके सहज कटाक्ष तैं मिटत हृदय अँधियार॥ २॥
उमा उमापति वंदिकै रमा रमापति धाय।
"रसवल्ली" भाषा करन अक्षर धरत बनाय॥ ३॥
सो 'रस वल्ली' कठिन अति करतन नभि है आइ।
राधावल्लभ दया तैं कछु ह्वै है निरवाह॥ ४॥

तथा च॥ कवित्त॥

जाके नैन सहज के कटाक्ष कैं विलोकिन हीं माया परपंच रच्यौ भेद बहु भारी है।
जानैं चतुरानन कौं कर्म विस्तारन जग मनही को मिक्षा तें विद्या विस्तारी है।
जानैं दया करि गुंग पिंगल पढाइ दए पंगु हूँ लंघा ये गिरि मेरु पनधारी है।
ऐसो प्रताप जाको जाहर प्रपंच मध्य कहत 'वटुकनाथ' ताकौं वंदना हमारी है॥ ५॥

× × ×

ब्रह्मा कै शंकल भये गौर जाति कुल शुद्ध।
भये जु ताही वंश में रतनलाल अविरुद्ध॥ ६॥
रतनलाल कै सुत भयौ कवि पंडित भगवान।
ताकों हरिनैं भक्ति लखि कीनो आप समान॥ १०॥
पुत्र भयो भगवान कै मयाराम है नाम
सुर गुरु से दैवज्ञ वर किये बड़े बड़े काम॥ ११॥

भोजराज ताकैं भए कुल मंडन अवतार।
तीन पुत्र तिनकैं भये तिन हैं कहौं विचारि ॥ १२ ॥
प्रथमहिं मौजीराम[?] अरु टोडरमल दातार।
किसनराम तीजे भये गुन समुद्र निरधार ॥ १३ ॥
तिन तीनन के मध्य सुत टोडरमल निष्काम।
तानैं संतति बिना ही पायौ पद अभिराम ॥ १४ ॥
बड़े सुमौजी राम के पुत्र भये ऋषिराम।
अविरल गुनगन सौं भरे बुद्धि शील के धाम ॥ १८ ॥
ऋषीराम जी कैं भयो मंद बुद्धि "वटुनाथ"।
कवि पदई पाई जुतिहं रहत कविन कैं साथ ॥ २० ॥

मध्य—

सरभ छंद यथा

जब लगि चपल अजित इह मन है,
बन बन भटकि करत किमि जन है।
जब अति दृढ़ निज मन वस लइयै,
तब नित गृह मधि किन वसि रहियै ॥ ७३ ॥

दोहा

करि प्रमानिका कौं द्विगुनि होत छंद नाराच।
भगन पाँच गुरु अंत दै नील छंद विधि राच ॥ ७४ ॥

नाराच यथा

भजेन तै कभौ अरे गुपाल वे झपाक दै
सदा कुकर्म में परयौ परयौ विषै लपाक दै
अजौ हुँ चेति बावरे कुदेह रूप चाल दै
तु फेर का करै सुकाल पाइ है टपाक दै ॥ ७५ ॥

अंत—

तीन भेद है गद्य के पिंगल मत अनुसार।
चूर्णक उत्कलिकाहु पुनि व्रतगंध निरधारि ॥ २९ ॥
विमल मधुर अक्षर सहत चरन हीन सविलास।
चूर्णक सो पिंगल मतैं रचि कछु अल्प समास ॥ ३० ॥
दृढ़ अक्षर जामैं परति होत न अल्प समास।
तासौ उत्कलिका कहत कवि पंडित सविलास ॥ ३१ ॥
होत व्रत के एक ही देश बद्ध जो आइ।
वृत्तिगंध तासौं कहै गद्य भेद कौं पाइ ॥ ३२ ॥

तीनों सहत समास ए गद्य होति निरधारि ।
भाषा मैं तासौं नए मैंने रचे विचारि ॥ ३३ ॥

दैवी वानी कैं विषैं ए पावन हैं सोभ ।
पद विहीन इन गद्य को करयौ करयौ न भाषा लोभ ॥ ३४ ॥

'आनंद रस वल्ली' विषै रचे छंद बहु आंनि ।
तिनके सीषे सुनेते होत छंद कौ ग्यांन ॥ ३५ ॥

इति श्री ऋषीरामात्मज वटुकनाथ कृतायां आनंद रस वल्यां विषम वृत्ताख्य चतुर्थस्तवकः ॥ ४ ॥

पिंगल संपूर्ण ॥ ॐ तत्सत ॥ श्री रस्तु ॥ शुभमस्तु ॥ संवत् १८७५ आश्विन शुक्ला शुद्धाष्टमी ॥ श्री मते रामानुजाय नमः ॥ ॐ हरी ॥

विषय —

चार स्तवकों में छंद रचना का प्रकार बताया गया है :—

विषयस्तवक	पृष्ठ	१	से	१०	तक
गुरु लघुगनागनमात्रा	,,	,,	,,	,,	तक
वर्णप्रस्तादिष्ट नष्ठ	,,	,,	,,	,,	,,
मेरु पताका मर्कटी प्रस्तार	,,	,,	,,	,,	,,
संख्या ज्ञान अध्व योग	,,	,,	,,	,,	,,
प्रथम विचित्र तरंग १	,,	१	से	१०	तक
मात्रा वृत्त वर्णन	,,	२	से	२२	तक
एकाक्षरतः षडक्षर पर्यन्त	,,	३	से	३७	तक
पृथक् पृथक् छंदानां समवृताख्य	,,	३	से	३७	तक
विषम वृताख्य	,,	४	से	४०	तक

विशेष ज्ञातव्य —प्रस्तुत ग्रंथ पिंगल विषय का है। वर्ण्य विषय बड़ी सावधानी और युक्तिपूर्ण भाषा में वर्णन किया गया है।

आरंभ में लेखक ने अपने वंश का विस्तृत परिचय दिया है। परंतु उससे कवि कालगत इतिहास पर किंचिन्मात्र भी प्रकाश नहीं पड़ता और यह प्रतीत होता है कि ये महोदय किसी के आश्रय में रहकर कविता करते थे। जितने भी पिंगल संबंधी ग्रंथ हैं उनमें से किसी में भी गद्य रचना प्रकार की ओर निर्देश नहीं है। परंतु इस ग्रंथ में गद्य के भेद और उनकी पूर्णता अपूर्णता की परीक्षा तथा गद्य के गुण दोष आदि का विवेचन बहुत सुंदर रीति से किया गया है।

संख्या २५२, शब्दावली, रचयिता—विरंचगोसाईं, विरंजराम या "जनविरंच" (स्थान दामोदरपुर, पो०—गड़वार, जि०—बलिया), कागज—देशी, पत्र—६३, आकार—९ X ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता लाला श्री महादेव रामजी, स्थान व पोस्ट—गड़वार, जिला—बलिया

आदि—

श्रीगणेशायनमः॥ श्रीपोथीशब्दावलीकृत विरंचगोसाइ साहेब लिष्यते॥

वंदौ श्रीगुरुदेव अषंडा। चौदह भुवन रचौ नव षंडा॥
तब वंदौ आदि जोति जगदंबा। जिन सरोस्वती रुप कथा गाअं॥
तब वंदौ मै आदि गनेशा। जिन्ह यह ज्ञान दीन्ह उपदेसा॥
तब बदौं संकर हितकारी। भक्ति दान मोहि देहु त्रिपुरारी॥
तउ वंदौ मै हनिवंत वीरा। ग्यान अगार महारन धीरा॥

॥ दोहा ॥

वंदौ चारो वेद जेहि वंदे सुष उपजहीं।
हृदय विमल विवेक रामचरन रतिनेह निति॥
तव वंदो संतन्हको चरन सुषदाई जेहि ते विमल विराग हृदयाअधिकाई॥
तव वंदो सकल विस्तारा। रामरूप सकल मोहि प्यारा॥

॥ दोहा ॥

साहेब रूप अषंड है विनती करो कर जोरि।
"जन विरंज" सरनागत करहु विमल मति मोरि।
कवित्य सकल अंग पंग करि डारो निरभेदी को भेद
आपुनिरंजन निराकार है समुझे ते नहि पेद।
बिना सरूप रूप कछु होते उठत बकता वानी॥
सो वानीनिर्वान भयो है ताते अकथ कहानी॥

मध्य—

निर्गुन सर्गुन एक मूल है भेद भाव नही कीजिए।
गगन सो जो अमिय वरसै अम्रित प्याला पीजिए॥
सुर (सूर?) होइ मगु चढी पुकारो प्रेमसीलसोसीचिए॥
सुरा पुरा पुरन व्यापीक चाह चानि सो रीझिए॥
"जन विरंज" सो आदि पूरन एक रस सो भीजिए॥ ५॥

+ × +

मध्य त्रिकुटी त्रिवेनी धारा करत मज्जन सोई।
इन मुनि के ध्यान करि करि बिमल बुधि सो होई ॥
अगम पंथ जो पगु धरे सो सुनत अनहद नाद ॥
रीमि मीमि मोती बरीसत बिमल होत प्रगास ॥
अलष दरसत भर्म छूटत होत निश्चै वास ॥
"विरंजराम" जो रूप निरषत पार उतर प्रेम सों घर जात ॥ ७ ॥
बुझो पंडित ग्यानी भाई रे।
वह गति अकथ कहानी ॥
बीज में व्रछ व्रीछ में बीज हैं बीरला कोई पहिचानी ॥
बुंद में समुद्र समुद्र में बुंद है ऐसा सारंग पानी ॥
जल में घड़ा घड़ा में जल है नार लगी असमानी ॥
अविगति अगम अगोचर प्रभु जी जन विरंज मनमानी ॥ २८ ॥

अंत—

॥ मंगल ॥

दुलहीनी चजलीही दुलहा वीयाहन दुलहान आवे ए देस है।
सब सषिअन मिलि मंगल गावल दुलहीनि भेजेले संदेस है ॥
नाही कोइ हीत बंधु वा वाढ़ा नहीं मोरामाता नाकरेले दुलारहे ॥
नगर के लोग सब देषेला तमासा व्याह करेलो लज्या छोडी है ॥
रूप न ग्रीष तहा मडवा न देषो देमवा परेला हजारि है ॥
अलख पुरुष वाकी तहा हवै बसनीति नाही कीछु तहाँ ठहरावहे ॥
जब हम चललो पीआपुर सषिअन सुरति न डगर बनाइ हे ॥
जन वीरंज मंगल नीति उपजन अनभौ गति के लषाव है ॥

॥ पद ॥

सरग के चंद्र समुद्र हो दुविजाए सेवक पुकारे साहेब कैसे उजिआर।
बांधे ले धरती अकास हो सुषाइ कुरे तलगले साहेब बड बड पहार ॥
जगली अगिआ समुद्र हो जोर जाइ कलना जे पनि ऐ साहेब अगिनि बुताइ ॥
भजली धरती भीजेले अकास उगल सुरुजवा साहेब अथैनु जाइ ॥
सींप हो समुद्र तम छत पहार अहसन अचरज साहेब की निहआरु ॥
गइआन नाठा भइली चिउटी दुहाए ताकर धुचवा साहेब भारत बीकाए ॥
अलष पसारा साहेब दरन न जाए जन हो "वीरंज" गति एकत लोहारि ॥ २३६ ॥

विषय—

ज्ञान वैराग्य और भक्ति का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—

रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। ग्रंथकार के नाम विरंच गोसाईं, विरंज राम और जनविरंच हैं। ग्रंथ के द्वारा इनका कोई परिचय नहीं मिलता, परंतु ग्रंथ स्वामी के कहने के अनुसार ये बलिया जिला के अंतर्गत गड़वार के पास दामोदरपुर के रहनेवाले थे। जाति के पाण्डेय ब्राह्मण थे। इनके वंशज अभीतक उक्त ग्राम में रहते हैं। उनका (ग्रंथस्वामी का) कहना है कि ये एक पहुँचे हुए सिद्ध महात्मा हो गए हैं। इनकी केवल यही एक रचना है। इनकी मृत्यु हुए लगभग ६०, ७० वर्ष हो गये हैं। यह कथन और लोगों के समर्थन किए जाने के कारण सत्य विदित होता है। रचना को देखकर इस बात की अवश्य पुष्टि होती है कि रचयिता सिद्ध महात्मा रहे होंगे। यद्यपि इन्होंने निर्गुण और सगुण में कोई भेद नहीं माना है तो भी इनकी वर्णन शैली और विचार धारा निर्गुण संतों की ही तरह है:—

"निर्गुन सर्गुन एक मूल है भेद भाव नहीं कीजिए।
गगन सो जो अमिय वरसै अम्रत प्याला पीजिए॥

अलख के दर्शन के लिये षट् चक्र के मार्ग का अवलम्बन इन्होंने भी किया है:—

"मध्य त्रिकुटी त्रिवेनी धारा करत मज्जन सोई।"

इस अलख पुरुष के साथ ये भी अपना विवाह रचाते हैं; किंतु कबीर के ढंग से नहीं। कबीर का इस विषय में—"दुलहिनि गावहु मंगल चार। हम घर आये हो राम भरतार"—पद प्रसिद्ध है जिसमें अलष पुरुष को अपने ही पास बुलाया गया है। परंतु प्रस्तुत रचयिता स्वयं ही दुलहिन बनकर अलष पुरुष से विवाह करने के निमित्त उसके देश को चलते हैं:—

दुलहीनी चलली ही दुलहा वीआह न दुलहान आवे ए देस हे।

आदि—

ग्रंथ की अधिकांश रचना मैथिली और भोजपुरी मिली हुई भाषा में की गई है। रचना प्रौढ़ है। सगुण भक्ति सम्बन्धी भी इनका एक पद यहाँ दिया जाता है:—

देषा सषी कान्ह करत लरकाई।
प्रवल जाइके डगर रोकत प्रभु दधि मोर षाइ मटुकी दे गीराई।
वोरहनो देवे गइलो नंद द्वारे हृदय प्रीति रहे लो मुसुकाई॥
वोरहन मानत नाही नंदरानींकहत बिरंच अब घर फिरि चलेलो लजाई॥१०६॥

हस्तलेख सभा के लिए प्राप्त हो गया है।

संख्या २५३. काशीखंड कथा, रचयिता—विश्वेश्वर दास (निवास स्थान—काशी), कागज—देशी, पत्र ९, आकार—८½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६,

परिमाण (अनुष्टुप्)—११७, अपूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

... ... रहे सप्त उपर चालीस।
भादौ क्रश्न अष्टमी बुधवार रजनीश ॥

॥ चौपाई ॥

शिव शंकर की कथा सोहाई। दास बीशेश्वर ने यह गाई ॥
द्विज माराष्ट्र जात मम जानो। नारायण को पुत्र बखानो ॥
तिनके भ्रात गोवींद सुजाना। उनके सुत माधव गुणवाना ॥
मम पितु पिता हुते कछु ग्यांनो। तीन करि कृपा दिन्ह मोहे बानी ॥
तिनकर शंकर नांम बखानो। बादशाह के चाकर जानो ॥

॥ दोहा ॥

आनंद बन आनदपुरी श्री काशी शिवधाम।
तिन साख ताहा बासवर दिन्हु मोहे बीश्राम ॥

जब हरि भक्तन कीन्ह साहाई। काशी खंड कथा तब गाई ॥

× × ×

अंत—

सुन नारद कहै वचन रसाला। कीजे निज तनु अधिक बीसाला ॥

॥ दोहा ॥

नारद मुनि के वचन सुन भुधर भयो बीसाल।
गगना अहनिशि की गई रोकी र। ततकाल ॥

॥ चौपाई ॥

नर गीरि समधर मम कुटीलाई। जो काहु की करत बुराई ॥
होथ पाप पै कछु न बसाई। ताको फल तेहि दुरत जाई ॥
ताते परम धरम उपकारा। अधनहि या सम पर अपकारा ॥
शिवशंकर यह कथा सोहाई। पारवति प्रति गाय सुनाई ॥
यह अध्या जो चीत दे सुनहि। ... ...

—अपूर्ण

विषय—

स्कंद पुराणान्तर्गत काशी खंड कथा का भाषानुवाद।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ अपूर्ण तथा जीर्णावस्था में है। केवल ९ पत्रे उपलब्ध हैं जिनमें पत्र संख्याएँ नहीं दी हुई हैं। रचयिता का नाम विश्वेश्वर दास है। ये महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम नारायण तथा पितामह का नाम शंकर था जो बादशाह (?) के चाकर थे। पिता के भाई का नाम गोविंद था जिनके पुत्र माधव हुए। ये तीन पुश्त से काशी में ही रहते थे।

ग्रंथ में रचनाकाल दिया तो है; परंतु दोहे का प्रथम चरण, जिसमें संवत का उल्लेख था, इस प्रति में नहीं है। शेष चरण इस प्रकार है :—

••• ••• रहे सत्र उपर चालीस।
भादौ कृश्न अष्टमी बुधवार रजनीश॥

ग्रंथ की रचना स्कंद पुराण के आधार पर हुई है। यह अध्यायों में रचा गया है।

संख्या २५४. भाषा वाल्मीकि रामायण, रचयिता—विष्णुदास, कागज—देशी, पत्र—२१९, आकार—८'५ × ६'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२४१, अपूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८०७ वि० से पूर्व, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

बल्मीक सौं ब्रह्मा कहै। तेरी कीरति प्रथी रहै॥
हीयै हमारे उपज्यौ भाउ। मेरै वह रामायन गाउ॥
दै वरु धातु पितागहि जाइ। दिवि दिष्टि चितए रिषिराइ॥
कवितु पढ़ायौ लौकुस बाल। लही कथा राम भूपाल॥
कहा कथा सो रामहि तनी। राजनीति दसरथ की गनी॥
नदी सरउ तहा अवध्यापुरी। विसुकर्मा रचि आपुन करी॥
वारह जोजन वसै लंवाइ। नौ जोजन की सोच कराइ॥

अंत—

देषे राम बहुत बिलषाइ। वालमीक के लागे पाइ॥
कहै रषीसुर सुनि रघुनाथ। सुर नर मिले एक ही साथ॥
सब देव सन्या लई निवाह। हर्षे राम मिले सब आइ॥
राउ सुग्रीव भभीषन हनवंत। नल नील अंगद जामवंत॥

\+ + +

सीता सहित भयौ अभिषेषु। पौहमी रामु रघुवंसी एकु॥
एक छत्र सिर राज समेत। पाछै वरस भोगई बहुत॥
कुस लवकुस राज यहु करै। राम पिता चरनै चितु धरै॥

—अपूर्ण

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ संस्कृत ग्रंथ वाल्मीकि रामायण का भाषानुवाद है। यह दोहा, चौपाई छंदों में रचा गया है और इसकी भाषा ब्रज है। इसके आरंभ का एक पत्र खंडित है। अंत के ३० सर्ग पूरे हैं। ३१ वाँ अपूर्ण है। राज्याभिषेक तक की कथा पूर्ण है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के कर्त्ता का नाम विष्णुदास है जैसा कि १८वें सर्ग के अंत में उल्लिखित है :—

'विस्नदास कवि कीयौ बखान।
पढ़त सुनत गंगा कौ न्हान॥'

ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १८०७ से पूर्व है। वह इस तरह ज्ञात होता है कि ग्रंथ के आरंभ के चार पत्रों पर विजयदशमी की पूजा का विवरण दिया गया है जो इस प्रकार है :—

'जा जात्रा रामचंद्रे जलनिधि तरने ....*विजयदशमी मिती कुवार सुदि* १० संवत् १८०७।' इन पत्रों में क्रमानुसार संवत् १८३० तक की पूजा का उल्लेख है जो ग्रंथ स्वामी के यहाँ संपन्न हुई होगी।

संख्या २५५ क. श्रीरामनामा, रचयिता—विसराव या विसरावदास (निवास-स्थान—जाम, तहसील रसड़ा, जिला—बलिया), कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—१०$\frac{1}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६ परिमाण (अनुष्टुप्)—२२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १२५८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बलदेव प्रसाद महाजन, ग्राम—बसनही, पोस्ट—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसाये नमः पोथी रामनाम का॥

वंदौ गुरु गनेस गिरीजा सीस महेस देहु उपदेस मन मानेउ हमार हो।
येसने बनाये से दाव मइ चुकलहु जैसे राजा चुके मंतर कपी चुके डार हो।
अब राम नाम लेहु और सब जाने देहु कवने जीवना के करहु कहुसे हंकार हो।
इही 'विसराव' मन राम नाम सुमीरहु नाहीत विरथदीन जात है तोहार हो॥ १॥
मछ कछ कोलनरसिंघ वावन सरूप येसे वोन्त गाने राम ठाढ़े वली द्वार हो।
ऊटो बार छतिरिकै सघार रेनुका कुमार रामकृस्न वोध निलंको अवतार हो।
जब राम जन ही पीर गर्भ के भई तव राम देह धरी हरही भुमी भार हो।
ये ही 'वीसराव' मन राम नाम सुमीरहु नाहीं तो वीरथ दीन जात है तोहार हो॥२॥
जननी गर्भ माह वसी दस मास तुम जाही से कईलहु कउल वो करार हो।
आवन कुदई तन येत लेत वाई आई आई तलपाई जात जम चोप कुआर हो।
इहै 'वीसराम' मन राम नाम सुमीरहु नाहीत वीरथ दीन जातु है तोहार हो॥३॥

अंत—

आई जो देसंतर तो इहो भन मंतर न वोडी कर काहु सें न छोटी परवार हो।
जो वसवहु वनमाह तो प्रानन से अनमाह छोनी पसुधा के कठोरूंधा चोपादार हो।
सहजही रही उदास छोडीए वीरानी आस वोडीए वोतास वाहावै करतार हो।
इहे 'वीसराव' मन राम नाम सुमिरहु नाहीत वीरथ दीन जात है तोहार हो ॥५०॥
राम जपत सस रीषी देवता तैंतीस कोटि हनुमान लोमस औ असनी कुमार हो।
जम वाउ वरुन कुबेर वसु वासव वीरंची चंद्र सेषर आनन हजार हो।
सुरसरी सारद भवानी नारद गनेस रवि सीमराम सुमीरी निहार हो।
इहो विसराव मन राम नाम सुमीरहु नाहीत वीरथ दीन जात है तोहार हो ॥५१॥
राम राम राम कै अनंत नाम सभ नाम चंद्र चारु अव नाम तारी हो।
जगती अनंत संत मानहु कुमुद चकोर राका राम के भगती होई न भोनुसार हो।
'रामनामा' बावन कवीत्व भाषा भनीति कहत सुनत अभीमत कै दातार हो।
इहै विसराव मन राम नाम सुमीरहु नाहीत वीरथ दीन जात है तोहार हो ॥५२॥

इति श्री रामनामा संमाप्त सुभमस्तु सं० १९१५ साल मीती चैत वदी ११ दसषत बलदेवराम कानु सा० वसनही पर जीलाआ परगने लषनेर।

विषय—

राम की भक्ति की महिमा का वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९१५ दिया है, पर यह इस प्रति का न होकर उसका है जिससे यह प्रति नकल हुई है। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में रचयिता की एक दूसरी रचना 'रामहितावली' भी लिपिबद्ध है। उसमें संवत् १९१५ के साथ साथ लिपिकाल संवत् १९५८ दिया है। अतः इसका भी लिपिकाल संवत् १९५८ वि० ही समझना चाहिए।

संख्या २५५ ख. रामहितावली, रचयिता—विसराव या विसरावदास (निवास स्थान—आमगाँव, तहसील—रसड़ा, जिला—बलिया), कागज—देशी, पत्र—२५, आकार—१०¼ × ६¾ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बलदेव प्रसाद महाजन, ग्राम—बसनही, पो०—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसाये नमः

॥ कवीत्व ॥

दीन देआल महादेव लाल बड़े रछपाल तीनो लोक माही।
वारन वक्र जगत्र पुजे सब पुजे वीना नही सूब सजाही॥

दे मातु दुलह दुरगा कर सीवगन मे गन वेद अघाही।
राम भगती वकसहु वीसराव के रामवीना हीत दूसर नाही ॥ १ ॥
गौरी भवानी महादेव रानि सीवा सर्वानि सरव मंगला ही।
पारवती ईस्वर कंताइनी काली हेमवंती उमा अविकारी ॥
चंडी देवी दुरगा दछाइनी अपर नागरी जा जल पाही।
राम भगती वकसहु वीसराव कै राम वीना हीत दुसर नाही ॥ २ ॥
कंठे भुजंग मुषे चढे भंग जटाजुट गंग तरंग उठाही।
भसम अंग उमा अरधंग क्वहार सरंग उमंग बढाही ॥
भुत वैताल कै ताल पर आग डंव वाजे डमरू डीमीकाही।
राम भगती वकसहु 'वीसराव' कै राम वीना हीत दुसर नाही ॥ ३ ॥

मध्य—

राम कहे सुष संपति आवै राम कहे दुष दूरी पराही।
राम कहतैही राम नेवाजही राम कहे जमराज डराही ॥
राम कहत रहे अनमोलीक नाही कौडी कैय कै वीकाही।
कहै 'वीसराव' जे जासु कै सेगर राम वीना हीत दूसर नाही ॥ २१ ॥

\+ \+ \+

जे नर नारी न राम ही जाने सेषर स्वन वराह वराही।
ताकर वदन ताही वरावरी जे भरी मुष छीआ लपटाही ॥
राम भजे वीनु वाजी कै जनम है मोहाम लगाम दिआही।
नित नंद गुरू वीसराव के राम वीना हीत दूसर नाही ॥ ३२ ॥

× × ×

जाकरि जैसनी गाई गोसाइनी ताकरी तैसनी वाछी वछाही।
जाकरी जैसन वाप प्रजा होइ ताकर तैसन नाती वेटाही ॥
मैं आपने दुष देउ वोरहन तु अपने सुष नापतो आही।
कहै 'वीसराव' गोपो इसी कै गई राम वीना हीत दूसर नाही ॥ १०४ ॥

अंत—

के 'कवितावली' 'रामहीतावली' नाम भरी गुनी के मन माही।
कहत दुष दरीदरन हरत सुनत सोग संताप नासाही ॥
दस दहाइ दहोतर कवीती सादर जे भर पाठ कराही।
से 'वीसराव' सोहाई ही राम के राम बीना हीत दूसर नाही ॥ ११० ॥

ईती श्री रामहितावली वीसराव वीरचीते कवीत्य संपुरन सुभमस्तु श्री संमत १९१५ मासे चईत सुक्क पछे तीजी वासर आगाडी का पोथी है अह उतारल समत १९५८ मीः

कुआर वदी देवासरेवलीअफ लीषवल देवराम कांदु सा० बसनही पर: परगने लषनेसर अं बलीआ थाना रासाड़ा मौजे रामनगर ॥

विषय—

राम की भक्ति करने का उपदेश किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है । लिपिकाल संवत् १९५८ है । यह प्रं संवत् १६१५ में लिखी हुई एक प्रति से नकल की गई है । यह बात पुष्पिका से प्रकट होत है । इससे यह पता चलता है कि प्रस्तुत ग्रंथ की रचना संवत् १९१५ वि० के पहले हुई है समस्त ग्रंथ सवैया छंदों में लिखा हुआ है जिनके प्रत्येक चौथे चरण में 'राम बीन हीत दूसर नाही' है । इसी चौथे चरण में रचयिता ने अपना नाम 'विसराव' दिया है *ये जाम ग्राम के निवासी, जाति के सेंगर क्षत्री थे । इन्होंने अपने गुरु का नाम निरबानं* लिखा है । विशेष के लिए देखिए 'रामनाम' का विवरण पत्र ।

संख्या २५६ क. पति मिलन, रचयिता—बूंद कवि, कागज—देशी, पत्र ४ आकार—४½ X ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, अपूर्ण रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः (अथाम्य देशात्पति मिलनम्)

परदेस तें सुंदर प्रीतम आये हुलास विलास वढै सगरे ।
उर कंठ लगायइ लई ललना गहि गाढि अनंद सू अंक भरे ।
तरकी है तनी, दरकी अंगिया मनि माल के टूट के लाल परे ।
मनो पिय के मिले तिय के हिय के विरहागन के अगरा निकरे ॥ १ ॥
आवन की रजनी सजनी झुक झूम रही झटलाय झकोरन ।
है पिय संग करैरु मधुपान पकी भर गांन उठै चहु ओरन ।
चातक चारु उचार करैरु सुनायो है बाल महाकाल मोरन ।
आज निसा मव रंग भरी फुन ओर निशा सब दीजै अमोरन ॥ २ ॥

\+ \+ \+

॥ दोहा ॥

पिय आये आनंद बढ्यो, उपज्यो प्रेम अपार ।
रंग महल विच भामनी, सोरह सजति सिंगार ॥ ७ ॥

मध्य—

मुखराग शृंगार नवमां ।

॥ दोहा ॥

मुख शोधन पावन करन, क्रमुक चूर्ण कथ जोर।
यह शृंगार नवमो सुखद, सब विध सरस तंबोर ॥

ताम्बूल गुण—

॥ कवित्त ॥

मधुर कषाय कटु तिक्त आदि रस जा में ।
गरम नरम रुचकारी गुन धारियै ॥
अध ही करज पैंडी गंगेटी कपूर बेल परम ।
पुराने पनि मध्य सीक हरियै ॥
काथ के धरे को फूल बसित क्रमुक ।
फूल चूनो चारु चित चातुरी तें मित भरिये ।
"वृंद" कहै पीय सुख सदन रिझायबे कौं
तरुन तंबोर की बदन सोभा करिये ॥ २१ ॥

विषय —

परदेश से पति के आने पर पत्नी का शृंगार ।

संख्या २५६ ख. पवन पचीसी, रचयिता—वृन्द, कागज—देशी, पत्र—
आकार—१२½ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, अपूर्ण
रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ पवन पचीसी लिख्यते ॥ तत्रादौ वसन्त पवन वर्णनम् ॥
पटु पराग पटपीत सुखद सुन्दर तन सोहत ।
वंसी बंस बजाय सुमन खग मृग मन मोहत ॥
कीर बिलास रस लेत, लता ललिता पुंजन में ।
मदन २ संचरत भौंर विचरत कुंजन में ।
जल न्हात पदमनी बास हर चढत सुविटप कदंन पर ।
माधव सरूप माधव पवन कहत "वृन्द" आनंदकर ॥ १ ॥

— अपूर्ण

विषय—

पवन का षट् ऋतुओं में बड़ा मनोरंजक वर्णन किया गया है । प्रस्तुत वर्णन वसं
पवन का है ।

संख्या २५६ ग. यमक सतसई, वृन्द कवि, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

दुह लिखत ग्रंथ जमक सतसई रा
वारन लाई जगत पत, वारन तारन वार।
वारन मारन दुष्ट के, काज सुधारन हार ॥ १ ॥
भये धराधर आप हरि, कीयो धराधर सैन।
धर्यो धराधर हाथ हाथ पर, कर अधरा धर बैन ॥ २ ॥

अंत—

वामन होतउ बल छल्यो, धर वामन वपु श्याम।
छल बल वामन के नहीं, वामन करिये काम ॥ ३१ ॥

—अपूर्ण

विषय—

यमकालंकार के अनेक भेदों का वर्णन किया गया है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में केवल ३१ दोहे हैं।

संख्या २५७ क. आभास प्रथम पद को तथा पद, रचयिता—वृन्दावन दास (निवास स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३ आकार—८३⁄४ × ५१⁄२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री कृष्णाय नमः ॥ अथ आभास प्रथम पद के लिष्यते ॥

॥ वचन का ॥

कोई अद्भुत अनिर्वचनीय हितमय सर्वोपर श्रीवृंदावन विराजै है ॥ सोभा अभूत छवि अपरमित लावन्यता कौ समूह छिन छिन प्रति नयौ दरसै है ॥ जैसी जासमैं इछ्या होइ तैसियै रिति रात्र दिन पहरघरी मूर्त्तवंद प्रगट होइ मनोर्थ पूरन करै है ॥ फिरि रिति रिति की कुंज श्रीवृन्दावन मैं पृथक पृथक है जामै रिति सदा स्थाई निवास करै है ॥ जब जैसी इछ्या होइ तब तहा जाइ विलास करै है ॥ ओर सरद वसंत रितु तौ सदा स्थाई एक रस श्रीवृन्दावन कौ सेवन करत है ॥ वसंत करितौ निरा एक रस अद्भुत फूकन सौ

फूल्यौ रहत है ॥ और सरद करि उज्जल निर्मल लहरयौ भरो रहत है ॥ तामैं अद्भुत रत्नन की निकुंज और लतान की निकुंज अनेक चहू ओर जथा उचित अनिर्वचनीय रचना सौ सोभित है ॥ दुष ने तिषने सतषने महल मणिन के मनोहर आकास कौ छवि सौ मंडित करत राजै है ॥ तिनकी धुजा कलस कगुरान की छवि सोभा प्रकास कहिवै मै नही आवै है ॥ काहू दिसा मै हीरन के परवत है ॥ काहू दिसा मैं लाल रत्नन के गिरि है काहू दिसा मैं पंना के पहाड़ है ॥ काहू दिसा मै मरकत मणि के सैल है ॥ काहू दिसा मैं पीत मणि के मंदार है ॥ तिनके उपर सुंदर झरना झरें है ॥ तिनके तट विषैं सरोवरन मै अद्भुत पचरंग कमल जहा फूल रहे है ॥ तिनकी सिषरन पर मोतीन की हीरन की लालन की अनेक मनिन की कुंजे बनी है ताकी सोभा कहा रसना कह सकै है ॥ अनेक लता द्रुमनि सौ अद्भुत फूलवार ऊपर नीचै फूल रही है ॥ तिनके पत्र फूलन मै कोटि कोटि चंद्रमा सूर्ज कौ सौ प्रकास है ॥ जहाँ पंछी महा मनोहर मोर मराल कोकिला कीर पिक पारावत चात्रिक चकोर कपोत भवर के गान गुंजार शब्द नित्तन सो महारमणीय होइ रह्यौ है ॥ जहा कंचन की भूमि अनेक रंग के रत्नन सौ जरी कोमल कलित किरनन सौ जगमगाइ रही है ॥ तहाँ सुंदर नहरैं चहूओर रत्नन की अनेक रंग के रंगन सौ भरी वहत है ॥ तिनमै जल जंत्र जड़े हैं ॥ फुहारे छूटत हैं सुंदर कुप तलाव सरोवर वावरी तहा अनेक स्थानन मै सोभित है ॥ चहूओर श्री जमुना जू महारसमय श्री वृंदावन कौ अद्भुत छबि सौ अलंकृत करै है ॥ तिनमै कमल पचरंग फूलि रहे हैं ॥ घाट कंचन के मनिन जटित दुहु ओर बनै है ॥ तटनि पर गुमटी सुंदर हीरन की मौतिन की लालन की बनी है ॥ ताके उपर लता वृक्ष फूलि के अनेक प्रकार के आइ श्री जमुना जू मै झूमि रहे है ॥ जहा सारस डोलत है हंस बोलत है ॥ मयूर नाचत है ॥ घाटन पै नाव रत्नन की अनेक प्रकार की अभूत छवि भरी धुजा पताका वितान सौं सोभित है ॥ मध्य मै श्री पुलिन उज्वल कपूरवत सौरभ मै है तामै श्री वृंदावन अभूत सोभा की किरनन सौ छाइ रह्यौ है ॥ श्री वृंदावन की लता वृक्षन मै महाकल्प वृक्ष काम धेन के गुन है ॥ भूषन वसन अद्भुत अनेक प्रकार के फूल फल की भांत फलत फूलत है ॥ जब जैसे चहियै तैसे तुरत प्राप्त होत है ॥ और कुंजन मैं हू ऐसे गुन है के जब जो सामिग्री चहियै सो पूर्ण रहत है ॥ श्री वृंदासषी जू अनंत कोट सषियनि सौ श्री जुगलकिशोर जू को सेवन करत है ॥ ताते श्री वृंदावन को सरूप कहा कह्यौ जाय है ॥ जामै श्री प्रिया प्रीतम जू सदा आसक्त है रहे है ॥ एक सुंदर उदे मोतीन की निकुंज है ॥ श्रेष्ठ सरद रितु की रजनी है ॥ तामै मोतीन कौ मंडल मंडित है ॥ चहू ओर पारजात मंदार कदंब केतुकी कमल फूलि रहे हैं ॥ एला लवंग सेवती गुलाव माधुरी लतानि तिनसौ मपरि के फूलि रही है ॥ मतवारे भ्रमरन की मंडली गुंजार करत फिरत हैं ॥ सुरंग पराग उड़ै है कंचन भूमि पर विछि रहे है ॥ ताके मध्य मै जंगाली रंग के मोती की जाली की निकुंज हैं ताके लाल रत्नन के स्तंभ हैं ॥ पीत मनिन की महराव बनी है ॥ तामैं उदे रंग के मोती के जाली की जवनिका परी है ॥ कगूरा कलस लाल रत्नन के जगमगाइ रहे है ॥ धुजा पर देवितान जरी के फूलन के सोभामय सोभित है ॥ गज मोती की झालरैं भीतर बाहर बधी है ॥ ताके मध्य मैं सुंदर सैय्या कमल दलन सौ बिछी राजै है ॥ तापै श्री प्रिया

प्रीतम जू फूलन कौ सिंगार किये अद्भुत छवि सौं विराजै हैं ॥ श्री ललितादिक सषि कंचन मनि के भूषन पहिरे चहुँओर झमक रही है ॥ श्री हित सषी जू मोतीन कौ सिंगार किये सनमुष बैठी है ॥ च्यारौ दिसा मैं राग रागिनी अद्भुत गान करत है ॥ श्री जुगल किशोर जू तौ हितमय है तिनमें श्री हित जू अपनी रीति कौ प्रथमहि पद मैं प्रगट दिषावत है ॥ श्री हित लडैती जू आनंद मैं प्रसंन हैं ॥ श्री हितलाल जू के और अपने रूप गुनन कौं देषि विचार महा प्रेम मैं मग्न होइ सबके सुनत श्री हित सषी जू के वचन ॥

॥ इति आभास ॥

॥ गौरी ॥

नमो नमो जै श्री हरिवंश ।
रसिक अनन्य वैन कुल मंडन लीलामान सरोवर हंश ।
नमो जैति वृंदावन सहज माधुरी रास विलास प्रसंश ॥
आगम निगम अगोचर राधे चरन सरोज व्यास अवतंश ॥ १ ॥
नमो नमो यह मंडल हित कौ ।
गौर स्याम मिलि रास रचत जहाँ वढतु रहतु उत्साह जुचित कौ ॥
रजनी मुष सुष अमित वटोरत लाड अवधि वरनौ कितकित कौ ॥
प्रियहि रिझावन होत त्रभंगी मान अपूरव देइ नित नित कौ ॥
जहाँ नित नयौ वरसतु मंगल वटतु प्रसाद जुगल हित वित कौ ॥
'वृंदावन' हित रूप जगत गुरु गावौ जस मूरति जु ललित कौ ॥ २ ॥
नमो नमो जै सेवा कुंज ।
जहाँ सजनी दंपति दुलरावति वाजत ताल पषावज रंज ॥
श्री हरिवंश जिमाये कर वर लहे मनोरथ सुष के पुंज ॥
वृंदावन हित रूप वेलि तरु प्रफुलित सदा करत अलि गुंज ॥ ३ ॥
नमो नमो गुरु कृपानिधान ।
असरन सरन दया करुनानिधि मंगल रूप हरन अग्यान ॥
प्रनित जननि हित हरि चरिनामृत अभय करन करवावत पान ।
आगम निगम सार सर्वोपर वरसावत आनंद रसथान ॥
नाम सुकृत धन अप जीवनि अति हित मानि देत वरदान ।
'वृंदावन' हित वलि पद पावन भक्ति प्रकास तज्यौ जगभान ॥ ४ ॥
नमो नमो जु भक्त रिझवार ।
नाम विदित गोपेस्वर जिनको ते वृंदा कानन कोतवार ॥
जात्रा सफल होहि जन तव जब वंदै पदरज इनि दरवार ।
'वृंदावन' हित रूप सषी वपु सेवत दंपति नित्य विहार ॥ ५ ॥
नमो नमो सषी वृंदादेवी ।
परिकर दिव्य संग ललितादिक दंपति नित्य विहार जु सेवी ॥

राधा हरि जे भजन अनुसरत तिनकौ देति कृपाबल थेवी ॥
'वृंदावन' हित रूप सार सुष गौर स्याम रस संपति भेवी ॥ ६ ॥
नमो नमो दंपति निजु परकर ।
ललित विशाषा चंपक चित्रा ये हंशिनी जुगल रस सरवर ॥
तुंग विद्या इंदु लेषा वंदौ रंग देवी रु सुदेवी विहुवर ।
वृंदा होहु कृपाल प्रनित जन जुगल दासि जाचत जोरे कर ॥
कालिंदी दिढ़ वास आपु तट निरषौ रस लीला जु मनोहर ।
'वृंदावन' हित रूप इष्ट भजौ श्री हरिवंश प्रसाद डारिहर ॥ ७ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

वृंदावन की शोभा का वर्णन और निकुंज में राधा कृष्ण के शृंगार का वर्णन एवं आचार्य हित हरिवंशजी की वंदना।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। 'आभास प्रथम पद' में रचयिता का नाम नहीं है। पदों के रचयिता वृंदावनदास हैं जो चाचा वृंदावनदास से भिन्न नहीं। ज्ञात होता है 'आभास प्रथम पद' इन्हीं का लिखा हुआ है। इन्होंने पदों के अंत में 'रूप' शब्द का भी उल्लेख किया है। इससे हित रूपलाल गोस्वामी का निर्देश किया गया प्रकट होता है जो इनके गुरु जान पड़ते हैं।

वृंदावनदास जी संक्षिप्त विवरण के अनुसार संवत् १८०३ के लगभग वर्तमान थे। यदि उपर्युक्त गद्य रचना भी इन्ही की हो तो यह उक्त संवत के लगभग का व्रजभाषा गद्य है।

प्रस्तुत रचना अन्य रचनाओं—१ राधा कवच, २—शिव सहस्र नाम तथा ३—सदालाल कृत विनय पद के साथ एक हस्तलेख में है। प्रथम दो रचनाएँ संस्कृत में हैं।

संख्या २५७ ख. कलिप्रताप वेलि, रचयिता—चाचा हित वृंदावन दास (निवास स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—७'६×५'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८६४, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ कलि प्रताप वेलि लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

नमो चरन गुरुदेव त्राहि मामि छुपा करौ।
दुष कौ मिलत न छेद कलि प्रताप हरिकृपा बिन ॥ १ ॥

मन अति करत अनीत तुमही करौ सहाय मम ।
तातें अति भय भीत कलिप्रताप हरिकृपा विन ॥ २ ॥

अंत—

भारथ श्री भागौत व्यास धर्म कलिजुग कहे ।
ते भये प्रगट उदोत भक्त ओट हरिपद रहे ॥ १२४ ॥
वदि चौदस वैसाष ठारे सै१८ चौसठ६४ बरस ।
कलि के चरित अथाह तिनमें कृष्ण भजन सफल ॥ १२५ ॥
कलि नृप विजै विहार वेलि तव पूरन भई ।
भक्त अजित हरि लार तिन सों गलि वाहीं दई ॥ १२६ ॥
"वृंदावन" हित रूप अद्भुत अवसर''''''नन
वृथा न षोई अनूप ... ... ॥ १२७ ॥

\+ + +

गुरु हित रूप कृपाल दया द्रिष्ट रंचक करौ ।
राषौ कर वर भाल "वृंदावनहित" सरन पद ॥ १३० ॥

इति श्री कलि प्रताप वेलि संपूर्ण

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ के नाम, "कलि प्रताप वेलि" से उसके विषय का आभास मिल जाता है। रचयिता ने इसमें कलियुग में उत्पन्न बुराइयों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। मर्यादा का नष्ट होना, झूँठ, चोरी और व्यभिचार आदि बुराइयों के उत्पन्न होने का दोहे—सोरठों में वर्णन है। अंत में कलि के प्रभाव से मुक्त होने के निमित्त कृष्ण भक्ति का उपदेश किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत "कलि प्रताप वेलि" के रचयिता चाचा हित वृंदावन दास जी राधा वल्लभ संप्रदाय के ख्यातनामा भक्त हैं। इनकी एक अन्य रचना "हरिनाम महिमावली" का रचनाकाल १८०३ वि० है और प्रस्तुत "कलि प्रताप वेलि" का रचनाकाल संवत् १८६४ है। अतः यह स्पष्ट है कि ये इन संवतों में वर्तमान थे। प्रस्तुत ग्रंथ से इनका श्री रूप हित जी का शिष्य होना ज्ञात होता है। लिपिकाल नहीं दिया है।

संख्या २५७ ग. नीति कुंडलिया, रचयिता—हितवृन्दावन दास (निवासस्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—५७, आकार—७'६ × ५'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८१० वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति ॥ श्री हरिवंश चंद्रो जयति ॥
॥ अथ श्री नीति कुंडलिया लिष्यते ॥
श्री हरिवंश सरोज पद कृपा रावरी पाइ ॥
व्यौहारिक जो वार्त्ता कहौं परमारथहि लगाइ ॥
परमारथहि लगाइ आपनो मन समझाऊँ ॥
गुरु संतनि मुषसुनी रीति सोई कछु गाऊं ॥
जगत बषानैं प्रगट जे अंतर अर्थ विचार ॥
"वृन्दावनहित" अब कहौं मन बुध कौ विस्तार ॥

\+ + +

सदा दूबरो ही रहै अन्याई कौ बापु ॥
अन्याई कौ बापु दीन सबसौं जु रहैई ॥
मत कोऊ सुत औगुननि जाइ नृप द्वार, कहैइ ॥
साधु पिता हू जदपि बंधे सुतकी बुरवाई ॥
तदपि प्रगट ह्वै जाइ कहाँ लगि दुरति दुराई ॥
वृंदावन हित जीय नै मानौ मन कृत आपु ॥
सदा दूबरौ ही रहै अन्याई कौ बापु ॥

मध्य—

पहलौ पहरौ जीत कौ जाकैपरिगयौ बांट ॥
जाकैं परिगयौ बांट बालपन तैं वैरागी ॥
जगत स्वाद नहिं विरम्यौ ऐ हरिपद अनुरागी ॥
वह भाजन निहपाप कृष्ण सेवा मन तत्पर ॥
मिलै निसान बजाइ धाम राधा मुरलीधर ॥
"वृन्दावन हित" भक्त वह उतर्यौ दुर्लभघाट ॥
पहलौ पहरौ जीत कौ जाकै परि गयौ बांट ॥

अंत--

॥ दोहा ॥

गूढ़ बषानै बरनि कैं कृष्ण भजन कह्यौ सार ।
संत सुदृष्टि निहारि कै लीजौ अर्थ विचार ॥ २००७
संवत वर्ष अठार[१८] सै दस[१०] उपर गत आनि ।
... ...सकल बखान ॥ २००८
...(इति श्री नीति कुं) डलिया संपूर्ण ॥

विषय—

"नीति कुंडलिया" का मूल विषय कृष्ण भक्ति है जिसका वर्णन संसार की व्यावहारिक बातों का आश्रय लेकर किया गया है। उदाहरण के लिये निम्नलिखित उद्धरण पर्याप्त हैं : —

१ - भयौ नगारौ कूच कौ घोरन बाधे जीन।

२ - नाव कूदि बंदरा मरे दूक जोगना खाय

३ - घरी घरी के रूठने पहर मनावत जात

इस प्रकार की कहावतों का प्रयोग अन्योक्ति के रूप में किया गया है। परंतु सभी स्थानों पर अन्योक्ति सिद्ध नहीं होती। कहीं कहीं तो अप्रस्तुत की कोई रोचकता ही नहीं दिखाई देती।

संख्या २५७ घ. विमुख उद्धारन वेली, रचयिता--चाचा हित वृंदावनदास (निवास स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—९ × ५.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१८, पूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल सं० १८२३ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि --

अथ श्री विमुष उद्धारन वेली लिष्यते ॥

॥ दुपई ॥

॥ राग गौरी ॥

तेरी आई पछिली वरिया डुकारी राधे कृष्णा कहनौ ॥
ग्रह धंधै सब जनम गमायौ अवकर माला गहनौ ॥ १ ॥
लष चौरासी भृमि भृमि पाई उत्तम मांनुष देही।
अव सचेत ह्वै परम प्रीति सौं मुष हरि नामहि लेही ॥ २
कहा वकत सब हौं जानति हौं अनवोल्यौ ई रहनौ ॥
सुनि वैरगिया तू अति ठगिया मोहि न भजन सौं लहनौं ॥ ३
एक वार गर कंठी बांधी सासु लरी देषि भारी ॥
इक दिन माथैं तिलक देषि कै पति मोहि कीनी न्यारी ॥ ४

अंत- -

जीत्यौ साधु विमुष करी सनमुष मारग भक्ति षितायौ ॥
'वृंदावन' हित रूप आइं वलि संत प्रताप जु गायौ ॥
डुकरी मलिन वुद्धि उत्तम जिय रोचक कही पहेरी ॥
विनु हरि भक्ति छुटै न जग भ्रम नैवात एक सौ फेरी ॥

साधु संग करि तरे महाखल साखि चारि जुग मांही।
'वृंदावन' हित रूप वंदि पद उबरैं इन बल बांहीं ॥१६१॥
ठारह[१८] सैतेईस[२३] वर्ष पुनि पून्यौ चैत्र सुगानी ॥
वृंदावन हित साधु समझिहैं लौकिक रूप कहानी ॥
इति श्री विमुख उद्धारन बेली वृंदावनदास कृत्य संपूर्णं ॥

विषय—

'विमुख उद्धारन बेली' में एक अत्यंत रोचक कथा है, जो इस प्रकार है :—

एक स्त्री सांसारिकता में अत्यंत लिप्त थी। एक साधु ने उसे भक्ति का उपदेश देकर परलोक मार्ग पर अग्रसर किया। यह कथा वाद विवाद के रूप में बड़े ही उत्तम ढंग से लिखी गई है। इसमें स्त्री लौकिक पक्ष का समर्थन करती है और वैराग्य या साधुता को पाखंड बतलाती है। इसी प्रकार साधु संसार मार्ग की बुराइयों का दिग्दर्शन कराके परलोक के सुख की चर्चा करता है। अतः स्त्री परास्त होती है और भक्ति मार्ग ग्रहण करती है। ग्रंथ व्रजभाषा में है।

विशेषज्ञातव्य—'विमुख उद्धारन बेली' में विशेष बात यह है कि इसमें वृंदावनदास जी ने अपने पूर्ववर्ती कुछ भक्तों के नाम दिए हैं। इन भक्तों में चिरपरिचित तथा विख्यात भक्तों को छोड़ते हुए शेष नाम ये हैं :—

नरहरियानंद, जैमल, हरीदास (स्वामी हरिदास नहीं, राधावल्लभी), केशवकाश्मीरी, श्रीभट्ट, कृस्णदास, गिरधारी, परमानंद, सूर, सेवक, चतुर्भुज, पेमरतन, भुवन, मोहनदास, नागरीदास, नवलदास, दामोदरदास हित, हरिवंशदास, जसवंत, श्रीधर, रघुनाथदास, गंगा और जमुना।

प्रस्तुत बेली में वृंदावनदास ने गार्हस्थ्य जीवन का चित्रण बड़ी सुंदरता से किया है। भाषा का रूप भी सरल और परिमार्जित है।

संख्या २५७ क. मनप्रबोध बेली, रचयिता—हित वृंदावनदास (निवासस्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—९ × ५.३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, रचनाकाल—सं० १८१३ वि०, प्राप्तिस्थान—म्युनिस्पल, म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ श्री मनप्रबोध बेली ॥

सुमिरौं प्रथम श्री हरिवंश। निर्मल चरित करहुं प्रसंस ॥
श्री हित रूप गुरु पद वंदि। लहि जिन कृपा मन आनंदि ॥ १
सुमिरे मन भलो उपदेस। पायै अनत नहि सुषलेस ॥
प्रथमही गुरु चरन धरि भाउ। जातें बनें सकल बनाउ ॥ २

जौ बिनु नीवसत खन धरै। तौ सुनि तुरत ही ढहि परै॥
सब श्रम अफल ताकौ जाइ। वैठै नहि तनक सचु पाई॥ ३

अंत—

राधा रसिक विनोद जहां रसमय सुखमय धाम
वृंदावन हित रूप वलि मोहि देहु विश्राम॥ ८६
ठारह[१८] सै पर तेरहौ[13] वर्ष जु सावन मास॥
'मन प्रवोध वेली' कथी
हित वृंदावनदास॥ ८७

इति श्री मनप्रवोध वेली वृंदावनदास कृत संपूर्ण॥

विषय –

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'मनप्रवोध वेलि' है। इसमें श्री राधावल्लभजी की भक्ति के प्रति प्रवृत्त होने के लिये मन का संबोधन किया गया है। संसार रूपी समुद्र से पार जाने के लिये कृष्णभक्ति नौका स्वरूप है तथा गुरु उसका खेनेवाला है। 'मनप्रवोध वेली' में गुरु की महिमा का विशेष वर्णन है। ग्रंथ की भाषा व्रज है।

संख्या २५७ च. मन चितावनी वेली, रचयिता—वृंदावनदास (निवास स्थान–वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९ × ५'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८२० वि०, प्राप्तिस्थान—म्युनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ श्रीमन चितावनी वेली लिख्यते॥

वंदि श्री हरिवंश पदरज मनां वारंवार रे॥
निगम मथि रस भजन काढ्यौ दुर्लभ यहि संसार रे॥
जहि विलसत रसिक दसधा भक्ति अनुपम रतन रे॥
रहौ तिनके संग प्रभु पद मिलन कौं यह जतन रे॥
मिलन कौ यह जतन प्रभु नर देह दई इहिं हेत रे॥
जनम मानुष पाइकें जिनि होहि राक्षिस प्रेत रे॥ १

अंत –

वृंदावन हित रूप वरनै जिय पति गति राधा धनी॥
ठारह[१८] सै वीसोत्तरा[२०] पुनि जेठ सुदि दुति भनी॥

इति श्री मन चितावनी वारह मासी वेली वृंदावनदास कृत संपूर्ण॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'मन चितावनी वेली' है। यह छोटा सा ग्रंथ है और बारह-मासा के रूप में रचा गया है। इसमें यह दिखलाया गया है कि समय के साथ साथ आयु शनैः शनैः क्षय होती जाती है और मनुष्य जीवन का एक मात्र उद्देश्य श्री भगवत सेवा है एवं मनुष्य को कृष्ण भक्ति करनी चाहिए।

संख्या २५७ छ. हित रूप स्वामिनी अष्टक, रचयिता—हितवृंदावनदास (निवास स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—४'८ × ६'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

अथ श्रीहित रूप स्वामिनी अष्टक ॥

॥ कवित्त ॥

जननी जनक जन्म होत ही निहार छके,
कौतिक अवधि सुख दग विसराम की ॥
दारिद दुष दूर टरे अभर सुभर भरे,
निधि सिधि डोलैं ए पौरी धाम धाम की ॥
वृंदावन हितरूप कुँवरि किशोरी प्रगटी,
और ओप देखौ या नंद भान गाम की ॥
लाडिली लड़ैती मेरी स्वामीनी छबीली राधे,
वृन्दावन रानी आनी जीवन है श्याम की ॥ १

अंत—

क्यों हूँ न होत न्यारे प्रानप्यारी प्रानप्यारे,
नाहिन प्रवेस जहाँ विरह रूप धाम की।
सदा ही संजोग भोग देखिये अखंड जहाँ,
याते हो कहत कवि थिरता वा टाम की।
वृन्दावन हित रूप रावरो विनोद करै,
अति रिझवार रीझ प्रेम विके वाम की।
लाडिली लड़ैती मेरी स्वामिनी सलोनी राधे,
वृन्दावन रानी आनी जीवन है श्याम की ॥ ८

॥ दोहा ॥

श्रीहित रूपा स्वामिनी मोहन अवधि सनेह ॥
वृन्दावन हित सों सदा वरषत आनंद मेह ॥ ९

विषय—

प्रस्तुत "हितरूप स्वामिनी अष्टक" में श्रीराधिका जी की स्तुति है। प्रस्तुत हस्तलेख में 'अष्टक' के अतिरिक्त कृष्णदास हित तथा कमल नैन हित के भी एक एक पद हैं।

संख्या २५७ ज. पद संग्रह, रचयिता—हितवृन्दावन दास (निवास स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—७२, आकार—१० × ६.७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति ॥ श्री हरिवंश चंद्रो जयति ॥ श्री हितरूप गुरुभ्यो नमः ॥ अथ फूल डोल के पद लिख्यते ॥ राग सारंग ताल आड ॥ बन्यौ फूलनि डोल सुहावनौं ॥

झूलत हैं श्री राधा मोहन मिलि मधुरें सुर गावनौं ॥ १ ॥
जहाँ तरु वेलिनु कौ बन्यौं मंडफ रवि की किरिनि न आवनौं ॥
झूलत हैं कुसमनि के झूमिक अलिकुल कलह मचावनौं ॥ २ ॥
अवनी अति कवनी रवि जा तट चूर कपूर बिछावनो ॥
जूथ अनंत फिरत हैं अलि जहाँ फूल सिंगार बनावनौं ॥ ३ ॥
बिनु मिन फूल भरी जिन तन मम दंपति रुचि दुलरावनौ ॥
चित चौंपनि सौं झोटा दे दे कहैं भयो मन भावनौ ॥ ४ ॥
विधि विमान चढि उतरतु मनु यह उपमा लघु जु दिखावनौ ॥
यह बन्यौं डोल अलौकिक ताकें सम छबि कहा बतावनौं ॥ ५ ॥
कै सोभा के इवा रात नग गौर स्याम दरसावनो ॥
विवि सुकुमार फूल तक धरि कैं सषी दृग करनि उचावनौं ॥ ६ ॥
कै छवि भार उतारति झोटनि सुनि सषि यह मन लावनौं ॥
कै प्रानति की थाती यातें फूलनि माँहि छिपावनौ ॥ ७ ॥
भूषन फूलडोल फूलनि कें बैठे छवि जु बढावनौ ॥
"वृन्दावन हित रूप" जलद कै रमकनि में बरपावनो ॥ ८ ॥

मध्य—

सषी ग्रीषम भई पावस री महल में छुटत फुहारिनु वारि ॥
षस परदा चादरि भुरें बंगला मधि पिय सुकुवारि ॥
चुनि चुनि कुसुमनि पांपुरी जाल सज्या रची संवारि ॥
वृन्दावन हित रूप सुपद अलि लेपति चंदन गारि ॥ २१ ॥

अंत—

॥ बिहागरौ ॥

पेवति अलि परम विचक्षन बैठे दंपति सोभा निकर नवरिया ॥
फूल्यौ कानन देषि प्रसंशति ऊंचौ कर कर प्यारी
देषौ लाल अति छवि भरिया ॥
या कानन कौ चंद जौहरी परषै गगन चढ़ि विरमि रहतुरथ
आगैं न टरिया ॥
"वृन्दावन हित" रूप किरिनि परसत हिय भीज्यौ
सुधा वारि दृग झरिया ॥

॥ राग केदारौ ॥ ताल आड़ ॥

चाक चंदन की नवरिया तामैं बंगला छायौ पंकज दलनि ॥
गौर स्याम बैठे ग्रीषम रितु जल विहार करैं पेवति अलि कर वलनि ॥
मोहन मुष मुरली प्यारी लियें बीन बजावति प्रगट करत नाना गुन कलनि ॥
"वृन्दावन हित" रूप थकित रविजा प्रवाह कियो इत उत हलनि न चलनि ॥

विषय—

प्रस्तुत संग्रह में ८५ पद हैं जिनके विषय क्रम से फूल डोल (चैत्र मास का उत्सव), फूल रचना (ज्येष्ठ मास में राधाकृष्ण का फूलों द्वारा शृंगार), चंदन रचना, उशीर मंदिर, जल विहार और नौका विहार हैं। अतः इन पदों में वसंत और ग्रीष्म के उत्सवों का वर्णन है।

पद साधारणतया लम्बे है जो हित वृन्दावनदास जी की विशेषता है।

संख्या २५७ क. कृपा अभिलाष वेली, रचयिता—हित वृंदावनदास (निवास स्थान—वृंदावन); कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—३.५ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८१२ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री राधाकृष्ण जी गोस्वामी, विहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति ॥

अथ श्री कृपा अभिलाष वेली लिख्यते ॥

॥ सोरठा ॥

श्री व्यास नंद सुष कंद चरन कमल धरि भाव मन ॥
लहै अतुल आनंद श्री राधा करि कृपा मम ॥ १ ॥

मम गुरु श्री हित रूप सरन बताई रावरी ॥
करुना कुशल सरूप श्री राधा करि कृपा मम ॥ २ ॥

तुव उदार वन ईस गहर कौन विधि कीजियै ॥
देहु चरन रस सीस श्री राधा··· ··· ··· मम ॥ ३ ॥

हे सुमुषी मृदु चित तोको वह दया पर ॥
हो जांचत यह नित श्री राधा ··· ··· ··· ··· ··· ॥ ४ ॥

सर वेस्वरि तव नाम यह विनती श्रवननि सुनो ॥
सत चित आनंद धाम श्री राधा··· ·· ··· ··· ···॥ ५ ॥

अंत—

नित मन बढ़त हुलास नित नव जीवन रूप रस ।
बलि वृंदावनदास श्री राधा ··· ··· ··· ··· ··· ॥ १०८ ॥

बरनी करि अति आम अभिलाषा वेली ललित ।
पूस सुदी सुभ ग्यास श्री राधा ··· ··· ··· ··· ॥ १०९ ॥

ग्यारह सै गति जानि ऊपर वर्ष सुवार हों ।
वांछित कृपा वषान श्री राधा ··· ··· ··· ··· ··· ॥ ११० ॥

अहो रसिक मणि--भूप तनक दया जुत हेरिये ।
'वृंदावन हित' रूप श्री··· ··· ··· ··· ··· ··· ॥ १११ ॥

कहत सुनत यह वेलि अपनायै, रानी रवन ॥
निरषि भाव अलि केलि श्री राधा करि कृपा मम ॥ ११२ ॥

इति श्री कृपा अभिलाष वेली सोरठा वृंदावन दास कृत संपूर्णं ॥

विषय—

'कृपा अभिलाष वेली' राधावल्लभी संप्रदाय का भक्ति विषयक ग्रंथ है। यह आद्यंत सोरठों में लिखा गया है जिनकी संख्या ११२ है। आरंभ में राधा कृष्ण की पद वंदना है। इसके बाद राधा का नख शिख और उनका कृष्ण के पास अभिसरण, कृष्ण का उनको देखकर मोहित होना और अंत में दोनों का केलि-विलास आदि प्रसंग वर्णित हैं।

रचनाकाल

पूस सुदी सुभ ग्यास श्री राधा ·· ··· ···॥ १०९ ॥
ग्यारह (?ग्यारह) सै गति जानि ऊपर वर्ष सुवारहो ।
वांछित कृपा वषान श्रीराधा ·· ··· ··· ··· ··· ॥ ११० ॥

संख्या २५८. गीत गोविंद भाषा, रचयिता—वैष्णवदास 'रसजानी' (निवास-स्थान—वृंदावन), कागज—देशी, पत्र-५२, आकार—३·६ × ६·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८१४ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

(पत्र ३ से उद्धृत)

निशि अँधियारी घटा घमडी हैं कारी,
भारी दीसत न भूमि झूमि रहे हैं तमालतर ॥
प्यारो बंधि प्यार सों हजार बार कुंजद्वार,
ढूकत ही रह्यौ में न गई तातें ताकें डर ॥
प्यारी सुकुमारी यह मन में बिचारी,
आज आप श्री बिहारी जू कों लै चलों निकुंज घर ॥
चले वन कुञ्ज मग रले सुष पुंज भीर,
यमुना के तीर बीर क्रीडत सुघर बर ॥ १ ॥

X X X

अष्टपदी

चंदन चरच्यौ स्याम सुभग तन पीत वसन बनमाला ।
गंड युगल मनि कुंडल मंडित हसत लसत सुरसाला ॥
हरि इन मुग्ध वधुनि के माही हे विलासिनी रास कराहीं ॥
किनहूँ पीन पयोधर के पर हरि लपटाय लये हैं ॥
गावत पंचम के सुर आछें हरि पाछें सुदये हैं ॥

मध्य—

कोइक श्री मधुसूदन कौ मुख कमल समान सुध्यावै ॥
बहुविधि दुष मोचन लोचन सों काम हिये उपजावै ॥
कोइक सुंदरि सुंदर के ढिग बात रहन मिस आवै ॥
चूमि कपोल अमोल अचानक फिर दुरि जाय लजावै ॥
कोई हेत सों नेत कुञ्ज तें गहि पीतांबर पिय कौ ।
क्रीडा हित पेंचत यमुना प्रति जानत भाव न हिय कौ ॥
कोई संग नाचत हरि ताकी निज मुष करत बडाई ।
ताल देत चूरिन के विच जिम मुरली वजै दिषाई ॥
इक सों लपटत चूमत एकहि एकहि जाय रमावै ।
हंसि करि देषि रहें काहू कों काहू के संग धावें ॥
वरनी श्री जयदेव अलौकिक केशव केलि दुरो जो ।
श्री वृंदावन के तन के मन के मंगलनि फुरी सो ॥ २१ ॥

॥ सवैया ॥

अंत—

गुन गान कला कल कौशल जो अरु कृष्ण कौ ध्यान महान जितौ।
रस सार सिंगार को सार जु है पुन काव्य की रीति कौ गीत कितौ॥
जयदेव के शुद्ध सुभेवनि सों अब लीजै सुधी सब सोधि तितौ।
पर जे हरि में अनुरक्त विरक्त हैं तेई सुनौ करि भक्ति इतौ॥

\+ + +

॥ दोहा ॥

भोजदेव पिता मात मम रामादेवी नाम।
बंधु पराशर आदि के उर यह करौ सुधाम॥

अष्टपदी

श्री महा प्रभू चैतन्य तिनकी दया फली।
कलि अवतार सुधन्य पतितनि बनी भली॥
जैति गीत गोविंद गावहु रसिक अहो॥
श्री प्रियादास कवि भूप रसिकनि मुकुट मनी।
जगयश छयौ अनूप तिनकी कृपा कनी॥
जैति श्री हरि जीवन नाम मेरे गुरु सुमहा।
तिनकौ कर अभिराम नित मम सीस अहा॥
जैति जे जन रसिक रसाल तिनके कंठ बसौ।
युगल केलि की माल दस दिसि मांहि लसौ॥
जैति अष्टादश शत जान चौदह अधिक यही।
संवत्सर सप्रमान मगसिर मास सही॥
जैति कृष्ण आठे सार ता दिन पूर्न भई।
वारनि में रविवार सबरे सुधनि छई।
'जैतिदास' 'वैष्णवदास' भाषा तिहिं सुकरी।
श्री वृंदावन वास निसि दिन मोद भरी॥
जैति पर्‌यौ जगत दुख रासि खोटे कर्म करे।
कृपा करौ अनयास दर्शन देहु हरे॥
जैति गीत गोविंद गावहु रसिक अहो॥

॥ दोहा ॥

दास 'वैष्णवदास' यह रसकनि हित सुखरासि।
भाषा करि वर्नन कियौ सुनि हिय होय विकास॥

इति श्री गीत गोविंद भाषायां रस जान वैष्णवदास कृतायां द्वादशः सर्गः

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ 'गीत गोविंद' का हिंदी भाषा में अनुवाद है। अनुवाद में कवि ने दोहा, कवित्त और सवैया भी दिए हैं। मूल ग्रंथ की अष्टपदियों का अनुवाद अष्टपदियों में ही है। इसकी भाषा व्रज है।

संख्या २५६ क, व्यासवानी, रचयिता—व्यास (निवास स्थान—वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१३६, आकार—९'८ × ६'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०६०, पूर्ण (प्रायः), रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९६३ (संभवतः १८६३ वि०) और १८७२ वि० (?), प्राप्तिस्थान—हिंदीसंग्रहालय, हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाधिपतये नमः ॥ अथ श्री व्यास वानी प्रारंभ।

॥ राग सारंग ॥

वंदं श्री सुकल पंकज चरन ॥ सत चित आनंद की निधगई हियकी जरन ॥ नित्य वृन्दा विपन संतत जुगल मम आभरन ॥ व्यासमधुपहि दियौ सर्वस प्रेम सौरभ सरन ॥

+ + +

नमो नमो जै श्री हरिवंस ॥

रसिक अनन्य वेनु कुल मंडन लीला मान सरोवर हंस ॥
नमो जयत वृन्दावन सहज माधुरी रास विलास प्रसंस ॥
आगम निगम अगोचर राधे चरन सरोज व्यास अवतंस ॥

श्री हरिवंस से रसिक हरिदास से अनन्यंन की को वपुरा अब कर सकै सारी ॥ जिन वृन्दावन साँचो जानौ राधा वल्लभ कुंज बिहारी ॥ रूप सनातन है वैरागी उपकारी सबके हितकारी ॥ व्यास धन्य धनि वृज वासी हैं कृष्णदास गोवर्द्धन धारी ॥

राग देस गधार

जै जै मेरे प्रान सनातन[१] रूप[२] ॥

अगतन की गत दोऊ भइया ओग जग्य के जूप ॥
वृन्दावन की सहज माधुरी प्रेम सुधा के कूप ॥
करुना सिंधु अनाथ बंधु जय भक्ति सभा के भूप ॥
भक्ति भागवत मंत्र आचारज तुरकुल चतुर अनूप ॥
भुवन चतर्दस विदित विमल जस रसना के रस तूप ॥

चरन कमल कोमल रज छाया मैटति कलि रवि धूप ॥
ब्यास उपासिक सदा उपासी राधाचरन अनूप ॥

॥ राग सारंग ॥

कलि मैं सांचौ भक्ति कबीर ॥
जबतैं हरि चरनन रुच उपजी तबतैं बुनयौ न चीर ॥
दीनौं लेहु न कबहू जाचें ऐसो मत को धीर ॥
जोगी जती तपी सन्यासी तिनकी मिटी न पीर ॥
पाँच तत्व तैं जनम न पायौ काल ग्रस्यौ न सरीर ॥
ब्यास भक्ति कौ षेत जुलाहौ हर करुना मैं नीर ॥ २६ ॥

साची भक्ति राम दे (नामदेव ?) पाई ॥
कृष्ण कृपा कर दीनी जाकौं लोकन वेद बढाई ॥
प्रीति जान पय पियौ कृपानिध छांन छवीलैं छाई ॥
चरन पंकरस वके हट वज्र ज्यों हर सौं बात कहाई ॥
जाके हित हठ मंदिर फेर्यौ चित दै गाय जिवाई ॥
जिन रोटीघीउ चुपरि श्यामकौं अपने हाथ चवाई ॥
जाकी जात पांति कुल बीठल संत जना सब भाई ॥
ताकी महिमा ब्यास कहा कहि जाकें सुबस कन्हाई ॥ २७ ॥

॥ राग धनाश्री ॥

प्रबोधा नंद से कवि थोरे ॥
जिन राधावल्लभ की लीला रस में सब रस घोरे ॥
केवल प्रेम विलास आस कर भवबंधन द्रढ तोरे ॥
सहज माधुरी बचननि रसक अनंन्यन के चित चोरे ॥
पावन रूप नाम गुन उर धरि विषै विकार जु मोरै ॥
चार चरन नप चंद बिंब में राखे नैन चकोरे ॥
जाया माया देह गेह सौं रवि ससि बंधन छोरे ॥
लोक वेद सारंग अंग के सेत हेत के फोरे ॥
यह प्रिय ब्यास असकर हित हरिबंसह प्रतिकरि जोरे ॥ २८ ॥

॥ राग सारंग ॥

राधा वल्लभ की नव कीरति बरनत हूं न निघाति ॥
भरत षंड की मुकुट मंडली बरनत हूं न अघात ॥
बडे रसिक जयदेव बषानी लीला अमृत चुंचात ॥
वृन्दावन हरवंस प्रमंमित सुन गौरी (गोरी = राधा) मुसक्यात ॥

राग सहित हरवंस कही रस नदी वही नथहात ॥
रसिक अनन्य की जूंठन व्यास सची रुचि कै सुचपात ॥ २९ ॥

॥ राग धनासिरी ॥

साँची प्रीति विहारिन दासै ॥
कै करवा कै कुंज कामरी कै थरु श्री स्वामी हरदासैं ॥
प्रतिबाधक सहि सकत न जिनके जानत नहीं कहा कर त्रासै ॥
महा माधुरी मंत्र मुदित ह्वै गावत रस जस जगत उदासै ॥
छिन ही छिन परतीत बढ़त रस रीति देप विवि वदन विलासैं ॥
अग अग नित्य विहार करत मिल यहै आस निजु वन वसि व्यासै ॥३०॥

इतनौं है सब कुटुम हमारो ॥
सैन धना अरु नामा पीपा अरु कबीर रैदास चमारौ ॥
रूप सनातन को सेवक है गंगल भट्ट सुठारौ ॥
सूरदास परमानंद मेहा मीरा भक्ति विचारौ ॥
ब्राह्मन राजपुत्र कुल उत्तम करति जात कौ गारो ॥
आदि अंत भक्तन कौ सर्वसु राधा वल्लभ प्यारो ॥
आसु कौ हरिदास रसिक हरवंस न मोह विसारौ ॥
इह पंथ चलत स्याम के व्यासहि वौसै भावहि तारौ ॥ ३१ ॥

मंगल ॥ राग सूहौ एक ताल ॥
जै जै श्री गुर सुकल वंस उदित भयौ ॥
उग्यौ है जसु भानतिमिर न न राहौग्यौ ॥
गयो जग को तिमिर सजनी ताप तीनौ श्रम घटे ॥
पंच रस को तत्व लै सिंगार प्रेम सुजनि जटे ॥
पियत निसि दिन सासुषीसुष नवल तन सहचर नयौ ॥ १ ॥

जै जे श्री गुर सुकल भक्त हित अवतरे ॥
कर्म ज्ञान कौं छांडि प्रेम पथ अनुसरे ॥
अनुसरे प्रेम सुपंथ दृढ आगम निगम जो कथि कह्यौ ॥
सुनि गिरा अगनिति जीव उधरे भक्त रस भक्तन लह्यौ ॥
लोभ रति शनुक्रोध कामी चरन परसत सवतरे ॥ २ ॥

जै जै श्री गुरु सुकल सहचरि प्रिया की सदा बसे वन कुंज चाह लखि पिया की ॥ पिया उर की जानि वपु वो प्रान एक सहज सदा दोऊ रस बस होत सजनी प्रेम रस छवि छकि मदा वो रात से विवचरनडोलै सुधि नहीं कछु जिया की ॥ जै जै श्री गुरु सुकल सहचरि प्रिया की ॥ ३ ॥

जै जै श्री गुरु सुकल मोहि सर्वसु दियौ ॥
उर से प्राननि प्रान निवारति सुष हियौ ॥
हियैं सुष हसि चाह सजनी जुगल हिय दरसायौ ॥
अंग अंग निचछुहु चाहत प्रीति सौं उर लाहियौ ॥
दई व्यासहि पीकदानी त्रास दम्पति हिय भयौ ॥ जै जै…॥४॥

\+ \+ \+

आज पिय काके हाथ बिकाने ॥
ताको भाग सुहाग छबीलो जाके उर लपटानें ॥
सुरत रंग की अंगनि उपमा दुरत न बनति वषानें ॥
उर नष अंगन सोहत मानौं ससि गन गगन समानें ॥
पीक लीक नैननि फिरि आई सोभितपल अलसाने ॥
मानौ अरुन पाट के फंदन द्वै षंजन अरुझानें ॥
अरुन अधर अंजन रस राचे परत नहीं पहिचानें ॥
मानो सरद सरि निसि के प्रात सुधा कन वारि निधानें ॥
वसन केस अंग राग रंगीले विगलित स्वेद सुवानें ॥
गंडनि मनि ताटंक अंक जनु रथ चकरैये वानै ॥
वाहत कुंडिल मकर थके जनु मनसिज कियौ पयानें ॥
सनमुष पाय न परत इतै थर कुंवर कहा अकुलानें ॥
लै धन चलत चोर लौं भोरहि पसमहि देख डरानें ॥
उघर गई सुलमा की वाजी स्याम कपट मन आनें ॥
कितव करत की आस व्यास सुनि बहुत लोग पछितानें ॥

\+ \+ \+

अथ साधन की विरह ॥ राग सारंग ॥

साचे साधु जु रामानंद ॥
जिन हरजू सौं हितुकर जान्यौ पौर (और ?) जानि दुष दंद ॥
जिनकौ सिष्य कबीर धीर अति सुमति सुरसुरानंद ॥
तिमि रैदास उपासिक हरि के सूर सु परमानंद ॥
इन तैं प्रथम तिलोचन नामा दुष मोचन सुषकंद ॥
पेम सनातन भक्ति सिंधु रस रूप राघवानंद ॥
अलि हर वंसहि फव्यौ राधिका पद पंकज मकरंद ॥
कृष्णदास हरिदास उपास्यौ वृन्दावन को चंद ॥
जिन विन जीवन म्रतक भये हम सह्यौ विपति को फंद ॥
तिन विन उर को सूल मिटै क्यौं जियै व्यास अति मंद ॥ ३३ ॥

॥ राग देव गंधार ॥

हतौ सुष रसकन कौ आधार ॥
विन हरवंसहि सरस रीति कौ कापै चलहै भार ॥
को राधा दुलरावै भावै बचन सुनावै चार ॥
वृन्दावन की सहज माधुरी कहि है कौन उदार ॥
पद रचना अब कापै ह्वैहै निरस भयौ संसार ॥
वड़ौ अभाग अनन्य सभा कौं उठिगो ठाठ सिंगार ॥
जिन विन दिन छिन जुग सम बीतत सहज रूप आगार ॥
व्यास येक कुल कुमुद चंद विन उडगन जूठौं थार ॥ ३४ ॥

॥ देव गंधार ॥

वैन छवि कोऊ कविन बषानै ॥
जीभ कुकाति प्रीति कहिवे कौं व्याकुल होत अयानैं ॥
अति अगाधि रस सिंधु माधुरी वेई पै कहि जानैं ॥
वार पार नहिं पावत विधि सिव सेष भगत श्रुति ध्यानैं ॥
कोटि कोटि जयदेव सरीषे कहत सुनत न अघानैं ॥
व्यास आस मन की को पुजवै श्री हरिवंस समानै ॥ ३५ ॥

॥ राग सारंग ॥

विहारहि स्वामी विन को गावै ॥
बिन हरवंसहि राधा वल्लभ की रस रीति सुनावै ।
रूप सनातन विन को वृंदा विपिन माधुरी पावै ॥
कृष्णदास विन गिरिधर जू कौ को अवलाड लड़ावै ।
मीराबाई विन को भक्तन पिता मानि उर लावै ॥
स्वारथ परमारथ जैमल विन को सक वंधु कहावै ।
परमानंद दास विन अब को लीला गाय सुनावै ॥
सूरदास विन पद रचना कौ कौन कविहि कहि आवै ॥
और सकल रसिकन साधन विन को कलिकाल कटावै ॥
व्यासदास इतनिन विन को अब तन की तपनु बुझावै ॥ ३६ ॥

॥ साध सिरोमन रूप सनातन ॥

जिनकी भक्ति एक रस निवही प्रीति कृष्ण राधातन ॥
जाकौ काज समारौ चित दै हित कीनौं छिन तानन ॥
जाकै विषै वासना देषी मनसा करी न नातन ॥
वृंदावन की सहज माधुरी रोम रोम सुष गातन ॥
सब तजि कुंज केलि भजि अहि निस अति अनुराग सनातन ॥

त्रिन तरु तै बीचे सहकर सु अमानि मान सहातन ॥
असि धाराघृत ओर निबाह्यौ तन मन कृष्ण कथा तन ॥
करुनासिंध कृष्ण चैतन की कथा फली दुह आतन ॥
तिन बिन ब्यास अनाथ भए अब सेवत सूखे पातन ॥ ३७ ॥

राग सारंग

रसिक अनन्य हमारी जाति ॥
कुल देवी राधा बरसानौं खेरौ व्रजवासिन सौं पांत ॥
गोत गुपाल जनेऊ माला सिषा सिखंडि हर मंदिर माल ॥
हिर (हरि ?) गुन नाम वेद धुनि सुनियतु मूंज पषावज कुस करताल ॥
साषा जमुना हरिलीला षटकर्म प्रसाद प्रान धनरास ॥
सेवा विधि निषेध जड़ संगति वृत्ति सदा वृंदावन बास ॥

विषय—

ब्यास जी श्री कृष्ण और राधिका जी के भक्त थे। अतः उनकी बानी का मूल विषय भी उक्त युगल मूर्तियों से ही संबंधित है। प्रस्तुत ग्रंथ में निम्नलिखित विषयों को लेकर पद रचनाएँ की गई हैं :—

(१) जुगल मूर्ति की वंदना
(२) गुरु
(३) साधु स्तुति
(४) साधु विरह
(५) यमुना स्तुति
(६) नाम कीर्तन
(७) वृंदावन स्तुति
(८) मधुपुरी स्तुति
(९) श्री किशोर और किशोरी जू की स्तुति
(१०) उत्तम साधक भक्ति के लक्षण
(११) साधक मध्यम भक्ति के लक्षण
(१२) कनिष्ठ प्रवर्त्त भक्ति लक्षण
(१३) भक्ति प्रशंसा प्रकरण
(१४) उपदेश
(१५) मनन विहार रस (राधा) स्नान, वस्त्रपरिधान, नेत्र, मुख, हास, उरोज, चरन, अंग, सोलह सिंगार, वयक्रम
(१६) लाल जू को वर्णन

(१७) जोरी जू को वर्णन, गान, भोजन विलास, बलैया, बतरस, कुंज बाग खेलन, वंशीवट के खेल, वेष पलट, आतुररस, आंख मिचौनी, रास, मान, सुरति

(१८) रास रसिक के पद

(१९) फुटकर दोहे

यह ग्रंथ जिस जिल्द में है उसमें कुछ अन्य ग्रंथ भी हैं। व्यास की बानी उसके आदि और अंत में है। बीच में कुछ अन्य ग्रंथ हैं। अतः बानी के पद और उसके विषयादि क्रम में बाधा पड़ी है। समस्त सामग्री का ब्योरा निम्नलिखित है :—

आरंभ में १ से ४२ पत्र तक	१७२ पद
,, पुनः १ से ५६ पत्र तक	२४८ पद
अंत में १ से ३९ पत्र तक	१११ पद ८७ दोहे

पदों की संख्या ५३१

दोहों की संख्या ८७

रचना उच्चकोटि की है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ से रचयिता के विषय में नवीन प्रकाश पड़ता है। सं० विवरण में इनको राधावल्लभी संप्रदाय का वैष्णव कहा गया है। परंतु इस कथन के आधार का उल्लेख नहीं है। मथुरा में भी कुछ इसी प्रकार का भ्रम फैला हुआ है। राधावल्लभी लोग इन्हें अपने मत का अनुयायी बतलाते हैं और गौड़ीय संप्रदाय के लोग अपने मत का। राधावल्लभियों का आधार कदाचित यह होगा कि व्यास जी ने श्री हित हरिवंशजी की प्रशंसा मुक्त कंठ से एवं श्रद्धापूर्वक की है। यह सत्य है कि व्यास जी ने श्री हित हरिवंश जी की अनन्य निष्ठा एवं कवित्व शक्ति की अत्यंत सराहना की है, परंतु उन्हें रचयिता का गुरु प्रमाणित करने के लिए इतना यथेष्ट नहीं। प्रस्तुत वाणी से स्पष्ट है कि व्यासजी के गुरु कोई 'सुकुल' थे :—

'जै जै श्री गुरु सुकल वंश उदित भयो'

यह प्रकट है कि हित हरिवंश जी सुकुल नहीं अपितु मिश्र थे (देखो—"हित हरिवंशचरित्र' भगवत मुदित कृत नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित)। वस्तुतः बात यह है कि व्यासजी अत्यंत उदार भाव के भक्त थे और उन्होंने अपने पूर्व तथा समकालीन अनेक भक्तों एवं आचार्यों को सहज एवं समान भाव से श्रद्धांजलि अर्पित की है। उद्धरणों में आए निम्न-लिखित नाम उल्लेखनीय हैं :—

श्री हरिवंश जी, श्री हरिदास जी, श्री रूपजी, श्री सनातन जी, कबीर, राम दे (? नामदेव), प्रबोधानंद, बिहारिनदास, सैन, धना, नामदेव, पीपा, रैदास, श्री रामानंद, गंगल भट्ट, सूरदास, परमानंद, मीरा।

एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साधु विरह के अंतर्गत इन्होंने कुछ भक्तों के लिये विलाप किया है जो संभवतः इनके जीवनकाल में अथवा इधर उधर थोड़े ही अंतर को लेकर गोलोकवासी हुए थे, वे हैं :—

रामानंद, त्रिलोचन, कबीर, सुरसरानंद, रैदास, सूरदास, परमानंद, पेम (क्षेम ?), सनातन, राघवानंद हरिवंश, हरिदास और रूप। इससे इनके काल का अनुमान किया जा सकता है। सं० विवरण के अनुसार ये सं० १६१२ वि० के लगभग वर्तमान थे।

कुछ लोग इन्हें वृंदावन में (खोज विवरण १९३८-४०) गौड़ीय संप्रदाय के अनुयायी बतलाते हैं जिसका आधार कदाचित यह है कि इनके वंशज उसी संप्रदाय के अनुयायी हैं। परंतु 'बानी' में इसका कोई आधार नहीं मिलता। श्री रूप एवं सनातनजी की प्रशंसा इन्होंने कोई विशेष प्रकार से नहीं की और न इन्होंने श्री चैतन्य देव का ही कहीं विशेष स्मरण किया है। ऐसी दशा में यह मत भी ग्राह्य नहीं हो सकता। अतः इनकी भक्ति भावना अत्यंत उदार और सहज थी ; हाँ, उसकी रूप रेखा वही थी जो वृंदावन के वातावरण (क्योंकि व्यास जी वहीं रहने लगे थे) में निर्मित हो सकती थी। अर्थात्, कवि जितना राधावल्लभी था उतना ही गौड़ीय और उतना ही टट्टी संप्रदाय का। उसके उपास्य राधा और कृष्ण थे। वह श्री वृंदावन के नित्य विहार का भोगी एवं माधुर्यभाव का उपासक था। उसने निम्नलिखित पंक्तियों में अपनी जाति का वर्णन किया है :—

रसिक अनन्य हमारी जाति ॥
कुल देवी राधा बरसानो पेरौ ब्रजबासिन सों पाँत ॥
गोत गुपाल जनेऊ माला सिषा सिषंडि हर मंदिर माल ॥
हरि गुन नाम वेद ध्वनि सुनियतु मूंज पषावजु कुस करताल
साषा जमुना हरि लीला षटकर्म प्रसाद प्रानधन रास ॥
सेवा विधि निषेद जड़ संगति वृत्ति सदा वृंदावनवास ॥

संख्या २५६ ख. रस के पद, रचयिता—व्यास (निवास स्थान— वृंदावन), कागज—आधुनिक, पत्र ४८, आकार—१० × ६.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)— १९४०, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० बा० बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति

अथ श्री व्यास जी के रस के पद लिख्यते

राग गूजरी

वंदे श्री राधा रवन मुदारं
वृन्दावन घन वीथिनु वीथिनु कुंजन कुंज विहारं

रसिक अनन्य सरन साधारन दासी जन परिवारं
श्याम शरीर गौर तन चीर पयोधर भूषण हारं
परिरंभन चुंबन धन संग्रह अधर सुधा आधारं
मंदहास अवलोकन अद्भुत उपजत मदन विकारं
सहज रूप गुन नागर आगर वैभव अकह अपारं
यह रस नित पीवन जीवन ही व्यास विसर संसारं

पत्र ४८ (पृ० २०९) से उद्धृत

अंत—

सखी अनुसरत स्याम रिसात
समझि अनादर रसिक उजागर कंठ उर लपटात
नेक टेढ़ी भौंह के उर नैन नीर चुवात
मनहु मुक्ता चुनत बाल मराल ······नमात
मनहु कंचन कमल के रस लोभ अलि उरझात
वदन चुंबन करत वरवट सुनत परिभव बात
कुटिल लोचन देत तिहि छिन श्रवन सम जल जात

—अपूर्ण

विषय—

इन रस के पदों में श्री कृष्ण लीला का वर्णन है। गीतों का विषय क्रम इस प्रकार है :—

(१) अथ प्रात सेज्या विहार
(२) वेणी वर्णन
(३) अथ षोड्स शृंगार वर्णन
(४) लड़ैती जू को वहि क्रम वर्णन
(५) जोरी जू को सनेह वर्णन आदि।

संख्या २५६ ग. पद-संग्रह, रचयिता—व्यास निवासस्थान—वृंदावन, पत्र—२४, आकार—१० × ६'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६०, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बा० बालकृष्णदास जी, चौखंभा, बनारस

आदि—

५७ वें पृष्ठ से उद्धृत :—

मन छूटतहि धर्म न छूटै।
जीवत मरत न माया छूटै काल कर्म मुख कूटै॥
पुत्र कलत्र सजन सुख देव पितर सब लूटै॥

कबहूँ रंक राजा कबहूँ दै विषय विकार न छूटै ॥
साधन सूझै गुनहि न बूझै हरि रस जस नहिं घूंटै ॥
व्यास आस घर घालै जग कौ दुःख सागर नहिं फूंटै ॥ १५४ ॥

॥ राग सारंग ॥

हरि बिन सब सोभा सोभा सी ।
अंजन मंजन पति बिन सीठो ज्यों मटके मस वासी ॥
अंधरि काजरि नकटहि बेसर टूटहिं पहुँची हासी ।
हीन पुरुष त्रिया बाँझ वृथा मुद्र लटकन मति वासी ॥
कुटीपह मुदरी बूचहि कुंडल केस बिना आकासी ।
दासी लीन कुलीन कामिनी कंचन रति सन्यासी ॥
स्यारहि राज नरन में सोहै जैसे राज बिमासी ॥
व्यास स्याम बिन सब असमंजस जैसे धनक बिनासी ॥ १५५ ॥

अंत—

१०४-१०५ वें पृष्ठ से उद्धृत :—

ये दिन अब ही लगत सुहाए ।
जब लगि तरुन तिरीछी चितवनि फिरत विषै को धाए ।
उठ उठ चलत गोष्ट में बैठत जंगी भंगी भाए
मोतिन माला कनक आभूषण रुचि रुचि बहुत बनाए ।
तजि कुल बधू औगुननि गहि रहि लै विस्वनि पहिराए
मन मन वसी मसखरीनि ऊपर महिसिन दूध खवाए
खाटो मठा कठिन भक्तन को भोगन खोवा खाए
लोक लाज को तन मन अर्प्यो हरि हित दाम न लाए
परमारथ को नहि थेगरी विमुखन जर कस पहिराए
अबल बदल ह्वै है दिन दस मे जरा जौगरिनि छाए
अब तो चपल बुढ़ापौ आयो रोष दोष तन नाए
अजहूँ सुमिर चतुर्भुज प्रभु कौ ह्वै है काम कहाए
"व्यास दास" आस चरननि की विमल विमल जस गाए

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ में ज्ञान वैराग्य तथा भक्ति के पद हैं। कहीं कहीं पर वर्ण्य विषय का निर्देश भी किया है, जैसे—अथ सिद्ध अवस्था, अथ कनिष्ट भक्त अवस्था, अथ कुटुम्ब उपदेश आदि। परन्तु ये निर्देश विषय के बाह्य रूप मात्र हैं। इनके अंतर्गत भाव ज्ञान और वैराग्य से ही संबंध रखते हैं।

संख्या २५६ घ. फुटकर दोहे, रचयिता—व्यास (निवास स्थान—वृंदावन), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० बा० बालकृष्ण दास जी, चौखंभा, बनारस

आदि—

हरि हीरा गुरु जोहरी व्यासहि दियो बताय ।
तन मन आनंद सुख मिले ते दुख जाय ॥ १ ॥
आदि अन्त और मध्य में गहि रसिकन की रीति ।
संत सबै गुरु देव है व्यासहि यह परतीति ॥ २ ॥
"व्यासहि" ब्राह्मन जिन गिनौ हरि भक्तन कौ दास ।
श्री राधा वल्लभ कारने सही जगत उपहास ॥ ३ ॥

अंत—

साधुन की सेवा किए हरि पावत संतोष ।
साधु विमुख जे हरि भजै व्यास बढ़ै दिन रोष ॥ ८४ ॥
जिनके मुख गोपाल जी पावन हरि गुन गीत ।
तिनकौ जुग जुग जानिवौ व्यास दास के मीत ॥ ८५ ॥
स्वान प्रसादें छुइ गयो कढवा गयो बिटारि ।
दोऊ पावन व्यास के कहत भागवत विचारि ॥ ८६ ॥

विषय—

व्यास रचित ८६ दोहों का संग्रह है । ये दोहे विविध विषय के हैं । कहीं ज्ञान और वैराग्य की चर्चा है और कहीं वृंदावन की महिमा का वर्णन ।

संख्या २६० क. दानलीला, रचयिता—पंडित ब्रजराज (निवास स्थान—काशी), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६'८ × ५'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १९११ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० बा० मुंशीलाल जी, कटरा, इलाहाबाद

आदि—

॥ स्री गनेस जी सहाए ॥
॥ स्री पोथी दान लीला ॥

प्रभु पुरन बंस अषंडा । जाके रोम कोट ब्रह्मंडा ॥
जब सरगुन ब्रह्म कहाए । मथुरा ते वींद्राबन आए ॥
जह देव लोक सब जेते । भव गोप गुआलीनी तेते ॥
देवकी सुत नाम धराए । बसुदेव ही रूप देषाए ॥
तब गोकुल ईछा कीन्हा । बसुदेव ही अग्यो दीन्हा ॥

अंत—

छंद

कीस्न घंट बजाई आरती जोत वंदन सब करै ॥
'व्रीजराज पंडित' प्रसाद पावै जन्म जंन्म को दुख हरै ॥
जो नर गावै दान लीला सूनही और सुनावही ॥
अनेक जन्म को पाप नासै व्रोस्न लोक सीधावही ॥

स्मंपुरंन

इति स्री पोथी दान लीला स्मंपुरंन तमाम सुद

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम दानलीला है। इसमें श्री कृष्ण के गोपियों से दान माँगने की कथा का वर्णन है। यह दोहा चौपाई छंदों में रचा गया है।

संख्या २६० ख. दानलीला, रचयिता—व्रजराज पंडित, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—७'८ × ५'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० ला० लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, सोरांव, जिला—इलाहाबाद

आदि—

स्री गनेसजी सहाये नमः स्री सुरसती जी सहाए नाम्हां ॥

स्री पोथी दानलीला ली (खते)

दोहा

चलो सषी जहा जाइ तांहा बसत बीरज राज।
गोरस बेचत हरी मिले एक पंथ दुइ काज ॥

परभु पुरन ब्रह्म अखंडा। जाके रम कोटी व्रह्मंडा ॥
जब सरगुन ब्रह्म कहाए। मथुरा से बीद्रबन आए ॥
जहां देव लोक मुनी जेते। सभ गोप गुवालिनी तेते ॥
देवकी सुत नाम धराए। बसुदेव ही रूप देखाए ॥

अंत—

स्री कोस्न घंट बाजाइ आरति जोती बंधन सभ करी ॥
ब्रीजराज पंडीत प्रसाद पै जन्म जन्म के दुख हरी ॥
जो नर गाय ही दान लीला सुनही जो चित लांवही ॥
सो नर पावही प्रेम पद को बीसुन लोक सीधावही ॥

इति स्री दानलीला समपुरान भाइल सो सही सही सही साकीन तोपखाना बाजार माह अगहन सुदी ४ समत १९३९ बीक्रमादीत दस्तक गानेस राम ॥

विषय—

प्रस्तुत 'दानलीला' में भगवान कृष्ण तथा गोपियों की प्रेमलीला की कथा वर्णित है।

संख्या २६१. व्रजविलास, रचयिता—व्रजवासीदास, कागज—देशी, पत्र—३१९, आकार—९$\frac{3}{4}$ X ७$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८१२, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जर्जर), पद्य, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल--सं० १८२७, लिपिकाल—सं० १८८४ वि०, प्राप्तिस्थान—जयानंद मिश्र, बालू जी का फर्स कथास्थान नं० $\frac{3}{4}$$\frac{4}{5}$, रामघाट, काशी

आदि—श्री गणेशायनमः श्रीकृष्णाय तुभ्यं नमः अथ कृष्ण चरित्र व्रज विलास कथा लिख्यते।

॥ सोरठा ॥

होत गुनन की खान जाके गुन उर गनत ही :
दवो सो दया निधान वासुदेव भगवंत हरि ॥ १ ॥
मिटत ताप त्रै त्रास जासु नाम मुखते कहत।
वंदौ सो सुभरास नंद सुअन सुंदर सुखद ॥ २ ॥
अरुन कमल दल नयन गोवृन्द मंडन सुभग।
करहु सो मम उर ऐन पीतांवर वर वेनु धर ॥ ३ ॥
वंदौ जगत अधार कृष्णाग्रज बलदेव पद।
अभिमत फल दातार नीलांवर रेवति वरन ॥ ४ ॥
श्री गुरु कृपानिधान वंदौ पद महि माथ धरि।
जासु वचन जल जान नर चढ़ि भव सागर तरहिं ॥ ५ ॥
वंदौ संत कृपाल पद सरोज रज राखि सिर।
जगहित रत सुभमाल जिन्ह निज गुन हरि बस कियो ॥ ६ ॥
पुनि वंदौ व्रजदेस परम रम्य पावन परम।
महिमा जासु सुदेस राधानाथ बिहार थल ॥ ७ ॥

॥ चौपाई ॥

प्रथम कृष्ण को तात मनाऊं, श्री वसुदेव चरन सिर नाऊं।
बहुरि देवकी पद जलजाता, वंदन करो कृष्ण की माता।
इन्हते और कौन बड़भागी, ब्रह्म धरयो नरतन जेहि लागी।
वंदौ नन्द महर के चरना, सहित जसोमति मंगल करना।
जिन्ह की महिमा भाग्य बड़ाई, निगमागम सिव सारद गाई।

वंदौं रोहिनि पद जल जाता, कृष्णाग्रज बलदेव की माता।
कीरति युत वृषभान गोपवर, वंदौं चरण कमल रज सिरधर।
चरन कमल उरधार श्री राधानन्दलाल के।
सुंदरदास आगार ब्रज विलास अब वरनि हौ।

॥ चौपाई ॥

संवत् सुभ पुरान[१८] सत जानौ, तापर और नछत्रन[२७] आनौ।
माघ सुमास पच्छ उजियारा, तिथि पंचिमि सुभग ससिवारा।
श्री वसंत उत्सव दिन जानी, सकल विस्वमन आनन्द रानी।
मन मे करि आनद हुलासा, "ब्रजविलास" को करौं प्रकाशा।
वंदौ प्रथम कलपद्रुम नीके, श्री वलभ आचाराज जी के।
श्री लछिमन भट कुँवर उदारा, जन उधारन हित अवतारा।
मायावाद मिटाय अनेका, कियो प्रेम सागर इद एका।
श्री गोकुल बसि सुख उपजायो, कृष्णनाम को ध्यान चलायो।
द्वादस चौपाई प्रति दोहा, तहाँ पुनि एक सोरठा सोहा।
कहुँ कहुँ सुभ छंद सोहाये, भाषा सरल न अर्थ दुराये।

अंत—

यह ब्रजविलास हुलास हि सो नर नारि सुनहि जे गाय हैं।
सीखहि सिखावहि पढ़हि रुचि करि प्रेम मन उपजाय हैं।
धारि भाव भरताकृष्ण सो उर कमल पद चित लाय हैं।
हरि राधिका परसाद ते वृज गोपिका गति पाय हैं।
पूरन सकल मन काम सब सुख धाम जस नन्दलाल को।
दरन दारिद दोख दुख भौभै हरन जम काल को।
यह जानि गावहि सुजन गायो जिन्हन्ह आनंद पद लह्यो।
तिन्ह की कृपा जल पाय येक "दास ब्रज बासी" कह्यो।

॥ दोहा ॥

"ब्रज विलास" वृजराज को को कहि पावै पार।
भक्त भाव गावत भगत भजन प्रभाव विचार ॥ ८८२ ॥
दोहा आठ सै और अठासी आहि,
है तेतने हीं सोरठा ब्रज विलास के माँहि ॥ ८८३ ॥
सब को नुष्टुप छन्द करि दस सहस्र परिमान।
खंडित होन न पावही लिखियो जानि सुजान ॥ ८८५ ॥
विधि निषेध जानै नहीं कछु ब्रजबासी दास।
ज्यौ जानै त्यौ राखि हैं नंद नदन की आस ॥ ८८६ ॥

नहिं तप तीरथ दानबल नहीं कर्म व्यवहार।
वृजवासी के दास को वृजवासी आधार ॥ ८८७ ॥
वृजवासी गावों सदा जन्म जन्म करि नेह।
मेरे जप तप यहै फल दीजे पद रज येह ॥ ८८८ ॥

इति श्री वृजविलासे सब सुखरासे भक्ति प्रकासे कृत वृजवासी दासे दास हरि राधा प्रसादे समाप्तं सुभ संमत १८८४ माघ मासे कृष्ण पक्षे सनिवासरे तिथि १० लिखितं राधा माधो समीपे गंगा निकटे दसखत कमल राम कं ❀ ❀ ❀

विषय—
श्रीकृष्ण चरित्र एवं उनकी लीलाओं का वर्णन। ग्रंथ में निम्नलिखित प्रकरण हैं:—
वसुदेव देवकी व्याह।
वसुदेव का गोकुल गमन
पूतना वध
कागासुर वध
तृणावर्त्त वध
बाल चरित्र
यमलार्जुन वृक्ष भंजन
वत्सासुर वध
बकासुर वध
अघासुर वध
राधा आगमन
धेनुकासुर वध
कालीदमन
प्रलंबासुर वध
चीर हरन
गोवर्धन धारण
वृज में रासलीला
गोरस लीला
अंतरधान चरित
मान चरित्र
मथुरा आगमन
कुबिजा उद्धार
गोपी बिरह वर्णन
उद्धव गोपी सम्वाद
द्वारिका चरित्र

संख्या २६२. गोपाल लालजी काशी पधारे सो प्रकार, रचयिता—सिवदयाल (निवास स्थान—दुर्गाकुंड, काशी), कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—५ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२५, पूर्ण, रूप—सुंदर, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः

श्री गोपीजन वल्लभो जयती श्री गोपाल लाल जी काशी पधारे सो लिखितम् । १

येक समै आप हमारे बाग में पधारे हते ॥ श्रीमन् गिरधर जी महाराज ॥ ५ ॥ सो आज्ञा किये मिती अगहन वदी ५ संवत १९३१ को मडलाल की मारफत एक रुका आयौ कि श्री स्यामा वेटी जी की अग्या किया ॥ सन् १७८७ के भादो वदी १ को सभाराम तेवारी पधराय लाये ॥ आपने हमसों कृपा करके पूछी । सो हम जो सुने हते सो लिखो है । श्री गोसांई जी आप परदेश सिधारे गुजरात पधारे । राना जी के गांव में पधारे तासमै लाड्वाई सेवक भई ॥ श्री गोपाल लाल जी को पाट वै गये ॥ जोजनौजँ मो ॥ प्राचीन पूजा होती हती ॥ जवराय पिथौरा चक्रवर्ती भयौ । वाके डर सों दिल्ली सों राना जी के बड़े भागे । सो जनानन के संग आये हते । सोऊ नहीं को यारः बडावे सेवा पधराई आपने महल में बड़े बिभौ सेवा किय ॥ कोई दिन पीछे श्री गोकुलेस जी भी गुजरात पधारे । तब वाई जी ने सब मंडान देखायौ ॥ सोने की झारी पर नेवरान हतो तब आपने अग्या करी की झारी की जलता तो होत है ॥ ताने सात को नेवरा चढ़ावो । १ वहोत दिन पिछे जब वृद्ध भई तब श्री गोपाल लाल जी को लेके श्री वृजवास करिवो को आंई । कछू दिन पीछे श्रीगोकुल जाये के वड़े पुत्र श्री गिरधर सों कही कि तुम्हारे पिता के ठाकुर हमारे पास विराजते है आप लैकर सेवा करो ।

अंत—

फेर विनती करबे को विचार करवे लगे कि आप अग्या किजे वृजनाभ जी के पंडवन विनती करी की इहा की राज्य दिल्ली की आप करो हम उत्तराखंड जावेंगे राज आपके दादा जो श्री कृष्न को हमको दिये है तब वृजनाभ जी ने कही हमारे वड़ेन ने तुमको राज्य पर वैठायो सो हम कैसे फेर लेए अवराज कियौ तो आपके पुत्रन को है और जहां कहौ तहां रहे तब अरजुन ने कही की उग्रसेन को राज को तो आपकी योग है क्यौकी श्री कृष्न के नाना जीहते तब वृजनाभ जी चुप हो रहे सो सुन के पांडव अछोमकुत सादाई को जाभांत पधराये ताही भात श्री वृजनाभ को हाथी पर वैठाये । आप पाछे वैठ चमर करते अगाडी पिछाडी ते चतुरंगनी सेना लै श्री मथुरा मंडल मे आये श्री वृजनाभ जी को गद्दी वैठ गये । राजनीत सबकर आप दील्ली फेर गये श्री वृजनाभ मथुरा मंडल में अच्छी प्रीत ले किये । वृज के सब अस्थान प्रगट किये श्री गिरिराज गौरीराज श्री जमुना जी थुरवा प्रमान सब

गाव वसाए तीरथ सव प्रगट किये सरूप भी सब ठेकाने पधराये श्री दाउ जी वड़े वाही समै केहते वीच में धरती में अतर धन भयो पाछे श्री गोसांई जीवन जात्रा में पीवर तरे भोग्य धरे तव वैस्नौ ने पूछी तव आप दाऊ जी बनायौ सो पाछे श्री गोकुलेश जी वाहर पधरायौ सेवा को मंडन कियौ से आज पर्जन्त विराजत हैं वृजनाभ जी के पधराये सरूपन में वड़ो चिमत्कार है ऐसे आज्ञा करत करत वहुत प्रसन्न भये छव देखवन आवै तव हरी कीस्नदास सुनको लीखो वड़े आनंद ते मिती वैसाष वदी ५ संवत् १८७६ साल दुरगाकुंड के वाग में दसकत सिउदयाल माली हमारे वाग को श्रीमन् सामा वेटी जी के चरनारविंद पेढ़िया की कोटिन कोटि दंडवत् जो वड़ेन के श्रीमुख सो सुनी हती सो लिखो है । ग्वालदास साह को पुर्जा प्रायौ सो जहा की जोगता हती तहां लिखो है ।

इति श्री समाप्तं सुभमस्तु ॥

विषय —

वल्लभ संप्रदायियों के आचार्य श्री गोपालनाल जी की काशी यात्रा वर्णन का शीर्षक देकर उनका इतिहास पूरा वर्णन किया गया है । साथ ही साथ अन्य भक्तों का भी वर्णन है ।

संख्या २६३ क. गुरु अभ्यास, रचयिता—स्वामी शिवनारायण (निवास स्थान — चंदवार, जि०—बलिया), कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—७½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १७९१ वि०, हि० सन् ११४५, प्राप्तिस्थान—श्री नकछेदी राम वर्णकार, स्थान—सरयाँ, पो० -कोरंटाडीह, जिला—बलिया

आदि—

सबद ग्रंथ गुरु अभ्यास ॥ ग्यान दीपक प्रथम आरंभ होत सही संतस मही संत संत

॥ दोहा ॥

करत सभगुन कारका गुन कारन भी भार ।
स्रीसटी सवारन चारीफल चालु चलन वेवहार ॥
चरचा ताकी जे सुनै चौरासी से वांचु ।
गुरु वीन से नही पावई वीनु गुरु मीलत न सांच ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु अभ्यास कहत जब ग्यानी । तब गती मुकती होत है प्रानी ॥
गुरु की सबद पाए होए संता । वीनु गुरु सबद न पावत अंता ॥

+ × +

संमत सत्रह[१७]से ऐकानवे[११] होई । ऐगारह[११]सै सन पैतालीस[४५] सोई ॥
अगहन मास पछ अजियारा । तीरथ तीरोदसी सुकर संवारा ॥
तेही दिन निमएऊ कथा पुनीता । गुरु अन्यास कथा समहीता ॥
साह महंमद दीली सुलताना । कासी छेत्र आगरे है थाना ॥

॥ दोहा ॥

तेही समै मो सीव नाराएन बंग देस चली आऊ ।
कंठ वैसी सरस्वती कथा अन्यास बनाऊ ॥
जन्मभुमी है कनउज देसा । क्रम वसीते वंग परवैसा ।
तीरथ परआग सुवा जे होई । तेही के अमल गाजीपुर सोई ॥
गाजीपुर सरकार कहावै । सुवे परआग आंमल सें पावै ॥
जहुरावाद परगना आंही । आसकरन तापा तेही मांही ॥
से आसथान चंद्रवार कहावै । "सीवनाराएन" जन्म तांहा पावै ॥
जन्म पाए औ गुर के माआ । तव आन्यास अस काथा वामाआ ॥

॥ दोहा ॥

आस पास चंद्रवार माँहा गाजीपुर सरकार ।
बुंद नारवर्नी कहत सभ वाघराए के वार ॥

॥ चौपाई ॥

दुषहरन नाम सें गुरु काहावे । वड़े भाग सें दरसन पावै ॥

॥ दोहा ॥

तीन्ह के चरन के चीत धरे औ "सीवनाराऐन दास" ।
दुष हरन नाम के सुमीरते पावत नीश्चल वास ॥

अंत —

॥ दोहा ॥

जोग जाप जहां तहां करे जहां तहां मारत आए ।
कहीं देषत परवन नाही कहीं रहे भाटा का खाए ॥
जन्म मरन संसारा मांहा कही कही वांचन आए ।
गुरु परताप से "सीवनराएन" साधु संगती माहा पाए ।
घर छाए अंधीआरा औ उजिआरे सव पाए ।
नेकी वदी के कारने सव घट रहत छपाए ॥
रंग रूप रेखा नाही करत जगत उजियार ।
सत गुर मीले तो पाइए वीनु गुर पाउ ना पार ॥

से गुन अपरमपार हए "सीवनाराएन दास"।
द्रीस्टी नीहारत ताही यहा पावत नीस्चल बास ॥
नवौ नाम औ एक ते दसो नाम के हाथ।
सीवनाराएन तोहारे सदा रहो मै साथ ॥

इति श्री सबद ग्रंथ सम्पुरनो ग्यान दीपक संत सही संत पार।

चौपाई—१८५२
दोहा—१६७
इसलोक—१२

विषय—

अनेक दृष्टांतों द्वारा ज्ञानोपदेश किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—

गत मास यह ग्रंथ रतसंड में विवृत हुआ है; किन्तु वहाँ की प्रति इतनी शुद्ध नहीं थी जितनी प्रस्तुत प्रति है।

संख्या २६३ ख. गुरु अन्यास कथा, रचयिता—शिवनारायण स्वामी (निवास-स्थान—चंदवार) कागज—देशी, पत्र—७९, आकार—११ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८२, पूर्ण,रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, रचनाकाल—संवत् १७९१ वि०=सन् ११४५ हि०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोरजी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि—

शंतशरन ॥ अथ गुर अन्यास कथा आरंभ होत शे सही ॥

॥ दोहा ॥

करता सब गुरु कारका गुन कारन औ भार।
भ्रीस्टी सवारन चारी फल चाल चलन बेवहार ॥
चरचा ताकी जे सुनै चौरासी से बाच।
गुरु बिन से नहीं पावइ बिनु गुरु मिलत न साच ॥

॥ चौपाइ ॥

गुरु अन्यास कहत जब आनी। तब गती मुक्ति ते होत है प्रानी ॥
गुरु के शबद पाय होए संता। बिनु गुरु शबद न पावत अंता ॥
गुरु की कृपा ते परी कीछु बूझी। औ अनुसार पथ पर सूझी ॥
क्रीपा कीन्ह तब आदि कुमारी। कंठ बैठी ग्यान हेत भारी ॥
ग्यान होत तब अगम अपारा। तब अन्यास कथा अनुसारा ॥
संमत सत्रह[१७] से एकानबे[९१] होई। एगारह[११] शै कै सन पैतालीस[४५] सोई ॥

अगहन मास पछ उजियारा। तिथी श्रोदशी शुक्र से बारा ॥
तेही दिन नौमैड कथा पुनीता। गुरु अभ्यास कथा सभ हीता ॥
शाही महम्मद दिल्ली सुलताना। काशी छेत्र अगर अशथाना ॥

॥ दोहा ॥

तेही समै मो शीवनरायेन वंग चली आऊ।
कंठ वैठी सौरुती कथा अन्यास बनाऊ ॥

॥ चौपाई ॥

जन्म भूमी है कनउज देसा। करम वशी ते वंग प्रवेशा ॥
तीरथ पयाग सूवा जेई होई। तेहि के अमल गाजीपुर सोई ॥
गाजीपुर सरकार कहावै। सुब प्रयाग अमल शे पावै ॥
जहुराबाद परगना आही। आश करन तश तेही माही ॥
शे अस्थान चंदवार कहावे। शीवनारायेन जनम तहा पावे ॥
जनम पाये भौ गुरु की माया। तव अभ्यास अस कथा बनाया ॥

॥ दोहा ॥

आस वास चंदवार मंह गाजीपुर सरकार।
कुद नौरवनी कहत सव वाघराय के वार ॥

दुखहरन नाम से गुरु कहावै। वडे भाग से दरसन पावै ॥
तिनका चरन के चित धरै भौ 'शिवनारायन' दास।
'दुपहरन' नाम के सुमिरत पावत निश्चल वास ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु कै नाम हिए मह राषी। एही विच संत सभा केहु भाषी ॥
गुरु के शबद हिए मह गहेऊ। शीवनारायन चली तहां भयेऊ ॥
चली फिरि के देखत सवसारा (संसारा ?)। जानत घट घट गुरु पियारा ॥
एक दिन संत सभा मह गयऊ। चरचा शबद होत तहां रहेउ ॥
चरचा सुनत बहुत सुख पाई। शीवनारायन सुन मनलाई ॥
सुनत सुनत मोर मन पतिआई। दीवी ग्यान तव चित मह पाई ॥

× × ×

कहत कि गुरु विशन सम जाना। जानहु अंश एक नहीं आना ॥
गुरु के सुमिरत विशुन सहाई। विनु गुरु दया विशुन नहीं पाई ॥

मध्य —

वस्तु परारी ना आपना देखत नाही सवसार (संसार ?)।
आगे नदी अवघट देखी घोर जीव शोच अपार ॥

सुनहु चोर मन भयेऊ गुनाना। देखी अगम जल जीव डेराना ॥
भयेउ शोच वसि वैस किनारे। कहै को जल मोही कवन उतारै ॥
नाही देष्यौ नाव ना देष्यौ बेरा। उतर चाहौं सहज सवेरा ॥
बस्ती ापरारी से जो आवै। तब कैसे कै निवंह पावै ॥

अस गुना न जीव चोर कै वस्तु परारी जानी।
पाछे साहु जानी कै संकट परा जीव आनी ॥

अंत —

पीछा पंछी वैठी कै प्रीति से लेत निवास।
बिछूरत बार न लागई कहु ताकर कवन विश्वास ॥
जनम जनम की प्रीती है से छन महं देत बहाई ॥
शीवनारायेन कहत प्रभु से काह करत पछिताई ॥
काह कहौ एह सुंदरी एह कै बड़ा सदेह।
जो चाहो असे धरै तो नाही मानत देह ॥
पंथ विचारा बावरा सुनु प्रिया ज्ञान गंभीर ॥
पलक न तजत विश्वास कह तब पावत से धीर ॥
स्वामी सांचे सेइये पलक न लावत भोर।
तब ही संगी होत है पही सपती के शोर ॥
घरै चाहे जो पिया के तौ राखत विश्वास।
गुन गंभीर है ताही को शीवनारायन दास ॥
तुह एह देवीदंम संग मद्रा रहो उर माह।
गुरु शबद ते शिवनरायेन गहो तोहरो बांह ॥
रश ओन्ही देव समातु है हीआ पुलकित मन चैन ॥
शीवनरायेनदास होए कही पठए प्रीति वैएन ॥
गुरु अन्यास कथा संपुरन तैयार भईल शे शही।
दोहा १६७ चौपाई १४११ असलोक २६ मीजान १६०४

विषय—भक्ति और ज्ञान का उपदेश किया गया है। इसमें निम्नलिखित खंड हैं :—

(१) मंगलाचरन, ग्रंथ परिचय तथा ग्रंथकार का परिचय वर्णन

और साहु खंड	पत्र १ से १९ तक
(२) चोर खंड	पत्र १९ से २५ तक

(३) कामिनी खंड — पत्र २५ से ४१ तक
(४) जमु खंड — पत्र ४१ से ५४ तक
(५) भक्त खंड — पत्र ५४ से ६४ तक
(६) दश अवतार खंड — पत्र ६४ से ७९ तक

रचनाकाल

संमत सत्रह सै एकानवै होई।
एगारह शै के सन पैतालीस सोई॥
अगहन मास पछ उजियारा।
तिथी त्रोदशी शुक्र संवारा॥

विशेषज्ञातव्य—हस्तलेख में लिपिकाल नहीं दिया है। ग्रंथ के अनुसार स्वा
शिवनारायणजी के पिता का नाम बाघराय था। इनके पूर्वज कन्नौज से चंदवार ग्राम आये थे। उस समय यह ग्राम प्रयाग सूबा में गाजीपुर सरकार (जिला) के अंतर जहूराबाद परगना में था। दिल्ली के सिंहासन पर मुगल बादशाह मुहम्मदशाह था ग्रंथकार ने चंदवार स्थान को बंगदेश का भाग माना है। विशेष पता लगाने पर ज्ञ हुआ कि स्वामी शिवनारायण जी रतसंड में भी निवास करते थे। चंदवार रतसंड से कोस पर है। मृत्यु चंदवार में ही हुई। इनके बनाये हुए केवल बारह ग्रंथ कहे जाते जिनके नाम इस प्रकार हैं :—

(१) गुरु अन्यास कथा
(२) बानी
(३) संतसागर या संत विलास
(४) शब्दावली
(५) संताखरी
(६) रूपसरी
(७) संत सुंदर
(८) संत सुंदर
(९) संत परवाना
(१०) संत हुक्मनामा
(११) खब
(१२) टीका

विवरण में भी इनका उल्लेख हुआ है। इस समय इनका पूर्व वृत्त मिल गया है
इनके जिन ग्रंथों के विवरण लेने अभी शेष हैं उनके विवरण लिये जा रहे हैं।
१० तथा १२वीं संख्या के ग्रंथ गद्य में हैं जिनकी भाषा अवधी है।

संख्या २६३ ग. टीका, रचयिता—शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंदवार), कागज—देशी, पत्र—३, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि—

सवाल जबाब को टीका श्रभ होत ॥
कैसे होवे उजीआर पुत्र करो दसी आफतों ।
केह प्रकारो नीगाह ज्ञान दस्टी कर माह ॥
सफा होवे केहि हेतु ते अकुफ सहुर जहुर ।
कैसे होत सहुर गर्भी अकीली दनाई पहुची धरो ॥
कैसे पहुचे थीर रहै मन के वसी करी लेत ।
मन वसीहो ये केहि भाती ते हरदम राषो चेत ॥
कवन चेत से मै छुटै हरदम राषै चेत ।
फहम ज्ञान के राह से चला जात जांहां तख्त ॥
तष्त जाने का भेद का इआदी राषै सभ बात ।
मीलै इआदी से कवन गुन सब्द साच रषु गात ॥
कवन सब्द कै सेव सै गुरु सब्द सभ देह ।
राह कवन का दरसहि देपुहीआ करु नेह ॥
कवन काम कैसे रहै साँच सत्य रापु नीती ।
कवन सुती कहवा रहे गहै आकासे सेत ॥
कहाँ ताल से का करे रूप षोजो घर जाये ।
रूप कवन कैसे देषे अपनो रूप बनाये ॥
कवन काम करें काहि नीसी कवन सुरती मनावै ।
नाम गत चढो पार संत कवन है भृंग मत है ॥
पंथ कवन नोराधार चाल कवन समुद सचल ।
रहनी कवन नीरमोह ॥
तोजन कवन अकुफ सहु रषु । तेजिये का पर द्रोह ॥
कहीये का साचा कहो । करीये का सत संग ॥
सुनिये का गुरु सब्द देषीये का निजरंग ॥
जपीये का प्रीत बात नीज रूप अषु ।
पेषीये का नीजगात कीजिये का गुर मंजन ॥
दीजीये का मींया बाम गहीये का गुरध्यान ।
महिये का गुर सब्द लहीये का सोभा ॥

सेहिये का बहु सब्द धरीये का धीरज।
धारीये का इजिआर जानीये का जीव जान॥
जाई कहां भौ पार बैसीये कहां घर आपना।
रसीय का भै भंजन पीयार कवन जे मन भावई॥
हुआर कवन सुर सजन अभर कवन जहाँ घर नहीं।
डर कवन डरना है अदग्य कवन दागी नहीं॥
मील कहा सभ माह प्रेम कवन जे सभ चाहै।
सुजस कवन सभ मानै रोपीये का गुन संपुरण रापु॥
जानीये का जीव जानु जाये कहा सभ के पार।
बैठीये कहा नीज तप्त पर जीतीये का बाजी जीतौ॥
कवन समै यहि बष्त नवी कवन मोह भर्म।
नाव कवन नीज नाव कर्म कवन कहीते जो॥
सुरती कहां निजधाम केवट कवन गुर ज्ञान वसु।
षेवै कवन करनी करो उतरै कवन सभसो साँच॥
कहा करो रोस न धरो मकसद का मुदा मिले।
मुदा का सुषवास सुषवास का सषिन में रस करै॥
रस का संत विलास कैसे गुन सभवसी करै कैसे छुटे फंद॥
का चीन्ह नेह सत गुर चीन्हौ का वसी करी आनंद।
कैसे मिले जल लवनी सम सभ कर्म कैसे छुटै आसा तजै॥
का जाने सभ भर्म भोगे का गुन आन्तरस।
पाये का आन्त प्रकार द्रौद्रस कवन सब्द मथु॥
कैसे मथे मीरुआरें कानीवरे ब्रह्मंड गहे।
करु अमल का कारना जारी करो कैसे होये अदल चलो॥
रापै कवन रापु फुरस्ती दिल का हुम बनावे।

का परीषत तु परषी लेहु॥

टवर कौन येहि दाव का धरीय सब्द वीचार करु।

का पकडी ले नीज प्रेम॥

केहि कामना रस करे कर्म कवन सुष नेम।
एक कवन घटत नहीं दुइ कवन संसार॥
तीन कवन मन वच कर्म चारी कवन धरती तार।
पाच कवन अमल करत तु पर छव का षट रस राग॥
सात का सत गुरु कहो आठ कवन दुराचार।

नव का नय चलु सवन्ह से॥

दस का दाता होये एक दस लवे एक।

द्वादस वैठे सोई त्रैदस का श्रीसुना तजो ॥
चौदह का जभु छाडू पंद्रह प्रेम पहिचानी ले ।
सोरह सुत संग छाडू सत्रह का सती रापु चल ॥
अठारह अठक छाडउ उनईस कर्म वीसारी दैं ।
वीस वीस होए जाये एकइस का होय एक रस ॥
बाईस वैइठैहुठ वर तेईस तोरहु जंजाल ।
चौवीस छांडहु वैयेर पचीस प्राक्रीती तजै ॥
छबीस छेमा मीलाउ सताईस संत संग गहो ।
अठाईस अठक छोडाउ उनतीस औगुन दुरी करो ॥
तीस मास करो पुर एकतीस सत्य गहो एक ।
बतीस लर्प सुर तैतीस सभ देव वसी करो ॥
चौतीस चढ चवगान पैंतीस पकडहु सब्द गुन ।

छतीस चाषो अमान ।
सैंतीस सभ से सांच रहो अरतीस आनंद हाय ।
वोनतालीस अदृग्यवानी चालीस मनधरी सात ॥
तनक तनक तन तौलै तनवीस करै रती आठ एक मास ।
वारहो मास तुले नव तौला तुलै सुवास ॥

अंत —

चालीस लव चाल संत की ॥

चालीस तौला सेर, चालीस सेर एकत्र करु ; छुटी जाए सभ फेर, चालीस सेर मीलाई दे । करु मन एक अर्षड. चला जाहु नीराधार होये । अमल करहु व्रह्मंड, चालीस टीको आहि घर ॥ रोस न हरी हाल नरो । सुष वेलास साथ भरो ॥ साषि आतौ साथ धरु ; अमृत गुन भंडार भरु ॥ वैठु रहो सभ के उपर । नई नीती वेलास धरु । संतन के वेलास करु ; सनमुष से नाही टरु ॥ यहि समै मफा डरैं नीचे के मती उतरो । सरवस से चलै उबरी । गुन रस सम वसी करीले ॥ छाडी दे सभ सकल उर सकलो मंत करी लै परै नीरमल बानी भरो न जरे ॥ जन्म मरण छुटे । आपना रूप आपु देपु सोभा जोव आपु लेखु । भाव रापु सकल भेष । आपु बनी रहो अलेष । छोडो सभ कर्म रेष । सभ कर्म पर मारु मेष । अमल कर आपन वेष । नाता सभ टुटै आगु पाछु दुरी वीसारु । आह छीवा तोरी डारु । काल कर्म तोरी डारु । संग है से शाद्दा डारु ॥ लाज सभ जंजाल जारु । कारज सभ नीती सवारु । गुरु के सब्द धारु ॥ जवाब सवाल कै टीका सम्पुरण भईल सहि सत एक ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय —

प्रश्नोत्तर के रूप में ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या २६१ घ. वानी, रचयिता—श्री शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंदवार), कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि—

संत सरन ॥ संत पति जी ॥ सहाए ॥ ग्रंथ संत उपदेस प्रथम आर्भ होत सही ॥

॥ वानी ॥

॥ दोहा ॥

शीवनारायण अये जग कहीं संत उपदेस ।
जैसे यह संसार भौ जन्म मर्न प्रवेश ॥
और संत का देस जांहां वास करत सभ संत ।
कहो संदेस बुझाये जग संत देस का मंत ॥
कहत कहावत भ्रम तजि करी सभ कर्म वीसारी ।
इहां उहां का जंवन जस कहो संदेस पुकारी ॥
जेई चलै सेई आपु देखी रहै जेई औरी आधार ।
दुनो पंथ कहो संत जग करी देखु आपु विचार ॥
देखत दिखावत पंथ दोऊ सभै बुझाइ बुझाइ ।
चलै जंवन जेही भावइ दुइ मंहं जंवन सोहाइ ॥
पार चलै तौ आपु देखी डुवत परारी आस ।
भला लगी जेहि जंवन मग चलै करै तहां वास ॥
कहो संदेसा संत हित शिवनरायण आये ।
औरी देखी परै औरी वसी आपु देखत घर जाये ॥

मध्य—

॥ दोहा ॥

तव मन आवै हाथ जो मन कहै सो नही करै ।
त्यागै मन के साथ ब्रह्म मई होई आपु तव ॥
मन के जीतही संत काल कर्म के मारि के ।
गुन अंत रसवंत सकल संपदा पाई के ॥

सक्ती सहित प्रमातमा देवता देव अंत।
बुध समूह मुनिंद्र जत संत समन्ह के कंत॥
मन के कारन जगत सभ नाना बुध जंजाल।
रोवै सोवै झंखै तपै शीर प्रहरी दम काल॥
मन मदमत ममीता तजै तोरी गरूर अंकूर।
मन मरदी मन बसी करै सेई संत सम सूर॥

॥ बानी ॥

मन मुरदा जीन्दा मन वेरी मन होत दोस्त कहावै हो॥
मन जोगी जन जति सति सुर ज्ञानी मूढ कहावै हो॥
मन अंधा जड़ता संकर साधु छल बल कल मन भावै हो॥
मन वषित मन छिन छीन दीन सभै मलिन बनावै हो॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

तजहु दोसरी आस नींदा मृथा न रटई।
यही मोह भ्रम फांस अजहु छाडू नर जो भई॥
आगु पाछु पछताव कछ ग्रीवा होय सो करै।
मंत सुमंत सुभाव यह सभ मृथा वीसारहि॥
सुनि सुनि संत संदेस पढि गुनि बुझि वीचारी है।
देस भेस उपदेस पाये देषी प्रचारी है॥

॥ दोहा ॥

पढै गुनै समुझै बुझै यही संत उपदेस।
'शिवनरायण' मंत होय अमल करै निजदेस॥

सतगुर सब्द बानी ग्रंथ मंत उपदेस समाप्त है बारह बानी के वचन सभ जुग्त संपुरन तौ प्रारभ भईल सहि संत १

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन किया गया है।

संख्या २६१ अ. रूपसरो, रचयिता—श्री शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंद्रवार), कागज—देशी, पत्र—४, आकार ९×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, पूर्ण, रूप—प्राचीन पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रसड़ा, जिला—बलिया।

आदि—

संत सरन सुषदाता ॥ सीतल संत विलास ॥
गरंथ रूपसरी प्रथम आरंभ होत सही ॥

॥ दोहा ॥

सरवर में फुल उगता मोह घर में आवे ।
काल रूप के जागते रस में रहै लपटावै ॥
फूल वेचारा का करै सरवर में गली जाये ।
माता हमारो सरवर पीता हंस होये जाये ॥
तेहि वीच कमल उगी रहै कुदरती रंग वढाये ।
सरवर रहै वीश्वास ते की जल उमडि वहि जाये ॥
चार मास के बीते अवर मन पछताये ।
फुल से भवरा उडि चलै फेरि जल माह समाये ॥
कवन घाट से कुच किया कवन घाट कह जाये ।
कवन घाट पर रस पीये कवन घाट पर षाये ॥
अभ्यास घाट से कुच कीया समन घाट कहं जाये ।
पवन घाट पर रस पीये काल घाट पर षाये ॥
जैसी उलटी दुनिया वोईसी उलटी राज ।
वोईसी उलटी समन है तैईसी उलटी बात ॥
जल से उपजे विनसी गये अमर भया नहीं कोई ।
जग मह आयै कै भुली परे मुक्ती कहां से होये ॥
जल छीजै से वीनसी गये पवन लगे उड़ी जाये ।
जल थांभे तौ रूप बनै मृथा जल वही जाये ॥
जहां लगि आये जगत महं नाम चीन्हत नही कोये ।
नाम चीन्हे तो पार होये संत कहावत सोये ॥
संत होय मन पुरमय बैठु तषत पर जाये ।
तपत आपनो पाये के आवागमन मेटी जाये ॥
आवागमन के वीच मह दुष सुष सहत सरीर ।
गुरु के चरन मनावहु हरहु देह की पीर ॥
धन्य होये तौ धरम करे पाप धोये सभ जाये ।
पापी पाप ना रहत तन नाम आपनो पाये ॥
धन्य हमारो संत है झूठ पाप होये जाये ।
सब्द हमारो सांच है गुरु के चरन लपटाये ॥
अवघट घाट अथाह है थाह पाये नहीं कोये ।
नाम चीन्हे तो पार होये सषि आन्त वसी होये ॥

संत देस मह जात ही सषि सभ आवही पास ।
संत पुरुष के पाई के रहै नीती क्रत विलास ॥
मोह भर्म ते जग भुले राषत बहुत गुमान ।
आपु चीन्ह नही बीच मरै अध परै अरुभान ॥
संत चला घर आपना छांडी जगत के मोह ।
मोह छुटै तो काल मरे लागे न कर्म की छोह ॥
संत दोहाई फिरि गयो फैलि गयो संसार ।
'शीवनरायण' संत होये जात पार घर न्यार ॥
शब्द बीचारो हुकुम चलावे सब्द का गगन बिराजे सोये ।
सब्द बीचारी जो मीले होय रहै रूप अनूप ॥
हीरा परषे चमकि रहै यहि संत की चालु ।
उमडि के तौ तन रहै पवन उडे गली जाये ॥
काल कर्म का देस मह फिरि फिरि भटका षाये ।
आपु आपु चीन्हे वीना पथल पुजे जग चलै ॥
अछत पाती फुल नही वोले नहीं पाये कछु षोजहु आपना मुल ।
तीरथ करि जगभुते चेतत नहीं गुर नाम ॥
वहां जात थाह नहीं पावत भौ सागर जल माह ।
भौ सागर जल अगम देषी डरपत आपनो शरीर ।
औव घट घाट नाव नही केहि विधि लागत तीर ॥
पार कै सब्द सुनावहु बहुत कष्ट जीव मोहि ।
मन के त्रास मेटावहु पुछो स्वामी तोहि ॥
जल से उपजै विनसी गये घाम लगे कुभी लाये ।
जल मह भवरा कहरी रहैं हंस उडे जली जाये ॥
चान सुर्य की जोति ते धुप सहा नहीं जाये ।
जल सुपे कुभीलाये गये पावन उडे गली जाये ॥
आगी लगे तो पवन चलै धुआ उडे असमान ।
वैसा मन का दव रहै कवन करै प्रवान ॥
मन डडे व्रतन गीरे भै नग्र मह सोर ।
फेरी नहीं आवत जात है हम मै कटीन कटोर ।
भन्य होये तो भगती करै मोह पाप छुटी जाये ।
गुर के चरन मनावहु नाम आपनो पावे ॥
यह जग देष्या कर्म वहु पंथन मील अपन ।
अपना देस के षवरी कहि संत वचन प्रवान ॥
चालीस मेर का मन भय तौली नीकारत ज्ञान ।

शीवनरायन परीषी लीया जात अपन मनमान ॥
शीवनरायन कुच कीया देस आपना जाये।
संत के वचन प्रवान करी सब्द गुरु के पाये ॥
चालीस मंत्री संग रहै मन के हाल हजुर।
गुर के सुरती प्रचै वीना आषर मीलै न पुर ॥
अपना मन से प्रचै करै ज्ञान रस मीली जाये।
ज्ञान रस के पातहि सभ रस गये भुलाये ॥
दुनिया के मद क्रम है संतन्ह के मद प्रेम।
प्रेम पाय के घर चलै कर्म छुटै छन में ॥
मन का प्रेम वीचार है क्रोधि कै कुचार।
कै द्रीस्टी तन फिरे बहुत बेहाल ॥
संत मंत जानै विना मन परीषै तौ संत होय।
बोली वोलत सुधार दुष हरण सत गुरु मिलै ॥
पंथ मिलत सुधार पंथ मिलै तो भै कटै।
मोह पाप छुटी जाये शीवनरायण दास होये ॥
दुषहरण गुर पाये दुषहरण के पावते गती मुक्ति होये जाये।
संत समाज मंह वैठि के सतगुरु दीन्ह लषाये ॥
सत गुरु के प्रचे वीना पंथ परे नहीं जानी।
सतगुर दिलदरीआव है पंथ परो मोहि जानी ॥
पंथ मिलै तौ पार चलै आषर कहत पुकार।
नही चलै तौ डुवी मरै उतपती कुलपलीवार ॥
डुवत थाह न पावई करत पुकार पुकार।
संत आय यह जगत मंह सभ का करत उवार ॥
संत मंत मंह जे चलै उतरोजात भौ पार।
नही चलै से कर्म करै चौरासी संसार ॥
चौरासी के कर्म देषी मन रहै बहुत उदास।
संत दोहाई फीरी गयो मारत कर्म के आस ॥
कर्म मेटे तौ भर्म छुटै संत पंथ मीली जाये।
साहेब दरीआव है सभ मह रहन छपाये ॥
संत देस मंह जात ही जाहा होन अभ्यास।
सत गुर दुष हरता मिलै येहि पंथ मह आये ॥
कहा तुमारो देस है कहा तुमारो ठाव।
कहा तुमारो नाम है का करत हो काम ॥
मध्य हमारो देस है उहै हमारो ठाव।

अनुम हमारो नाम है सब्द का करत हो काम ॥
संत सरण सुषदाता ग्रथ रूपसरी सम्पुरण भईल ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

संत गुरु तथा संत देस (ब्रह्म) की महिमा का वर्णन किया गया है।

संख्या २६३ च. लव, रचयिता—श्री शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंदवार), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी; स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि—

सब्द ग्रंथ लव ॥

बोलो आपनो नाम। जो चाहो निजधाम।
शीव नरायण समुभि मन में। होत पुरनो काम ॥
संत मंत भुग मंत। छांडी देहु बहु तंत ॥
संत पंथ नीराधार। तजहु औरो अधार ॥
उतारि चलुभौ पार। छांडहू चाल औ कुचाल ॥
देषी देषी घर जाहु। जे भावई से पाहु ॥
आपु देषी चलै संत। बैठे सब ऊपर जहां अंत ॥
संत आपना रूप नीरषल। पावो सम अंत ॥
चाल समदरसी। जो काहे देषी तरसी ॥
होना नीरामोह। काहू द्रोह कोह औ छोह ॥
जो होई रहो निरमोह। तेहि कहि नही द्रोह ॥
जो चाहो आपनी चाल। मारु कर्म ही काल ॥

मध्य—

सब्दे नृगुन सरगुन सरुप। सब्दे बकता चुप ॥
सब्द होया से सब्द मिले सब्दे नीरषे रूप ॥
सब्द आये जाए सब्दे सकल समाये।
सब्दे सुरती सरुप आपना सब्दे रूप लषाये ॥
सब्दे अडखंड सब्दे भरी ब्रह्मंड सब्दे गुर सीष साथ।
सब्द से प्रचंड सब्दे सायेर सुर सब्दे बाजै तुर सब्दे ततु बीचार ॥

करि करि सब्दे होय मनपुर सब्दे सीव विधि सक्ती ।
सब्दे सेवा भगती सब्दे जगत ब्यापत सब्दे गति और मुक्ती ॥
सब्दे वेद बीचार सब्दे मीलै तार ।
सब्दे मथि के रस पीवै तुरीते उतरही पार ॥
सब्द संत से संत सब्दे अंत नीज मंत ।
सब्द से सखि आना शीवनरायण कंत ॥

दोहा (सोरठा ?)

सब्द संदेसा पाये चलहु चलहु देखी आपु कहं ।
शीवनरायण जाये छांड सकल संताप ॥

अंत—

॥ कवित्त ॥

कोई प्रआग जाये नासिका को आगरे भाग गंगा जमुना सरोस्ती लेई धाई रहै ।
भृकुटी में काशी वीसेश्र बसत है तहां जोतीका नेवास तांहां
आगरे का भुला तांहां मेरुदंड को आस धरै ।
कास को नेवास तांहां चमके जोती के नेवास तांहां जगमग
जोती को नेवास प्रगास है ।
तांहां मन का फीर महं गुरु गोसइआ सभ शीवनरायण संत कांह आपनी नाव सहै ॥

॥ कवित्त ॥

एक आपु अंत एक आपु अंत एक आपु से अांत नहीं ।
आन्त गुन सकल ब्याप्त वीशुण आदी सकल सभ लोचन प्रगासा ।
रवी चंद्र प्रमान जोगी वो जंगम संन्यासी सकल सभ तपशी ऋष्मर जती सती लोक महाज ।
परे करम का फेर महं और सकल सभ जात उभत चुमत केहु थीर न जानै ।
शीवनरायण संत कहा और कर्म रो सार जो आपु से आपु आपनी ठानै ॥
पूरण सहि लव प्रवाना सम् पुरण भइल सहि

विषय—

संत और शब्द से लौ (लगन) लगाने का उपदेश वर्णन ।

संख्या २६३ छ. विना नाम का ग्रंथ, रचयिता—स्वामी शिवनारायण (निवास स्थान—चंदवार), कागज—देशी, पत्र, ४, आकार—६½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८,

परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—श्री नकछेदी राम चर्मकार, स्थान—सरयाँ, डा०—कुरंटाडीह, जि०—बलिया

आदि—

संत सब्द बीचार साचा। तब छाडु बात सभ काचा ॥
जब आपे आपु सही। तब कहां कहा कही ॥
जब मोर तोर व्यापी रहा। तब ब्रह्मग्यान कस कहा ॥
जब रासी पूरा पाई। तब गुर बीनी आंके बलाइ ॥
जब संत सब्द चाहीए। तब कछु काहु से ना कहीए ॥
सबद से नीरु आर। मन मतंग तोरी डार ॥
जब संग बासी करहीं कुचार। ताकहं दसन बोठ दे फार ॥
मन मरदी कीआ में ही। तब तेरा रूप तेही ॥
मन दर दर जब मोटा रहा। तब मन भरी कस कहा ॥
मन एक बंका होए। मन की मइल डारे सभ धोए ॥
एक आपु आपना देष। नीरपी परषी लेष ॥
जब सपरज श्रीदाता। तब क्रीपनी से का नाता ॥
जब संत सब्द मो रंगा। तब बपीछ सो का रंगा ॥
जही पूरन मन अलहदाद। तेही छुटा वाद विवाद ॥
जब सन्मुष सालीग्रामा। तब का काहु से काम ॥

\+ + +

सब्द संन्यासी संत। सब्द अंत नीजु मंत ॥
सब्द से संग सपी आनंत। सोवनराएन कंत ॥

\+ + +

॥ सुषद ॥

चढ़मा मेदान तहां। डाल का आड का ॥
चले क्रम नेल तो। अडला मनेल का ॥
से ताहां भै का। वासर तो नी साका ॥
भानु नोष दौत का। एक हो तो दोए का ॥
नीडर नीरालंभ। ताहा डर भौ आलंभ का ॥
करना विचार तो अचार ओ कुचार का ॥
रहना आनंद। तहां दंद का ॥
चलना आवाग। पाछे दाग का ॥
अपने सो संग। कोचा रंग का ॥
बसना भरीपुर। मन भंग का ॥

संत एक आपु । दूजा थाप का ॥
नीरभै वीआप । आषी टेह का ॥
चलना अकेला । हर्वांडोल का ॥
करना मनथीर । दरद पीर का ॥
समुझी बुझि गहो । कहो सुनो का ॥
बसना संत संग । अवर रंग का ॥
आपु नीरखो ले··· ··· ··· ॥

\+ + +

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन किया गया है ।

संख्या २६१ ज. शब्द ग्रंथ संत महिमा, रचयिता—शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंदवार और ससना बहादुरपुर ग्राम, जिला—बलिया), कागज—आधुनिक, पत्र—५, आकार—६¾ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, कहां से प्रकाशित—मुंशी भगवान दयाल एजंट के प्रबंध से नवलकिशोर यंत्रालय कानपुर में मुद्रित, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री साधुशरण जी, स्थान—ससना बहादुरपुर ग्राम, पोस्ट—बिलथरारोड, जिला—बलिया

आदि—

संत शरण ॥ शब्द ग्रंथ सन्त महिमा ॥
संतपति संतपति संतपति कंत तुही ।
पति पिता परम गुरु समदर्शी संत तुही ॥
आदि मध्य में व्यापक सर्वगुण अंत तुही ।
सर्वमयी गुण खानि वाणी में तत्व तुही ॥
अमित अनंत रूप भूप में स्वरूप तुही ।
सकल गुणवंत पंथ अलख अनूप तुही ॥
भृगुमत निराधार सिद्ध अरु स्वरूप तुही ।
सर्ग अरु विसर्ग योग वक्ता ध्रुव चूप तुही ॥
आतम परआतम प्रभु आपु मयी आपु तुही ।
अजर अषंड खंड कर्म तिहू ताप तुही ॥
वर्ण आवर्ण खानि मकसद मन जाप तुही ।
देव दनुज नाथ तुही स्थिर स्थाप तुही ॥
अक्षर निरक्षर साधु अमित अमान तुही ।
ऋषि जन तप तेज योगी मुनिवर निधान तुही ॥
सत्य शूर वेष यती जगत जीवन जान तुही ।

महिमा अपार पार सबही को प्राण तुही ॥
कीरति गति भक्ति रति शिव विधि सनकादि तुही ।
हिम्मत हवाल ख्याल सुयश यश मत तुही ॥
अचल अगाध धीर अद्भुत सब जात तुही ।
हुनर इल्म चेत होश ज्ञानी प्रवीण तुही ॥
चातुर नर चारि भुजा चिंतामणि चारु तुही ।
परिचय पहिचानि परष पारब्रह्म ज्ञान तुही ॥
भोजन भल भाग पाय रूप को विचार तुही ।
षटरस षटदर्शन षटराग शब्द तार तुही ॥
चारि वेद चारि वर्ण चारिहु फल खान तुही ।
परिचय पहिचान प्रेम ब्रह्म अरु भगवान तुही ॥
मन ब्रह्म परम हंस कृपा को निधान तुही ।
राम नाम दिलदार जान मान प्रान तुही ॥
सुयश यश हुरमत आप जाहिर अरु गायक तुही ।
स्तुति तारीफ तेज खाय पी अघाय तुही ॥
फल गुण कृत तत्व बली जीतव जताएव तुही ।
साहिब दिल सर्वमयी दाता में दिलायब तुही ॥
करत धरत देत लेत तेज में स्थाप तुही ।
मनुष्य रूप अंतर्यामी सर्वमयी में जाप तुही ॥
काम धाम निज नाम मौनी में व्यापक तुही ।
योग भोग तन पोष औं जल में नाव तुही ॥
एक सों अनंत वाणी सांच समदर्शी तुही ।
सोलह पच्चीस पंद्रह चौवीस अड़तालीस तुही ।
भरे पूरे भाग बने सुष अति बरषाये तुही ।
पंडित पुराण मियां कुदरत समदर्शी तुही ॥
अर्ध उर्ध्व ऊंच नीच विष रस में स्वाद तुही ॥
दुष सुष धन धर्म मध्य वाद अरु विवाद तुही ।
भाग चले जेहि मिले पाये मर्याद तुही ॥
देव दनुज भूत प्रेत उड़फत आबाद तुही ।
राम अरु रहीम रब इहां उहां नाह तुही ॥
दया भाव भोग भेद ख्वाहिश परवाह तुही ।
अंड खंड ब्रह्मांड सर्वस्व निर्वाह तुही ।
निराकार निर्भय निडर आदिक अल्लाह तुही ॥
दाता दर्वेश दयावंत गनी और गरीब तुही ।

अलहद सखरज शुभ ध्यान में शुभान तुही ॥
तपसी तेज योग सिद्ध दुनियां दीन धनी तुही ।
रूप राशि रंग रेष जौहर मानुष मन तुही ॥

॥ साखी सुधारस ॥

बानी साखी रहम दिल मुर्शद महरम तुही ।
जो भावे सो खाये शिवनारायण संत तुही ॥

संत संग बने सब रंग । सकल इलम गुन सुढंग ॥
भरे पुरे सुधारास । मरण जीवन नाहिं आस ॥
नित नई सुखद बास । आपु देख करु बिलास ॥
लै सखी अनंत पास । गुन अनंत मित लेत वास ॥
दरस परस करत रहो । आपु में आपु रहो ॥
शोभा सुरत डोरी गहो । हरदम निज रूप लहो ।
शब्द बोलो सोई कहो । संत की समाज लहो ।
दुरमत सब दूर करो । दुविधा सब मेट परो ।
जो जो गुन शब्द कहो । साधक हो सोई लहो ।

बानी गहे बनि परे । रोशन हर हाल बरे ।
सोई काम नित करै । संत शब्द उर धरै ।
अंतर मन मैल धोवै । आप रूप आप होवै ।
सरम भरम करम खोवै । सनमुख में ठाढ होवै ।
क्षेत्र से ना टरे । शब्द नाम उर धरै ।

आगु पाछु दुर निसार । सूरमा होये कालमार ।
आसकत ना करना । शब्द हिये माह धरना ।
संत संग सत्य जानु । शब्द में विचार मानु ।
अमृत वचन भाषु । अनंत रस ले चाषु ॥
करत रंग बहु तरंग । सखी लै अनंत संग ।
बैठि तत्व नित करैं विचार । रस अनंत सब करै अहार ।
सखी अनंत संग लिए । संत सदा सदा जिए ॥

॥ सोरठा ॥

आपु आपनो आय । शिव नारायण है सोई ।
छुटिगो सकल संताप । संत पुरीमह बसि रहै ।
सबसे कहा संदेश । सबै दाव यहि भल मिलै ।
मानुष अदभुत भेष । चल सकै जो आई है ।

॥ दोहा ॥

चले चले जो चल सके मानुष रूप अनूप ।
मोह द्रोह अपमान तजु होइ रहो विमल सरूप ।
शिवनारायण निडर होइ सबसे कहा संदेश ।
चलहु आपनो देश जहां तजि तजि सकल अदेश ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

॥ शब्द ग्रंथ संत महिमा संपूर्णम् ॥

विषय—

संत (ब्रह्म) की महिमा का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य —

प्रस्तुत प्रति छपी हुई है । यह स्वामी शिवनारायण कृत मानी जाती है । इसकी एक हस्तलिखित प्रति मंदिर में भी है; किंतु इस समय बहुत खोजने पर भी नहीं मिल सकी । यह ग्रंथ स्वामी जी का नवीन ही खोज में मिल रहा है, अतः इसका विवरण लिया गया है । इसमें स्वामी जी का नाम भी दिया हुआ है । रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं । इस बार स्वामी शिव नारायण जी के विषय में विशेष रूप से ज्ञात हुआ है जो नीचे दिया जाता है । ठा० रमाशंकर सिंह जी का, जो इस गाँव में श्री स्वामी जी की समाधि और ग्रंथों की पूजा करते हैं, इस प्रकार कहना है :—

"श्री स्वामी शिवनारायण जी का जन्म चंद्रवार में हुआ था । घर से जब विरक्त हुए तो १५ मील उत्तर एक जंगल में चले आये (जहाँ प्रस्तुत ग्राम है) । उनके पीछे कुटुम्बीजन भी उनका वियोग न सह सकने के कारण उनके पास चले आए । स्वामी जी ने उन्हें जंगल काट कर ग्राम बसाने के लिये कहा । उन लोगों ने वैसा ही किया और तब से ससना ग्राम का प्राकट्य हुआ । यह नाम स्वामी जी ने स्वयं रखा । इस ग्राम में अब जितने नरवनी राजपूत हैं वे सब स्वामी जी के ही वंशज हैं । स्वामी जी यहाँ विरक्त भेष में रहते थे । जंगल में एक बरगद के पेड़ के नीचे गुफा बनाकर योग साधन में लीन रहते थे । यह स्थान चिह्न स्वरूप एक खेत के किनारे छोड़ दिया गया है । उसके पूर्व में कुछ बाँस के पेड़ भी हैं । इस स्थान से लगभग १०० गज दूरी पर उत्तर पश्चिम कोने में स्वामी जी ने एक आम का बाग लगवाया था जो ५ बीघे के रकबे पर है । अब भी लगभग २०, २५ पेड़ इस बाग में वर्तमान हैं जो अदालती कागजों में बाग शिवनारायण जी साहब के नाम से लिखा हुआ है । मृत्यु के पश्चात् स्वामी जी की समाधि इसी ससना ग्राम में बना दी गई । इस समय यह समाधि स्थान, प्रधान गद्दी, ससना ग्राम के नाम से भारतवर्ष में प्रसिद्ध किया जा रहा है । इस स्थान पर स्वामी जी के हाथ से लिखे हुए उनके ग्रंथ भी थे, किंतु कुछ वर्ष हुए वे चोरी चले गये । यहाँ उनकी एक खड़ाऊँ भी है जो एक घर में रखी हुई है । घरवाले उसकी नित्य प्रति पूजा करते हैं । स्वामी जी के

गुरु का नाम दुखहरण था। वे ससना से लगभग एक फर्लांग दूरी पर बहादुरपुर ग्राम के निवासी थे। जाति के ब्राह्मण (?) थे। इन्होंने भी एक बाग लगवाया था जिसमें अब एक महुवा का वृक्ष है। बहादुरपुर में उनका (गुरु का) भी एक मंदिर बना दिया गया है।

संख्या २६३ क. शब्दावली, रचयिता—स्वामी शिवनारायण (निवास स्थान—चंदवार), कागज—देशी, पत्र—९०, आकार—$७\frac{१}{२} \times ५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९३८ (संभवतः), प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि—

सब्द संत बिलास ॥

राग स्याम

तप से छुटी मोह की फासी जब ते संत गुन पाया हो।
करता आपु कर्म सभ कीन्हा चहुंदिस फंद बनाया हो।
बाझत आपुन केहु छडावत केतनो केउ गोहराया हो ॥ २ ॥
तबते यह जग काल फिरै सरसाधो सभ उपर सर फेरा हो।
बाचत आपु देषी सेई संता उतरी पार कर डेरा हो ॥ ३ ॥
उतरी पार डेरा जीन्ह लीन्हा संत बेलास बनाया हो ॥
आन्त (अनंत ?) सषिन्ह संग करत कोताहल सभ उपर घर छाया हो ॥ ४ ॥
शीवनरायण आए यही जग संत संदेस सुनाया हो।
सुनत संदेस जे आपु विचारत छुटत काल का दाया हो ॥ ५ ॥

राग रेषता

एक नाम के सुमिरन करुवे जैसो वषत पाया हो ॥ १ ॥
माद्र पिद्र बेराद्र फरजंद है आरन सभ सुष का है संघाती।
टुक समुझ इआर (यार) मन कहता मेरा मेरा फिर तेरा कब है।
टुक दम के हैं संघाती फेरी आवागमन है ॥
कहता संत शीवनरायण सुनो वो सजन।
निज नाम है सांचो सभ झूठी है जतन ॥

मध्य—

॥ सब्द संत बिलास रागीनी असावरी ॥ ९१ ॥
पतितन्ह तारी गये हो महाप्रभु ॥ १ ॥

नही जानो जोग जाप ध्यान तीरथ व्रत नही किछु ज्ञान पढै ।
ताते लषी न परतु है जक्त गति देषत संक भये ॥ २ ॥
ये भयेउ अगम आवगाह अगोचर वहि नहि थिर न रहै ।
कर्म भर्म को जाल पसारत समहि बझाई लीये ॥ ३ ॥
ये मारत घात जीयावत पालत जो जस कर्म करै ।
सो तस भोग कात नीसुवासर दुष सुष साथ व्रोये ॥ ४ ॥
ये करता कान भये इहां तबते जब ते कर्म करैं ।
जन्म मरण की राह बनायो सभ अरुझाये तये ॥ ५ ॥
ये ब्रह्मा विष्णु महेस गोसाइ सुरदाता जो भये विज्ञानी ।
जन्म मरण मंह यह सभ भुले और वीस्वास धये ॥ ६ ॥
ये आवत जात सहे दुष केतीक अवघट सुभीन परे ।
त्राहि त्राहि सभ कहत पुकारत सिर धरि बहुत नये ॥ ७ ॥
ये से देषी संत सहै नही पारत आये संदेस कहे ।
सुनत संदेस जे आपु बीचारत उतरी पार घर गये ॥ ८ ॥
ये आनंत सषीन्ह संग करत कौताहल सभ रस लेत रहे ।
सदा जीयत रहै मरये न मारे अपनो रुप धये ॥ ९ ॥
ये ससी नही सुर्य देवस नही रजनी उाहां न धुप ताहां ।
अग्नी अकास पवन जल नाहीं सदा आनंद भये ॥ १० ॥
ये अपन अपन ब्रह्मंड वीराजत नीती नई पुती लगै ।
शीवनरायण देत नगारा आपुसमान भये ॥ ११ ॥

हो महाप्रभु पतितन्ह तारी गये ॥

अंत—

॥ सब्द संत विलास ॥ राग असावरी ॥ ३५८ ॥

बारो हो अपने घट दीयरा ॥ १ ॥

ईगला पीगला दोवो नारी सुधारो उनमुनि मन लावो हो ॥ २ ॥
दीयरा बारी मंदील मे पईठो ब्रावस मध्द ठहरो वो हो ॥ ३ ॥
शीवनरायण कहि समुझावत सुन्य मे म्हर बसावो हो ॥ ४ ॥

॥ सब्द संत विलास ॥ राग असावरी ३५९ ॥

बावर की सुधि कोई न बतावे जेहि घर ते जीव आया हो ॥ १ ॥
धरती अकास पताल नहीं था अदुरि जोती नहीं माया हो ।
ब्रह्मा विष्ण को जन्म नहीं था तब जीव कहवां ते आया हो ॥ २ ॥
पानी पवन मीली दुभिया जमायो अग्नि कै जोरन माया हो ।
चांद सुर्य दोनो रषवारा मंथन सहित घीव पाया हो ॥ ३ ॥

ससि पर सुर सुर पर ससि हौ तापर मडप छाया हो ।
"दुष हरन" गुर कहि समुझावत "शीवनरायण" पाया हो ॥ ४ ॥

राग एकी ॥ ३१० ॥

पढी ले सुगा नीज नाम बैइठी तन साथ में ॥ १ ॥
तेल फुलेल लगावत देहिया चाम की ।
गरद मोरद मिलिजात दोहाई सत्य नाम की ॥ २ ॥
धरती काया तुल तेहिमे असमान है नवलष जरत मसालतौ पंचा पवन के ॥ ३ ॥
जीभ इंद्री के कारण जीव सभ बध कोइ सो वैरी तेरो संग नरक लेई डारी है ॥ ४ ॥
गज वाजी सुत रथ द्वार तेरो है पडे चारी जना ही हे बीगी पठोजना घाठ पडे ॥ ५ ॥
तेजी चलत धन धाम कंचन से मंदील भरे सुष डारे को सो नरती भरि ना मीले ॥ ६ ॥
शीव नरायण कहि समुझावत ए जड चेतु तौ जमु सेरारी हरे ।
का करि हे जमु राज जो हरि को सरन गहो ॥ ७ ॥

राग प्रभाती ॥ ३११ ॥

तोहू तो पार को जवईया समुझु मना तोहू तो पार को जवईया ।
कल बल छल सभ छाडी चलहु मन सभ मीली होहु महइया ॥ १ ॥
पांचहि मारी पचीसहि वसि करु फीरी गयो संत दोहईया ॥ ३ ॥
गुर "दुष हरन" के पायन परि परि "शीव नरायण" सईयां ॥ ४ ॥

राग एकी ॥ ३१२ ॥

सतगुर महाराज यह तन ठाठ तमुरे का ॥ १ ॥
टुटी गयतार वीचली गये पुटी हो गय चुरम षुरे का ॥ २ ॥
सुषी गये ताल कमल कुभी लाना उडी गव हंस हजुरे का ॥ ३ ॥
शीव नरायण कहि समुझावत सरन गहो गुर पुरे का ॥ ४ ॥
सन् १२८९ सा ६ मीः अगहन सुदी २ समत् १९३ के गरंथ लीषल सपरल वो
मंपुरण गरथ गुलजार राम साध के

विषय —

नाना विषयों पर ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या २६३ ज. संत बोजन, रचयिता—श्री शिवनारायण स्वामी (निवासस्थान—चंद्रवार और ससना), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ६ इंच, पंक्ति(प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रसड़ा, जिला—बलिया

आदि—

संत बोजन ॥ सब्द ग्रंथ ॥ संत बोजन प्रथम आरंभ होत ॥

संतम्ह के पीतापति संतपति शीवनरायण तीन्ह के जानना पहिचानना। कहना धरना गहना हरीदम कोई कारज करना तो संत पती कहि के उठत वइठत सोवत चलत बोलत बोलत काम काज म मीला द्रबार देस वीदेस आवना जानना कहना सुनना हरी एक काम है सो सभ काम काज मो संत का नाम कहना पुकारना मन वच कर्म सो काहे की पीना गुरु है वोही सब्द से सभै हुआ है सर्वोगमी जग उपमारग तार की चाकरी वनी जी पेता करोबार जो कुछ करना हो तेहिमो संत कै नाम भरी होव रापना है उचीत यही है सब्दी होई है से करवे करी है आसब्दी में नही होई ही हो सचेत कै काम हवै संत के लछन कृपाल देयाल द्रोह नही हवे छोह मोह कोह नही सहनसील को गहनी हार सार के चीन्हवईआ सब्द चीन्है सब्द चीन्हावै सम समद्रसी सीतल हृदया लघु पारषी गत उदवेग कवहि नही जग हित सम सम गज उदैत आकामना भरी पुर चालीस मृदुल सरल उपकारी दातासाषरज अलहदा दसषावतत वजा प्रेम सागर करुना नीधान गुन का सिंदु मंत मंत का भृंग मन है आप नाव रावरी करो डारे पंथ संत का नीराधार है अधार आसान हां है संत आनद के मुल है चाल संत के समद्रसी है समद्रसी जो सभ मो द्रसे बराबरी लेना बराबरी देना संत अंदेसा का आन्त गुन है सो आन्त गुन से लेना गुर कै नाम

मध्य—

पचीस प्राकृत के नाम

आसा तृसुना लोभ लालच दंभ मोह पापंड आकृत अपकृत पुदी गर्मद आपनी बडाई प्रदोषी हीनाई कोह द्रोह टोटी कुठीलाई कपट छल आनेनी जाल जंजाल सोच संदेह अंदेसा आचलन कुचाल यहै पाचीस प्राकीती हवै ।

पाच ततु के नाम

पृथ्वी जल अग्नीनी पवन अकास आदि ततु जत है तेहि जल से सभ श्रीस्टी उतपती हवै प्रथमे कुरुम के ऊपर चारो दगपाल है गज रीषभ है गज वीमान है गज संप चडूल है गज अपराजीत है कुंभ के पोठो पर सेस्नाग है तेहि सेसनाग के हजार मुष है दुई हजार जीभा है एक एक जीभा मो हजार हजार फनि है । एक एक फनी पर आत (अनंत) आंत पृथ्वी है एक एक पृथ्वी पर सात सात दीप है एक एक दीप मो नव नव षंड है ।

तेहि सात दीप के नाम

जम्बुदीप लाषादीप सालीमदीप साकलदीप कुसादीप कुंज दीप पुहकर दीप ।

अब नव षंड को नाम

भादरषंड भारतथ षंड कुरुषंड हरीनाषंड केतषंड मालषड रामाषंड आरषंड आठ वीसाहवै बीच मो ईलाषंड हवै सुमेर प्रवत हवै कलपा बृछा हवे ।

अंत—

[illegible] मंत वैरागि [illegible] ऐ मत ग्रा [illegible] ([illegible]) गुन [illegible] संत [illegible] सचि ऐक संत म सम्ह के कंत से संत तो सभै हव सो सभ के पीता पति एक मता मत्री एक तं कर भ संतती हव जे पीता के ग्यानी पीता के मामी पीता के पहिचामी पीता के सेवा करी हं पीता के षीज मती करी है पीता के हुहा हाजीर रहि हं जीव जान से दील इमान से प्रेम पूती से रीति भाव से प्रभुता प्रान से भाव सुभाव से औसर दाव से सभै सुरती के सांच सहज मे मनमान से तन ततु से धन ध्यान से मजवूत महवतो से दोजहुब मे मरीमष दुर से ॥ चालीस दुर से सभ साहेब मीली सुरती राषव ॥ आपने आपने काम के संतपती का धाम के आपने मकान के मषदुर भरो सरजाम गुर के नाम के देपे मे आवै से करब सनमुष से कबहु मती टरब । संत सब्द धरब पार पार संत पति संत पती ॥

सब्द ग्रंथ संत वोजन संपूरण भईल सही

विषय—

संत के गुण और उनके नाम, असंत के दुर्गुण और उनके नाम, पच्चीस प्रकृति और पांच तत्त्व तथा उनका प्रसार आदि का वर्णन किया गया है।

संख्या २६३ ट. संतारवरी, रचयिता—श्री शिवनारायण स्वामी (निवासस्थान—चंदवार और ससना), कागज—देशी, पत्र—११, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजकिशोर जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि— •

संत सरन ॥ इवद ग्रंथ संताषरी प्रथम आरभ ॥
॥ इवद संताषरी कहत्त शीवनरायण ॥

अब जे कहै से संत होई चलै आपना देस ।
शीवनरायण आपना यही जग कहो सदेस ॥
जन्म जग में पाईये कै नर करत सौदा चारी ।
बाल तरुन प्रजंत वृधा समै समै बिचारी ॥
पहर पहर संजोग जासो मीजल माकहं वेग ।
जात आवत पंथ अपना लेत देत अनेक ॥
केहु अपंडित केहु ग्यानी केहु अचेत आचेत ।
केहु असब्द अमान पावो भैयो नीरमल लेत ॥
सब्द पाई बजाइ अनहद होत नृत अमोल ।
संग नायेक नायेका वहु करत सभै कलोल ॥

नही सोक संताप तीन्ह कहं मोह पाय न आऊ ।
निरषि परषि लेहु गंगन दुआरा पंथ अपना पाऊ ॥
तहाँ चढत चढीगौ सुरती डोरी पकडी प्रेम से जावे ।
देषी जगमग जोती लवका लवकौ लवकी छपाई ॥

मध्य—

यह सेवा यह अमल हमारी संत पति कहं सोई ।
अपनो रूप आपुहि नीरषत आपु संत तब होई ॥
जात चला घर आपु सवेरा सभ आसा तजु जोई ।
औत घर आंत ब्रह्मंडा अपन अपन जे कोई ॥
करत वेलास वास करी अपना सभ ऊपर होई वोई ।
जं जे चाहत करत सेई सेई आवागवन न होई ॥
सदा रहै संग सषि आन्ता करि करि बहु सुख वोई ।
ले ले संत सकल रस पीवैं शीवनरायण कै होई ॥ १४ ॥
आपु आपु करे संत विलासा संत देस वसीह आरा ।
तेहिते संत देस कह वावत सभ ऊपर होई न्यारा ।
जेते आइहैं तेते पाई है अपन अपन दुवारा ।
सभै वसै चली संत देस तहं करि करि आपु विचारा ॥
काल कर्म नहीं जात तहां सभ और जात संसारा ।
संत वसै सभ संत कहावै कारन रहित करारा ॥

अंत—

संत वीचरत आपु कहं चीतई आपनो ओर ।
तेहिते ज्ञान अरु आपना आपु आपना जोर ॥ १५ ॥
छुधा भरें जो राम कहि कहत रहत सभ कोई ।
तो काहे परे फंद मंह छुदा लागी सभ सोई ॥ १६ ॥
त्रीषावंत ता कहि जल कहं तो काहे को पीयास ।
अगोनी कहे कहि आपना छुटत जाइ अन्यास ॥ १७ ॥
तौं कहि केहु कर्म मंहं लागी लागी अरुझाई ।
आपु देषैवीनु जगत सभ पार पार कहि जाई ॥ १८ ॥
देषत आपुन संत होई कै उतरो जात भौ पार ।
काल कर्म से बाचई करि करि और विचार ॥ १९ ॥
यह सभ बुझी वीचारी कै देषो आपु नोहारी ।
शीवनरायण संत होई चलैं हाक प्रचारी ॥ २० ॥
सताखरी संम्पुरण भैल सहि सतगुर नाम ऐक

विषय —

सांसारिक दुख सुख और संत महिमा वर्णन ।

संख्या २६३ ठ. हुकम नामा, रचयिता—शिवनारायण स्वामी (निवास स्थान—चंदवार और ससना), कागज—देशी, पत्र—२, आकार ९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति-स्थान—महंत श्री राज किशोर जी, स्थान व पोस्ट—रतसंड, जिला—बलिया

आदि —

संत सरन ॥ सुषदाता सीतल संत विलास संत पती एक शीवनरायण जीन्ह ने सकल संत सभ राम राम लीषत सब्द हुकुम नामा ।

संतन्ह के पीता पती एक शीवनरायण तीन्ह को जानना मानना पहिचानना कहना सुनना गहना धरना हरीदम हरीवषत कोई कारज करना तौ संत पति कहि के उठत बैठत चलत फिरत काम काज म मीला दरबार देश बिदेस आवना जाना कहना सुनना लेना देना हरीएक काम जो होये सभ काम काज मो संत पती का नाम कहना पुकारना मन बच कर्म से काहे की पीता गुरु हव वोही सब्द से सभ हुआ है सादी गमो जज्ञ उपमारग चाकरी पेती करोबार जो कीछु करना होये तेहि मह संत पति का नाम भरीपुर रापना है और अस संत पती का नीकारी के तब कोई कारज करना उचित ये ही है सब्दी होई है से करवे करी है आसब्दी से ना होगा होस चेत का काम है और आपने मन के ठाठ करना बानी बुझि बुझि के आपर समुझि बुझि के जो सब्द कहै सो करना भरी मषदुर संत समाज से सनमुख रहना हरीदम काहु का बात काहु से न कहना ज्ञान गुन पूरा जहा से मिले ताहा से लेना । नींदा बदी प्रदोष बद पाहि काहु को कवहीना करना वो ना सुनना ताहां न जाना जो काबु चलै तो नीन्द की सभ को दुरी करी देना । आपनी आपनी मुक्ती का षोज करना भरी मषदुर सभसो हाजिर रहना संत का मंत भुग मत है संत का पंथ नीराधार है संत का राज सम दरसी है संत का धन है से सुनो सील संतोष छेमा सत्य सुभाव सत्य सुकृत यहे सभ संत का धन है जहां सो मिलै ताहा सो लेना सत संग में वीचार बैठी बैठी को लेना बुझि लेना संत का षोरा करम है संत के वी श्रवरस प्रेम है रहनी आनंद है आदरय पुसि मगन हरीदम है धरना सुरती की डोरी सब्द का तार पकडना प्रेम सो लेना गुरु के नाम जेहि मे होये पुरनो काम देना भाव सुभाव छल रहित सभको करना हरीदम सतसंग में वीचार नीरु आर उतरना तुरंत भौके पार तेज ना सभ और का अधार छोड़ना क्रोध लालच मोह भर्म मारना कर्म काल मेटावना सभ जंजाल बीसारना कर्म के सभ आस चाहना नीज घरवास दुर करना मोह द्रोह कोह हराम गोमा है हलाल छेमा है लागना संत के संग तेजना संग कुसंग बसरना सब्द आषर मे मीलना बानी बेधि बेधि कै सभ मो सभसो बनावना प्रीती नीती नीती नई चीत संत के सरन

सुभाव है सुभाव संत सहज मृदुल हवे चीन्हना मन के कारण सुजस कहना गुर के वानी वचन रिसाल देखना आपना रूप परखना जगत के चाल बोलना सभ से साच मन होवै न पावै काच दील संत का दरीआव है रहनी संत का बदमाहि है बोजन भरपुर बदमाहि का है बनावना मन चालीस पुरा चाहिये ॥

संत समान दाता हीत कोई नही है सो अनंत गुन मो नीगाह करी को देखना साची जहाज संत का जो लाख दफे पसन्द परे तो संत के जहाज पर चडे तुरंत उतरे भव के पार पार पार पार संत पती साहब संत ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय —

संत नाम का स्मरण करते हुए सत्कर्म करने का उपदेश किया गया है।

संख्या २६४ कवित्त, रचयिता—शिवराम, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, पूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बालमुकुंदजी भट्ट, मथुरा दरवाजा कामवन, रियासत भरतपुर

आदि —

॥ कवित्त ॥

सेस से गनेस से धनेस से दिनेसहू मे कहत सुरेस वेस सोई रीति गहुरे ।
कहै 'शिवराम' षोयो बालापन जुवापन अब विरधापनो न षोई प्रभु गहुरे ॥
काम क्रोध लोभ मोह माया मैं भ्रमत कहा भूलै मति मूढ इन पापन कों दहुरे ।
एरे मन मेरे जो घनेरो सुष चाहे तौब विश्वेस्वर जिस्वेस्वर विश्वेस्वर कहु रे ॥ १ ॥
कोमल अमल सरसीरुह मे सोहि रहे मोहि रहे मुनि मन तीनो पन धरि रे ।
कहै 'शिवराम' नष चंदन की पंतिन कौ ह्वै रही उज्यारौ त्रिभुवन बीच भरि रे ॥
वारि वारि डारे किमलय सुरतरु वारे महिमा अपारे रहे चारयौ फल फरि रे ।
भोरे मन मोरे नोरे करत निहोरे भोरे अंत न बिचरि हरि पायन मैं परि रे ॥ २ ॥

॥ छप्पै ॥

गरुदयाल गुरु ब्रह्म रूप गुरु जग सुषकारी ।
गुरु उदार गु अतरनार गुर गुन गन भारी ॥
गुर गंभीर गुर ग्यान धीर गुर है सब लायक ।
गुर गुविंद गुर भक्ति विलंद गुर अघ षल घायक ॥
गुर अद्वितीय जग भरि रहे भुक्ति मुक्ति जिनसौ सुलहि ।
लघु होत सुगुर जिनकी कृपा गुर सगुरू 'शिवराम' कहि ॥ ४ ॥

॥ कवित्त ॥

होत ही प्रगट भये प्रगट अनेक सुष मिटि गयो दुष दुज धेनु साधु संत कौ।
कहैं 'शिवराम' देवकी औ बसुदेव की सु टूटि गई बेड़ी मुष देषें जग कंत कौ ॥
षुल गे किवार सातै पौर की न लागी बार सोयं चौकीदार कहै महिमा अनंत को।
सुंदर सुहायो सिरे देवन को तंत आयौ जाग्यौं परयौ अंत आयो कंसमय मंतको ॥११।
देवकी जगाइ बसुदेव की प्रनति करि कह्यौ काहू भांति यह बालक बचाइयै।
कहै शिवराम अबै कंस सुनि पैहै तौब करिहै हतन वाके और न उपाइयै ॥
बालक प्रभाव ही सौं सोई गये चौकीदार षुले है किवार अब ढील न लगाइयै।
भाल मैं लिषो सु ह्वै है अटको कहूं न अबै एक बार याहि जसुधा पै पहुंचाइयै ॥१३॥
देवकी को कहैं बसुदेव की निसासी भई साहसु कै लीनो सिसु हिये सौं लगाइकै।
कहै शिवराम चलै पौन ते सरस गौन आगू पाछू देषि जैसें चोर धन पाइकै ॥
भादौं की अंध्यारी निसिकारी भयकारी महा देषियै न कोऊ जहां दूसरो सहाइकै।
कंपित सरीर भये मनमैं अधीर नीठ गये जमुना के तीर कोटिक उपाइकै ॥१४।

+ + +

कंस सुनि कोप कीनौं मंत्रिन बुलाइ लीनौं मंत्र कीनो कहू भांति बालक संघरियै।
कहै 'शिवराम' जोधा रतें हैं अनेक छलीतिनकों बुलाइ बेगि कारज सुसारियै ॥
पूतना सकट औ अघासुर बकासुर से कीजै न बिलंब इन्हें योग्र दै पचारियै।
बैठे मथुरा मैं राज करौ महिमंडल को येक की कहा है सिसु गोकुल के मारियै ॥२४॥
असुर बली दै साथ राक्षसी पठाई कंस नंद घर आई ग्वालि ती ह्वै दरसाई है।
कहै 'शिवराम' जसुधा सौं बहिनापन कै कह्यौ बीर तेरें पुत्र भयौ सुषदाई है ॥
जानि छल रोये त्यौं उठाई लीनौं रापैं मिसि दीनो मुष स्तन जो जहर लाइ आइ है।
प्रानन सहित दूध पीकरि कन्हाई ऐसी पूतना पिसाचनी को स्वर्ग पहुंचाई है ॥२५॥

अंत—

॥ दोहा ॥

संष चक्र चिन्हन सहित गदा पद्म अभिराम।
अति सुंदर बालक लषें कोटि वारियै काम ॥ २६ ॥
धूम उठाई दान वन जग मैं बिस्वा बीस।
प्रगट भये बसुदेव के बासुदेव जगदीस ॥

इति श्री दोहा कवित्त संपूर्ण ॥ श्री रामजी सदा सहाय ॥

विषय—

भगवान् श्री कृष्ण की कथा जन्म से लेकर पूतना वध तक संक्षेप में वर्णित है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत हस्तलेख में इन कवित्तों के अतिरिक्त गुसाईं चंदलाल जी कृत 'भागवत सार पचीसी', श्री सुखदेव जी कृत 'अध्यात्म प्रकास', अकबर और बीरबल के 'परिहास', एवं जहांगीर, शाहजहां और औरंगजेब के संबंध की कहानियां तथा कुछ फुटकर कवित्त और दोहे लिपिबद्ध हैं।

शिवराम जी के जो कवित्त विवरण पत्र में दिए गए हैं उनका रचनाकाल ज्ञात नहीं हो सका। इन कवित्तों में श्री कृष्ण की कथा जन्म से लेकर पूतना वध तक की संक्षेप में वर्णन की गई है। साहित्यिक दृष्टि से कविता अच्छी है। कवित्त संख्याओं को देखने से ज्ञात होता है कि बहुत से कवित्त छूटे हुए हैं। कवित्त संख्या २ के पश्चात् छप्पय संख्या ४ आता है तथा ११वें कवित्त के बाद १३वां कवित्त है। इसी तरह अन्यत्र है। किंतु कथा का तार मिला हुआ है।

संख्या २६५. पवनपरिछ्या, रचयिता—शिवबक्सराइ (निवास स्थान—गरियलपुर), कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—६३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९२ वि०, लिपिकाल—सं० १८९२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पवन परिछया ग्रंथ लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

सकल सिधि सुमिरन करत ल्या वे सिद्धि प्रसिद्धि ।
सो सुमिर सिव बक्स कवि करौ बुधि की वृधि ॥ १ ॥

॥ कवित्त ॥

चंद्रमा विसाल भाल व्यालन विसन माल करमें त्रिशूल सोहे राजत रदन है ।
देवन में देव सबे सेवत प्रसिद्ध सिद्ध सकर सुवन सदा सिद्धि को सदन है ।
"कवि सिव बक्स" केते कारज करत मेरे पावत न पाप हेरे रिपु को कदन है ।
सुमति बढाइबे को विरति बहाइबे को दारिद्र दुराइबे को बारन बदन है ।

॥ दोहा ॥

जलचर थलचर व्योमचर जैतिक जौन ।
पवन पाइबे के लिए कही परिछया पौन ॥ ३ ॥
नवरस विश्व प्रसिद्ध है तामें हांस सुहान ।
सब की रुचि सुचि राम गुन तासों हांस बषान ॥ ४ ॥
विश्व विदित ममले सवै सवै बरन के नाम ।
निज मुष दोहा कवित कहि आदि अंत गुनराम ॥ ५ ॥

दस वसु[१८] सै नौवे उभै[१२] संवत् माधव मास ।
सुदि सातैं मंगल भएउ मंगल ग्रंथ प्रकास ॥ ६ ॥

मध्य—

॥ मसल ॥

॥ काका की भैंसी भतीजे फ तोंद ॥

॥ दोहा ॥

करत केलि कौसल पुरी कौसिल्या सुत जोइ ।
करौ कृपा कल्या (न) मै मै सुमिरौ प्रभु सोइ ॥ ७ ॥

॥ सवैया ॥

कोटिन मेरु सुमेरु समेत सो कोटिन रुद्र विरंचि विचारौं ।
कोटिन काम कहा कहिए कवि कोविद की मति तुलसी तारौ ।
कोटिन केलि त्रैलोकनि की सब कौसिल केलि के ऊपर वारौ ॥ ८ ॥

\+ \+ \+

॥ मसल ॥

॥ भोर ही क भूला साम का आवै तेहिका भूला न गनिए ॥

॥ दोहा ॥

भाग भरी भामिनि सवै सुनि आवन सियराम ।
दौरी दीरघ मुदित मन विसराए सब काम ॥ ४७ ॥

॥ कवित्त ॥

भामिनि की भीर भारी सजि कै सिंगार सारी आरती उतारैसिया भूपति के नंद की ।
चारौ ओर चंदनी सी चंदन कपूर कीन्हे मंगल मुदित लीन्हे गवनि गयंद की ।
एकै कर नोर एक चीर चारू पान वीर एकै लिए मंजु मालन के वृंद की ।
ठगि रही ठौर ठौर ठाकुर विलोकि ठाठी कीधौ चित्र सारी की चकोरी चाह चंद की ॥ ४८ ॥

अंत—

॥ मसल ॥

एक चुरवा महतारी बिथन को धेण ।

॥ दोहा ॥

एक रूप अवनि विषै एकै व्याम पताल ।
एक राम सब मे रमेउ प्रलैपाल सब काल ॥ ६७ ॥

॥ सवैया ॥

एक सरूप सदा शिव के उर एकै भवन भुसुंडि के जोइ ।
एक विरंचि विरंचि के वालक स (? सा) रद सेष मराइत सोइ ।
एक सवै मुनि के मन मंडित वेद विचारन होइ ।
एकै राम रमै सबके सोइ और देषात न कोई ॥ ६८ ॥

॥ दोहा ॥

सब पुरान सब वेद मत सब संजम वृत नेम ।
सीता सीतानाथ सों संचो पूरन प्रेम ॥ ६९ ॥

इति कलि कलुष विध्वंसिनि सकुन वांछित दायनि पवन परीक्ष्या ग्रंथ वरन भेद वरननं श्री मत्षत्रिया वंसावतंस षत्रीष्याति गरियलपुर प्र० शिव वक्सराइ विरचित पवन परिछया समाप्तं । सुभमभूयात ॥ संवत् १८९२ शक १७५७ ज्येठ सु (क) ल पंचमां शुक्र वासरे लिखितं नंदलल स ...... ॥

विषय—

संक्षेप में रामकथा का वर्णन किया गया है ।

॥ रचनाकाल ॥

दस वसु से[१८] नौत्रै उभै[१२] संवत माधव मास
सुदि सातैं मंगल भएउ मंगल ग्रंथ प्रकास ॥ ६ ॥

विशेष ज्ञातव्य—

रचनाकाल संवत् १८९२ है । लिपिकाल भी यही है । रचयिता का नाम शिववक्सराइ है । पुष्पिका के लेख से पता चलता है कि ये खत्री थे तथा इनका निवास स्थान गरियलपुर था ।

ग्रंथ का नाम "पवन परिछया" है, परंतु इसमें राम कथा का संक्षेप में वर्णन है । कहावतें भी लिखी गई हैं, पर उनका सम्बन्ध राम कथा से कुछ भी नहीं है । रचना का क्रम इस प्रकार है—पहले कहावत, फिर दोहा, इसके पश्चात् सवैया या कवित्त । दोहा और कवित्त सवैयों में राम कथा का वर्णन है । रचयिता ने रचना करने का जो कारण दिया है वह इस प्रकार है:—

नव रस विश्व प्रसिद्ध है तामें हास सुहान ।
सबकी रुचि सुनि रामगुन तासों हास बषान ॥ ४ ॥
विश्व विदित मसले सवै सवैं वरन के नाम ।
निज मुष दोहा कवित कहि आदि अंत गुन राम ॥ ५ ॥

इससे प्रकट होता है कि हास्य रस की दृष्टि से प्रस्तुत रचना की गई है। साथ साथ सभी प्रचलित कहावतों (मसलें) और वर्णों के नाम गिनाने का प्रयास किया गया है। इस दृष्टि से रचना साधारण कोटि की है।

संख्या २६६. भक्ति जयमाल, रचयिता—शिवाराम स्वामी (निवास स्थान—कारौं, जिला—बलिया), कागज—देशी, पत्र—२३५, आकार—१ फीट ३/४ इंच × ९१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४१२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, रचनाकाल—संवत्—१७८७, सन् १७३० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० जगदेवराय शर्मा वकील, स्थान—नरही, जिला बलिया। वर्तमान पता—स्थान व पोस्ट—बलिया, जिला—बलिया

आदि—

शारद कीन्ह क्रीपा जब जेही। तब हरिजस भाषा जन तेही॥
समत शतरह[१७] सै सताशी[८७]। माघ मास तेरसी सुभरासी।
कृष्ण पक्ष वासर सुभ चंदा। शीघ जोग वृष लगन अनंदा॥
तेही दीन कथा जन्म कवी कीन्हा। मास पछ तीथी दीन कही दीन्हा।
ब्रह्म देवस जुग पहर प्रमाना। अस्ठावीश चतुर जुग जाना॥
पंड भरत अरु जंबु दीपा। अर्जवते भुक्त अवनीपा॥
दश शहस्र कली राम दोहाई। पंच सहस्र गंग परमाई॥

\+ + +

सक वंधी कली षट अवतारा। इंद्र प्रस्त नीप भएउ भुवारा॥
...त श्रीतीश्र कली वर्ष प्रमाना। शाठी वरष तीन्ह मुक्तो सीराना॥
......वीक्रम अवतार प्रवाना। वर्ष एक शे एकतीस जाना॥
सालीवाहन तव उन्ह बीते। शहश अठारह करी सुख रीते॥
दश सहस्र वीजआ अभिनंदन। साका चलीही कठिन रीपुकंदन॥
चारी लाष नामार्जुन पाई। रहेउ शेव कलीगउ सीराई॥
सैय सु एकइस जब कली रही है। तव अउतार कलंकी गहिहै॥
संभल देश मनोहर ठाँऊ। ताहा रहही दीज भ्रम शुभाऊ॥

मध्य—

बिलपती चंद्रावती बहु भांती। मुर्छी परी मलीन भौ कांती॥
भावी जागवलीक ढिग जाई। बैठी हृदै मह रची उपाई॥
जागवलीक नेही वन चली गयेऊ। चंद्रावती ही वीलोकत भयेऊ॥
लषी सोभा मुष करुना कीन्हा। हाथ कमंडल ते जल लीन्हा॥
धोई वदन अंकम लावा। सुता बोली बहुभांति जगावा॥

गयेउ मोह चंद्रावती जागी । मुनीही नीरषी पद गहीया लागी ॥
बोले मुनी कोहसी का नामा । कहु पीतु नाम बसहु केही धामा ॥
मुनी मुनी गिरा कहती मुनीपाही । हम रघु नीपती सुता प्रभु आही ॥
अहै मोर चंद्रावती नामा । पीता दीन्ह वन भा विधि वामा ॥

तीयहू जाती अलापती बीनु पती लागी दाग ।
मैं मुनीश बड़ दुषीआ कहां लगी कहऊ अभाग ॥

जागवलक मुनी संत सुजाना । मुनी संताप बचन दुष माना ॥
चंद्रावती ही बहुत समुझाई । सुता बोली घर चलेउ लवाई ॥
नीज आश्रम महलै बैठावा । करी सेवा मुनीप्रेम बढ़ावा ॥
कंदमूल मुनी भोजन देही । कही हरी कथा सोक हरी लेही ॥
चंद्रावती प्रान की नाई । सेवही जाग वलीक चितलाई ॥
भयेउ गर्भ पुरन मुनि देषा । चंद्रावती ते कहेउ बीशेषा ॥
जेहि पंथ गर्भ गए उर मांही । तेहि पथ प्रशव करहु अवताही ॥
जोनी प्रसव देषत संसारा । कोउ न ग्रहही तोही लषी बीभीषारा ॥
अशकही मुनि दुहीतही समुझावा । चंद्रावती सुनी प्रभुही मनावा ॥

हे हरि तुम सब करता, करहु बेगि उपाए ।
जेही पंथ बीज गयेउ उर, तेही पंथ जन्मो आए ॥

जौ मम वंश अहै नीकलंका । सुक्रीत तन रघु नृपती असंका ॥
तौ एह गर्भघ्रान पथ आई । जन्मही बालक शंभु दोहाई ॥
पुनि मन वच क्रम जौ मैं शाची । उतपतों भोग भई नहीं कांची ॥
तौ एह वीर्ज जाही कर अहई । मम उर बशी नाना दुष दहई ॥
घ्रान पंथ जे जन्मेउ आई । न तौ मरो वेगी वीलषाई ॥

× × ×

घ्रान रंध्र पथ बाहर आया । अद्भुत बालक छवी दरशाया ॥
वीनु प्रयाश सुत जन्मत भयेऊ । मातु हीदै प्रसन्यता दएऊ ॥
तेही छन गुरीन उठे सो बालक । चलेउ पिता ढिग स्रुति प्रति पालक ॥

+ + +

सुनी सुत बचन अंक विधि जानी । हंसेउ उदालक बोलेउ बानी ॥

मेस—तीन्हके नीकट सुराजे जेहै । बाघी बहुत अघ भाश देषैहै ॥
तीन्है तबै हरी दोष लगाई । एकइश हाथ मुनुज कहवाई ॥

स्याम वरन है पर चढी धैहै । स्याम वरन पहीरे छवी छैहै ॥
असी हाथ घंडु कर धारा । रवी इव चमक तेज उजिआरा ॥
दुइघरी माह जमन छै करी है । तब शंभल घर वाश शंभरी है ॥
फीरी है शतजुग नाम दोहाई । भगी है कलीजुग कारीष लाई ॥
सत्यजुग जबही अयु तरी है । चारी हु पाव धर्म मही धरी है ॥

\+ + +

विषय—

नाना भक्तों और चौबीस अवतारों की कथाएँ देकर राम भक्ति का वर्णन किया गया है । इसमें १०९ अध्याय हैं जिनका विवरण नीचे दिया जाता है :—

विशेषज्ञातव्य—

प्रस्तुत ग्रंथ पहले विवरण में आ चुका है; किंतु ग्रंथकार का परिचय अब तक ज्ञात न था। अब यद्यपि ग्रंथ से इस विषय में कुछ ज्ञात नहीं होता तो भी ग्रंथकार के विषय में जो सूचनाएँ मिली हैं वे विश्वसनीय हैं। श्रीयुत प्रसिद्ध नारायणसिंह जी ने "बलिया के कवि और लेखक" नाम से एक ग्रंथ की रचना की है जिसमें बलिया के समस्त प्राचीन लेखक और कवियों का जीवनवृत्त दिया हुआ है। इसमें प्रस्तुत ग्रंथकार के विषय में निम्न-लिखित प्रकार से लिखा है :-

"आप बलिया के ज्ञात कवियों में सबसे प्राचीन हैं। जाति के कायस्थ थे और कारों नामक ग्राम में पैदा हुए थे। आज से दो सौ वर्ष हुए आपने "भक्ति जयमाल" नामक एक बृहद् ग्रंथ की रचना की थी। इसमें कुल १०९ अध्याय हैं।

शिवाराम जी के जन्म काल का ठीक ठीक पता नहीं चलता, किंतु 'भक्ति जयमाल' के आदि में आपने लिखा है कि :—

> संमत सत्तरह सौ सतासी। माघ मास तेरसि शुभ रासी॥
> तेहि दिन कथा जन्म कवि कीन्हा। मासपक्ष तिथि दिन कहि दीना॥

इस प्रकार यदि हम मान लें कि शिवाराम जी ने लगभग ५० वर्ष की अवस्था में ग्रंथारंभ किया होगा (जैसा कि कारों के वृद्ध पुरुषों के कहने से जान पड़ता है) तो उनका जन्मकाल संवत् १७३७ के आस पास मानना पड़ेगा। निम्नलिखित दोहे से जान पड़ता है कि आपने "भक्ति जयमाल" को पूरे सोलह वर्षों में समाप्त किया था:—

> "हर दग³ व्योम° अष्टादशी,¹⁸ सम्वत् संखा दीन।
> आश्विन शुक्ला पंचमी, कथा समापत कीन॥"

शिवाराम जी के विषय में बहुत सी आश्चर्यजनक किंवदंतियाँ कही जाती हैं जिनके लिखने के लिए यहाँ स्थान नहीं है। आप श्री वैष्णव संप्रदाय के महात्मा थे। संस्कृत के भी भारी विद्वान थे जो आपके रचित संस्कृत श्लोकों से जान पड़ता है। प्रसिद्ध औघड़बाबा कीनाराम आपके चेले थे। ये महात्मा भी पहले श्री वैष्णव थे। "बाद को अपने गुरु के श्राप के कारण इन्होंने औघड़ मत धारण कर लिया।"

ग्रंथकार ने इस ग्रंथ में रामचरित मानस की शैली को अपनाया है। कुछ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा दिया गया है। कहीं कहीं छंद भी प्रयुक्त हुए हैं। संस्कृत के श्लोक भी जहाँ तहाँ दिए गए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि ग्रंथ काव्य की दृष्टि से उत्तम है। इसकी रचना से पता चलता है कि शिवाराम बाबा प्रौढ़ कवि थे। जहाँ तक विदित होता है। रामचरितमानस के पश्चात् यही एक ऐसा ग्रंथ है जो यद्यपि रामचरितमानस की ही शैली को अपनाए हुए हैं तो भी अपना एक अलग आदर्श उपस्थित करता है।

इसमें भाषा का भी अच्छा गुणगान किया गया है, यथा:—

> भाषा अर्थ संस्कृत बानी। भाषा भनीती अमीअ समजानी॥
> भाषा भनीती देषी जो डरई। सो मति हीन नरक मह परई॥

यह रचना भी ठेठ अवधी भाषा में है।

खेद है ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति का लेख बहुत अशुद्ध है। इसका एक कारण यह भी है कि यह कैथी लिपि में लिखी हुई है जिसमें ह्रस्व और दीर्घ का कोई विचार नहीं किया जाता। कहीं कहीं अक्षर भी छूट गए हैं।

यह आदि अंत में खंडित है। प्रारंभ में केवल एक पत्र नहीं है और अंत में २३६ संख्या के पश्चात् के पत्रे नष्ट हो गए हैं। यही कारण है कि लिपिकाल ज्ञात न हो सका।

संख्या २६७. गंजुल इसरार, रचयिता—शेख महमूद चिश्ती, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८'४ × ५'४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२४, अपूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि-फारसी, प्राप्ति स्थान—डा० मुहम्मद हफीज सैयद चैथम लाइन, इलाहाबाद ।

आदि—

गंजुल इसरार (रहस्य की निधि)
तसनीफ (कृत) शेख महमूद चिश्ती
अल्लह वाहिद जात कदीम—मुतलक मखफी गंज मुकीम
अव्वल आपें आप अथा—उस बिन रचनक कुच न था
आप गनी साहेब करवा—सब जग थे था वे परवाह
आपें आप मनज्जानूर—जोक मने था वा जहूर
अपने इश्कों माता था—आपस आपें थाता था
उस बिन कुछ इजहार नथा—ना कोई उसको पाता था
उस न था कुच तरफ मकान—ना कुच मानिंद रूप निशान
बिन तकिया आपें निरधार—वेहद वे अदद वे शुमार
जों कि दरिया है भरपूर—आपें आप रहिया मामूर
ऐसा हाल कदीमीं का—रहिया था आप सें छिपा

अंत—

औरतान मरदान का ये खयाल—शहवत भरे बातीन वाल
यो कुछ नहीं है काम भला—इबरतां यो आखिर बला
पे कियान के नें लूटे हैं—लरने और झगरते हैं।
ये ही निशानियां कयामत कयां—कयामत कयां नहीं लानत कयां
भाई भाई में मुहब्बत नहीं—यार यार में सोहबत नहीं
एक को एक पतयारा नहीं—खूब ग़ला तो भाता नहीं
बातिन हुए बे दयानत—जाहिर करते हैं खयानत
मुल्ला न हुए बदवक्त—काजी तो लेते रिश्वत
शेख मशायख दूकानदार—तालिब मूरी दान पै अहार
कि कोई पीके ल्याते नही—अपने जिक्र लजाते नहीं
जोगी सन्यासी भी बाद—कूचें कूचें डारे दाद
मन्हे लोग शराब पंद खुद—शैतानी काम के वदजूद
भंग फराह करते हैं—कूचें कूचे फिरते हैं

—अपूर्ण

विषय—

"गंजुल इसरार", अर्थात्—'रहस्य की निधि', सूफीमत की रचना है। इसमें आरंभ में परमात्मा की प्रशंसा है तत्पश्चात् सृष्टि की कथा, शैतान और मुहम्मद की उत्पत्ति का हाल है। अंत में मुमुक्षु के लिये शरीयत तरीकत आदि उपायों का विस्तार पूर्वक वर्णन है।

विशेषज्ञातव्य—

"गंजुल इसरार" अर्थात्—'रहस्य की निधि' के रचयिता शेख महमूद चिश्ती का जीवनवृत्त उपलब्ध नहीं होता। इनका रचनाकाल भी अज्ञात है। ग्रंथकार ने इस विषय में दिन महीना और समय तक का उल्लेख किया है; परंतु सन् या संवत् कुछ नहीं दिया।

"गंजुल इसरार" की भाषा दखिनी है और छंद फारसी। रचना का साहित्यिक महत्व अल्प है।

संख्या २६८. तिमिर प्रदीप, रचयिता—श्री कृष्ण चचँरीक, कागज—बाँसी, पत्र—१०२, आकार—१०३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९१३, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७९८ वि०, लिपिकाल संवत् १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री राधा कृष्णायनमः

॥ दोहा ॥

जयति सच्चिदानंद घन इष्ट गोपाला।
नंद नदन जन्मन सदन रसन जसोमति लाल।
सुर वंदन कंदन कलुष सुख सुपानि कुषदानि;
मदन कदन सुख छविष्कुदन रदन एक जग जानि ॥ २ ॥
वानी जगरानी वितकारज कारण रूप;
उत्पति थितिलय कारणी वरणी सुतिन अनूप ॥ ३ ॥

× × ×

विक्रम रवि नृप राजा गत वसु[८] ग्रह[९] रीषि[७] ससि[१] काल;
पौष असित इतिथिग्य दिन रचौ सुग्रंथ रसाल।
प्राकृत कर्मनि गुनि कवत तिमिर रूप जगवीच;
जीतिष दीप विहीन भनि यदपि परम नगीच ॥ ८ ॥
मम सम जे नरग्यान विन तिनकौ हित चित धारि;
कियौ मिश्र श्री कृस्न यह भाषा विषै वचारि ॥ १० ॥

सीस बदन भुज हृदय उदर कटि वस्ति गुन्धि पुनि;
ऊरु जानुक जंघ चरन मेषादि रासि गुनि।
काल पुरुष के अंग मनुज के जन्म विचारहु;
सुभग्रह जुत ते पुष्टि दूषित निहारहु।
पुनि मेष अरु निसित वृष भव यु मिथन हरित पाटल कर्क;
गुनि सिंह पांडु श्री कृस्न भनि रसभचित्र सुनित जितरक।
अमित विसंग तुला अलि जानौ, पिंगल धनु कर्बुर मृग मानौ।
कुंभव भ्रमुष मलिन विचारहु, द्वादश राश रूप निरधारहु ॥ ११ ॥

मध्य—

परधन ते इक धनी मित्र धन ते द्वं जानौ;
निजु भन ते पुनि तीनि चारि कुल पोषक मानौ।
पांच परे बहु भृत्य छते बहु नारि विचारौ;
सात परे नृप होय सीलमय उर में धारौ।
जो मित्र भवन में ग्रहु परे जहफल कह्यौ विसेषितो;
श्रीकृष्ण कियौ भाषा विषै लघु जातक मतु देषिके।

॥ सोरठा ॥

तीनि उच्च जो होइ नृप कुल होइ तो तिनते अधिक उद्दोत होइ भूपसुव सुबलनि को ॥ ४६ ॥

॥ दोहा ॥

त्योंही मूल त्रिकोन को जिनके निरषो चारि,
नृप कुलते जा जा को जन सुतिहि नृप हो विचारि ॥ ४७ ॥
होइ चारिते अधिक जो काहू कुल होइ बडो नृपति
द्वे भूमि को भोगुकरे मुनि सोई ॥ ४८ ॥

अंत—

सिंह लगन लषि उदय मे तब मे बरतु बताउ।
तुल ते वरनि वजार में कन्या ते कृषि नाउ ॥ ११८ ॥
वृश्चिके नितु थल बर निधन तेजित संग्राम;
किधो बरन आयुध जहा विधि सो भति धाम ॥ ११९ ॥
आकृति कहिये चोर की लषि लषि लग्न विभाग;
दीरघ जोतक लषि कह्यौ तिनको सुनि बहु भाग ॥ १२० ॥
अज को पहिलो .... रू आयुध कर दृगलाल;
दुसरि तिय लोहित बसन इक पद धुल विसाल ॥ १२१ ॥

कियौ मिहर वाराह जौ जातक प्रस्न विचार।
तिनके सुत सूक्ष्म कियो ताही कौ यह सार ॥ १४० ॥
कृस्नादिक को मति निरपि टीका उत्पल कीन्ह।
निजु मति सम पंडितनु पे सोऊ मे पठि लीन्ह ॥ १४१ ॥
ताही के अनुसार सो वरन्यो प्रस्न विचार;
जातक के मत कौ धरै वढ़े ग्रंथ अपार ॥ १४२ ॥
रामसिंह कृत ग्रन्थ में ताजक लिखो विचित्र;
दास नराइन को हियो निरप्यो परम पवित्र ॥ १४३ ॥
नीलकंठ को आदि दे ताजक ग्रंथ अनंत;
अमित जोग तिनमे धरे द्विजवर तिन्है भनंत ॥ १४४ ॥
लषिहै ते भय भीत कर कलि के अति विस्तार;
ताते मे सूक्ष्म रच्यौ यह सुनि प्रस्न विचार ॥ १४५ ॥
चितु देहिन के यह लषि कहियो सुमति विचारि;
रच्यौ मिश्र श्री कृष्ण यह परहित निजु चित धारि ॥ १४६ ॥

इति श्री मन्मिश्र हरिदत्त चरणारविंदमकरंदास्वादक श्री मन्मिश्र लोकमनि तनुज श्रीकृष्ण चर्चरीक विरचिते तिमिर प्रदीपः प्रस्नतंत्र समाप्तम् संवत् १९२६ शाके १७९१ ज्येष्ट मासे सुभे कृस्ने पक्षे षष्ठ्यायां चंद्रवासरे गंगाधरेण स्वयं लिपिकृतं। शुभं भूयात मस्तुः। रामः

विषय—

फलित ज्योतिष का वर्णन।

रचनाकाल :—

"विक्रम रवि नृप राजागत वसु८ ग्रह९ रिषि७ ससि१ काल"

संख्या २६६. श्री कृष्णदास जू कौ मंगल, रचयिता—श्री कृष्णदास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—४'८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हिंदी संग्रहालय, हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग

आदि—

अथ श्री नागरीदास जी के परम प्रीये सिष्य श्री कृष्णदास जू कौ मंगल लिप्यते ॥

॥ राग विलावल ॥

प्रथम जथामति श्री गुरु चरण लडाय हौं ॥
उदित मुदित अनुराग प्रेम गुन गाइ हौं ॥

देहु सुमति बलि जाउ आनंद बढाइहौ ॥
आनंद सिंधु बढाय छिन छिन प्रेम प्रसादै पाय हौ ॥
जै श्रीवर विहारिनि दास कृपा तें हरषि मंगल गाइहौं ॥
जै जै श्री हरिदास रसिक कुल मंडना ॥
अनिन्य नृपति श्री स्वामी सकल भै षंडनां ॥
रसिक कमल कुल भांन सु प्रगट उदौ कीयौ ॥
भ्रम तम श्रम सब नासि सबनि कौ सुष दीयौ ॥
दै सबनि सुष अति कृपा करि प्रगट विहार सुनाइयौ ॥
जै जै श्री हरिदास रसिक मन भाइयौ ॥
जानि विहार गुप्त अति भूतल प्रगट कीयौ ॥
कीरति जग बिस्तारि सुरस रसकनि दीयौ ॥
निरनै करि जस गाय सो परहित वपु धर्‌यौ ॥
धंनि धंनि कह सब रसिक अनिन्य सो वर वर्‌यौ ॥
वर वर्‌यौ धंनि धनि कहि कहि छिन छिन प्रति हुलरावही ॥
जै जै श्री हरिदास वंछित फल पावही ॥
काम केलि माधुर्ज सहज रति सर्वदा ॥
प्रेम सुभाव सरल मति सुभ्र गुन निर्मदा ॥
विश्व सकल सुष देषि छीया करि छाडियौ ॥
दंपति प्रति अभिराम अपनौ पन माडीयौ ॥
माँडिपन अभिराम छिन छिन दंपति सहज लडावही ॥
देषि यह सुष रंग दोउ मंद मधुर सुर गावही ॥
जै जै श्री वृंदावन सहज सुहावनौ ॥
नित्य विहारे अधार सदा मन भावनौ ॥
परम सुभग श्री जमुना पुलिन मंजुल जहाँ ॥
विमल कमल फुल हंस सकल कूजत तहां ॥
बिमल कमल कुलहंस कूजत सेवन षग मृग सुष भरे ॥
मुदित वन नव मोर निर्तत राजत अति रुचि सौ धरे ॥
कुसमित कुंज रसाल लता अति सोहई ॥
अलिकुल कोकिल कीर कूजत मन मोहन मोहई ॥
त्रिविधि समीर वहत रस सुषद मन ही लीयै ॥
वसत सरद रितु सेवत चित वित मन दीयै ॥
वसंत सरद सेवत सदां रितु सुष समुद्र हां को गनै ॥
विविध भांतिनि भूमि राजत सोभा देषत ही वनैं ॥
मंदिर धवल निकुंज मदन सेवत रहे ॥

मनि मुक्ता फल फलित सो फागुन को कहै ॥
श्री कुंज विहारी विहारनि अति सै राजही ॥
नित्य किसोर सहज रति सुष नैं भ्राजही ॥
नित्य किशोर सहज सदा रति गौर स्याम तन सोहई ॥
कंचन तन घन दामिनि रति पति देषत छबि मन मोहई ॥
अंग संग श्री हरिदास विहार करावही ॥
मननि लीयै अनुसार सहज दिन भावही ॥
सुष संपति रहै माज समयौ पाई सो गावही ॥
तान तरंग मधुर सुर राग सुनावही ॥
तान तुरंग सुनाई मधुर सुर कुंवरि कुंवर सुष पावंही ॥
रीझि रीझि स्यावसि कहि हसि हार वसन पहिरावही ॥
श्री प्रगट विहारनि दास कृपा कौ वपु धर्यौ ॥
श्री कृष्णदास बड़ भाग सेवत नित अनुसर्यौ ॥
सीतल सुभाव गुन अर्पि प्रीया प्रेमैं लहै ॥
चित वित दै रुप लैं मन सेवत नित रहै ॥
रहै सेवत रुप लीयै नित संक न काहू की करी ॥
जै श्री विहारनिदास चरन रति सूर ज्यौति ना टरी ॥
और बहुत अपनाई जे मन वच क्रम करि अनुसरे ॥
मोसे पतित महा सठ तेऊ अपनैं करैं ॥
जैसे पारस परसि तै कचन जानायै ॥
ऐसै कीयै श्री नागरी दासनि स्व उर आनियौ ॥
उर आनि निश्चै जानि यह सुष चरन कमल सेऊं सदा ॥
जै श्री वर विहारनि दास प्रगट नित शिंधु सुधारस सर्वदा ॥
मन वच क्रम करि यह जस जो नर गाइहै ॥
मन वांछित फल वेगि सदा सुष पाइहै ॥
निजु धन सर्वस जांनि उमगि दुलराइहौ ॥
प्रेम लछिछना भक्ति विपुल रस पाइहौ ॥
रस पाइ विपुल आनंद बढ्यौ जन्म जन्म के श्रम गये ॥
जै श्री वर विहारनि दास कृपा तैं मन मनोरथ सब भये ॥
इति श्री मंगल संपूर्ण ॥ श्लोक ४० ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

यह मंगल श्री नागरीदास के प्रिय शिष्य श्री कृष्णदास का रचा है। इसके मंगला चरण में गुरु की वंदना के उपरांत क्रमशः श्री स्वामी हरिदासजी का गुणगान राधाकृष्ण का

विहार और श्री विहारनिदास और श्री नागरीदास जी का यश वर्णित है। मंगल के आरंभ और अंत में रचयिता ने वर्ण्य विषय का उल्लेख इस प्रकार किया है :—

"उदित मुदित अनुराग प्रेम गुन गाइहौं"
और
"मन वच क्रम करि यह जस जो नर गाइहै"

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत मंगल में श्री राधाकृष्ण का विहार और टट्टी संप्रदाय के आचार्य श्री स्वामी हरिदास जी श्री विहारनिदास जी तथा श्री नागरीदास जी का संक्षेप में वर्णन है। रचयिता का ध्यान श्री विहारिनदास पर अधिक रहा है यद्यपि वह श्री नागरीदास का शिष्य है। यह बात विचारणीय है। इस मंगल में संप्रदायगत कुछ विशेषताओं का थोड़ा आभास मिलता है।

संख्या २७०. भाषा भूषण, रचयिता—श्रीधर मुरलीधर (निवासस्थान—प्रयाग), कागज—बांसी, पत्र—१२, आकार—७$\frac{1}{2}$ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५९, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः। श्री भवानी शंकराभ्यां नमः।

शंकर शंकर सेवकै शिवद शिवा के पाइ।
गणपति पति पोषक प्रबल चरणकंज उर ध्याइ ॥ १ ॥
नवल नवाव मुरादलेह खान वहादुर सिंधु सुता सुदली है।
जाकी सभा कवि राजै कलाधर मंगलमय सुख साज थली है।
तामे रह्यो कवि श्रीधर सो भरतादिक रीति सुचारु चली है।
भाषहिमे भनि भूषन सो सुर भाष ज्यों भूषन भांति भली है ॥ २ ॥
चन्द्रालोक विलोकि कै कलित कुवलयानंद।
यह भाषा भूषण रच्यो रविकुल आनंद कंद ॥ ३ ॥
श्रीधर ओझा विप्रवर मुरलीधर जस नाम।
तीरथ राज प्रयाग मे सुबस वस्यो रवि धाम ॥ ४ ॥
सतरह १७ सै सतसठि ६७ लिख्यो संवत् जेठ प्रमानि।
कृष्ण पक्ष तिथि अष्टमी बुधवासर सुख दानि ॥ ५ ॥
लच्छन आधे दोहरा उदाहरनं पुनि आधु।
कवि जन चूक सुधारियो छमी छमो अपराध ॥ ६ ॥
धरम विषै विषयी वचन पूरन उपमा चारु।
शिव की रति हंशो निसी पै रत पारावारु ॥ ७ ॥

एक है तीनि तज्यो जिते लुप्तोपमा सु होइ ।
अभई उपमा है जहाँ अभूतोपमा सोइ ॥ ८ ॥

मध्य—

निज कारज पर हेतु तै साधे समाधि शु जानु ।
पिय मिलिबे को चित चढ्यो तौलौं अथयो भानु ॥ ११२ ॥
जाति शत्रु बल पछ की प्रत्यय नीकी चाल ।
करण और वारै दृगनि जिते कमल दल लाल ॥ ११३ ॥
यह कीनो तो वह कीतिक काव्यारथ पति जानु ।
तेरे मुख जीत्यो शशी कहा कमल दल भानु ॥ ११४ ॥
चाह्यो अर्थ समर्थिवो काव्य लिंग यहि वेश ।
जीते मद कंदर्प इहि पूजे सुविधि महेश ॥ ११५ ॥
का यह इन सो जो कियो कहि अरथंतर न्यास ।
कहा कठिनई बड़ेन को तेरे हनू छितिवास ॥ ११६ ॥
लघु सतसंग सतता लहैं संबंधा कवि चाहि ।
कीट सुमन के संग सो धरत साहि सिर ताहि ॥ ११७ ॥
लघु गुरु गुरु में कथन कहो विकस्वर तेह ।
क्यौं जीते पउंहि उनो जीते जिते अजेह ॥ ११८ ॥
प्रौढ़ उक्ति उत्कर्षता हेतु हेतु सो पुष्टि ।
जमुना तीर तमाल वन तमकच कारे शुष्ट ॥ ११९ ॥

स्वस्ति श्री मस्तकल सामन्त चक्र चूड़ामनि नीराजित चरण कमल कर करवाल करवालाग्निर्यताति मंडला दण्डयो दण्डय प्रकटी कृतं प्रतापानल विद्रुकुल मनो भृंग विश्राम धामस्थलाखिल मही मंडला षंडल नवाब मुसल्लेह षान वहादुर प्रकासित कविः प्रयागस्थल ओझा श्री मुरलीधर कृत भाषा भूषण संपूर्ण मिति शुभं ॥

भवानी शंकरौ विजयते । संवत् १८०८ मार्ग शुक्ल प्रतिपदायां वंश राज त्रिपाठिना लेखि ॥

विषय—

"चंद्रालोक" के आधार पर अलंकारों का निरूपण निम्नलिखित प्रकार से हुआ है :—

उपमा (संपूर्ण भेदों सहित)
प्रतीप
शंकर
उल्लेख
भ्रांतिमान

अपन्हुति (भेदों सहित)
उत्प्रेक्षा (भेदों सहित)
तुल्ययोगिता
अतिशयोक्ति (भेदों सहित)
प्रतिवस्तूपमा
दृष्टांत
सहोक्ति
श्लेष
अन्योक्ति
व्याज स्तुति
कारण माला
उत्कर्ष
क्रम
समाधि
समता
पर्याय
परिसंख्या
समुच्चय
अर्थान्तर न्यास
प्रौढ़ोक्ति
विषाद
उन्मीलित
व्यंग्य
प्रश्नोत्तर
वक्रोक्ति
काकु
चित्रादि

रचनाकाल—

सतरह सै सतसठि लिख्यो संवत् जेठ प्रमानि ।
कृष्ण पक्ष तिथि अष्टमी बुध वासर सुखदानि ॥ ५ ॥

विशेष ज्ञातव्य – भाषा भूषण

प्रस्तुत ग्रंथ में आठ पत्रे हैं । इसमें चंद्रालोक के आधार पर अलंकारों का निरूपण किया गया है । प्रत्येक दोहे के पहिले दो चरणों में लक्षण और दूसरे दो चरणों में उदाहरण

देकर एक ही दोहे में एक अलंकार पूर्ण कर दिया गया है। ग्रंथ का रचनाकाल "सतरह सै सत सठि लिख्यो संवत् जेठ प्रमान" के अनुसार १७६७ वि० है। भाषा अवधी मिश्रित है।

अलंकारों के क्रम में चंद्रालोक की परिपाटी छोड़कर स्वतंत्रता का अवलम्बन किया गया है। उदाहरणों की कल्पना में कहीं कहीं प्राचीनोक्ति को छोड़कर अधिक सारयुक्त भाव भरने का यत्न किया गया है जो सुंदर है।

इसी के साथ ही एक और ग्रंथ जुटा हुआ है जिसके आरंभ में मनारथ के कुछ छंद हैं जो रोचक होने के साथ साहित्यिक भी हैं।

संख्या २७१. आदि वाणी जुगल सत सिद्धात, रचयिता—श्री भट्टजी (निवास स्थान—वृंदावन), कागज—आधुनिक, पत्र—३०, आकार—८½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७४, अपूर्ण, रूप - नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—पं० छोटेलाल रासधारी जी, ग्राम—मुखराई, पो०—राधाकुंड, जिला—मथुरा

... ...

आदि—

... ...

ऐसे जानि वृंदावन जै श्री भट्ट रज पर वारि कोटि मखतूल ॥ ३ ॥

दोहा

मोहन वृजवन भूमि सब मोहन सहज समाज।
मोहन जमुना कुंज बन विहरत हैं जुवराज ॥

पद

वृजभूमि मोहनी मैं जानी।
मोहन कुंज मोहन वृंदावन मोहन जमुना पानी ॥ टेक ॥
मोहन नारि सकल गोकुल की बोलत अमृत बानी।
जै श्री भट्ट के प्रभू मोहन नागर मोहनि राधारानी ॥ ४ ॥

दोहा

सेव्य हमारे हैं सदा वृंदा विपिन विलासी।
नंद नंदन वृष भानुजा चर्ण अनन्य उपासी ॥

पद

संतो सेव्य हमारे श्री प्रिया प्यारे वृंदा विपिन विलासी।
नंद नंदन वृषभानु नंदिनी चर्ण अनन्य उपासी ॥ टेक ॥
मत्त प्रनय वस सदा एक रस विविध निकुंज निवासी।
जै श्री भट्ट जुगल वंशीवट सेवत मूरति सब सुखरासी ॥ ५ ॥

मध्य—

॥ अथ सेवा सुष लिषते ॥

राग विलावल

॥ दोहा ॥

मेरेई आंगन सेज पर अरस परस सुकुमार ।
करत सहज सुष सों सयन स्यांमा स्याम विहार ॥

पद

स्यामा स्याम सेज उठि बैठे अरस परस दोउ करत सिंगार ।
उन पहरी बांकी मोतिन माला उन पहरयौ आंको नवसर हार ॥ टेक ॥
लटपट पेच संभारत स्यामा अलकै समारत नंद कुमार ।
जै श्री भट जुगल किसोर की जूटी मेरेई अंगन करत विहार ॥ १ ॥

+ + +

॥ दोहा ॥

मधि दिन कमलन दलनि सौं रची सेन निज हाथ ।
लता भवन प्रिया रवन मिलि विलसत दोउ साथ ॥

॥ पद चौताल ॥

लता भवन प्रिया रवन संग मिलि विलसत रुचि सौं चैन ।
मधि दिन फूले कमल दलनि सौं रचि निज सुकरनि सैन ॥ टेक ॥
सघन विपिन ऐन जो आनंद को देषि परत नहिं गैन ।
जै श्री भट्ट देखि दोऊ ब नन सफल करन हौं नैन ॥ ११ ॥

+ + +

॥ अथ उछाह सुख लिष्यते ॥ अथ वसंत उत्सव ॥

राग वसंत

दोहा

मंगल बिमली सबहि मिलि खेलै हिय हुलसंत ।
मान बिरह दुष मेटनौ आयौ रितुराज वसंत ॥

पद

आयौ रितुराज वसंत हित भयौ हिय कौ ।
अब मिलि मंगल विमली षेलौ मान विरह गयौ जियकौ ॥

चित मैं चाह उछाह बढायो सहज संग भयौ पियकौ ॥
श्री भट कूट कोप करि नागरि दीप जरायौ घी कौ ॥ १ ॥

× × ×

॥ अथ ब्याहोत्सव ॥

राग मलार

अभास दोहा

वेदी पुलिन विराज ही मंडप वेलि तमाल ।
मच्यौं किधौं ब्याह रच्यौ है ब्याह विहारी लाल ॥

पद

श्री व्रजराज कैं जुवराज मानौं ब्याह वृंदावन रच्यौं ।
पुलिन वेदी विराजैं दंपति देषि देषि मन सच्यौ ॥ टेक ॥
हुं पुरोहित रिचा उचारते बेलि तमाल मंडल षच्यो ।
जै श्री भट्ट भांवरि परत नटवर अंकमाल ··· ··· ॥

—अपूर्ण

विषय—

निम्नलिखित विषयों पर कृष्ण भक्ति संबंधी पद रचे गए हैं :—

१—सिद्धांत सुखपद	पत्र	१	से	४	तक
२—व्रजलीला सुख	पत्र	४	से	११	तक
३—सेवा सुख	पत्र	११	से	१७	तक
४—सहज सुख	पत्र	१७	से	२२	तक
५—सुरत सुख	पत्र	२२	से	२४	तक
६—उछाह (उत्साह) सुख	पत्र	२४	से	३१	तक

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ आधुनिक पीले कागज पर लिखा गया है। प्रथम पत्र तथा संख्या ३१ के आगे के पत्रे नष्ट हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

ग्रंथ कितना बड़ा था यह ज्ञात नहीं होता। फिर भी जो कुछ मिला है वह कम नहीं है।

ग्रंथकार निम्बार्कानुयायी थे। वृंदावन में ज्ञात हुआ कि ये अलाउद्दीन के समय में वर्तमान थे। श्री हरिव्यास जी इनके शिष्य थे।

संख्या २७२. मन संबोध, रचयिता—श्री लालरघुवंशवल्लभ, कागज - देशी, पत्र—५७, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—

१४६७, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१२ वि०, प्राप्ति-स्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्रीसीता रामो जयति । अथ श्री मनसंबोध लिख्यते ॥

दोहा

वन्दौं श्रीगुरु पद सरस सीय राम हिय ध्याइ ।
प्रेम भक्ति आनन्य व्रत परमानद अधिकाइ । १
श्रीगुरु देव वशिष्ट जू तुम सब विधि समरथ्थ
पुरवहु रुचि लघु बाल लखि सिषवहु धरि सिर हथ्थ । २
वंदौ श्रीमद्भरत पद नाम सम्य करु आप ।
राम भक्ति देयाल मोहि हरहु जगत संताप । ३
नाम लेत अरि होत छै बढ़त प्रताप अषंड
वंदौ श्री रिपुसूदन पद दलु मम शत्रु पचंड । ४
अगम करत अति सुगम वर दायक मनरुचि जानि
वंदौं लछिमन पद जलज द्रवौ मोहि सिसु मानि । ५
वंदौं सब विधि पवन सुत राम उपासक अग्र
होइ दयाल मोपर सरस दे प्रभु भक्त समग्र । ६
वंदौं पद रज सीस धरि राम उपासक संत
दीजे भक्ति अनन्य व्रत राम प्रेम नहिं अंत । ७
संभुसिवापद पंकजे रजहि धरौं निजभाल
दीजे मोहि सिय राम की यक व्रत सरन दयाल । ८

× × ×

हग[२] शशि[१] खण्ड[९] सु ब्रह्म[१] भो फाल्गुन सित रविवार
दशमी तिथि प्रथमोपहर रच्यौ ध्यान पद सार । १४०

मध्य—

रज कन सम कृत मेरु ते चक्रवरि गुनत कृपाल
प्रभु कृतज्ञ गुन मनन करु हो निसंक खुसहाल । ४८
कोटिन गुन पाताल ते गहिर सुगुन गंभीर
होत चकित मति सबनि की राम महामति धीर । ४९
चातुरता के सिंधुवर सबमे परम प्रवीन
सब ईस्वर की चातुरी बिंदु भई तहं लीन । ५०
गुनप्रताप भामादिवर रूप सो सदा अखण्ड
सुस्थिर यक रस प्रास नित बोधन यक रस मंड । ५१

श्रीमहराज कुमार जू सब विधि परम उदार
वांछित प्रद सब जनन्ह कह भजु तेहि हुती विसार । ५२
परमधीर रघुवीर गुन धीरज हृदै विचार
वोधन सांजहि धारु गति उद वेग निवार । ५३
अति अचर्जमय सूरताधनु टंकारि प्रचण्ड
श्री रघुपति को भजहिमन करत सकलभय षंड । ५४
त्याग दया विद्या धरम भाव पराक्रम पांच
श्री रघुवीर में पूर्णसब गुन सुवीर्ज यह सांच । ५५
ब्रह्म आदि ब्रह्मांड सब जाके तन को भास
बोधन सुमिरत तेज गुन तम दलि करत प्रकास । ५६

अंत—

जो पदार्थ मन चाहते मन चाह जेहि करै रेष सोइ ध्यान
लहै सकल फल वांछि जो साधन क्रम ले मान । ३६
रेष रंग उतपति सब साधन परम जथार्थ
स्वारथ मन दायक सुषद प्रेम भक्ति परमार्थ । ३७
सीय राम पद ध्यान यह कह कछु मन हित सोध
संतमतो सद मत निरषि जो ध्यावै लह वोध । ३८
मन रंजनगंजन भ्रमहि भंजन जगत विकार
सुहृद नेमवर प्रेमदा जीवनप्रान अधार । ३९
द्रग[२] ससि[१] पंड[९] सु ब्रह्म[१] भो फागुन सित रविवार
दुशमी तिथि प्रथमोपहर रच्यौ ध्यान पदसार । ४०

इति श्रीमन संवोध चरन चिन्ह रंग उत्पति वरन नो दशमोविलास

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ दोहे सोरठों में रचा गया है और इसका विषय ज्ञानोपदेश है। यह नौ प्रकाशों में है जो निम्नलिखित प्रकार से हैं। प्रत्येक प्रकाश का विषय विभिन्न है:—

दृग² ससि¹ चंड¹ सु ब्रह्म¹ भो फाल्गुन सितरविवार
दशमी तिथि प्रथमो पहर रच्यो ध्यान पदसार।

संख्या २७३. हरिवंश (भाषा), रचयिता—श्री लाल शाह, कागज-देशी, पत्र—३००, आकार—१२ × १० इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—९३३१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८२ वि०, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि—

२० पृष्ठ का शेषांश

राजा जन्मेजगः उवाच चौपई। कहां गये ते सव सत भाई।
कौन भांति उनकी प्रभुताई। श्री वैसम्पायन उवाच।
राछस पुरी घेरि सव लीन्हा। काहू जुध्य न सनमुष कीन्हा।
भागे जहं तहं गिर पु···रीया। भये वंस छत्री अवनीया।
प्रांस धूव नृप केतु के वेटा। गुरु की गाइ वधी वन षेटा॥
दीन्ह श्राप गुर छुद्र कहाये। तेहित जन तन की रज पाये।
मध्य देम ईक्ष्वाकु सो राजा। भये पुत्र शत सुषी समाजा।
नाम विकछ जेठ सुत आही। प्रन जांघा यज्ञ मिल उनताही।
···कघ नृप अविधि विराजा, सुत पंचास सुखी सव साजा।

मध्य –

वैशम्पायन उवाच चौ०।

ब्रह्मा किये इंद्र का राजा तीनहु लोक देव तन साजा
विष्णु सहायक अदिन कुमारा। अदिति गर्भ मोदर्भ सो धारा
यहि विधि राज पुरंद्र पावा। करि अभिषेक विरंचि वतावा
जग्य तपस्याग्रह दिजु तारा। औषद सोम राजता सारा
दः छ प्रजापति जल पतिवारी। कालपित्र भो निधन विचारी
गंध काल वल भूत सरीरा। दीन्हो राज पवन मति धीर
भूत पिसाच मात्र गण गाउ। ग्रह उद पति जो रोग सुभाउ
हंस व्याघ्र प्रेतन के राजा। महादेव इसता विराजा
जः छ राकस महज करजा। धन सव प्रभु वैसवन सो अजा

इष्टी सेस बासु की नागा। तः छकु श्री त्रय आदि बिभागा
सागर नदी मेघ तड़ि ताई। सो पर जन्म राज पद पांई।

अंत—

···सुष लाला लिख्यौ कथा हरि वंस दयाला

दोहा

कहत सुनत पूंछत गुनत हर···अनभव साथ,
वदौं सब के चरन मै जे प्ररूप हरिगाथ।

कवित्त

देषे हो रास विलासन हूं स्तुति सम कथा कहिवो किमि भावै
गोपी पराभव नाथ कह्यौ द्विज साथ की·····शी बहरावै
कृष्ण सषी मुष चंद लषी सपि लाल हिये अनभो उपजावै
चि···गरा करि मोपै कृपा हरिवंश प्रवृत्त करौ सुख पावै। १

इति श्री हरिवंश पुराणे भाषा श्री लाल जी शाहु कृते सर्व सुभार्थ वर्णनो नाम दुरसत दुई पंचा सतमसर्गः। २५१॥ संवत १८८१ मी जेठ व सुदी दुइज वा गुर वासरे। ६६ सप्तम। ६।३

विषय—

अनेक पौराणिक कथाओं का २५२ सर्गों में वर्णन है।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत ग्रंथ संस्कृत के हरिवंश पुराण का अनुवाद है। इसमें ३०० पत्रे हैं और यह २५२ अध्यायों में है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८८२ वि० दिया है।

संख्या २७४. सुमिरन को अंग, रचयिता—संतदास, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—४'६ × १'३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हि० सा० स० प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥ अथ सुमिरण को अंग लिष्यते॥
पहिला दिन तो संत दास माला सो उपज्यौ भाव॥
दूजे दिन तो राम जी भला करी पसाव॥ १
माला हथि आई संत दास तब कह्या राम ही राम॥
ता पाछे घुलिया संतदासमनि आया विसराम॥ २
× × ×
मन मला हरिनाम का होई गया येक रंग॥
को हो कैसे छिटकाईये, संतदास येह संग॥ ५

राम सबद कूं संतदास बिसरत कबहू नाहि ॥
ताला बेली भजन की लागि रही मन माहि ॥ ५ ॥

अंत—

पीव पीव चातक कहै स्वाति बूंद के हेत ॥
यूं राम राम कह संत दास संत ब्रह्म सुपलेत ॥ ७५
राम भजन सुष संतदास भरिया समद अघाइ ।
अनंत कोटि जन पी गया अजहू पी पी जाइ ॥ ७६
आकासा धू कहत है कहत पताला सेस ।
मध्य लोक विचि संतदास रामहि कहत महेस ॥ ७७
तीनि लोक पैदासि है यक राम नाम पैद ॥
सबही कैदी संतदास येक राम सबद कैद ॥ ७८

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "सुमिरन को अंग" है । इसमें राम नाम की महिमा, सुमिरन की विधि तथा फल वर्णित है ।

संख्या २७५. जग, रचयिता—सदालाल, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

कहवा बिताइ सारि रैन हो लाजन ।
चून चून कलिय मै सेज बिछायो तुम बिन तनिक न चैन ॥
अति आनंद बितत भर रजनि बोलत मधुरे बैन ।
'सदालाल' प्रान पति तुम बिन पल नहि लागत नैन ॥ २ ॥

॥ जंग ॥

रघुवर मोहे दरस पिआसा ।
औसे सेवा सेवा तिय बुद को पपिहा रहत पिआसा ॥
रसद रसना को प्यारो जैसो लगत बतासा ।
वैसोइ राव निहार रंक कहै पहिरे मजमल खासा ॥
जौ जिवम जू आउवा को जितन लाख पचासा ।
बार बार ताहु पर भाखे पराजित को पासा ॥ ३ ॥
रघुवर चरन निहार मबन सो लपट रहो लपटासा ।
'सदालाल' यहि बिध लपटो ज्यों पछि को लासा ॥ ४ ॥

॥ जंग ॥

क्यौं न हरै मेरि पीर श्री रघुवर ।
नहक नृप कोना बधरावत दसरथ सुत रघुवीर ॥ १ ॥
भुपत होय भुलावत मोहि को भाजत नहि भोमि ।
वेदरदि क्यौं बैठ रह्यौ उत डोलत सरजू तीर ॥ २ ॥
कवल नयन कारन कारन तेरे यह यामन भयौ है फकिर ।
'सदालाल' सुध आवत जव तब दग भर आवत नीर ॥ ३ ॥

॥ जंग ॥

असिनु लादे पार रघुराइवे रैन दिना मानु ध्यान तु साडा जिवन प्रान अधार ॥ १ ॥
क्या जाणे किधरो वै जादा रघुवर पार उतार ॥
कवल नयन प्रभु या नैया कै तुमहि खेलहार ॥ २ ॥
दास तु साडे सुमिरत तैनु किरपाकर करतार ।
'सदालाल' या तु जनु कहेदा वेडा करदे पार ॥ ३ ॥

॥ जंग ॥

रघुवर संत सरनमो आया ।
नीजकर चरन कवल लौ लाया ॥ १ ॥
कवल नयन प्रभु पतित ओधारन या मिहिमा सुनकर लोभाया ।
भवदि अवध पूरन करवे को सेवक 'सदालाल' लौ लाया ॥ ३ ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

राम भक्ति वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम स्पष्ट तो नहीं लिखा है, परंतु प्रत्येक 'जंग' के अंत में 'सदालाल' प्रयुक्त होने से यही उसका नाम हो सकता है।

रचना का नाम भी अज्ञात है। 'जंग' छंद में रचना होने से यही नाम रख दिया है।

भाषा ब्रज, अवधी और पंजाबी का मिश्रण है। 'कहंवा' आदि शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं जो पूर्वी के हैं।

संख्या २७६. मानस रहस्य, रचयिता—सरदार कवि (निवास स्थान—रामनगर काशी राज्य), कागज—बांसी, पत्र—२४, आकार—९ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९३३, पूर्ण, रूप—अच्छा, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—

सं० १९०४ वि०, लिपिकाल—सं० १९२१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि –

एक दिवस श्री महराज मुकुट काशी नरेश की सभा में अनेक कवि कोविद क सामुहे यह चरचा होत रहो ·····तीन को निरूपन कीन ॥ कर्म ज्ञान भक्ति ज्ञाता में कोई कही ज्ञान साधन भक्ति निमित्त है अरु काहूक·····क्ति साधन ज्ञान निमित्त है। तब कोई उत्तरकांड श्री गोसाँईं जी को कियो ताकी एक चौपाई पढ़ उठो कि·····कहि नहि कछु भेदा। उभय हरें भव संभव खेदा ॥ सो सुनि श्री राम कृपापात्र महीपाल ने आज्ञा दई की यह यो रामचरित मानस गुसाईं कीनो सो श्रुति सम्मत सहित सबते अविरोधी राम भक्ति दृढ़ करन हेतु है काहे याको मंगल वस्तु निर्देस है।

नाना पुराण निगमागम संम्मतंयद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्य तोपि। तो अन्यते संहिता काव्य भाव ताको न जान के रामायन मे प्रवेश करत हैं ते बड़े पंडित है। याते जो एक तिलक याको ऐसो बनै कि जामें श्रुति संमत बनो रहै। अरु कवि संप्रदाय से विरोध न होय अरु छेपक भी जानी जाय। औ जो पद कठोर हैं तिनकी व्याख्या भी होय अरु मानस में धुनि अवरेव कवित गुन जाती स्रोता निमित्त सर्व अंग काव्य के भी होंहिं ॥

जैसे बाल में नयन अमी दृग दोस विभंजन। नाम रूप व्याख्या औ जो बड़े महाराज मानस रसिक ने बड़े तलासते बहुत पंडित कविन के सम्मत ते पोथी शुद्ध कराईं ताको पाठ रहै। औ गोसाईं के ग्रंथवाले उदाहरन ॥ जाते सब कोई काव्य जान रामायन को अर्थ जाने अरु सबको स्वारर्थ होइ एसो तिलक बनिजाय ताते काव्य लिषियतु है।

अथ काव्य लछन रस रहस्ये।

दोहा

जगते अद्भुत सुष सदन सब्दरू अर्थ कवित।
जगते अद्भुत सुष लोकोक्ति चमत्कार ॥
सरल कवित कीरति विमल सो आदरहि सुजान।
सहज वैर बिसराय रिपु सो सुनि करहि बषान ॥

मध्य—

अथ अस्फुट लछन

जो बहुत कलेस ते बिग होय सो अस्फुट। जथा
गौतम तिय गति सुरति करि नहिं परसत पद पान।
मन विहसे रघुवंश मनि प्रीति अलौकिक जान।

इहां रामचरन पर पली सुरति करि अरु प्रीत ने जद्यपि बहुत पोसन कीनो तथापि बहुत कलेस ते पाई। काकुस्वर भेद जथा है दससीस मनुज रघुनायक। जाके हनूमान से

पायक इहाँ राम का मनुज है ॥ अगूढ़ जो तुम होते मुनि की नाईं। तौ पद रज सिर धरत गुसाईं। इहाँ तुम वीर वेष बनाय आए सो प्रगट ही है। इति मध्यम काव्य गुन

अंत—

चौपाई लछन

सोरह मत्ता छंद गति रूप चौपाई लेषि।
पंद्रह से सत्तानवे जानो भेद विसेषि ॥

गीतिका लछन

अट्ठाइस में गीतिका आदिक कह्यो फनीस।
पाँच लाख चौदह सहस द्वै सै पर उनतीस।
फल[४] अकास[०] ग्रह[९] आतमा[१] माघ शुक्र बघवार।
काशीपति की कृपा तैं किय पूरन विस्तार।

छप्पै

श्री काशी के नाथ वीर बलवंड उजागर।
ताकी वाट महीप भये सुषमा गुन सागर ॥
तासु पुत्र उदित्त महीप पुनि दीप नरायन।
है प्रसिद्ध सब जगत एक ते एक सुभायन ॥
सरदार तासु सुत ईश्वरी भूपति मनि जस चंद सों।
विलसत विचित्र काशीपुरी अद्भुत आनंद कंद सो।

सो०

मानस कियो रहस्य कृपा कोर तिनकी तकत।
सुमिरन राम अवस्य काव्य कला के मिष भयो।

दोहा

सुष विलास सज्जन करैं दुरजन जरैं हमेस।
यह विचार सरदार कवि कीन्हो कछु कलेस ॥

इति श्री महाराजाधिराज काशीराज श्रीमदीश्वरी प्रसाद नारायन स्याज्ञाभिगामी कृष्णा प्रिया पुरवासी हरिजन कवीश्वरात्मजेन सरदाराख्यकवीश्वरेन विरचिते मानस रहस्ये साहित संपूर्णम्

दोहा

उनइस[१९] सौ यकईस[२१] बुध द्वादसि सित बैसाख।
छपी नकल लिखि चुक्यो महादेव हरि भाष। १

विषय—

रामायण के दोहे चौपाइयों के गूढ़ार्थों के साथ भाव छंद, रस और अलंकारों का विवेचन।

विशेष ज्ञातव्य—छंद, रस और अलंकारों के विवेचन की प्राचीन कसौटी को लेकर 'रामायण' की परख की गई है। प्रत्येक चौपाई, दोहा, सोरठा, छंद आदि में गूढ़ार्थ तथा रस अलंकार दर्शाने का यत्न किया गया है। प्राय: प्रत्येक कांड की प्रसिद्ध चौपाइयों को उदाहरण के लिये चुना गया है। अलंकारों के निदर्शन के साथ छंद रचना की ओर निर्देश किया गया है।

इस ग्रंथ के कर्त्ता काशी के महाराज ईश्वरी प्रसाद सिंह के आश्रित थे।

रचनाकाल सं० १९०४ वि० है और लिपिकाल संवत् १९२१ वि०।

संख्या २५७. जोग वासिष्ठ सार (या ज्ञानसार), रचयिता—सरस्वती (कवीन्द्राचार्य), निवासस्थान काशी, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८३/४ × ४३/४ इंच. पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५५, अपूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०० वि० के लगभग, लिपिकाल—सं० १८४० वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत् सेठ शिव प्रसाद जी साहु गोलवारा, मोहल्ला सदावर्ती, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

... ...

ते प्राग बनास सुषी। नर नारी को दुनही दुषी ॥ ७ ॥
पूरनेंद ब्रह्मेंद्र गोसाई। जाकी कानी तन मन भाई ॥
स्तुति कविंद्र की निसुदिन करै। हीय हरष आषिन जल भरै ॥ ८ ॥
दयासील संतोष विराजै। जामै छमा धरम बहु छाजै ॥
ज्ञान दान अनुभव को सागर। पर विराग विज्ञान उजागर ॥ ९ ॥
परम अनंद सब हो को देन। दुष सहत पर स्वारथ हेत ॥
काशी मै कोऊ नाहि न पूजा। कवि "कविंद्र" सो और न दूजा ॥ १० ॥
पहिले गोदातीर नेवासी। पाछे आइ बसे श्री काशी ॥
रिगु वेदी अस्वलायन साषा। कीन्हो ज्ञान सार ऐ भाषा ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

काशी की अ ....की कर की षकरि मिटाइ।
सब ही को सब सुष दिए श्री कविंद्र जग आइ ॥ १२ ॥
......सार जाके हिय बसै। ताके दुष सब पल में नसै ॥
और मुक्ति को नही उपाउ। ताते तब ज्ञान ठहराउ ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

है अनंत व्यापक सकल चिन्मय सीरोधाम।
अनुभव ते ठहरात जो ताकों करौ प्रनाम ॥ १ ॥

अंत—

संवत सत्रह[१७] सै बरष ·· ··· ··· षं।
फागुन ·····एकादसी भयो विष्णु के हर्ष ॥ १४ ॥
परमेसुर को पाइकै पाइ कृपा······स।
बन्यो ग्रंथ अनभौ लिए भक्त अरु गुरु के उपदेश ॥ ३५ ॥

कविंद्र सरस्वती सन्यासी। पंडित ज्ञानी काशी वासी ॥
अर्थ उपनिषदनी के जानी। लियो पार ब्रह्म···नी ॥
उन यह ग्रथहि···बनायो। जाहि बनावत सब सुष पायो ॥
ज्ञान सार है या को नाम। ज्ञानी पावै सब सुष धाम ॥
जौ लौ रहिहै भूमि अकास। तौ लों "ज्ञानसार" परगास ॥
चारि वेद चारौ जुग जौलों। "ज्ञान सार" यह रहिहै तौलौं ॥
इति सर्व विद्यानिधान कविंद्राचार्य सरस्वती विरचिते भाषा
जोग वासिष्ठसारे··· ··· ···दसमो प्रकरण ॥ १०

संवत् १८४० मिति आश्वनि सुदि एकादस्यां चंद्रवासरे पोथी राधाकृष्ण की लिषां सुभंभूयात् ॥

विषय—

संस्कृत के योग वाशिष्ठ का हिन्दी में संक्षिप्त अनुवाद है।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ अपूर्ण और दीमक के खाजाने के कारण अत्यंत जीर्ण शीर्ण दशा में है। कोई भी पत्र प्रकृत अवस्था में नहीं है। रचनाकाल दिया तो है; परंतु उपर्युक्त कारण से ठीक पता नहीं चलता। संवत् १७०० वि० पढ़ने में आता है। लिपिकाल संवत् १८४० वि० है। रचयिता का नाम सरस्वती है जो अपने को कविंद्राचार्य लिखते हैं। ये संक्षिप्त विवरण में आये कविंद्र सरस्वती से अभिन्न ही हैं। प्रस्तुत ग्रंथ में इनका परिचय दिया है। जिससे विदित होता है कि ये पहले गोदावरी तीर पर रहते थे; वहाँ से फिर काशी चले आए। ये सन्यासी थे और अपने को ऋग्वेदी और अस्वलाएन शाखा का बतलाया है। ग्रंथ से यह भी पता चलता है कि इनके पूर्नेंद्र ब्रह्मेंद्र नामक कोई शिष्य थे जो नित्य इन कवींद्राचार्य की स्तुति किया करते थे तथा इस ग्रन्थ को लिखने में जिनका हाथ रहा ज्ञात पड़ता है।

संख्या २७८. कवित्तादि, रचयिता—सर्वसुषदास, निवासस्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८'४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५३, अपूर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८८०, प्राप्तिस्थान म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि —

जग विपरीति वितीतत रीतौ होत जात सुत वित न चिनैये ॥
शेस आदि अपवर्ग स्वर्ग सुष नश्वर विश्व नरेश विपैये ॥
है हित दास उपास विलासमनि आस ग्राम उपहास न दहिये ॥
श्री वनवास निवास इकौसें वसि विश्वास अन्यास अघैये ॥
निर अभिमान न्हान अचलासनतिलक सुचालमालमिलिनैये ॥
लोभ सोभ मद मदन मत्सरं स्वाद वाद मोहाद मिटैये ॥
हरि गुरु नाम धाम धर्मी धुनि आदर नाद प्रसाद पचैये ॥
सकल समीत प्रीति भक्तनि सों जथाशक्त भुगतत भुगतैये ॥

× × ×

रसिक विहारी जू की मृदु मुसिक्यानिनि पर नित बलिहारी हमदरस भिषारी हैं ॥
करुना के सागर उजागर वर नागर हो अति ही उदार सुकुमारु चारु प्यारी हैं ॥
विरद विचारौ निज जन न विसारौ इतहित चित निहारौप्यारे सरन तिहारी है ॥
हौ हितकारी पिय''सरन हैं हम सब विगारी तुम 'सबसुष' सवारी है ॥

मध्य—

॥ अथ चत्रभुंज स्वामी जू के जसनि कौ भावार्थ ॥

सुमृत पुरान ज्ञान भक्ति भाव काढ्यों कन चत्र भुज स्वामी जू ने द्वादस जस गाए हैं ॥
तिन हीं की'' ''भलाई निज कर्म धर्म थोथे सब फटकि उडाए हैं ॥
काहू देव सों न काम सेवाहू न सालिग्राम ग्यास उपवासहू न नित प्रसाद पाए हैं ॥
हरि जू ने निजानंदप्रेमरस सार संचु राधा रविप्याये सो सबसुष दरसाए हैं ॥

अंत —

प्रीति के न जात पांत तात मातगोत नात रात हू न होत प्रात शत्रु है न मीत है ॥
प्रीति कें न भीत कीर्त्त रीति भांति हार जीत करुना अनीन भीत सो सदा पुनीत है ॥
प्रीति कें न ज्ञान ध्यान आपुही अमान मान स्यान न अयान हान वान ना प्रतीति है ॥
प्रीति कें न रूप रंग अंग न अनंग संग उगहू न भंग जंग होत न समीत है ॥

॥ सवैया ॥

श्री सुकुमार कुमार उदार विहारी विहारनहूं वस कीनें ॥
ईश्वर आदि सुराद नरादि पसादि पषेरन हूं जल मीनें ॥

—अपूर्ण

विषय—

इन सौ पद्यों में सर्व सुषदास की फुटकल कवित्तादि प्राप्त हुए हैं। कवित्तों के

साथ साथ पद (केवल एक), कुंडलिया, दोहे और सवैये आदि भी हैं। इनका विषय धार्मिक है और ये श्री राधावल्लभी संप्रदाय से संबंधित हैं। भाषा इनकी ब्रज है।

आरंभ में भक्ति और वैराग्य के कवित्त हैं। इसके पश्चात् श्री हित हरिवंश जी की 'बानी' का भावार्थ है, अर्थात्—उनके पदों के भावों को अपने शब्दों में रखने का प्रयत्न किया है। फिर चतुर्भुज स्वामी के 'यशों' का भावार्थ है और अंत में श्री हित हरिवंश जी की प्रशंसा में लिखा गया अष्टक है।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत ग्रंथ से रचयिता, सर्वसुखदास के जीवन वृत्त के विषय में केवल इतना ही ज्ञात होता है कि वे वृंदावन निवासी थे।

दो अन्य बातों का पता भी चलता है:—

पहली बात यह है कि 'सेवक बानी' की टीका के समान इसमें भी व्यास जी का नाम हरिदास व्यास करके आया है:—

'सेवक हरिदास व्यास नागर वर
औरन हूं गाई श्रीराधा यों निगमनि पाई है॥

दूसरी, चतुर्भुज स्वामी नामक राधावल्लभी कवि ने (जो श्री हरिवंश जी के सुपुत्र श्री स्वामी वनचंद जी के शिष्य थे) 'द्वादशयश' नामक कोई रचना की है:—

'चत्रभुज स्वामी जू ने द्वादश जस गाए हैं।'

उक्त ग्रंथ सन् १९०६-८ ई० के त्रैवार्षिक विवरण में उल्लिखित है।

रचनाकाल का कोई पता नहीं चलता।

संख्या २७६. हिरण्य कश्यप वध, रचयिता—सहजराम, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—५ × ९.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८८३ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० ठा० जगदीश सिंह जी, गाँव—महरूडीह, पो०—मलाकहरहर, जि०—इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥

॥ दोहा ॥

उमा वचन सुनि सूलधर कहन लगे इतहास॥
जो सुनि संसय सोक भ्रम होय मोह मद नास॥

॥ चौ० ॥

कनक कसिप निसिचर बलवाना। सुत प्रहलाद जासु जग जाना॥
संग्रामकी कुल गुरु आये। कनक कसिप सो तुरत बुलाये॥

सुत प्रह्लाद प्रान प्रिय मोरे। सौंपौं तुम्हें कहौं कर जोरे ॥
कीजै इन्हें पढ़ाइ सचेता। स्वल्प ताड़ना लाड समेता ॥
सुनि नृप वचन विप्र अनुरागे। लै नम सिद्धि पढ़ावन लागे ॥
लिखि पाटी दीन्हो कर वाम। सो लिपि लोपि लिख्यो हरिनाम ॥

अंत—

गज रथ साजि साजि सब साजू—देहु देव प्रह्लादहि आजू ॥
सुनि सुरेस सिंहासन दीन्हा—कनक दंडकर चामर लीन्हा ॥

+ + +

"सहज राम" ऐसे प्रभुहि तजहि भजहि प्रभु आन।
सो पावर सोइ मंद मति सोइ नर परम अयान ॥
बार बार सनमानि सुर हरि भे अंतर ध्यान ॥
देव दिगीस मुनीस गन प्रमुदित कीन पयान ॥

इति श्री रघुवंस दीपक हिरण्य कस्यप वंधनो नाम चतुर्थ सर्ग समाप्तं ॥ शुभमस्तु शुभंभूयात् संवत् १८८३

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "हिरण्य कस्यप वध" है। किंतु ग्रंथ की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि ग्रंथ का नाम "रघुवंश दीपक" है और "हिरण्य कस्यप वध" "रघुवंश दीपक" का चौथा सर्ग मात्र है। ग्रन्थ पूर्ण रूप में नहीं प्राप्त हुआ। "हिरण्य कस्यप वध" में भक्त प्रह्लाद की कथा वर्णित है।

संख्या २८०. शालिहोत्र, रचयिता—सहदेव (संभवतः), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—१०¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२८ अपूर्ण, रूप—अच्छा, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ सालहोत्र सास्त्र लिख्यते ॥

ऐसी बुद्धि करै जो आगें एक अश्वपति नाम रिषीश्वर भयौ सो समुद्र के तीर नारायण कौ भजन करतु हो तौ भयौ। सो एक समयें अश्वपति जी होमु करतु भयौ। सो अबही होमु के विषै रिषीश्वर के नेत्र मै सुं आय प्रवेश भयौं जब हां आसूं धरती के ऊपर जाय नाख्यो जहां सूं घोड़ा उत्पन्नि भयौ जहां प्रसंग कर अश्व नाम पायौ ॥ सो दाहिने नेत्र सेती आंसू परयौ ॥ ताकौ अश्व उत्पत्ति होतु भयौ ॥ वाई बरे वामे नेत्र सेती

घोड़ी उत्पन्नि होति भई। सो घोड़ा पांख समेत उत्पन्नि महादेव की जाय पाइगा पाई॥ सो घोड़ी उडि करि सारी पृथ्वी के विषै फिरि बे करतौ। चरिवे करतौ कोई के वस हो तौ नहीं। गाम पेडा विसवास दे तौ नहीं। घोर तिहि जाइ रिषीश्वर तप करतौ हौ जिहि ओर रिषीस्वर की बंदगी माही रहतौ। कछुक दिन जो पाछै राजा इंद्र की हजूर घोड़ा की पुकार गई। जदी राजा यावत् सुणि करि रिषीश्वर के पास गयौ बोल्यो केतेक दिन लागै राज इंद्र आपकी देह करि कै रिषीस्वर की वहौत पूजा करी।

मध्य—

पीड़ा उपचार

जो घोडा के पेट पीडा अधिकी होय अध बंध गयो होय तौ और उपचार कीजै और उपचार करें ते अछा न होय तौ यों जतन कीजै॥ घोड़ा के चार्यौं पग बांधि कै आगानै कीजै पाछै गल की जागा सूं लगाइ करै। भौरी की जड़ै ताई जी के नीचै चारि अंगुल नल की काणी नापि लीजै पाछै घोड़ा के धणी हाथ सुनल की चमड़ी पैंचि करि ऊपर कीजै। पाछै नल के ऊपर छाणौ फेरि जे अगिलि सुभ॥ मिसिजियै गोढ़िजै पाछै नल की कांकणी एक अथवा दोय छेद जै तौ पेट पीडा तत्काल मिटै। वधि छटे

अंत—

बस जंग जुर कौ जानिबौ॥ सब अंग मैं फोरा परै। आपुन ही फूटि रक्त वहै सुरमा सेर ऽ। ताकौ······सौंधौ नोनु सेर ऽ। वच सेर ऽ। कागदी नीबू कौ रस सेर ऽ॥ मर्दन करै दिन ७ दिन मे तीनि वार॥ डाढे अश्व कौ घो ताकौ इलाज॥ रार पैसा २ कनेर के बीज पैसा २ नौसादर पैसा २ भरि सैंधौ लवण पैसा २ कागदी नींबू का रस सेर ऽ··· सौमी···लगावै

(एक पंक्ति अत्यन्त पंडित होने के कारण अपाठ्य है)

सा ७ वायविडं पैसा ७ सोया के बीज पैसा ७ गज पीपरि पैसा ७ पीपरमूल पैसा ७ हींग पैसा ४ भरि घीव सेर २ इक ठौर करि दीजै। नींबू को रस सेर १ मरदन करै तौ चाजु जाय॥ रक्तवाय रस कौ जानिबौ अगिलौ धरुन चलै। पिछलो धरु गाछौ रहै ताकौ इलाज। सैमर की छाल सेर ऽ॥ आमरे के पता सेर ऽ॥ बच पुरुसानी पैसा ४ नेगडी के पात सेर १ लहसन पैसा ७ भरि सम भाग दीजै। घ्रन गा(ढ़)कौ ताकौ मरदन करै पगन सूं। तातौ ईंट सूं सरीर सेकै। औषधि रांधि के लेप करै। और पवावैं। सेकै दिन सात ७ दिन भरि मै दोवार॥ मनमथ जर कौ जानिवौ। घोडी देषि के मनु करै ताते उपजतु है ताकौ इलाज पर पीपरि पैसा ४ सदा फल कौ रस सेर ऽ। घीव ऽ॥ सब इकठे दीजै। जहरवाद कौ इलाज आवै मुष गरौ सूज्यौ पाया सूज्यौ रहै। तापै चल्यो न जाइ। अनीं के पगा बांटिकै सबरे अंग मै मरदन करै। ताके ऊपर कागदी नीबू के रस कौ मर्दन लेप करै॥

विषय—

शालिहोत्र नामक शास्त्र का वर्णन।

संख्या २८१. रुक्मिणी हरण, रचयिता—सांईं कृता, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ रुक्मिणी हरण सांईया कृना कृत लिष्यते।

गाहा चौसरा

भल कवि कहण भले गुण भरिया।
उक्त विशेष पार ऊतारिया॥
कालाहि बालाजिण करिया।
आपै आप आपणै तरिया॥ १॥

विषय—

रुक्मिणी हरण की कथा वर्णित है।

संख्या २८२. अध्यात्म बोध, रचयिता—साधुशरण, कागज—देशी, पत्र—२५, आकार ५·५ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८०६ वि०, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

श्री पर्मात्मने नमः श्रीगुरु चर्न कमले नमः॥
अथ अध्यातम बोध साधु राम सरन कृत्य लिषते॥

॥ दोहा॥

अचल अपंडित अगम नित्य सद चित अनद रूप॥
निराकार निरमल अजप व्यापक परघट गूप॥ १॥

छपै

जगपति जग करतार बृह्म प्रतम अविनासी॥
आदि अनादि अभेद अमर अद्वं निर्वासी॥
पूरन परमानंद सर्व व्यापी सर्वंगी मन देही॥
बुद्धि परैं अगम गति नाना रंगी
सुप्रकास साछी विमल निराकार निरगुन भनी॥
अचित्त चित्त निजरूप कूं साध सरन बंदन भनी॥ २

अंत—

अपनौ तौकू जानि कैं पर्म गुरु कह्यौ ज्ञान ॥
पातैं परै न और कछु मतिबचन मो मान ॥ २६७ ॥

वेद विरोधी नासतिक आंन धर्म सैं प्रीत ॥
ताकू मतै सुनाइयौ साध सरनि सुनि मीत ॥ २६८ ॥

हरि भक्ता अरु गुरुमुषी विषै बासना हीन ॥
ताकै आगे भाषीयौ होय सुनत ब्रह्मलीन ॥ २६९ ॥

छिपौ भेद परगट कीयौ श्री सुषदेव दयाल ॥
चर्नदास कू ज्ञान दैं कीन्हौ तुरति निहाल ॥ २७० ॥

चर्नदास तारन तरन या कलि संत औतार ॥
आत्म आपनो जांनिकैं निजमत कीयौ प्रचार ॥ २७१ ॥

आतम राम ईकंग गुरु ब्रह्मवेता सरवज्ञ ॥
लछिदास मम दीन को तुरत मिटायो अज्ञ ॥ २७२ ॥

सोई अब तो सैं कह्यौ साधु सरनि सिर मोर ॥
द्रिढ मति ह्रिदै धारीयैं या मत सम नही और ॥

इति श्री साधूराम कृत अध्यात्म बोध समाप्त

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ 'अध्यात्म बोध' में वेदांत का निरूपण है। यह ग्रंथ कदाचित् योग वाशिष्ठ के आधार पर लिखा गया है:—

'सहंस किरत हैं कूप जल'.....
यातें भाषा साध सरन सहस किरत से कीनी ॥'

प्रस्तुत 'अध्यात्म बोध' में अन्य छः दर्शनों से अधिक वेदान्त की प्रशंसा की गई है और इसके विचार उसके ही अनूकूल हैं।

ग्रंथ गुरु शिष्य संवाद के रूप में है।

विशेष ज्ञातव्य—

रचयिता साधु शरण है। इनका नाम साधू रामसाधुशरण भी मिलता है परन्तु अधिक जगह 'साधु सरण' ही मिलता है जिससे यही नाम प्रतीत होता है। 'ज्ञानस्वरोदय' के रचयिता स्वामी चरणदास जी की शिष्य परम्परा में हैं। ग्रंथ के अन्त में जो उल्लेख है उसके आधार पर यह परम्परा इस प्रकार प्रतीत होती है:

सुखदेव
|
चरणदास
|
आतमाराम
|
लछिदास
|
साधुसरण

अतः 'साधुसरण' लछिदास के शिष्य प्रतीत होते हैं। 'अध्यात्मबोध' के बीच बीच में कुछ सवैया-कवित्त लछिदास के भी आए हैं।

ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति की लिपि अशुद्ध है। लिपिकाल एक अन्य ग्रंथ के आधार पर संवत् १८०६ है। ये ग्रंथ एक ही जिल्द में लिपिबद्ध हैं।

संख्या २८३. वाणियाँ, रचयिता—सिद्ध गरीब। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र।

संख्या २८४. वाणियाँ, रचयिता—सिद्ध मालीपाव। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २८५. वाणियाँ, रचयिता—सिद्ध हडतान्नी। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २८६. विवेकसार, रचयिता—सीतल दास, कागज—आधुनिक, पत्र—१५, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, पूर्ण, रूप—अच्छा, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०३ वि०, लिपिकाल—सं० १९०८ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गुरु गणपति सारदा फनपति सिव हनुमान
जन सीतल सुमिरन करै देहु सुमति सतज्ञान। १
श्री गुरु चरण सरोज हिय धरि पर उपकार।
विवेकसार बरनन करै सीतल तत्त्व विचार। २
तत्त्व विचार विवेक श्रुत वेद सास्त्र मतसार।
प्रथम नाना भाति ते अथा सुमति अनुसार। ३
गुरु शिष्य संवाद वर बरनत विविध प्रकार।
अर्जुन उधौसो कह्यो कृष्ण ये ही निरधार। ४

गुरु सो पूछत सिष्य यह कहौ विवेक जो सार ।
सो विवेक काको कहौ कहौ नाथ विस्तार । ५

मध्य

गुरु वाच । कवित्त

अर्थ धर्म कोध चारिऐ प्रसिद्ध फल ताकी ताकी चारि क्रिया जो पुराण वेद गाइ है ।

वार्ता बनिज षेती अर्थ को बढ़ावत है कर्म वेद त्रयी आदि धर्म सुख दाई है
दंडिनी है तप सवे कामना प्रसिद्ध करै कर्म विष्नु प्रीति सो अनिक्षिकी कहाइ है

सीतल दास वार्ता त्रयी दंडिनी अनिक्षिकी यै फलन कि क्रिया चारिउ प्रगट बताइ है ४४

सिष्यौ वाच दोहा

वेद कहत संसार तरु मूल त्वचा अरु डार पात्र फूल फल वेलि को कहिए भेद विचार ४५

गुरुवाच कवित्त

अव्यक्त मूल अविद्या माया अनादि तरू महातत्व चित बुद्धि मन अहंकार त्वचा चारिए । पट कंध सब्द स्पर्श रूप रसगंध काल अरु साषा कही प्रकृति विचारिए । परण अनेक सो चौरासी लक्ष जोनि जानी सुमन समूह सब साधना प्रचारिए । फल दुख सुख दोउ आसामइ वेलि जानी सीतल दास वासना है बीज उचारिए । ४६

अंत —

संवत वोनइस सै अधिक तीनि पौष बुधवार
असिन सप्तमी कीन तब विवेक सार विस्तार । १००
पढ़ै सुनै चित लाइकै समुझत होत अनंद
हरि मारग बिन श्रम लहै क्रिया करै नद नंद ॥१०१॥

इति श्री सीतल दास विरचितार्य विवेक सार संपूर्ण संवत् १९०८

बोलि कौवा क आमे भेद पुरुब मुह होई गरइ षोजी क बोली
जनी हवल मिलि दुइ बोलै तौ सुभन जन मिलै तीनी
बोलै तब कोइ घर क अदमी मीलै गरइ दवाइकै चारि बोली
बौलै तब जानी की कोइक मरन भ अपन पराए कहं देषी लेइ ।

विषय —

गुरु शिष्य संवाद रूप में अनेक विषयों का वर्णन है, जैसे—"आन्विक्षीकी, त्रयी

वार्ता, दण्ड नीतिश्च शास्वती" और "शब्द स्पर्श रूप रस गंध", "छुधा पिपासा जरा मरण" आदि का समाधान किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—

वेदान्त का सहारा लेकर ग्रन्थ तैयार किया गया है। यह मुख्यतया ब्रह्म सूत्रों पर अवलम्बित है।

संख्या २८७. तरक चिंतावनी, रचयिता—सुंदरदास, पत्र—३०, आकार—४ × २$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

चोपइया छंद

पूरन ब्रह्म निरंजन राया। जिन यह नख सब साज बनाया॥
तो कौं भूलि गये बिभचारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥ १॥

गर्भ मांहि कीन्ही प्रतिपाला। तहां बहुत होते बेहाला॥
जनमत ही वह ठोर बिसारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥ २॥

बालापन महि भये अचेता। मात पिता सौं बांध्यो हेता॥
प्रथमहि चूके सुधि न संभारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥ ३॥

बहुरी कमार अवसथा आई। ताहू माहि नहीं सुधिकाई॥
षाइ बेलि हसि रोइ गुदारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥ ४॥

भयो किसोर काम जब जाग्यो। पर दारा कौं निरषन लाग्यो।
ब्याह करन की मन महि धारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥

अंत—

भ्रंमत भ्रंमत जब आवैं अंता। तब नर देह देंहि भगवंता॥
आपु मिलन की सौंज सवारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥५४॥

सकल सिरोमनि है नर देहा। नारांयन को निज घर येहा॥
जामहि पइयै देव मुरारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥५५॥

चेति सकै सो चेतहु भाई। जिनि डहकावो रांमदुहाई॥
'सुंदरदास' कहै जु पुकारी। अइया मनषहु बूझि तुम्हारी॥५६॥

इति श्री तरक चितावनी।

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं दिए हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ के साथ १—गंगाष्टक—शंकराचार्य कृत, २—पहरा—दादू जी कृत, ३—शिव आर्ती (संस्कृत), ४—ध्रुव चरित—जन गोपाल कृत ग्रंथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध हैं।

संख्या २८८ क. सिद्धांत आदि फुटकर विषय वर्णन, रचयिता—सुंदरलाल उप० सुंदर सखि, निवास स्थान—जयपुर, कागज—देशी, पत्र—११५, आकार—८३/४ × ६ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९१७ वि०, लिपिकाल—संवत् १९२५, प्राप्तिस्थान आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ सिधांत लिषते ॥

॥ दोहा ॥

निगम नगम पावत कछु अगम सकल गुन ग्रिंथ।
नेमा येमाँ तैं ते परै परम परा को पंथ ॥ १ ॥

तेज पुंज सबतैं परैं सब धामन सिरमौर।
श्री व्रिंदावन धाम है विहरत नित्त किसोर ॥ २ ॥

नही मेस के सीस पै नहि नीचै रवि चंद।
लसत नित्त श्री विपन वर सहज रूप आनंद ॥ ३ ॥

सरवर तरवर भूमि वन दिव्व सरूप सुधाम।
परम रम्य आनंद घन तेज पुंज अभिराम ॥ ४ ॥

मन वच क्रम तिह पायवो नाहिन कछु सामर्थ।
विना क्रिपा श्री हरि प्रिया साधन सकल विअर्थ ॥ ५ ॥

जुगल विहारी रूप को निचल तहाँ विहार।
संग सकल अवतंसी सहचरि विंद अपार ॥ ६ ॥

निराकार अविकार नित नित चैतन्य रूप।
व्यापक सत्या सकल जग अक्षर अचल अनूप ॥ ७ ॥

पर ब्रह्म परमातमा कारन सबके ईस।
गोचर ज्ञानातीत अज परतै पर जगदीश ॥ ८ ॥

मध्य —

॥ अथ ब्रिज महातम लिषते ॥

॥ दोहा ॥

अवतारी अवतार मनि धर ब्रिज मैं अवतार ।
अधम उधारन बिसद बर कीनो जस बिसतार ॥ १ ॥
कलजुग जनमे जीव ज्यो जिनकी ऐसी बित्त ।
चोरी जारी मैं रहैं निसचल जिनके चित्त ॥ २ ॥
विषै वासना वसत नित अष्ट पहर चित माँहि ।
ग्यान भक्त उपदेस मैं छिन मन लागत नाहि ॥ ३ ॥
याते प्रभु लीला करी ज्यो इनके मन भाय ।
सहज तिरैं भवसिंध सों कैसेंहु कही गाय ॥ ४ ॥

\+ \+ \+

ब्रिज चोरासी कोस मैं बीस कोस बन धाम ।
छिन परात पर बिसद बर बिलसत स्यामा स्याम ॥११॥
तीरथराज प्रयाग है सब तीरथ मैं मुष्य ।
सो बंदत ब्रिजदेस कूं पावत अति हिये सुष्य ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

जिन जिन वरने ग्रिंथ यह रग (न) रसिक रस रूप ।
मै तिनको सांमित लियो अपनी मति अनूप ॥४५॥
सनको संमित पाय कें कोनों यह रस ग्रिंथ ।
आदि संघिता की कथा रंग देवी को पंथ ॥४६॥
श्री निंवादित विदत जग रंग देवी अवतार ।
जिनकी संपरदाय यह रस ि.ध रस का सार ॥४७॥
तिनके दासन दास को है 'सुंदर'' यह दास ।
गाय्रू जस रस माधुरी सफल करी मन आस ॥४८॥
कायथ सुत सुषलाल को जैपुर वास पुनीत ।
सेवग जुगल किसोर को सषी भाव रस रीत ॥४९॥
बाली के गढ मैं भयो स्मय पाय कछु बास ।
अति उन्नत गर ब्रिढ महा सोभित अचल मवास ॥५०॥

लीला जब सों करत यहाँ जुगल विहारी लाल।
जहाँ धनी जहाँ धाम है पावन परम रसाल ॥५१॥
गिर सु अंस विज भूम को सुष प्रिद छित अवतंस ॥५२॥

× × ×

ब्राह्मण रोड़राम पुजारी। सषी भाव सेवैं प्रिय प्यारी॥
विवधभांत हरिजस नित गावैं। करै गान विद्या सुष पावै ॥५७॥
नित श्री स्यामा जिन क इष्ट। कलकंठी छाप अभिष्ट॥
जिनको मेरो नित सतसंग। रहैं भजन रति छकि रसरंग ॥५८॥

॥ दोहा ॥

है मेरो तिनमै सदाँ श्री सतगुर को भाव।
होरन्ही कछु हेत जग लषि हरभजन प्रभाव ॥५९॥
ईसुर्य अरु माधुर्य के ग्यता रसिक सुजान।
भक्तभाव रस रीन चित फोज सिंहै चोहान ॥६०॥
एकादस श्री भागवत चत्रुदास कृत नित।
सुनै सुनावै प्रीतकर प्रेम पगो हैं चित ॥६१॥
करै पिता ज्यों पुत्र पैं कीनू मोसूं नेह।
तिनकी संगत पायकै अति सुष लह्यो अछेह ॥६२॥

अरु बलदेव सिंघ कछुवाहा। करकै भजन लेत जगलहा॥
बैठत उठत रसोई करैत। राम राम मुष सूं उच्चरत ॥६३॥
जिन भ्राता ज्यो हेत बढायो। कर सत संग परम सुष पायो॥

× × ×

सत संगिन को दिवस रह्यो सुषद सतसंग।
यह निकुंज रस माधुरी गाई छकि रस रंग ॥६६॥
श्रोता वक्ता सबन सों विनती मेरी येह।
दो असीस सुन ग्रंथ यह करि उपगार सनेह ॥६७॥

× × ×

उगणीसै[१९] सतरै[१७] सुषद संवत सहित हुलास।
शुक्ला सातै माघ की कीनो ग्रिंथ प्रकास ॥६९॥

य पोथी बाबा जी श्री जमनादासजी कू दी सुंदरलाल नै पोथी की नकल है लेषक दोस बहोत है सो पोथी सो घणी है सो सोध सुध होगी मीती असाढ बदी ४ सं० १९२५ क ॥

विषय —

सिद्धांत, दास लक्षण, राधिका रानी, जस प्रताप, व्रज माहात्म्य, वृंदावन सतक, गिरिराज माहात्म्य, श्री जमुना जी का व्रज में आगमन, रसिक भक्त का सुभाव, लक्षण, महिमा, सत्संगति महिमा, बाधिक जना का लक्षण, अति पुनीत वनितान सू बिनती, अधम उद्धारन प्रसंग और भक्त माहात्म्य आदि विषयों का वर्णन किया गया है।

रचनाकाल

अगणीसै[११] सतरै[१७] सुषद संवत सहित हुलास।
शुक्ला साते माघ की कीनो ग्रिंथ प्रकाश ॥ ९९॥

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल संवत् १९१७ है। पुष्पिका में लिपिकाल संवत् १९२५ है। परंतु पुष्पिका का लेख दूसरी स्याही और दूसरी कलम से लिखा गया है जिसमें ग्रंथकार सुंदरलाल द्वारा एक जमुनादास बाबा को प्रस्तुत ग्रंथ भेंट करने का उल्लेख है। अतः इसे पुष्पिका का लेख भी नहीं कहा जा सकता।

संख्या २८८ ख. निकुंजरस माधुरी, रचयिता – सुंदरलाल उप० 'सुंदरसखि', निवासस्थान—जयपुर, कागज—देशी, पत्र—२५५, आकार—८¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०१४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नम ॥ अथ निकुंजरस माधुरी लिष्यते ॥ मंगलाचरन लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

श्री स्यामा रस रूपनी नवल लाल रस रूप।
नित्त विलासी रंग रस जै जै जुगल सरूप ॥ १ ॥

परमेसुर पर मातमा आद अनीह अनंत।
नित्त विहारी विपिन वर सदा कामनीकंत ॥ २ ॥

जहाँ चंद्र जहाँ चद्रिका जहाँफूल जहाँ बास।
जहाँ रसिक मुंन मुकटनो जहाँ रसिक रस रास ॥ ३ ॥

श्री वृषभान कुमार बिन ज्यो ध्यावैं नंद नंद।
सुंदर ज्यो बिन जामनी अबै न इस्रत चंद ॥ ४ ॥

मंगल मंगलमूल सुष दायक वाँछित काम।
मंत्र विमोहन लालकोनित्त लाडली नाम ॥ ५ ॥

॥ श्री प्रिया माधुरी नाम लिष्यते ॥

जै जै जै श्री नित्त किस्योरी। मंजुल सुष की दाता गोरी ॥

रास बिलासनि रस बिनोदनी । रसिकलाल नवरंग मोदनी ॥ ६ ॥
जै जै रसिक[3] मुकट मन[4] हरनी । ब्रिंदावन[5] लीला[6] बिस्तरनी ॥
रासबिलासनि[8] रस प्रकासनी[9] । कुंज निवासनि[10] मंजुहासनी[11] ॥

॥ अथ द्वितियो कुंज बरनन ॥

मध्य —

॥ दोहा ॥

जै जै मधुरा माधवी माधव मधुर सरूप ।
विलसत नित श्री विपनबर एक तत्व दो रूप ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

कुंज मंजु अद्भुत मनभाई । फटक मनन की भूम सुहाई ॥
कहूँ प्रवाल के चित्र सुहाए । कहु मरकत मनि के छवि छाये ॥ २ ॥
कहुँ लहरिया हरिया हरित मनन के । परम सुहाकभायक मन के ॥
लगी तमालन कंचन वेली । झिलमिलात छवि चारु सुहेली ॥ ३ ॥
अगि मोतिन के झोंरा झूमैं । सापाफलन भारछत चूमैं ॥
अरुणपीत जंगाली मोती । रंग रंग छबि जगमग जोती ॥ ४ ॥
श्याम बाल मोतिन के सोहैं । जगर मगर दुति छबि सरसो हैं ॥

\+ + +

॥ अष्टम कुंज ॥

॥ दोहा ॥

नवल कुंज सहचर नवल नवल विपनरसरूप ।
विलसन नवल विहार नित जै जै जुगल सरूप ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

नवलकुंज नित परम सुहावन । नवल सहचरी नितमन भावन ॥
नवल नित श्री जुगल विहारी । नवल केल नित आनंदकारी ॥ २ ॥
घन की बूंद भूमि की रैनां । सिंध लहरि गिन पार लहैना ॥
उडगण अगनित गगन मंझारी । सब तै इनके सरस विहारी ॥ ३ ॥
अमित रूप रस रास रंगीले । नित्त लगन रस मगन रसीले ॥
नित चित चाव नवल रस रंगा । निश नवल हित प्रेम अभंगा ॥ ४ ॥

अंत—

बरनी समय बसंत की सोडस [६] कुंज सुचार ।
बरनी इक[१] छकि रंगरस ग्रीषम केलि विहार ॥ ७० ॥
द्व[२] पावस रित रूपनी च्यार[४] सरद रित केलि ।
गेक[१] हेम ईक[१] सिसर की केलि केलि रस रेलि ॥ ७१ ॥
यह विध कुंज पचीस की लीला परम पुनीत ।
बरनी यह 'सुंदर सषी' कर द्रिढ प्रेम प्रतीत ॥ ७२ ॥
लवनिमेष जो मन लगै बिसरैं दुष संसार ।
जुगल रूप छवि माधुरी बसै ह्रिदे निरधार ॥ ७३ ॥
लीलापरम पुनीत यह रसिक जनन के हेत ।
सुनत गुनत संभ्रत मिटैं भवसागर हित सेत ॥ ७४ ॥
ज्यो कोई गावै सुनै सषी भाव कर चित ।
सरसैं हिये सुहाग सुष मंगलदायक नित ॥ ७५ ॥
नेमा प्रेमा तै परैं पराभक्त की रीत ।
गाई लहि श्रीगुर कृपा करि दंपत पद प्रीत ॥ ७६ ॥
ये लीला रसमाधुरी प्रगट्यो ग्रंथ अनूप ।
मंगल मंगल मूल नित सुंदर मंगल रूप ॥ ७७ ॥

इति श्री लीला रस माधुरी पंच बिसतमी कुंज सिसर रित विहार बरन ॥ श्री श्री ॥

विषय—

राधाकृष्ण की भक्ति, चरित्र और विहार आदि तथा उनकी २५ कुंजलीलाओं का वर्णन किया गया है। कुंजलीलाएँ ऋतुओं के अनुसार हैं। सोलह कुंज लीलाएँ बसंत की, एक ग्रीष्म की, दो पावस की, चार शरद की, एक हेमंत की एवं एक शिशिर की। इस प्रकार समस्त २५ लीलाएँ हैं।

ग्रंथ के १—निकुंज रस माधुरी, २ सेवासुखमाधुरी और ३—लीलारस माधुरी नाम से तीन भाग हैं। प्रत्येक भाग के भी उपविभाग हैं जिनका ब्योरा नीचे दिया जाता है:—

१—निकुंज रस माधुरी प्र० विलासः— प्रियामाधुरी और जुगलमाधुरी आदि	पत्र १ से ६ तक
२ निकुंज रसमाधुरी अवतार चरित्र दूसरा विलास	पत्र ६ से १० तक
३—निकुंज रसमाधुरी नित्यविहार की कथा तीसरा विलास	पत्र १० से २१ तक
४—निकुंज रसमाधुरी सखि सहचरी अलबेली की उत्पति	पत्र २१ से २९ तक
५—निकुंज रसमाधुरी सिंगार रस का बिभावादिक भाव	पत्र २९ से ३३ तक

६—निकुंज रसमाधुरी ललितासूँ श्री गोपेसुर प्रश्न कियो
ललिता जी उत्तर दियो सो प्रसंग पत्र १६ से ३८ तक
७—सेवासुत माधुरी (पूर्वार्ध) पत्र ३८ से ६० तक
८—लीलारस माधुरी (उत्तरार्द्ध)—ऋतुअनुसार पच्चीस
कुंज लीलाओं का वर्णन पत्र ९० से २५५ तक

विशेष ज्ञातव्य —

रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिए हैं। प्रस्तुत रचना के पश्चात् 'सिद्धांत' नामक रचना है जो अलग कलम और अलग स्याही से लिखी गयी है। उसमें रचनाकाल सं० १९१७ तथा लिपिकाल संवत् १९१५ दिए हैं। लिपिकाल तथा पुष्पिका का लेख दोनों अलग कलम और अलग स्याही से लिखे गए हैं।

संख्या २८८ ग. सनेह मंजरी, रचयिता—सुंदरलाल "सुंदरसखि", निवासस्थान—जयपुर, कागज—देशी, पत्र –६, आकार—८$\frac{3}{4}$ X ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१६ वि०, लिपिकाल—सं० १९२५ वि० लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषापुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सनेह मंजरी लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

जै स्यामा जै स्याम नित अरस परस रसनेह।
चित अनुरागी परसपर सुष आनंद अछेह ॥ १ ॥
उत्तम नातो कठिन अति या जग बीच सनेह।
अंतर भाव न भेद कछू एक प्रान दो देह ॥ २ ॥
साजन को सुष चाहिये करै देह निज पेह।
है अति ही दुसत्तर महा अगम नातो नेह ॥ ३ ॥
जहां नेह जहां सुष नहीं सुष चाहे कर नेह।
ज्यो साधु वैराग बिन व्रिथा रमाई षेह ॥ ४ ॥
नेह निबाहत रसिक जन करके उत्तम प्रीत।
बिछरत जल मछी मरै ऐसी बिनकी रीत ॥ ५ ॥

मध्य—

पिय वियोग की आँच लग ज्यों ज्यों सुकै देह।
त्यों त्यों चित रसरीत द्रिढ होत डहडहो नेह ॥ ३४ ॥

दासी परघर पास मैं रस रति केल विनोद ।
मंत्री मंतर होत द्रिढ देत कंथ मन मोद ॥ ३५ ॥

निपट अटपटी नेह की अद्भुत रीत निहार ।
देह नेह सूं पर जरें नैन बरसत धार ॥ ३६ ॥

पोषक प्रानन पीव की तोषक समै बिलास ।
सोषक विरह समुद्र की पिय मन करत हुलास ॥ ३७ ॥

बोलत बोल सुकंठ मै अधर मंद मुसक्यान ।
नित अनुराग न पीव की सपने कोप निमान ॥ ३८ ॥

कामधेन चिंतामनि सुर तरवर की छाँह ।
जानत ना चित चाव सूँ गर पीतम के बाँह ॥ ३९ ॥

अंत—

रुच से ये सुर आनकी तजि भरता करतार ।
जीयत अजस मुवे नरक ज्यो विभचारन नार ॥ ११५ ॥

जार पुरुष के संग सों नारी लहै न चैन ।
चैन लहे तो जस नही सब विध पातक ऐन ॥ ११६ ॥

सुन्दर पै सिधांत है और कपट जंजाल ।
निसचल प्रेम प्रतीत सूं भजो बीहारीलाल ॥ ११७ ॥

रित[६] ससि[१] अंकुर[९] चंद्रमा[१] साल विकरमाजीत ।
भान सप्तमी सुषनवर मंगल बार पुनीत ॥ ११८ ॥

यह सनेह की मंजरी सुन्दर भरि सनेह ।
पति बरता नारीन हित सुगप्रिद मंगल गेह ॥ ११९ ॥

सखी भाव कर जो भजै नित्त बिहारी लाल ।
जिनके हित रस ग्रिंथ यह कीनो "सुन्दरलाल" ॥ १२० ॥

"सुंदर" कायथ जात है जैपुर नगर निवास ।
समय पाय कछु न भयो मौलीक गढ़वास ॥ १२१ ॥

"सुन्दर" या संसार मैं द्रिढ़ नारी को फंद ।
सो काट्यो करकै क्रिया श्री रा··· ··· ···

—अपूर्ण

विषय—

राधाकृष्ण एवं अपने पति से कपट रहित प्रेम करने का वर्णन ।

१०७

रचनाकाल

रित[६] ससि[१] अंकुर[९] चंद्रमा[१] साल विकरमाजीत ।
भान सप्तमी सुषद बर मंगलवार पुनीत ॥ ११८ ॥

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ अंत से खंडित होने के कारण अपूर्ण है; परंतु यह खंडित अंश थोड़ा सा ही प्रतीत होता है। शायद १।२ दोहे और रहे होंगे, क्योंकि अंत में ग्रंथ समाप्ति के लक्षण हैं।

रचनाकाल संवत् १९१६ है। लिपिकाल "सिद्धांत" के अनुसार संवत् १९२५ के लगभग है। प्रस्तुत ग्रन्थ "निकुंज रस माधुरी" और "सिद्धांत" के साथ एक हस्तलेख में है। इन सबके रचयिता भी सुन्दरलाल ही हैं।

संख्या २८९. वाणियाँ, रचयिता - सुकलहंस। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त विवरण पत्र।

संख्या २९०. अलंकार ग्रंथ, रचयिता—सुखदान, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—६ × ४'७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३१, पूर्ण, रूप—प्राचीन पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान -गोस्वामी श्री महाराज गोपीकृष्ण जी, बिहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद।

आदि—

श्री राधा वल्लभो जयति ॥ श्री श्याम नंदनो जयति ॥

सवैया

श्री हरिवंश प्रसंस जगत्रमहारसदायक लायक ताई ॥
आनंद रूप विचित्र अनूप सु भूप रसज्ञन के सुषदाई ॥
लाग हियें जुत राग सदा बचसों रचि कीरति जासु लड़ाई ॥
तो पद पंकज रेणु हियें धरें होत जु सिद्ध सवै चतुराई ॥ १ ॥

दोहा

जो लै उपमा दीजियें सो कहियें उपमान ॥
जाकूं उपमा होत है सो उपमेयहि जान ॥ २ ॥
तेई वर्ण्यावर्ण्य है उपमे अरु उपमान ॥
व्याख्या तिनकी होयगी लेहु अनुक्रम जान ॥ ३ ॥

अथ पूर्णोपमा

उपमा अरु उपमेय के जौ होहि गुण जु समान
ताही सौं पूर्णोपमा कहत जु कवि "सुषदान" ॥ ४ ॥

यथा

सांच कहति हौं लहि हियै ज्यौं तिल माफ सनेह ॥
त्यौं तुव गुण अहै राधिके रहे लाल रमि देह ॥ ४ ॥

मध्य—

अथ अनन्वय ॥

॥ दोहा ॥

कहियै एकहि वस्तु कौं उपमे अरु उपमान ॥
तासौं कहत सु अनन्वय अलंकार "सुषदान" ॥ १० ॥

सवैया

चंचल लोचनि तामधि चारु निहारत ही मन मोहत मेरौ ॥
वानी सुधारस सानी लहाँ सुनि कैं श्रव छाड़त नाहिन केरौ ॥
देषत ताहि बध्यौ पिय चातुर देषत तें तजिगै नहीं नेरौ ॥
हेरि फिर्यो अध ऊरध मध्य तेरे मुष की उपमा मुष तेरौ ॥ ११ ॥

अंत—

अथ विनोक्ति

॥ दोहा ॥

विद्यमान जो कछु विना हीन रम्य जो होय
सो क्रम सौं द्वै भाँति कौ है विनोक्ति ये दोय ॥ १०४ ॥

गोतक छंद

बिन काज ही मुरि बैठिवौ बिन लाज ही पट कौ धरै ॥
बिन नेह सौं भ्रकुटी मरोरन देषिवौ तपकी करै ॥
मुसिक्यान ही बिन बोलिवौ "सुष दैन जू" न भलौ लगै ॥
बिन कारनै मन भाविनी इहि मान तें दुष ही जगै ॥ १०५ ॥

इति श्री अलंकार ग्रन्थ समाप्त ॥ श्री राधा वल्लभो जयति ॥

श्री रस्तु ॥ श्री ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रन्थ का वास्तविक नाम ज्ञात नहीं होता। पुष्पिका के आधार पर इसे "अलंकार ग्रन्थ" लिखा गया है। अस्तु, इसमें अलंकार विषय पर विचार किया गया है। ग्रंथ में केवल अर्थालंकारों का ही वर्णन है। शब्दालंकार छोड़ दिए गए हैं। विषय के निरूपण में किसी प्रकार का क्रम अथवा वर्गीकरण नहीं मिलता। अलंकारों के लक्षण दोहों में दिए हैं और उनके उदाहरणों के लिए दुर्मिल, सवैया, तोटक, मदिरा आदि विविध छंदों का प्रयोग हुआ है।

विशेष ज्ञातव्य—

प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता का नाम-धाम आदि परिचय प्राप्त नहीं होता। "श्रीराधा वल्लभो जयति" आदि तथा मंगलाचरण से प्रकट होता है कि ये कोई राधा वल्लभी संप्रदाय के अनुयायी हैं। ग्रन्थ में अलंकारों के लक्षणों के अनुरूप दिए गए उदाहरणों से भी यही विदित होता है। इनका विषय श्री राधिका जी है और दृष्टिकोण वही राधावल्लभी संप्रदाय का है।

ग्रन्थ के रचनाकाल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं।

संख्या २९१. रसरत्नाकर, रचयिता—सुखदेव मिश्र, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४०, अपूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८९१ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि— ... ...

॥ जथा ॥

सुनि सुनि पुनि पुनि हंसति क्यों करति न कछू इलाज।
अचरा ऊचोई रहत दिन द्वै ते विनु काज ॥१२॥
जोवन जो निज देह मे आयो जानति वाम।
कवि पंडित तासों कहै ग्यात जोवना नाम ॥१३॥

॥ ग्यात जोवना जथा ॥

षेलन वारिन संग अजों फरति धूरि के नेह।
वोइ षेलत षेल ये रहति वचाये देह ॥१४॥
डर अरु लाज सहित वहै होइ जो मुग्धा नारि।
ताहि नवोढा कहत है सुकवि समूह विचारि ॥१५॥

मध्य—

॥ सिल्पिनी दूती जथा ॥

आनि केतिउ रंग कै फिरि फिरि हा हाषाई।
प्यारी सूरति रावरी मोपै लेति लिषाई ॥ १८४ ॥

॥ स्वयं दूती जथा ॥

दिन अथवत कहि सावरे कौन हेतु इत आइ।
लग्यो कटीली वेलि मे अचरा दे सुरझाइ ॥ १८५ ॥

अंत—

॥ वितरक जथा ॥

कौजंुम फूलत रैनि दिन रैनि यह ताने तिय मुष आहि ।
फूली फूली फीरति यह चंद्रकला सी जाहि ॥ ३३० ॥

॥ इति संचारीण ॥

॥ अथ सात्विक भाव जथा ॥

स्थभ स्वेद रोमांच स्वर मागो वेपथ मानि ।
विवरनता अस वा प्रलये आठो सातिक जानि ॥ ३३१ ॥

॥ आठो कौ उदाहरन जथा ॥

विवरन असुवा मूरछा स्तंभ कंट-त अंग ।
देषत भाग्य दुहुन के कंप सेद रस भंग ॥३३२॥

इति श्री मिश्र सुषदेव कवि वृचित भाषा रस रतनाकर ग्रंथ समाप्त भाद्र सुक्क पछे तिथौ पचम्या सनिवासरे लीपितं भवानीदीन संवत १८९२ सन् १२४२

विषय—

नायिका भेद तथा नवरस वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ का प्रथम पत्र लुप्त हो गया है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८९२ है।

संख्या २९२. श्रीकृष्ण स्तोत्र, रचयिता—(मिश्र) सुखलाल, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९७६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ श्रीकृष्ण स्तोत्र ॥

॥ सवैया ॥

पेट के काज भरे बहु वेष अलेष के रंग सौनैक न राग्यो ।
क्यों रे कहा कर्‌यौ तै जग आनि कै लाग्यो अलागि मैं लागि सौ माग्यौ ॥
भाग बड़ोई यहै अब तेरी रहै भगवंत की भक्ति मे पाग्यो ।
नातरू चारि असी के बसी भयो डोलि है कर्म के दागनि दाग्यो ॥ १ ॥
क्यों रे गयो कितनौ दिन बीति कै मूढ़ अजौ लगि तूं नहिं जाग्यो ।
सोवै बनै नहिं जौ लगि रे जगपालक के पग पंकज पाग्यो ।
चूकत क्यों व अनारी भयौ भगवंत भजे किनि सोधि लै आयो ।
नातरु चारि असी के बसी भयौ डोलि है कर्म कदागनि दाग्यो ॥ २ ॥

अंत —

चाकर चतुर्भुज कौ चेरौ चक्रपानि जू कौ रंक राधावल्लभ कौ विप्र हौ बिहारी कौ।
भिच्छु भगवान जू कौ दास हौ दमोदर कौ दीनानाथ जू कौ दीन मगन मुरारी कौ।
सेवक श्रीनाथ जी कौ अच्युत अनुग नंद नंदन कौ नौकर गरीब गिरधारी कौ।
सुखलालची हौं मुखलाल जू के देषिवे कौ कवि सुखलाल कृष्नचंद सुखकारी कौ ॥९॥

॥ दोहा ॥

करियै कृति चहियै न कछु रहियै गहियै गहि कुल चाल।
सहियै दुष सुष एक सौ सौ लहियै गोपाल ॥ १० ॥

इति श्री मिश्र सुखलाल कृतं श्री कृष्ण स्तोत्रं समाप्तम् ॥

यह पुस्तक जैपुर की आई हुई पुस्तक से लिखी गई है ॥ मिती कुवार वदी ९ भौमवार संवत् १९७६ ई० ॥ तारीष १७ सितंबर सन् १९१९ ई० ले० पं० सूर्य नारायण ॥

विषय —

कृष्ण स्तुति।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९७६ है। रचयिता का नाम सुखलाल है। रचना के अंत में यह नाम दिया है। प्रस्तुत रचना रसखान के कवित्तों के साथ एक हस्तलेख में है।

संख्या २६१ क. प्रबोध चंद्रोदयनाटक या ग्रंथ, रचयिता—सूरति, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—६¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८६, प्राप्तिस्थान—महंत श्री राजाराम जी; मठ, चिटबड़ागाँव, रामशाला; डा०—चिटबड़ागाँव; जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेशाये नमः ॥ अथ प्रबोध चंद्रोदय ग्रंथ लीष्यते ॥

॥ ककुभा छंद ॥

कीर्ति वर्म इक नृपति रह सदा विषै आशक्त।
हांस विलास सिंगार अरु नट लीला अनुरक्त ॥ १ ॥
मंत्री तेहि गोपाल तीन चित मै कीयो वीचार।
कीजै ऐसो जतन कछु नृप उतरै भवपार ॥
तब एक नट कै वोलि कै नाटक सिषवो ताहि।
जामे मोह विवेक कौ जुध्य कथा सब आहि ॥
तब इक दिन नृप सौं कही आएउ नट जु नवीन।

स्वांग विवेक अरु मोह को नीके करत प्रवीन ॥
ताको आग्या दीजिये ज्यौं विवेक की जीति ।
भई मोह हार्यौ सबै रूप रच्यौ यह रीति ॥
तहां एक दिन अती प्रसंग्य ह्वै कीर्ति बर्म बोह राजा ।
बैठो हुतो सभा सुषदायेक साजे सकल समाजा ॥
सुत्रधार इक नारी लिये संग आइ दंडवत कीनी ।
ताको भूप निहारी गुनी अति आग्या तेहि एह दीनी ॥
नय विवेक अरु महामोह को स्वांग आनु एही वारी ।
तब उन तहा रच्यौ एक परदा राष्यौ तामधि नारी ॥

मध्य—

॥ क्रोध उवाचा ॥

मैं हो क्रोध जहां मै आयो तहां प्रबै ह्वै जाइ ।
साधुन्ह हुँ के मन एक छन में करो असाधु महाइ ॥
विस्वामित्र बडे जग तपसी जिनके तप बल भारी ।
तिनके ह्रीदे प्रवेस कीयो मैं सुत बसिष्ट के मारे ॥
जाकै हिय मैं बसौं सुवह सुन माता पिता संहारै ।
और कहा कहौं आपही आपुहो को मों मारै ॥
ए बातें सुनि नृप विवेक तहां अपनो सुभट पठायो ।
सहनसील जेहि छमा कहत तिन क्रोधहि वचन सुनायो ॥

॥ सहनसील उवाच ॥

अरे मूढ जेही थल मे आयो तहां न तू ठहराई ।
कैसो अगीनी पुंज जौं आवै सो देषत जरहु जाई ॥
तैं जु कही रिषि विश्वामित्र हिय प्रवेस मै कीनो ।
सुत वसिष्ठ के मारे तिनतें यह निजबल कही दीनो ॥
कहुतौ रिषि ने अब वसिष्ठ की सहनसीलता जानी ।
तब सुपने पग आइ तहां तूं क्यौं न रहौ अभिमानी ॥
तातें मों आगें भागें तेव कह्यौ सकल जग जानै ।
रे मतीहीन बडाई अपनी क्यों तु वृथा वषानै ॥

अंत—

यह सुनि मन बैराग जुक्त ह्वै भक्ति ग्यान मन ध्यायो ।
ह्वै समाधि में आधि व्याधि तजि परमानंद पद पायो ॥

यह नाटक जब लख्यौ नृपति ने चित्त औरै गति छायो।
बूडे हुते जगत के विषई तिन परमारथ पायो॥
कीर्ति वर्म राजा गोपाल ही बहुत धन्यता दीनी।
जगत काज ते ह्वै उदास करी भक्ति परम गति लीनी॥
जो कोउ याहि सुनैरु सुनावै सोउ परम गति पावै।
"सूरति" सुकवि धन्य वह जग में केहि विधि हरि गुन गावै॥

इति श्री प्रवोध चंद्रोदय नाटक संमाप्त संपूर्न समत १८८६

समै नाम जेष्ट मासे क्रीष्ण पछे तीजीयां व्रीहस्पति वासरे॥
दसषत सुगन्धराम भाट कै साकिन बड़का गाव कौसिके कौ॥

विषय—

कीर्तिवर्म नामक एक राजा अत्यंत विषयी था। उसके गोपाल नामक मंत्री ने इसको सुमार्ग पर लाने का एक उपाय सोचा। उसने एक नट को प्रबोध चंद्रोदय नाटक —जिसमें मोह विवेक की लड़ाई का वर्णन है—खेलने के लिये तैयार किया। राजा को जब यह नाटक दिखलाया गया तो वह अत्यंत चमत्कृत हुआ और विषय वासना को त्याग कर हरि स्मरण की ओर लगा। फलस्वरूप अंत में मुक्ति को प्राप्त हुआ। कथा आध्यात्मिक रूपक लिये हुए है।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रन्थ में रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लिपिकाल संवत् १८८६ वि० दिया है। ग्रन्थकार ने अपना नाम केवल ग्रन्थांत में दिया है :—

"जो कोउ याहि सुनैरु सुनावै सोउ परम गति पावै।
"सूरति" सुकवि धन्य वह जगमें केहि विधि हरि गुन गावै॥

ये संक्षिप्त विवरण में आए सूरत मिश्र हैं। ग्रन्थ का नाम प्रारंभ में "प्रबोध चंद्रोदय ग्रन्थ" लिखा है और पुष्पिका में "प्रवोध चंद्रोदय नाटक"। यह संस्कृत के "प्रबोध चंद्रोदय" नाटक का ब्रजभाषा में पद्यमय अनुवाद है।

संख्या ०६३ ख. छंदसार, रचयिता—सूरत मिश्र, कागज—देशी, पत्र—८, आकार १०.५ × ७.१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह, गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥ अथ छंदसार लिषते :॥

कृष्ण चरण चित आन, कहुं सुमत पिंगल कछू।
जिह ते छंद हि जांन प्रभु गुन जामै बरनियै:॥ १॥

अथ षोडस क्रम चौ०

प्रथमह संख्या कर्म वतायः प्रस्तारै सूची चित ध्यायः
पुन उद्दष्ट नष्टंरु वषानंः मेर पताका मरकट जानं ॥ १ ॥

दोहा

अष्ट कर्मंए मतकेः पुन वरननं के आंन ।
यह विध षोडस कर्मंरः कहे सुकवि सुष दान ॥ ३ ॥

संख्या उ०

इती मत्त अरु वरन के : किते सरूप वषान ।
यह पूछै गिन्ती जहा : कहे सु संख्या ज्ञान ॥ ४ ॥

\+ \+ \+

सोरठा

गनपति चरन मनाय, गुरु पद कमल प्रनाम कर ।
कहत सुन वहु सुखदाय, कछु आवश्यक छंद जे ॥ ६० ॥ १ ॥

गणविचार गर्भित दोहा

माधौ कौं नम सभाख यही, वांन श्रुत जांन ।
जहां न तो कौं असुभसो, रांमनांम उर आंन ॥ ६१ ॥ २ ॥

गण देवता

कहे मंगलाचरन इहि आठूं गन के रूप ।
सूरत आदि वरन समझ, लखौ नाम कवि भूप ॥ ६२ ॥ ३ ॥

मध्य—

अथ मात्रा उपछंद

गण ध्यार पंच कल वि यह पर कल अंगुहर गीती सुहै ।
विन अंगु अनु अरु राम गीतीं कहै बुध जीतीसुः १ ॥

मरहट्टा छंद

छकल सर चकल अंत गुरु लहु मरहट्ठा मन मांन ।
तामै सुभवांनी सारंग पानी प्रभु जस की सुन पांन ॥ २ ॥

चतुरपदी छंद

धरियै गन सता जह चहु मता चतुर पदी गुर अंता ।
षोडस पद जानोहमृत वषांनो जोगुन गायो संता ॥ ३ ॥

सवया छंद

गुर लघु अंतमत्त इकतीस हकैहै लक्षनै सवैया जानहु ।
रामनंद कहै नामधन्य वह नंद नंद गुन जहां वषांन हु ॥ ४ ॥

अंत—

रसीले रूप आगर विलासी सुखसागर सुनौ जू स्याम नागर इतै हू नैक ढरियै ॥
सु वंसी के बजावनछबीली के रिझावन सबैही चित्त भावन सुवैगी पीर हरिये ॥
श्रीवृंदावन्य नायक समस्तफल दायक सुने हो सब लायकबके सै धीर धारियै ॥
त्रिभंगी मैन मूरत न देषियै महूरतपुकारै द्वार "सूरत" कृपा की दृष्टि करियै ॥३॥

छद बंध जोकर : छंद बंध चित लाय ।
छंद बंध हु छाडि के, नंद नंद गुन गाय ॥ ४ ॥

इति श्री छंद सार सुत (सूरत ?) मिश्र कृत संपूर्णम् ॥ पुस्तक भागीरथ री छै ॥

विषय—

पिंगल विषय का वर्णन । वर्ण मेरु ज्ञान आदि के कोष्टक दिए हैं । गण विचार, देवता, लघु गुरु भेद, छंद भेद (मात्रा छंद वर्ण वृत), नाम छंद मात्रा छंद, कंता छंद, मधु छंद, दीपक छंद, अभीर छंद, हाकल छंद, तैकरी छंद, सिंहावलोकन छंद, चरणाकुल छंद, अलिल छंद, रड छंद, पवंग छंद, महादीप छंद, हरि, रोला, काव्य, छंद ॥ इतिमात्रा छंद ॥

मात्रा उपछंद:—

मरहट्टा, चतुरपदी, सवया, मर्ता, त्रभंगी, पद्मावती, वरवीर, झूलना, मदनहरा, पंच वदना ॥ इति मात्रा उपछंद ॥

अथ मम नाम: दोहा अर्ला छंद, चरना दोहा, नंदा दोहा, चुलियाला, निश्रेणी, चोवोला, ककुभा, उल्लाला (इसके भेद), गाहा छंद, गाहा विचार, गाहा भेद नाम, छपै नाम, कुंडलिया, इसकी विध: ॥ इति मात्रा वृत छंद ॥

वर्ण वृत:—श्री छंद, छंद, मधु, वारि, समूहो, हंसा, विलास, प्रिय, हारी, समोहा, चउरसा, ससिमुखी, कामलता, विज्जोहा, वेकूंट धाम संखवलि, किन, मथांना, पंमा, सपानजका, कलिका, करहा, चित्र, केतुमालती, तुगा, कमल, पंजा, विजू माला, मल्लिका, पवांनकी, रत्नकरा, तोमर, विंव, मुनि, पापक, सजुंगता, पणव, चंपक माला, वंधू, दोधक, अमृतगत, इंद्रव्रजा, सुमुखी, चपला, मोहक, ब्राह्मी, अनकूल, सेनका, स्वागता, रथोद्धता, सालिनी, मोहक, द्रुतविलंबत, चंद्रवर्ण, कुसुमविचित्रा, प्रियंवदा, तामरस, प्रमिताक्षरा, वस्थ, मालती, सैल, मंगली, पंकज, कलहंस, तारक, वसंत तिलक, चामर, निसपालक, मालनी, माला, मनहसे, निशचल, चंचला, विपेषक, प्रथ्वि, रूपमाला, चर्चरी, दंडिवा, सार्दुलविक्रडित, मुनिंद, झूलना, सरस्वती, मेखर, अग्धरा, मदिरा, केकिंनी, सर्वग्रामी, कालका, मदे, मल्लिका, कला कुमल, माधव, किरीट दुमिला, पजा गंगोदक, सुखदा, अरि विदेमुखि, किसोर, सालूर, मनहर भेद ···· ।

विशेष ज्ञातव्य—

पुस्तक पत्राकार है । लिपि सुडौल और सुंदर है । पुस्तक के अंत में "गणागण

विचार" लिखा है जो कविप्रिया का अंश है तथा जिसको लिपिकार ने 'छंदसार' को पूर्ण करने के पश्चात् लिखा है।

संख्या २६४ क. भ्रमरगीत, रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—१३०, आकार—१०$\frac{3}{4}$×६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६११ वि०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत चुन्नीलाल जी 'शेष', विट्ठलदास पुरुषोत्तमदास कंठी माला वाले, विश्रांतघाट, मथुरा

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ भ्रमरगीत वरननम् ॥

॥ राग विहाग ॥

उधौ बेग ही ब्रज जाहु।
सुरत सदेस सुनाय मेटो तलफनन को दाहु।
काम पावक तूल सम तन विरह स्वास समीर।
जरि भसम नहि होत पावै लोचनन के नीर॥
आजु लों इह भांति है वे कछुक कुशल सरीर।
समाधान किये विनातिय क्यों धरै जिय धीर॥
वार वार कहा कहों सुनि सषा साधु प्रवीन।
सूर सुमति विचारि देषो जांवै जल विन मीन॥ १॥

॥ राग केदारो ॥

सुनि सषा हित प्रांन मेरे नाहिनैं सम तोहि।
कैसे हू करि अलिन को जो गोपिकन सों मोहि॥
रैनि दिन मम भक्ति उनके कछुक रतन आंन।
और सर्वस मोहि अरप्यौ तरुन तन धन प्रांन॥
ब्याज मे यह रतन दीने वृथा गोप कुमार।
सो लोकता सामीपता सारूपता मुंज चारि॥
एक रही सायोज्यता सों निधि नहि तिन ग्यान।
सोई तुम उपदेस द्यौ जो रहै पद निरवांन॥
जोन अंगीकृत कर वे सोइ होनि वास।
सूर गाय चराय होने बहुरे वस व्रजवास॥ २॥

मध्य—

॥ राग नट ॥

ऊधो सुनि माधौ को नांतो।
ज्यों पतंग की चटक दिन है व्रज नेही ए माहिन रातो॥
रावि समीप सदा हरि हम कूं अब कीनी यह घातैं।

मन तलफत न तजत पलक मै नीर न बूझत बातै ॥
ज्यौं पतंग तन मन कों अरपै प्रेम प्रीति मरजानैं।
अधिक पीर रापै उर अंतर दीपग दया न मानैं ॥
ज्यों चातक पिक बरत धरै मन घन वरषत है प्यास :
जाचै नही ओर सर सलिता स्वाति बूंद की आस ॥
जासों हित ताकी गति ऐसी अंदेस मन मन माहि ।
सूरदास हरि प्रीत हमारे हरि के भाये नाहि ॥७८॥

॥ राग धनासरी ॥

मधुकर कहि क्यों गोकुल आयो ।
हम वैसी ही सखु अपने मे दुनो विरह जगायो ॥
हम जानत है तिन जु पठाये स्याम संदेशो लाए।
जनम जनम के तून तिरावर को नहिं लार लगाए ॥
जनम सुफल सूर जिनही को काज पराये धाए ॥ १ ॥

अंत—

यह संदेश कह्यौ है माधो । करि विचार सनमुष ह्वै साधौ ॥
इडा पिंगला सुषमना नारी । सुन सहज मैं वसौ मुरारी ॥
ब्रह्मभाव करि सब मैं देषों । अलष निरंजन सब मैं पेषों ॥
पद्मासन इक मन चित लावो । नैन मूंदि अंतरगत ध्यावौ ॥
हृदय कमल मैं ज्योति प्रकासी । सो अच्युत अविगत अविनासी ॥
इह परकार विषम गति तरियै । जोग पंथ क्रम क्रम अनुसरियै ॥
दुसह संदेश सुनहु ब्रजबाला । मुरछि परी धरनि वेहाला ॥
वे मधुकर लंपट अनियाई । इह संदेश क्यौ कहत कन्हाई ॥
नंद भुवन मै सदा विराजै । नटवर वेष सदा हरि राजै ॥
रास विलास करे वृंदावन । विच गोपी विच स्याम कान्ह घन ॥
अलि आयो है जोग सिषावन । भक्ति सीप माथे सिरनावन ॥
सूर जोग की कथा बहाई । सुद्धि भक्ति गोपीजन पाई ॥
साधे मते जो जिहि विधि धावै । तैसो भाव हरि पे भरि पावै ॥२६॥

\+ + +

॥ राग बिलावल ॥

इतने जतन तुम काहे कों किये ।
अपने जनन कूं जानि नंद नंदन अनेक भयन ते राषि लिये ॥
अरि अघ वृष भवर तृणावर्त ते ब्याल जीति दावानल पिये ।
इंद्र मांन मट्यौ कर गिरधर छिन छिन अति आनंद बिये ॥

बिछुरन की कछु बात न जानी बचन मनि ब्रजवादि जिये।
सूरदास अज हौं यह लालच बहुत सहत ये कठिन हिये ॥ ५५१ ॥
इति भवरगीत प्रसंग समाप्तम् ॥

विषय—

उद्धव और गोपियों के संवाद का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—हस्तलेख के पत्रे सिलसिलेवार नहीं हैं। प्रारंभ में भ्रमरगीत के ६७ पत्रे हैं। पश्चात् सूर सागर क्रमानुसार प्रारंभ होकर २४४ पत्रों तक लिखा गया है, फिर भ्रमरगीत का शेषांश है। इससे विदित होता है कि एक बार हस्तलेख के पत्रे सिलाई से उखड़ गये थे और जब दुबारा उन्हें सिला गया तो असावधानी के कारण उपर्युक्त गड़बड़ हो गई। 'भ्रमरगीत' के आरंभ में ६७ पत्रों में से संख्या ३, ४ और पाँच के पत्रे नहीं हैं, किंतु जो पद उनमें थे वे सूर सागर के आगे क्रमानुसार १ से लेकर ५ संख्या तक के पत्रों में अलग से लिख दिए गये हैं। ये पद संख्या ७ से प्रारंभ होकर संख्या २६ तक हैं। यही संख्याएँ इन्हें भ्रमरगीत के 'पद' होने की पहचान करवाती हैं।

संख्या २६४ ख. सांझी लीला, रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार ९३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६, अपूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

श्री सांझी लीला लिष्यते ॥ राग गौरी ॥ श्री वृषभानलड़ैती गाईए ॥
कीरत कुल मंडन बाल हो।
सोने की सी बेल हो तन चंपे की सी माल हो ॥ १
हंस गवनि मृग लोचनि स्यामा सोभित सहज सिंगार
चमकत चंचल चीकने हो सिर सटकारे बार हो। २
प्रतिबिंबत कच स्याम सीस पर सोभित सुंदर सारि
चंद के फंद पर अहिनंदन अरुझे कंचन जार हो। ३
अतलस को लहंगा करि गाढ़ी दरियाई की अंगिया पीत
उरज सुभट कंचन को बचन सजि आये रति रन जीत। ४
किस कटि केहरि देषि दुरे हरि जे हरि ते हरि पाय
गज गवनी अवनी कवनी रजनि रति लेति बुलाय। ५
कर चूरो रतन कै झलकै पलकै न लगै पिय देखि
अगुरिन मुदरिन पहुचिन गजरा बाजु बंद बिसेसि हो। ६
कंठ श्री चौकी चमकै दमकै दुलरी पिय पोत।
चित को लेत चोराइ चितै कर वदन चंद की जोत हो ॥ ७ ॥

\+ + +

तिय बोलो ललिताहि दियो राधा पिय चतुर सुजान ।
रसिक रूप धरि क्रीडत हरि रस सागर प्रानन प्रान हो । ३५
सरद निसा सुख एहि विधि राधा माधौ नित्य विहार ।
सोभा पर बलि जाइ स्याम धन औलो सुष सार । ३६

मध्य—

मन उमग्यो पुलक्यो तन स्याम को सगवग रह्यो सनेह
आनंद घटा उमड़ि चहदिस मनो वरषत प्रेम को मेहे हो ॥ ४९
उत राधा रस सनी स्याम के मन अभिलाष अगाध
एहि औसर जौ मिलै स्याम घन पुजै मन की साध हो । ५१
विधि संजोग अकेली राधा संग न कोउ सहेलि ।
वीनत फूल न कुंजन गइ जहा सुंदर वेलि हो । ५२
औचुक भेट भई माधौ सों राधा चितै लजान
कारन कौन इहां तुम आए देषत काहि सुजान हो । ५३
रस सानी अति कोमल वानी वोले सुंदर स्याम
तुमरो प्रेम वांछना मोको लेइ आए एहि ठाम हो । ५४
अति मृदु गुढ़ गुप्त की वतिआं छतियां सुनि सिय रानि
प्रेम उमगि दोउ भेटि भुजन जिमि मिलि तुम लपटानि हो । ५५

अंत—

तुम कौन होरी फूलवा वीनन हारी ।
रंग जतन को वनो वगीचा फूल रही फुलवारी
राम कृष्ण वन माली हेरी वोलो क्यों ना प्यारी
हसी ललीता जव कहो स्याम सों यह व्रीषभान दुलारी
तुमरो लगत कहा मधुवन में रोकी कुंज हमारी
स्याम सकल सषीअन समुझावै हठ न करो तुम प्यारी
षग म्रीग वन वाटिका सकल के हमही है अधीकारी
राधे जी फुल फल लाये वांधो भाति सवारी
सूरदास राधा मोहन छवि येक टक रहे निहारी ॥

विषय—

राधा कृष्ण के विहार संबंधी पदों का संग्रह ।

संख्या २१४ ग. सूरसागर, रचयिता - सूरदास, निवास स्थान—गोकुल, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—१० × ६·८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि - नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० मुरारीलाल जी केडिया, मुहल्ला—नंदन साहु, बनारस ।

आदि—

२ रे पत्र से उद्धृत :—

पहिलो पुत्र देवकी जायो लै वसुदेव दिखायो ॥

बालक देखि कंस हंसि दीन्हो सब अपराध छुड़ायो ॥

कंस कहा लरिकाई कीन्हीं नारद हीं समुझायो ॥

जाके डर तुम करत हो अपडर सो महि पहिलेहि आयो ॥५॥

× × ×

...सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे कंसहि गर्व प्रहारि ॥ १२ ॥

अंत—

९८वें पत्र से उद्धृतः—

चलत न माधो गहे बांह ॥

बार बार पछिताति तबहि ते इहै सूल मन माह ॥

घर बन कछु न सुहात रैनि दिन मनौ मृगी दोदाह ॥

मिटै न तन तपति बिना घनश्याम कोटि घनी बन छाह ॥

सूरदास प्रभु दूरि सिधारे दुख कहिए केहि पाह ॥

विषय —

प्रस्तुत सूरसागर की प्रति में जन्म से लेकर मथुरा गमन तक की कथा है।

विशेष ज्ञातव्य—'सूरसागर' की प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। इसमें संख्या २ से संख्या ९८ तक के पत्रे हैं तथा पदों का संख्या ६१२ है। इसकी लिपि सुन्दर और शब्दों के रूप शुद्ध हैं।

संख्या २६४ घ. सूरसागर, रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—३९१, आकार ११¾ × ८¼ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) २१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४६१४, अपूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सूरसागर लिख्यते ॥

राग बिलावल

चरन कमल बंदौं हरि राइ।

जाकी कृपा पंग गिरि लंघै आंधे कों सब कछु दरसाई ॥

बहरा सुनै मूक पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराई ॥

सूरदास स्वामी करुणामय बार बार बंदौं तिहिं पाइ ॥ १ ॥

॥ राग कान्हड़ा ॥

अबिगत गत कछु कहत न आवै।

ज्यों गूंगे मीठे फल को रस अंतर गति ही भावै ॥

परम स्वाद सबहीं जु निरंतर अमित तोष उपजावै।
मन बानी को अगम अगोचर सो जानै जो पावै॥
रूपरेष गुन जाति जुगत बिन निरालंब मन चकित धावै।
सब विधि अगम विचार हैं तातैं सूर सगुन लीलापद गावै॥ २॥

अंत –

॥ अथ बोध अवतार बर्नंनं॥

॥ विलावल॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ।
हरि चरनारबिंद उर धरौ॥
बोध रूप जैसे हरि धार्‌यौ।
अदिन सुतनि को कारज सार्‌यौ॥
कहौं सुकथा सुनो चित्तधारी।
कहै सुनै सुतरें भव पार॥
असुर इक समैं शुक्र पै जाइ।
कह्यौ सुरनि जीतो किहिं भाइ॥
शुक्र कह्यौ तुम जज्ञ विस्तारौ।
करि कै जज्ञ सुरनि सौं लरौ॥

\+ \+ \+

······ या विधि भयौ बोध अवतार।
सूर कह्यौ························॥
·· ······अथ कल्कि अवतार बर्नंनं॥
॥ राग विलावल॥

--अपूर्ण

विषय भागवत का पदों में अनुवाद तथा कृष्ण लीलाओं का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य – प्रस्तुत प्रति अपूर्ण है। पत्र संख्या ३९१ के पश्चात् का अंश लुप्त है।

रचना काल और लिपि काल दोनों अज्ञात है। इसमें ग्यारह स्कंध पूरे हैं। पश्चात् बौद्ध अवतार की कथा का पद भी पूरा है। सभा द्वारा संपादित सूर सागर में जिन जिन प्रतियों से सहायता ली गई उनमें से प्रस्तुत प्रति की संख्या १९ है।

संख्या २९४ क. सूरसागर, रचयिता—सूरदास, कागज—देसी, पत्र ९८२, आकार—१४ X ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६२९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ ॐ श्री राधेवल्लभो जयति ॥

श्री हरिवंश चंद्रो जयति ॥ अथ श्री सूरदास जी कृत सूरदास जी कृत सूरसागर प्रथमअस्कंध लिख्यते ॥

॥ राग बिलावल ॥

चरन कमल बंदौ हरि राय ।
जाकी कृपा पंगू गिरि लंघै अंधे को सब कछु दरसाय ॥
बहरा सुनै गुंग पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराय ।
सूरदास स्वामी करूनामय वार वार बंदौ तिहि पाय ॥ १ ॥
अविगत गति कछु कहत न आवै ।
ज्यौं गूगे मीठे फल के रस अंतरगत ही भावै ॥
परम स्वाद सबही सों निरंतर अमित तोष उपजावै ।
मन बानी ते अगम अगोचर सो जाँनै सो पावै ॥
रूप रेख जस जानि जुगति बिन मन नर अलप कहो कित धावै ।
सब विधि अगम विचारहिं तातें सूरदास आनदित गावै ॥ २ ॥

अंत—

॥ राजा जनमेजौ जज्ञ कथा ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो ।
हरि चरनार विंद उर धरो ॥
जनमेजै जब पायौ राज ।
येक बार निज सभा विराज ॥
पिता वैर मन माहि विचारि ।
विप्रन सों यो कह्यु उचारि ॥
मोको तुम अब जजगि करावहु ।
तछिक कुटंब सेमेत जरावहु ॥
विप्रन मह्र कुलो जब जागी ।
तब राजा तिन सों उच्चारी ॥

× + ×

सूत सौनकनि कहि समुझायो ।
सूरदास त्यौं हरि गुन गायौ ॥ ३९२१ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे । द्वादसमस्कंदे ॥ श्री शुकदेव परीछित संबादे ॥

श्री सूरदास जी कृत भाषा पद समाप्तं ॥

गोकलेवर ऐसे हैं वनमाली ॥ मानौ प्रात की घटा सांवरी तामे अरुन प्रकाश ॥...
.........मनौ नील मनि .. ..

विषय—

श्रीमद् भागवत का पदों में अनुवाद तथा कृष्ण लीलाओं का वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९१७ है। यह प्रति एक राजा के लिये लिखी गई थी। चतुर्थ स्कंध की पुष्पिका में उनका इस प्रकार उल्लेख हुआ है :—

'इति श्री मन्महाराज राजा बहादुर राजेंद्र गुमानसिंह जीऊ की पुस्तक चतुर्थ स्कंध भाषा॥'

सभा द्वारा संपादित सूरसागर में जिन हस्तलिखित प्रतियों से सहायता ली गई है उनमें से प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या ३ है।

संख्या २६४ च. सूरसागर, रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र-५२०, आकार—१२¾×९¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४५५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

सिद्धि श्री गणाधिपते नमः॥ श्री गोपालजी स्मर्थयान्मः॥

॥ राग बिलावलि॥

चरन कमल वंदौ हरिराइ।
जाकी कृपा पंग गिरि लघै अंधिनि कौं सब कछू दरसाइ॥
बैहरा सुनै गुंग पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराइ।
सूरदास स्वामी करुनामय वार वार वंदौं तिहि पाइ॥ १॥

॥ अल्हईया॥

अवगति गति कछु कहत न आवै।
ज्यौं गूंगे मीठे फल कौ रस अंतर ही गति भावै॥
पर्म सवाद सबही सौं निरंतर अमित पोष उपजावै।
मुनी बानी गुन अगम अगोचर सो जांनै जो पावै॥
रूप रेष जस जांनि जगत बिन निरालंब कहौ कित धावै।
सब विधि अगम बिचारै तातैं सूर सदा आनंदत गावै॥ २॥

मध्य—

॥ मलार गौरी मै॥

मुरली मोहे कुँवर कन्हाई।
अचवति अधर सुधारस कपटी अब कहा कीजै माई॥
बाजति गाजति चढी अनेकरी सौहन सुमति पराई।

सरवस हर्यौ भर्यौ कबहूं कौ और न या सम देति दिषाई ॥
जिनि तन अगिनि दह्यौ कुल अपनौ नातै कैसै होति भलाई ।
अब कहु सूर कौन विधि कीजै बन कौ व्याधि माड घर आई ॥

× + ×

मधुप विरानै लोग बटाऊ ।
दिन दस रहे आपु स्वारथ लगि फिरि मिलि गए न काहू ॥
प्रथम सिद्धि हमकौं दै पठई आए जोग सिषाऊ ।
हमकों जोग भोग कुबिजा कौ इहि कुल यही सुभाऊ ॥
कहा करौं कैसैं हरि देषौं कीजै कौन उपाउ ।
सूरदास प्रभु ज्यौं तन अरप्यौ प्रान रहै कै जांऊ ॥ १४०२ ॥

अंत—

॥ राग भैरवी ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ ।
हरि चरनार बिंदु उरधरौ ॥
जनमे जय जब पायौ राज ।
एक बार निजु सभा विराज ॥
पिता वैर मन मै जु विचार ।
विप्रनि सौं पुनि कह्यौ उचारि ॥
मोकौं अब तुम जग्य करावो ।
तक्षिक कुटम समेति जरावो ॥

× × ×

जग्य छाँडि हरपद चित ल्यायौ ।
सूत सौनिकनि कहि समझायौ ॥
सूरदास त्यौं हरि गुन गायौ ॥

इति श्री भागवते महापुराने द्वादस स्कंधे श्रीमंत भागवत सूरदास कृत सूरसागर संपूरनं सुभं मस्तु पुस्तक पठनार्थं श्री महाराजाधिराजा श्री राजा छत्रसिंघ बहादुर जू देव की सिरकार मैं लिषतं सुभचिंतक का······गो कस्वा बडौन वारे बालमकुंद काइस्थ गौर पोथी लिषी मौजे मगरौरे मैं मिती भाद्रव मासे क्रस्न पक्षे त्रोदसम्यां सनि बासरे प्रथम पहरे·· सातत दिन संपूरन भई संवत अष्टादस इस ऊपर असिया ॥

विषय—

श्रीमद्भागवत पुराण का अनुवाद तथा श्री कृष्ण लीलाओं का वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है । लिपिकाल संवत १८८० है । गोलोकवासी बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर जी के सिद्धान्तानुसार सभा द्वारा संपादित किए गये सूरसागर में

जिन २ प्राचीन हस्तलिखित २० प्रतियों से सहायता ली गयी उनमें से प्रस्तुत प्रति की दूसरी संख्या है। इसके अक्षर बड़े सुडौल तथा पाठ बहुत कुछ शुद्ध है। इसमें बारह स्कंध पूरे हैं।

संख्या २६४ छ. सूरसागर नवं स्कंध, रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—६'८ × ४'८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५६, अपूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८१ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० ठा० जगदीश सिंह जी, गाँव महरूडीह, डा० मलाक हरहर, जि०—इलाहाबाद

आदि—

···हित नाथ कठिन व्रत कीन्हो न जल भोजन खाइ ॥
मुरै न अंग कोउ जौ काढै निश वासर सम जाइ ॥
तुम्ह घट प्रान देषियत सीता विप्रान रघुराइ ॥
बंदर वीर दशहु दिशि धाये ढुढन गिरि वन वार ॥
सुभट अनेक शयन दल साजे परे सिंधु के पार ॥

× + +

सूझै नहीं पान पर मुद्रा रहे नएन जल पूर ॥
शावधान होइ सोक नेवारो वोडो दछिन हाथ ॥
जो शहिदानी सूर मुद्रिका दये प्रिति कर नाथ ॥

अंत—

॥ ब्रह्मादि देव अस्तुति ॥

राग देव गंधार

विनती करि विधि प्रभुहि सुनाउ ॥
महाराज रघुवीर धीर को समै न कवहु पाउं
जाम रहत जामिन के वीते तेहि अवसर उठि धावो ॥
सकुच होत सुकुमारी नींद में कैशे प्रभुहि जगावों ॥
दिनकर किरिनि होत रुद्रादिक ब्रह्मादिक एक ठाउँ ॥
अगनित भीर अमर गन की तंह ताते ठौर न पाउँ ॥
उभत सहावन मधि सीता पति उठि मै फेरि फिराऊँ ॥
न्हात षात सुष करत साहिवी कैसें करि अनषाउँ ॥
रजनी होत अदित गुन गावत नारद तौ सिर नाउं ॥
तुमहीं कहो करै हो रघुपति केहि गनती में आउं ॥
एक उपाव करो कमलापति पत्री मुष वेद सुनाऊँ ॥
पतित उधारन नाम "सूर" प्रभु एह रुका पहुंचाउँ ॥

इति पत्री पोथी सूर सागर नौम स्कंध सपूर्णम् शुभस्तु ॥ संवत् १८८१ फाल्गुण मासे शुक्ल पक्षे सप्तम्यां शुक्र वासरे

विषय—

भागवत के प्रस्तुत नवम स्कंध में रामायण की कथा है। वही कथा पदों में लिखी गई है। पदों के साथ साथ दोहे भी हैं। सूरदास की रचना ने इस स्कंध में वर्णनात्मक रूप धारण किया है।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ का प्रस्तुत अंश खंडित है। इसके आरंभ के १४ पत्रे लुप्त हैं। लिपिकाल सं० १८८१ वि० है।

संख्या २६४ ज. सूरसागर (दशम स्कंध, एकादश स्कंध और द्वादश स्कंध), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—२५२, आकार—९½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६२३, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०२ वि०, प्राप्तिस्थान—नागरी प्रचारिणी सभा (सूरसागर विभाग) काशी, बनारस

आदि—

रेख उठहे भौंह कमान कुटिल सर छूट्यो।
विद्या चारि गोपाल सूर तजि अरु सर्वस हू लूट्यो ॥

॥ राग मलार ॥

स्याम गुन रासि मानिनि मनाई।
रह्यौ रस परस पर मिट्यौ तन विरह नर भरी आनंद त्रिय उरनमाई ॥
कबहूँ रति सहज कबहूँ करति विपरीति वासर हूने सब रैनि वीती।
श्रमित दोउ अंग भए अतिहि विह्वल परे सेज रति पति अधिक बढी प्रीती ॥
भोर भए चले निज भवन पितु मातु के फिरे सकुचे देषि नंद द्वारे।
सूर प्रभु स्याम सकुचि गए प्रमुदा धाम कहति एगुन भले हरि तुम्हारे ॥ ७ ॥

अंत—

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो।
हरि चरनार विंद उरधरो ॥

जन्म जै जब पायो राज। येक वार निज सभा विराज ॥
पिता वैर मन मै सोविचार। विप्रन सो जो कह्यौ उचार ॥
मोको तुम अब जज्ञ करावहु। तछक कुटुंब समेत जरावहु ॥
विप्रन सेत कुली जब जारी। तब राजा तिन सो उचारी ॥
तछक कुल समेत तुम जारो। कह्यो इंद्र निज सरन उबारो ॥
नृप कह्यौ इंद्र सहित तेहि जारो। विप्रन हूं यह मतो विचारो ॥

आसतीक तेहि अवसर आयौ। राजा सो यह वचन सुनायो ॥
कारन करनहार भगवान। तछक डसनहार मत जान ॥
बिनु हरि अज्ञा दुतियन बात। कौन सकै काहू संताप ॥
हरि जो चाहै त्यौंही होई। नृपतामे संदेह न कोई ॥
नृप के मन यह निश्चै आयो। जग्य छाडि हरि पद चित लायो ॥
सूत सौनिकनी कही समुझायो। सूरदास त्यौंही कही गायो ॥
इति श्री भागवते महापुराणे द्वादश स्कंधे श्री भागवत सूरदास कृत समाप्त ॥

॥ दोहा ॥

सूर सुसागर सूरकृत गुन गन सागर स्याम।
गिरधर सागर प्रेम के लिषि जै मंगल नाम ॥ १ ॥
बारानसी सुरसरी निकट मान मंदिल असनाम।
संगसजीवन लाल को सुंदर सुपद सुकाम ॥ २ ॥
कविताई रस दुगुन सत अधिक एक सत दोय।
अँम्मावस वैशाख की भौमवार शुभ होय ॥ ३ ॥

विषय—

श्री मद्भागवत का अनुवाद एवं श्रीकृष्ण लीलाओं का वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ के प्रारंभ के ३९७ पन्ने लुप्त हैं। प्रस्तुत अंश में दशम, एकादश और द्वादश स्कंध हैं। दसम स्कंध के भी आरंभ के पन्ने नहीं हैं।

लुप्त हुए पत्रों से प्रकट होता है कि प्रस्तुत प्रति में सूरसागर के सभी स्कंध थे। सभा द्वारा सूरसागर के संपादन में जिन-जिन प्रतियों से सहायता ली गई उनमें प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या १२ है।

इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९०२ है।

संख्या २८४ ङ. सूरसागर (दशम स्कंध तथा विष्णु पद), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—६१७, आकार—१० × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२०६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी. प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा (सूरसागर सपादन विभाग), बनारस

आदि— ... ...

पट राजत उर सोहे भृगु रेषा हो।
संष चक्र गदा पद्म बिराजत अति प्रताप सिसुवेषा हो ॥
तब देवकी भई जिय व्याकुल अगिनित चरित में पेषा हो।
बैठी सकुच निकट पति बोले दुहु पुत्र मुष देषा हो ॥
सुनि देवकी एक आंन जनम की तोको कथा सुनाउ हो।
तुम मांगो मैं दियो नाथ है तुम सो बालक पांऊ हो ॥

सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक ग्यांन ध्यांन नहिं आइ हो ।
भक्त वत्सलमेरो विरद कहत है विरदहिं कहा लजांउ हो ॥
इह कहि मया मोह अरुझायो सिसु ह्वै रोअन लागे हो ।
अहो वसुदेऊ जाहु लै गोकुल तुम हो परम अभागे हो ॥
घन दामिनि धरनी लौ कौधति जमुना जल क्यों झागे हो ।

मध्य—

केदारो

जीते जाति है रन वंसी ।
मधुकर सुत वंदत वंदी पिक मागध मदन प्रसंसी ॥
मथ्यो मानवल दर्प महो पति जुवति जूथ गहि आनै ।
विनु कुअड ब्रह्मड भेद करि सुर सनमुष सर तानै
ब्रह्मादिक सिव सनक सनंदन वोलत जै जै वाने ।
राधापति सर्वस अपनो दै हित ताहा थकि काने
षगमृग मीन सुमार किये सव जड़ जंगम जित भेष ।
छाजत छम मद मोह कवच कटि तजत न नैन निमेष ॥
रवि को रथ लै दयो सोम कह षट दस कला समेत ।
रच्यो जग्य रस रास राज सु विदा विपिनिनि कत ॥
दान मान प्रधान प्रेम रस वढ्यो माधुरी हेत ।
अधिकारी गोपाल तहां है सूर भवनि सुष देत ॥ १२ ॥ ४७१ ॥

॥ इति सूर सागर पोथी समाप्त ॥

॥ इहां ते विस्नपद वंध लीला ॥

॥ टोडी ॥

मुरली सुनत भई सव वौरी ।
मनहु परो सिर माझ ठगौरी ॥
जो जेसैं सो तैसैं दौरी । तनु व्याकुल सव भई किसोरी ॥
कोउ धरनी कोउ गगन निहारै । कोउ कर करसं वासन टारै ॥
कोउ मन ही मन बुद्धि विचारै । कोऊ वालक नहिं गोद समारै

\+ + +

सूरदास प्रभु कुंज बिहारी । सरद रास रस रीति बिचारी ॥

\+ + +

हलधर कहत प्रीति जसुमति की ।
कहा रोहिनी इतनी पावै वह वोलनि वह हित की ॥
एक दिवस हरि षेलत मो संग झगरो कीन्हों पेलि ।

हमकौ दौरि गोद करि लीन्हीं इनहि दियो कर मेलि ॥
नंद बबा तब कान्ह गोद करि षीझन लागे मोको ।
सूर स्याम म्हांनों तेरो भइया छोह न आवत तोको ॥ ९१४ ॥

विषय—

भागवत दशम स्कंध की कृष्ण लीलाओं का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—हस्तलेख के आरंभ का केवल एक पत्र खंडित है। समस्त हस्तलेख के दो भाग हैं। पहले भाग में दशम स्कंध पूर्वार्द्ध की लीलाओं का वर्णन है और दूसरे भाग में विष्णुपद हैं जिसमें अनेक लीलाओं के चुने चुने पद संगृहीत हैं ।

रचनाकाल—लिपिकाल अज्ञात हैं। सभा द्वारा सूरसागर के सपादन में जिन प्रतियों से सहायता ली गई उनमें प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या १७ है।

संख्या २६४ ञ. सूर सागर (दशम स्कंध), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—६११, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१६५, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९४३ वि०, प्राप्तिस्थान—महंत ब्रह्मदेव शर्मा आचार्य, स्थान व पोस्ट—रतनपुरा, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥

अथ दशम स्कंधे सूरदास कृत लीषते ॥

राग विलावल

व्यास कहौ सुकदेव सौ श्री भागवत बषानि ।
दसमस्कंध परम सुभ प्रेम भक्ति की षानि ॥
नवम स्कंध नृप सो कहै श्री सुकदेव सुजान ।
सुर कहत अब दसम को उर धरि हरि को ध्यान ॥ १ ॥

राग सारंग

हरि हरि हरि सुमीरन करौ । हरि चरनार बींद उर धरौ ॥
जै अरु विजै पारषत दोउ । वीप्र स्राप असुर भए सोउ ॥
दोउ जनम ज्यौं हरि उधारे । सो तो मैं तुम सन उचारे ॥
दंत वक्र सिसुपाल सुभग ए । वासुदेव को सो पुनि हुए ॥
अवरो लीला बहु बीस्तार । कीन्हो जीवन को निस्तार ॥
सो अब तुम सो सकल बषानो । प्रेम सहीत सुनी हीरदै आनो ॥
जो एह कथा सुनै चितलाई । सो भव तरि वैकुंठ सीधाई ॥
जैसे नृप सो सुक समुझायो । सुरदास त्यौंही कहि गायो ॥ २ ॥

मध्य —

॥ अथ पंचाध्याई लीला ॥

जाको व्यास बरनत रास।
है गंधर्व विवाह चित्त दै सुनो विविधी विलास।
कियो प्रथम कुमारी कनी व्रत धरी हीये विस्वास।
नंद सुत पति देहु देवी पुजी मन की आस।
दीयो तव परसाद सबको भयो सबनि हुलास।
महरी तन यो जुली नवरतर बीमल अकुछास।
धरे लगन सु सरद निसि के सोधि करी गुमहास।
मोर मुकुट सुमौर मानों कनक कंकन भास।
वेनु धुनि सुनि स्रवन धाई कमल वदन प्रकास।
रूप प्रति प्रतिरूप कीने भुजा अंसु नीवास।
अधर मधु मधुपर्क करि कै करत आनन हास।
फीरत भांवरि गिरत भूषन अगिनि मनो उजास।
सूर नारी कौतुक लागी आइ छाडि सुत पति आस।
जिअ परी ग्रंथ सुकौन छोरै विकट न नंद न सास।
निरषि स्तुति मत कुसुम अंजुल वरषि त्रिदिसि अकास।
लेत या रस रास को सुष रसिक सूरज दास ॥ १७ ॥

\+ + +

अंत—

॥ अथ भ्रमर गीत श्री कृष्ण वचन उधो प्रति ॥

राग मलार

जदुपति सषा उधो आनी।
लगे मन मन (मह ?) एहै सोचन भली नही एह वानी ॥
अंस भुज धरि होत ठाढे निठुर जैसे काठ।
गंग कलस आपान जैसे तैसोइ एह रूप।
सूर कैसे प्रेम पावन विना होइ सरूप ॥ ३२ ॥

× × ×

गोपी वचन

जो तो पग कर नही कहो उषल को वांध्यो।
जो पै नैन मुष नहीं चोरी दधि कौने षाध्यो।
तबै षिलाए गोद लै कहो तोतरे वैन।
उधो ताको न्याव एह ताहिम सूझन वैन ॥

\+ + +

सुनि गोपिन को प्रेम नेम उधो को भूल्यौ।
गावत गुन गोपाल फिरत कुंजनि मैं डोल्यो।
छिन गोपिन के पग परै धन्य तुमारे नेम।
धाइ धाइ द्रुम भेटइ उधो छाक्यो प्रेम।
धन्य गोपी धन्य ग्वाल धन्य ए सब ब्रजवासी।
धन्य एह पावन भुम्य जहाँ विलसे अविनासी।
उपदेसन आयो हतो मोहि भयो उपदेस।
उधो जदुपति पै चल्यौ किए गोप को भेस॥

+ + +

दसौं पुत्र ब्राह्मन के दिये। हरि आर्जुन प्रनाम तव किए।
तहाँ ते पुनि द्वारावति आए। ब्राह्मन के बालक पहुँचाए।
आर्जुन देषे चरित अनूप। बिस्मै भयो बहुत सुनि भूप।
नहि जान्यौ मै कहा सिधायो। अरु वहाँ ते कैसे आयो।
निज सरूप अपनो दरसायो। जो काहू देषन नहि पायो।
ऐसे हैं त्रिभुवन पति राई। कहा सकै रसना गुन गाई।
ज्यौं सुक नृप को कहि समुभायो। सूरदास ताही विधि गायो॥१७३८॥

इति श्री दसम सकंधे नवमोध्याए॥ ९०॥ सूरसागर दसम स्कंध समाप्तम्॥ माघ सुक्ल द्वादस्यां सनिवासरे॥ सं० १९४३॥ द० रामफेर मिश्र श्री चकरा निवासी॥ अतिक्रम किया॥

विषय—

दशम स्कंध भागवत का हिंदी में अनुवाद।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९४३ दिया है। प्रस्तुत प्रति में कुल १७३८ पद हैं। यह बहुत संक्षिप्त है। अध्याय के अध्याय छोड़ दिए गए हैं, जैसे—८६ वें अध्याय के पश्चात् ९० अध्याय देकर ग्रंथ समाप्त किया गया है। प्रति बहुत कुछ शुद्ध है और साथ ही महत्वपूर्ण है।

संख्या २९४ ट. सूरसागर (दशम स्कंध), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र ६९६, आकार—१२३/४ × ७३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४८८२, पूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५४ वि०, प्राप्ति स्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा (सूरसागर संपादन विभाग), बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः सूरदास कृत॥ श्री भागवत दसम स्कंध बर्नंनं॥

॥ राग सारंग॥

व्यास कह्यौ सुख देव सो श्री भागवत बखानि।
द्वादस अस्कंध परम सुभग प्रेम भक्ति कि खानि॥

नव स्कंध नृप सो कही श्री सुजान।
सूर कहत अब दसम को उरमें धरि हरि ध्यान ॥ १ ॥

॥ राग विलावल ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ।
हरि चरनारविंद उर धरौ ॥
जै अरु विजै पारखद दोई।
विप्र श्राप असुर भये सोई ॥
दुइ जनम ज्यौं हरि उद्धारी।
सो तौ मैं तुमसों कहि उच्चारी ॥
दंत वक्र सिसु पाल जो भए।
बासुदेव होइ सो पुनि हए।
औरो लीला बहु विस्तार।
कीन्ह जीवन को ज्यौं निस्तार ॥
सो अब तुम सो सकल बखानो।
प्रेम सहित सुनि हृदय आनो ॥
जो इह कथा सुनै चित लाई।
सो भव तरि वैकुंठ हि जाइ ॥
जैसे सुक नृप को समुझायो।
सूरदास तेही कहां गायो ॥ २ ॥

अंत—

तव हरि अर्जुन पहुंचे तहां।
गम नाही काहू को जहां ॥
तहां जाइ देष्यो एक रूप।
तासम और न दुतिअ स्वरूप ॥
नैन निरषि चकृत होइ गये।
मन बिनु गोउ थकि रये ॥
कहिवे जोग होइ सो कहे।
तहा कछुऔ कर न लहे ॥
सेस नाग फन मुकुट प्रस्थान।
नैन प्रभा मानो कोटिक भान ॥
हरि अर्जुन कियो निर्षी प्रनाम।
सुन्यौ तहां एक सब्द अभिराम ॥
तुम्हरे हेत चरित यह कयो।
बोझ पृथी को हरउ भयो ॥

आवहु अब तुम अपने धाम।
पुरन भये सुरन के काम॥
दसौ पुत्र ब्राह्मन के दीन्हे।
हरि अर्जुन प्रनाम तब कीन्हें॥
नहि जान्यो मै कहां सिधायो।
और इहां मै कैसें आयो॥
हरि अर्जुन कों सजुन जान।
लैगए जहां न जहां ससि भान॥
निज सरूप अपनौं दरसायो।
जो काहु देष्यौ नहि पायो॥
ऐसे ही त्रभुवन पति राइ।
कहा सकै रसना गुन गाइ॥
ज्यौं सुक नृप सो कहि समुझायो।
सूरदास ताही विधि गायो॥ १८॥

इति श्री भागवते महापुराने सूरदास कृत दशम स्कंधे सूरसागर अध्याय॥ ९१॥ समाप्तं॥ पोषी भवानी दीन काग्रथ॥ संवत्॥ १८५४॥ मीती भादो सुदी एक॥ १॥ वार मंगल वार॥ पुस्तक सूरसागर की विष्णुपद॥ श्रीकृष्णराधाय नमः॥ ३०००॥

विषय -

भागवत दशम स्कंध का अनुवाद तथा श्रीकृष्ण चरित्र वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८५४ है। सभा द्वारा संपादित सूरसागर में जिन हस्त लिखित प्रतियों से सहायता ली गई उनमें प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या १५ है।

संख्या २६४ ठ. सूरसागर (दशमस्कंध पूर्वार्द्ध), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—३८४, आकार—९३/४ × ७१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा (सूरसागर संपादन विभाग), बनारस

आदि—

॥ ॐ ॥ श्रीगणेशाय नमः॥

तर्ष भरवि पवि बीच कान्ह विच नागरी।
अद्भुत रास रच्यौ गिरधर लाडिले हो।
श्री वृषभान सुता सो हरि चाडिलो हो।
अति आनंद बढ्यौ गोपी हरषित भई।

निर्तत रीझे स्याम भुजा भरि कै लई ।
जल थल पौन थक्यौ पगमृग तरु बिथर्यौ ।
देषत मदन जक्यौ रास बस मोहन भए ।
चंद्रमा रथ मध्य थाक्यौ रास वसमोहन भए ।

॥ छंद ॥

और तरू फल और लाग्यौ और भए पल्लव कली ।
श्री स्याम स्यामा रासनायक गोपिकागन मंडली ।
रासि रंग रस अतिहि बढ्यौ मन गर्वित भई सुकुमारी ।
लेहु कंध प्रभु सो कह्यौ अंतर भेदै तारी ॥

अंत—

॥ मारू ॥

सुन ऊधो मोहि नेक न बिसरत वै ब्रजवासी लोग ।
तुम उनकों कछु भली न कीनी निसिदिन दियो योग ॥
जदपि वसुदेव देवकी मथुरा सकल राज सुष भोग ।
तदपि मनहिं वसत वंसीवट ब्रज जमुना संजोग ॥
वै उत रहत प्रेम अवलंबन इततै पठयो जोग ।
सूर उसास छाडि भरि लोचन बढ्यौ बिरह ज्वर सोग ॥
ऊधो मोहि ब्रज बिसरत नाहीं ।
वृंदाबन गोकुल तन आवत सघन त्रिनन की छांही ॥
प्रात समै माता जसुमति अरु नंद देषि सुष पावत ।
माषन रोटी दह्यौ सजायो अति हित साथ षवावत ॥
गोपी ग्वाल बाल संग षेलत सब दिन हसत सिरात ।
सूरदास धनि धनि ब्रजवासी जिन सौं हसतब्रजनाथ ॥

अध्याय ॥ ४९ ॥ इति श्री सूरसागर दसम पूर्वाध समाप्तं ॥ संवत् १९२९ वैशाष मासे सिते पक्षेतु षष्ठ्यां चंद्रवासरे चित्र भानू अब्देतु विख्याते ॥ भागीरथ्यास्तटे शुभे ॥ १ ॥ वैश्य वंशेति विख्यातो गयापरसाद नामत तस्याज्ञी तस्यार्थे लेखितं ग्रंथं गौड़वंसेति विख्यातो नाथूरामेण धीमता ॥ २ ॥ भग्न पृष्टि कटि ग्रीवि बद्ध मुष्टी अधोमुखम् ॥ कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन परिपालयेत् ॥ ३ ॥

विषय—

श्रीकृष्ण की ब्रज लीलाओं का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल संवत् १९२९ दिया है। काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा संपादित सूरसागर में जिन हस्तलिखित प्रतियों से सहायता ली गई उनमें से प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या १० है । यह सूरसागर दशमस्कंध का पूर्वार्द्ध है ।

संख्या २६४ ड. सूर सागर (दशम स्कंध पूर्वार्ध), रचयिता—सूरदास, कागज-देशी, पत्र—२४२, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४११४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ मलार ॥

हिंडोरै हरि संग झूलहि घोष कुमारी ।
ब्रज वधू विधि कौन कीनी कहति सब सुरनारि ।
मडवा लगे नग ललित लीला सुविधि सिलप सवारि ।
वज्र की कीलै लगी सुठि सुभग सोभा क्यारि ।
खंभं जंबू नहि सुविद्रुम रची रुचिर मयारि ।
मनु सुतं रवि कौं दिषावती भुज भुज युगल पसारि ।
मनिलाल मानिक जरित भवरा सुरंग रंग रसारि ।
सुक सेष नारद सारदा उपमा कहै को पार ।
डाडी खचि पचि पांच मरकत मय पांति सुढार ।

× × ×

कहै सूर सो उपमा नही कहुं नेति निगम हुं गानि ॥ २१ ॥

अंत—

सारंग

राधौ सब इइ जोग अटपपे ऊधौं पाइ (प) रौं ।
कहां रस रीति कहां तन सोधन सुनि सुनि लाज मरौं ।
चंदन छाडि विभूति बतावत यह दुष क्यौं न जरौं ।
नामा व······ ··· हि योग सिषावत सरि··· ···

—अपूर्ण

विषय—

भागवत दशमस्कंध पूर्वार्ध का अनुवाद तथा श्री कृष्ण लीलाओं का वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । आदि, अंत और मध्य के कई पत्रे लुप्त हो गए हैं । जो अंश वर्तमान है उसके पत्र २५१ संख्या से आरंभ होते हैं । अंत के पत्र की संख्या ५०१ है । नागरीप्रचारिणी सभा से निकलने वाले सूरसागर के संपादन में जिन हस्तलिखित प्रतियों से सहायता ली गई उनमें से प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या १३ है ।

संख्या २६४ ढ. सूर सागर (प्रथम से नवम स्कंध तक), रचयिता—सूरदास, कागज—देशी, पत्र—२६३, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण

(अनुष्टुप्)—१९४५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०९, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

॥ अथ सूर सागर लिख्यते ॥

चरन कमल बंदौ हरि राइ ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अंधे को सब कछु दरसाइ ॥
बहिरा सुनै गूंग पुनि बोलै रंक चलै सिर छत्र धराई ।
सूरदास स्वामी करूना मै बार बार बंदौ तेहि पाई ॥ १ ॥

॥ राग कान्हरा ॥

अवगति गति कछु कहत न आवै ।
ज्यौं गूंगे मीठे रस को फल अंतर गति ही भावै ॥
परम स्वाद सब सो निर अंतर अमित तोष उपजावै ।
मनमाने को अगम अगोचर सो जानै सो पावै ॥
रूप रेष गुन जात जुगुति विन निरालेप मन चकित धावै ।
सब विधि अगम विचार हिये मै सूर सगुन लीला पद गावै ॥ २ ॥

अंत—

तवतरा नई सुता को दीन्हों ।
विरधपनो अपनो पुनि लीन्हो ॥
बन मे करी तपस्या जाइ ।
रह्यो हरि चरनन मे चित लाइ ॥
या विधि नृपति कृतारथ भयो ।
सो राज मैं तुमने कह्यो ॥
सुक ज्यौं नृप को कहि समुझायो ।
सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥

इति नौम स्कंध समाप्त ॥ शुभं भूयात ॥ लिखित मिदं पुस्तकं ॥ राजा सुवा सिंहस्य पठनार्थं ॥ संवत् १९०९ ॥ श्रीराम

विषय—

श्रीमद् भागवत का पदों में अनुवाद ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत प्रति में केवल नौ स्कंध हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १९०६ दिया है। नागरी प्रचारिणी सभा से निकलनेवाले सूरसागर के संपादन में जिन ९ प्रतियों से सहायता ली गई उनमें प्रस्तुत प्रति की क्रम संख्या ८ है।

संख्या २९५. घूघराँ का पद, रचयिता - सूरदास, कागज—देशी, पत्र—२, आकार ९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—११, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि —

श्री (घूघरा लिखते)
ह हो । पीले पाट रेशमी फूंदा बाजत रिमझम रिमझम जी ।
पीले पाट कसूंबी रा डोरी, बाजत झु झु झु झु ॥ १ ॥
थारी पाये बाजे गूगरा, सखि मो पे
सयो न जाय जी, राधा पाये बाजे घूघरा ॥
हरख करी राधा पाये बांध्या, कोढ करी राधा,
पाये बांध्या, देखण कूं सतभामा जी, गोकुल चंद ल्यायो गुगरा ॥ २ ॥

अंत —

ह हो । भणत जसोदा सुण मेरा लाला
अस्त्री रो बाद निबेड़ो, मेरो लाल, नारी रो बाद निबेड़ो मेरा लाल ।
अरधो करां जी गुगरियां ।
सूरदास प्रभु बल बल जाय, गोकुल चंद ल्यायो गूगरा ।
मो पै सयो न जाय जी, राधा पाये बाजे गूगरा ॥ १० ॥

—अपूर्ण

विषय—

राधा के पदों के घूँघर सत्यभामा को दिखाने के लिये श्री कृष्ण लाए थे । अतः इसी का वर्णन प्रस्तुत रचना में किया गया है ।

संख्या २९६. सेणी रा दोहा, रचयिता—सेणी, कागज देशी, पत्र—३ आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) - १४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ सेणी रा दोहा, प्रस्ताविक लिख्यते —
सर भरिया पंखेरुआ, भरिया नीर निवाण ।
सैणी हाथै संदेसड़ा, ऊभी तट महिराण ॥ १ ॥
अब मील आये पंथिया, न लाये वार ।

अंत—

गांव बड़ा गढ अनड़ां, ठाकुर भड़ेअ भडांह ।
होद जलां घन बादलां, कामंण कड़ां थणांह ॥ १८ ॥

\+ + ×

धुर काली फागुण बिचै, थलरो लीजै छेह ।
बरसा लेरी बीज ज्यों, जाण बाविजो मेह ॥ २१ ॥

—अपूर्ण

विषय—शृंगार रस के २१ दोहे । बीजड़ और सेणी का संवाद ।

संख्या २९७. कवित्त, रचयिता—सेनापति, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—$10\frac{3}{4} \times 4\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि— ... ... है ।

और न भरोसो जिय परतु खरोसो ताही रामपद पंकज को पुरन भरोसो है ॥ ३ ॥
भूप सभा भूषन छिपावो पर दूषनु कुबोल एक हू खन कहे न देन पाइकै ।
राम महाजानि पूरे सकल कलानि सेना पति गुन खानि औरहू कौ गुन गाइ कै ।
तुमही बताई कछु कीनी कविताई तामें होइ जोगताई दुचिनाई के सुभाई कै ।
बुद्धि के बिनाउ कें गुसांई कविनाईक सो विजीवो बनाइके कहूत सिर नाइकै ॥ ४ ॥
दीछतु परसराम दादौ है विदित नाम जिन कीने जग्य जाकी जग मे बडाई है ।
गंगाधर पिता गंगाधर कौ समान जाको गंगातीर बसति अनूप जिनि पाई है ।
महा जानि मनि विद्यादान हू को चिंतामनि हीरामनी दीछत तें पाई पंडिताई है ।
सेनापति सोई सीतापति के प्रसाद जाको सबकवि कान दे सुनत कविताई है ॥ ५ ॥

मध्य—

रजनी के समै विनसी करन सो यो जात प्यारी तन सुधरी निपट सुखदाई है ।
रंगित सु बास राखे भूरति रुचि रसाल सूरज की तपत किरनि तनुताई है ।
सीतल अधिक यातें चदन सुहानु परें अंग महा कल ज्यों त्यों अगिनि बराई है ।
ग्रीष्म की रितु हिम रितु दोउ सेनापति लीजिये समुझ एक भांति सो बताई है ॥ ४८ ॥
तीरतें अधिक वारि धार निरधार महा दारुन मकर चेंनु होतु है होतु है नवीन कौं ।
होति है करक अति वडिन सिरातिराति तिल तिल बाटें पीरी पूरी विरहीन कौं ।
पीरक अधिक यारि और अब नीर है न पावरी नु विना को हूंब मति धनीन कौं ।
"सेनापति" बरनी है बरसा सिसिर रितु मूढनु कौं अगम सुगम परवीन कौं ॥ ४९ ॥
देखे छिति अंबर जलै है चारि घोर छोर तीन नंवर सबही कोरूनु रूखो है ।
महाबर लागें जोति भादव की होति चलै जलद पवन तन से कुमानो पन्यो है ।
दाहनि तकनि तेरें नदी सुख पावै सीरी घन छाइ चाहवो उचित धन्यो है ।
देखो चतुराई सेनापति कविताई की जु ग्रीषम विषम बरसा की सम कह्यो है ॥ ५ ॥

अंत—

लोचन जुगल थोरे थोरे से चपल सोई सोभा मद पवन चलत जलजात की।
पीत है कपोल तहां आई अरुनाई नई ताही छवि करि ससि आभा पात की।
सेनापति काम भूप सोवतु सौ सौ जागतु है उज्वल विमल दुति पैये गात गात की।
सैवस निसा अथौत जोवन दिन उदौत बीच बाल बधू आई पाई परभात की॥ २५॥
सुनि कें पुरान राखें पूरन कें दोऊ कान विमल निदान मति ज्ञान कों धरति है।
सदा अपमान सनमान मान सेनापति मानत समान अभिमान तें विरति है॥
से ... ...

—अपूर्ण

विषय—

शृंगार विषय वर्णन।

विशेषज्ञातव्य - ग्रंथ अपूर्ण है केवल १५ पत्रे उपलब्ध हैं। प्रथम पत्र की संख्या २० है और अंत के पत्र की ३६। इनके बीच के भी दो पत्रे (२१ वाँ तथा २९ वाँ) नहीं हैं।

रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

संख्या २६८ क. बाग विलास, रचयिता—सेवक या सेवकराम, निवासस्थान—असिवनी (असनी फतेहपुर), कागज—आधुनिक पीला, पत्र - ६३, आकार—८¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२०, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० परसुराम जी चतुर्वेदी, एम० ए०, एल० एल० बी०, स्थान—बलिया, जिला—बलिया

आदि—

बाग विलास

१

श्री गणेशाय नमः

दोहा

सिद्धि सदन करिवर वदन श्री गननाथहि ध्याय।
श्री गुरु चरण सरस्वती प्रणमौं हित चित लाय॥ १॥

॥ सवैया ॥

सिद्धि दाहिने बायें लगाये रहैं सुकरैं जन जो अभिलाखत हैं।
कर बेद लै मेद को खेद हरैं मृदु मोदक मोद सों चाखत हैं।
ससि मौलि हैं ताप हरैं तिहरी देहरी पै बसे शिव भाखत हैं।
सिर नावत सेवक राम गनेस कलेस को लेस न राखत हैं॥ १॥

दोहा

केशव मिश्रादिकन ते मानि लियो मत चारु ।
अंग्हादिक ते को लिख्यौ ब्रह्म बंस व्यौवहारु ॥ ३ ॥
ब्रह्माही के वंस में उपजे नृप औतंस ।
सांडिल गोत्र उदोत जिमि परसराम प्रभु अंस ॥ ४ ॥

सोरठा

शुभ अनिसापुर ग्राम अखि मांडव्य ऋषीस को ।
अब ऐनापुर नाम प्रतिबिंबित सब धरम लखि ॥ ५ ॥
शृंगवेरपुर पाल भद्रादिक पुर के धनी ।
जनक सरिस नृप चाल यदपि अयोध्या के बरग ॥ ६ ॥

\+ + +

बसुसत केतिक बरस ते रायसादि को देखि ।
आगे हैं जब ते नृपति होंहि सो गुनहु बिसेखि ॥ ८ ॥
कनउज मे जैचंद भो महाराज एक छत्र ।
नृप विषयक ताके लिखे है इनके घर पत्र ॥ ९ ॥
कोविद कवि सब गुनिन को है इनके घर प्यारु ।
रामदयालादिक सुकवि किये कवित्त अति चारु ॥१०॥
मम पितु पिता महादिकनि बंधु सुग्रंथन आदि ।
बरने हैं रनसिंह ते ते रनसिंह अनादि ॥११॥
चारिउ बिधि की बीरता बनी सु इनके बंस ।
समै समैं प्रगटे भये हैं ईस्वर के अंस ॥१२॥
एक दिन कुतहू नृपा । को बंधु भूप रिसपाय ।
भगि आयो पूजन समै बेठारयो कहि भाय ॥१३॥
तब ओरि कह्यौ जो भाय कहै बैठारो दृढ़ चित्त ।
बंधु भूप मेरो सुमोंहि भाग आवत मित्त ॥१४॥
तब सुवीर रनसिंह जू कह्यौ सु रहो अडोल ।
तुम बैठो हम देखि हो तुव अरि नृप को गोल ॥१५॥

\+ + +

पलटि गयौ निज देस को पायो नहिं निज बंधु ।
एहिरए धन रनसिंह जी रहे खेत रनि संधु ॥२१॥
तंह तिनको चौरा रच्यौ आनि महा सुचि ठाम ।
देत महीपति है अजौं मन मानो सब काम ॥२८॥
दै जीवन तेहि आयु मम राख्यौ कुल अवतंस ।
अजहु बिमुखता है बिदित अरि अरि इनके बंस ॥२९॥

दोहा

त्यों रणसिंह महिप के चिंतामणि भुवपाल ।
चिंतामणि सम यांचकनि अरु अरिवर को काल ॥३३॥

\+ + +

चिंतामणि के तीनि सुत तीनि देव के रूप ।
जिनके भुजबल को सुनत लाजत मानी भूप ॥३३॥
जेठ भवानि प्रसाद सुत जाकी तीछन तेग ।
अरि वटेरगन पर करत बाज राज को बेग ॥३४॥
इनहुं करी है वीरता सो सुनिये समरथ्थ ।
लिय नवाव ते राज्य जिमि दुरयोधन ते पथ्थ ॥३५॥

॥ सवैया ॥

श्रौर महीपै मही इनकी लिपि दीन्हो वजीर महामन माषी ।
तेग की बेग सों रोकि हुते उत जाइ दिल्ली पै कथा यह भाषी ।
कोपि गयो जुदि हैदर पै खत भेजो दीलीस तरेरि के आंषी ।
वाह भवानी प्रसाद रुआव नवाव की नेकहू आव न राषी ॥३६॥
दूजो देवकी नंदन भो देवकि नंदन समान ।
द्विजनि सुदामा लों दियो कंस अरिन हर प्रान ॥३७॥
विस्नुदत्त तिनको अनुज विस्नु भक्त गुनवान ।
बंधुन की सम विदित भो द्विजन अरिन दैदाव ॥ ३८ ॥
जनक सरिस तपराज सुख बंधुन केवल कीन ।
अज दिलीप रघु सम लख्यों महा तेज मों लीन ॥ ३९ ॥
येक समै कोऊ सरन मैं आयो भजतभुवार ।
यदि लखनऊ नवाव की पेदे फौज अपार ॥ ४०
संग मदारी लाल थो चकलेदारकराल ।
घेरि लियो गढ़ बंक पै तनिक न दब्यो भुवाल । ४१ ॥
हुतो ब्याह इनके सुघर ताहि बंद करि दीन ।
सरनागत को राखि कै रननवाव सो लीन ॥ ४२ ॥

\+ + +

गयो पलटि निजदेस को रही सुमन की पैज ।
दान रूमान कपान की इनकी जाहिर फैज ॥ ४८ ॥
तिनमंह देवकीनंदन भो ज्यों कलजुग मंह कर्न ।
वीर रूप मनुधर्म जुत दया दान वर धर्न ॥ ४९ ॥
एक दिन कासी के विषैं निवसे हुते कृपाल ।

दरस हेत बिसुनाथ के अरु संबंधि भुवाल ॥ ५० ॥
कछु दिलीप कृतपाइ रुप आवत हे अंगरेज ।
थंधेन पटनादिकन में बंदोबस्त की पेज ॥ ५१ ॥
साहेब डंकीन ही मिले दिय गढ़ि गवनछोड़ाय ।
बदोबस्त डंकीन किय सुभ इनको मत पाय ॥ ५२ ॥
मुट्ठी साहेब प्रभृति गुनि भूपति नीति प्रवीन ।
समुझि हितू निज प्रान के सूबा इनको कीन ॥ ५३ ॥

\+ + +

कासीरामापुर विषैं ड्यौढी के निज पर्म ।
सिव पंचायतनै रच्यौ मंदिर सहित सुधर्म ॥ ५६ ॥

\+ + +

गौरी संकर सिव सुहित गौरीगंज बसाय ।
गौरी संकर को अरपि षरच दियो अरगाय ॥ ५८ ॥
वावा आदम को समुझि जमन आदि छितिपाल ।
छुवैं न सिव निरमाल्य गुनि हिंदुहु जनित भुवाल ॥ ५९ ॥

\+ + +

येई देवकी नंदन प्रभु कवि ठाकुर को पाय ।
दयादान सनमान करि राष्यौ प्रीति बढ़ाय ॥ ६१ ॥
तिलक बिहारी सतसई पर जिनके हित कीन ।
कवि परिपाटी आदि दै विरचे ग्रंथ नवीन ॥ ६३ ॥

\+ + +

सपद लच्छिवर भूमि पर दिय नसील को काम ।
कहा सुमानिक पुर जिना विदित सहर हथिग्राम ॥ ६५ ॥
कवित प्रसिद्ध गुनीन में ठाकुर के भुव मांहि ।
सुवन सुकवि रिषिनाथ के मोसो बरनिन जाय ॥ ६६ ॥
अलंकार मनि मंजरी जिन बिरची रिषिनाथ ।
काशी पति वरिवण्ड के रहे आदरित साथ ॥ ६७ ॥

\+ + +

तेई देवकीनदन के सुत जानकी प्रसाद ।
कवि कोविद जिनकी करत गुन गन में मरजाद ॥ ७६ ॥

\+ + +

श्री कवि ठाकुर के सुवन धनी राम गुन गेह ।
समयम तिनकी सभा के भूषन सहित सनेह ॥ ७८ ॥

\+ + +

रामचंद्रिका को तिलक विरच्यो जिनके नाम ।
सतिलक जुक्ति रमायनौ रची जुक्ति सब ठाम ॥ ८० ॥
रामअस्वमेधहु विरचि उलथा कियो अनूप ।
श्री जानकीप्रसाद के नाम ही सो कवि भूप ॥ ८१ ॥
काव्य प्रभाकर हू कस्यौ उलथा काव्य प्रकास ।
आठ प्रकासहि लो रच्यौ भो श्री कासीवास ॥ ८२ ॥

\+ + +

जबहि आइ अंगरेज प्रभु हिन्द अमल करि लीन ।
रह्यौ न कुछ विकार कछु न्याय अदालत कीन ॥ ८४ ॥
श्रीमलिका विक्टोरिया छायो तेज ललाम ।
समर कृपानादिकन को रह्यौ न अब कछु काम ॥ ८५ ॥

\+ + +

सुवन प्रगट तिनके भये जुग अनु लछिमन राम ।
राम रतन जेठे अपर राम प्रशन्न सुनाम ॥ ९१ ॥

\+ + +

तिन जुग प्रभु के सुकवि हैं धनी राम के पूत ।
कवि शंकर सेवक दोऊ सेवत लपि पुरहूत ॥ ९४ ॥

\+ + +

आयौ है इनके भवन भूप सितारे केर ।
त्यों डुमराये को नृपति जो जाहिर चहुं फेर ॥ १२४ ॥
श्री ईश्वरी प्रसाद नृप काशीपति विसुनाथ ।
आवत मंत्री मित्र गुनि खानपान एक साथ ॥ १२५ ॥
श्रीनृप वेतिया को धनी तथा टीकारी भूप ।
माझापति गभिडार पति चौंभैया हित रूप ॥ १२६ ॥
आयो है इनके भवन लाट गवरनर वीर ।
टाम सेन साहब विदित जो जग में रनधीर ॥ १२७ ॥

कुंडलिका

नरपति राम प्रशंन पै ह्वै प्रसन्न जुत मान ।
लंदन हिंद महीन्द्र श्री विक्टोरिया सुजान ॥
विक्टोरिया सुजान सुकरि दसखत निज भर सों ।
तकमा तत फरमान भेजि दीन्हो हितवर सों ॥
अनु सेवक रविचंद कियौ सब जग मैं वर पति ।
तम की सम जिन दले शत्रु अभिमानी नरपति ॥ १२८ ॥

× × ×

बांधव पति सोहै अजौं इनकी प्रीति अनंत ।
पठई निज कृत काव्य श्री विश्वनाथ छिति कंत ॥ १३१ ॥
अतिहित वान सुपेशवा मिरी विनायक राव ।
राम अधीनहुं अवध पति राखत बड़ो बनाव ॥ १३२ ॥
श्री मन सूराबाद को है नवाव हित रूप ।
तिमि घोसाल वहादुरी वर्दवान को भूप ॥ १३३ ॥
राम रतन महिपाल के भे जुग पुत्र कृपाल ।
हरि संकर सिंह एक एक गौरी संकर लाल ॥ १३४ ॥

\+ + +

बनइस[१९] से तेरा[१३] प्रगट संमत हो छिति कंत ।
बजवा में हाकिमन की करी सहाय अनंत ॥ १३६ ॥

\+ + +

परसन भे समुझि जब भए गुरंड अडोत ।
कह्यय पारचे की पिजति मिलिक दई अनमोल ॥ १३८ ॥

× × ×

श्रीगणेशाय नमः

श्री गनपति गुरु सारदा चरण मनाय मनाय ।
अब बरनत हौं बागवर सुनत मोद सरसाय ॥ १ ॥

॥ अथ बाग भूमिका ॥ सवैया ॥

देखि किताबनि कंपनि आदि सुबागन के नकशे मगवायो ।
बोलि जहान के कारीगरान घने रुचिवारन हूँ को बोलायो ॥
बाबू गणेश प्रसाद के सम्मत आपनी उक्ति औ युक्ति मिलायो ।
यों हरिशंकर सिंह महीपति काशिका में बरबाग बनायो ॥ २ ॥

॥ अथ सवारी को वर्णन ॥ दोहा ॥

बाग विलोकन को हुकुम पावत सेन सिंगार ।
सजी सवारी चतुर विधि को कहि पावै पार ॥ ३ ॥

तत्र हय वर्णन कवित

नैनन के तारे को इसारे को निहारे रहैं पारे पर थिरकै निहार सब राजी हैं । तापत्र हैं मन सों सुपाय त पवन हूं सो काय त भे जिनसों कुरंग विधु काजी हैं । सेवक भनत कच्छी भूप हरिशंकर के पच्छी गति लच्छी पच्छी पति के तनाजी हैं । देखे कला बाजी देवराज केन बाजी बाजी सूरज के बाजिन सो बाजी लेत बाजी हैं ॥ १५ ॥

× × ×

कार करैं मृदुल मुरार हु के तार पर नजरि निहारि पर चाउ दै निकरि जात।
नाघै सिंधु वार को अपार नदी नार कहाँ सेवक पहार तुंग ताव दै निकरि जात।
भूप हरिशंकर के तरल तुरंग ऐसे भीम हू के हाथिन पै घाव दे निकरि जात ॥ ७ ॥
सुघन सुरंगन पै चंद के कुरंगन पै तरनि तुरंगन पै पाँव दै निकरि जात ॥ ७ ॥

मध्य—

॥ मेवा वर्णन ॥ नाराच छंद ॥

अनार नारंगी रंगीन पांति पानि पानि की।
अषर्व सर्ब सर्वती समंत संतरान की।
फले लसंत लाल पीत मीत सोभ साजहीं।
सुरे अमंगलौ मनो अनंत रूप राजही।
जभीर भीर कागदी पचंगुलादि सोभही।
अंगूर सेव औ बिही बिजोर जोर लोभ ही।
अंजीर नारि केलि केलि फूलि फालसे लसे।
सुबास रंग स्वाद तैं सुधा सुधःहि कै वसे ॥ ५६ ॥

× × ×

॥ अथ फूल वर्णन ॥ सवैया ॥

कहूं चाँदनी चंपक चारु चमेली सुगंध रा सेवती सोहि रही।
गुलदावदी गेंदा गुलाब घने गुल खैरी गुलालहि जोहि रही।
मधु मालती मालती कुन्दन सामनी केतकी केवरै रोहि रही।
गुलवास गुलायची लाइची लौंग नेवारी कै ऊपर मोहि रही ॥५८॥

× × ×

येक येक वृक्ष पै केतून जाल हैं ललाम।
अंसु बंसु पुक्ष स्वक्ष वाद लानि के भिराम।
रंग २ के विहंग बीच मैं रमैं निहारि।
लेत नेन पंजनै फंदाइ फंद बंद डारि।
रंत वादलै समूल फूल पत्रस्यौं सिखानि।
है रच्यौ सुजान अंसुमान की मनौ कलानि।
पौन गौन भेद तैं हलैं डुलैं पुलैं चमंकि।
बाग मेघ राग जालि बीह दामिनी दर्मक ॥ ६६ ॥

अंत—

जंह गनेस परसाद हैं चितई पुर कै भूप।
श्री हरि संकर को भजत हरि संकर अनुरूप।
त्यौं ललिता परसाद हैं और अनेकन बंधु।

श्याम नरायन सिंह हैं काशिराज के भक्त
श्री प्रभु नारायनहि की सेवा में अनुरक्त ॥ ४ ॥

× × ×

॥ सवैया ॥

श्री रिषिनाथ को हौं मैं पनाति औ नाती हौ श्री कवि ठाकुर केरो।
श्री धनीराम को पूत मैं सेवक शंकर को लघु बंधु ज्यौं चेरो।
मान को बाप बबा कसिया को चचा मुरलीधर कृष्ण को हेरो।
अश्वनी मैं घर काशिका मैं हरिशंकर भूप है रक्षक मेरो ॥११३॥

विषय—

महाराज हरिशंकर जी ने एक रमणीय बाग लगवाया था जिसका मनोरंजक वर्णन ग्रंथ में किया गया है। इसमें निम्नलिखित विषय हैं : –

१ – मंगलाचरण और आश्रयदाता का वंश वर्णन पृष्ठ १ से ५० तक

२—बाग भूमिका वर्णन, सवारी वर्णन, बीरन को वर्णन, अश्व वृषरथ को वर्णन, प्रभु को वर्णन, बहीर वर्णन पृष्ठ ५० से ७४ तक

३—बाग वर्णन—मेवा, फूल, गेह, चित्रशाला, कलकी मंजूषन को वर्णन (कोकिला की घड़ी, गिरिजा की घड़ी, हेमनर के सिर पैं जागिये की घरी), रास की कल, बड़े अरगन, रेल की तसबीर, रेलवे, बड़ा शीशा, कल के पक्षी, बंगला, बागमध्य चौतरा, वृहत वितान, गद्दी पर को लघु वितान, गादी मसनादि, गादी के आगे का सामान, पेचमान, बितबाल (तरुणबालाएँ), जुद्ध भूमिका, कुश्ती व कपटादि रसाले, बांक की लराई, पटाकी लराई, बाना की लराई, सिपर तरवार गद काफ़ी की लराई, बनेठी की लराई, मेढ़ा की लड़ाई, मुरग की लराई, तीतर की लराई, बुलबुल की लराई, लाल की लराई, चतुष्पद को सिकार, बंधु बांधव तथा कवि के परिचय का वर्णन। पृष्ठ ७४ से १८६ तक

कवि का वंश

ऋषिनाथ
|
ठाकुर
|
धनीराम
|
शंकर (बड़े भाई) — सेवक

शंकर
|
मुरलीधर (संभव है ये शंकर के पुत्र न होकर इनके दूसरे भाइयों के पुत्र हों) — कृष्ण

सेवक
|
मान
|
काशी (कसिया)

संख्या २९८ ख. बाग विलास, रचयिता—सेवकराम, निवासस्थान—असवनी (असनी), कागज—आधुनिक पीले, पत्र—११६, आकार ८¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२६८, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० परसुराम जी चतुर्वेदी एम० ए०, एल० एल० बी०, स्थान—बलिया, जि०—बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः

॥ दोहा ॥

गजमुख सरस्वति गुरु चरण प्रफुलित कमल मनाय।
रस स्वरूप रंग देवता भेद कहत सुख पाय॥

अथ रस स्वरूप कथन॥

॥ सवैया ॥

थायी के कारण कारज औ सहकारी जितेजरीसोइ गनावैं।
तेहिय भावै विभावित औ अनुभावित औ व्यभिचार करावैं।
नाद्य औ काव्य में ताने विभावनु भाव संचारिहू नाम को पावैं।
व्यक्त ह्वैसो इनसों सुखरूप भये परिपूरण सोरस गावैं॥

॥ अस्यार्थ वार्तामम पितुः काव्यप्रभाकरे॥

लोक में रत्यादि के कारण जे स्त्री चंद्रोदयादि हैं और कार्य जे कटाक्षादि हैं औसहकारी सहायक जे उत्कंठादि हैं तेई नाद्य औ काव्य में विभावनादि व्यापार जोग ते विभाव और अनुभाव औ व्यभिचारी भाव ए नाम क्रम सो लहत है वासना रूप करी चित (?) जे इत्यादि स्थाई हैं तिन्हैं विभावित करत हैं अथर रसास्वाद को जो अंकुर है ताको मूलत्व को प्राप्त करत है तासों विभाव नाम लहत है औ हृदय गतरम को अनुभावित करत हैं अर्थ अनावत हैं तासो अनुभाव नाम लहत है औ पोखकता करि विशेष सों अभितः कहे सर्वत्र शरीर मो स्थायी को चलावत हैं तासो व्यभिचारी नाम लहत हैं इन विभावादि सों व्यक्त ह्वै कहे व्यंजित ह्वै कै स्थायी परिणाम मों रस होत हैं ताही रस व्यक्ति कों चर्वणा कहत हैं॥

मध्य—

उत्का (उत्कंठिता) लक्षनं

जातिय को पिय विलंमि कहुं आयो नही रति धाम।
अनागमन कारन गुनै सोई उत्का वाम॥

+ + +

अथ मुग्धा उत्का (उत्कंठिता) जथा

पौढत ही उठि बैठति है सुरमंचन सें बुसनी थहराति है।

साम्झ ही बीछी कढी तिही कों बढि आवति देषत ही उसि जाति है।
पूछे बतावे न पीर कछू सुघरी घरी यों अंगिराति जम्हाति है।
जाइ हरी सो कहौ किनरी अरी राधिका बावरीसी बिललाति है॥

॥ वार्ता ॥

यामै मानी वा प्रवास बिरह को भ्रम है काहे ते उसि जइयो आदि
पदतै लक्षन लक्षना करि वृश्चिको दै सिर पै आये तै अर्द्धरात्रि
जानि दुषी भई रति मंदिर में पिय अनागमन ते दुषी है वो
व्यंग है अति लज्जा तैं मुग्धा है पीर न कहिबे तैं पूर्नोपमा है॥

+ + +

अथ पंडिता लक्षनं

परतिय रमि रति चिन्ह जुत आवै पिय तिय धाम।
लषि दुष करि धीरादि तें भिन्न पंडिता बाम॥
लै उसास चुप कछु कहै चिंता जुत संताप।
अश्रुपात आदिक इहां सदुष सुभावनि थाप॥

तत्र मुग्धा जथा

आई बाल हाल की निहाल हाल देषि भई 'सेवक' विहाल माइके को तरसाती है।
गोई गोई रोइ रोइ उठति चको सी सोइ जोइ बृजचंद की सुनति सकुचाति है।
द्विपद की कोक है चतुरपद हूँ सों बढि षट पद ही की जहां भीर महराति है।
वषत विलंद मुष नषत पिया पै तेरे आठहू बषत क्षत लषत लजाति है॥

अंत—

अथ व्याधि लक्षण

जहं पिय के अन मिलन तें करै काम अति छीन।
तासों व्याधि बषान हीं विरह बिकल अति दीन॥

यथा

भरती रहे है पुनि ढरती निशा हूं औस धरती न भेदु सुधि सिंधु मैं परी मनौ।
हर घरियार मैं सुरति मोगरी की मार काम धरि यारदार करनि धरी मनौ।
आह की अवाज न करैरी न परैरी वाज "सेवक" जू राचे लागी डरन डरी मनौ।
हेरे सब तंत्र कोऊ लागत न मंत्र भई आनि परतंत्र जलयंत्र की घरी मनौ॥

वार्ता

बिरह तै जहां केवल विकलता को वर्नन करै सो व्याधि कहावै।

विषय—

नायिका भेद का विस्तृत वर्णन किया गया है।

संख्या २६६ क. आत्मज्ञान, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—१०२ × ५३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय (ह० लेख सं० ८७३), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ आत्म ग्यांन जोग ग्रंथ लिषते ॥

गुर परसाद तैं पायौ ग्यांन । अब आत्म मैं आत्म जान ॥ १ ॥
सतगुर मिलै तौ पावै भाइ । गुर विन अगम लष्यौ नहीं जाई ॥ २ ॥
परम पावन प्रम प्रकासी । घट घट मांही आप निवासी ॥ ३ ॥
प्रमेस्वर पूरण अबिनासी । सकल लोकता माहिं प्रकासी ॥ ४ ॥
जो है सकल सिष्टि का स्वांमी । सो घट घट मांही अंतरजामी ॥ ५ ॥
प्रम रूप प्रम मोक्ष द्वारा । कृत तपणौं नहीं अहंकारा ॥ ६ ॥
है हजूरि और दूरि बतावै । घट घट मांही आप लषावै ॥ ७ ॥
आपै बकता श्रोता आपै । आपइ अपनी महमां थापै ॥ ८ ॥
आपै करणहार करतारा । अचिरज पेल अपार रच्या पसारा ॥ ९॥
संसार ही संसारा । नांहि रिमिलतां नांही न्यारा ॥ १० ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

तनकूं तन सो जांनीयै आपा कूं भिनि जांणि ।
मुक्ति सुभाइ सुछंद है नही घट विनस्यां नभ हाणि ॥ १५१ ॥
थावर जंगम जगतगुर व्याप रह्या सब ठौर ।
सबही देषो सब सुणै तुम विन नांही और ॥ १५२ ॥
जे सतगुर मिलै तौ पाइयै अंतरि अब गति राइ ।
जन सेवादास सुष तब लहै दुष सारा मिटि जाइ ॥ १५३ ॥
भरम निवारण गुर सबद जे नहचै धारै कोई ।
जन सेवादास पावै सब्दी अलष निरंजन सोइ ॥ १५४ ॥
इति आत्म ग्यान जौग ग्रंथ संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥

विषय—

आत्मज्ञान विषय का वर्णन ।

संख्या २६६ ख. किवत, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०२ × ५३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)— ४०, परिमाण (अनुष्टुप्)— ७७, पूर्ण, रूप—

प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ किवत लिष्यते ॥

देव निरंजन सति और सब माया एही ।
जो आकार सब जाइ सुमिर मन परम सनेही ।
सुर सिध दस औतार सकल ए माया मांही ।
हरि निरगुण निरबंध गुणा मैं आवै नांही ।
है अविनासी कौ आसिरौ अजरांवर की बांह ।
जन सेवादास तहां बिलंबीया जहां धूप नही छांह ॥ १ ॥
हैंवर गैंवर भोमि हेम संमि देह तुलीजै ।
अठ सठि तीरथ न्हाइ वरतले बिध सूं कीजै ।
करै तप बहौ भांति वांन छाया ले दीजै ।
ए सब बैली दौड़े मांनि ममता रस पीजै ।
जन सेवादास काची बिथा फिरि रोग बंध तौ जाइ ।
सब तजि भजि रमता राम कूं ज्यूं सुष मैं रहै समाइ ॥ २ ॥

अंत—

रे सोवै कहा अचेत चेते मन मूरषि बौरे ।
यौ सुष अलिप अन्यति अंतिकाल सिर मौरे ।
या दिनां च्यारि का सुष अंति दुष दीसै भाई ।
सो सुष तन सू त्यागि तूं जागि गोविंद गुण गाइ ।
जन सेवादास फिरि ना लहै मनिष जनम नर देह ।
ए सब बटाऊ थिरि नहीं च्यांहि सूं किसा सनेह ॥ १९ ॥
पूत कलित परिवार सकल स्वारथ के संगी ।
सब आय मिले दिन च्यारि देषि तूं रंग पतंगी ।
कोइ या मैं तेरा नांहि देषि तूं ग्यान बिचारी ।
सब ही तैं मन काढि सुमरि तूं देव मुरारी ।
जन सेवादास वोसर भलो तूं रपे गमावो वादि ।
मेह की पार्सी काढि करि इक साहिब कीजे यादि ॥ २० ॥

इति किवत संपूर्ण ॥

विषय—

ज्ञानोपदेश का वर्णन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल संवत् १८५५ है ।

संख्या २६६ ग. कुंडलीया, रचयिता सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४८५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ कुंडलिया लिषंते ॥

अथ श्री गुरुदेव कौ अंग ॥

सतगुर बहूत कृपाकरि भजन बताया राम ।
यौ अवसर विरीयांइ है भजीयै केवल राम ॥
भजीये केवल राम सबद सतगुर यौं भाषैं ।
सब सिध है हरि रि नाम जतन करि उर मैं राषै ॥
"जन सेवादास" नवील करि भजीयै आठौं जाम ।
सतगुर बहौत कृपा करी भजन बंध्या नाम ॥ १ ॥
गोविंद भजि नृभै भया सतगुर कै उपदेस ।
भौ सागर मैं बूडतां गुर गहि काढे केस ॥
गुर गहि काढे केस और दुरमति सब भागी ।
करम भरम सब छाडि अडिग अक्षर ल्यौ लागी ॥
"जन सेवादास" सांसा मिट्या अब तन मन करि हरि पेस ।
गोबिंद भजि नृभै भया सतगुर कै उपदेस ॥ २ ॥

मध्य—

॥ अथ बीनती कौ अंग ॥

नैंन बैंन हृदै कपट गेम रोम भर पूरि ।
घट म औघट घाट है राम बिसार्यौ दूरि ॥
राम बिसार्यौ दूरि कुबधि की गांठिन छूटै ।
दोस किसोज दयाल जीव कूं जम निति लूटै ॥
जन सेवा सांई तुम बिनां सबै जनम मैं धूरि ।
नैंन बैंन हृदै कपट रोम रोम भर पूरि ॥ १ ॥
नैंन बैंन हृदै कपट कपट सकल भरपूरि ।
कपट कहणी रहणी कपट सांई बिसरे दूरि ॥
सांई बिसरे दूरि धूरि ताकैंणां मांही ।
हरि इंम्रत रस छांडि जहर कूं रुचि रुचि षांही ॥
कर जोडि कहै जन सेवलो जीव रषै आइ कूरि ।
नैंन बैंन हृदै कपट कपट सकल भरपूरि ॥ २ ॥

अंत—

॥ उपदेस कौ अंग ॥

सबद बतावें ब्रह्म कूं पणि चीन्हैं बिरला कोइ ।
सबदां मांही रामधन ले धनवंता होइ ॥
लेधनवंता होइ सबद कसणी मे चालै ।
पांचूं पसर निवारि अटकि अर उलटा पालै ॥
"जन सेवादास" विचार में मन कूं राखै पोइ ।
सबद बतावें ब्रह्म कूं पणि चीन्है बिरला कोई ॥ १ ॥
अंगा ॥ ३४ ॥ इति कुडलीया ग्रंथ संपूर्ण ॥ ३९९ ॥

विषय –

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है । इसमें ३४ अंग हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं :—

१—गुरुदेव कौ अंग	कुल कुंडलियाँ	११; पत्र ६८ से ६९ तक
२—गुरु कसौटी ,, ,,	,,	३; पत्र ६९ से ६९ तक
३—गुरु महिमा ,, ,,	,,	५, पत्र ६८ से ६९ तक
४—सुमिरण ,, ,,	,,	२५; पत्र ६९ से ७० तक
५—विहं (विरह) ,,	,,	७; पत्र ७० से ७० तक
६—प्रचा ,, ,,	,,	२७, पत्र ७० से ७२ तक
७—हैरान ,, ,,	,,	१; पत्र ७२ से ७१ तक
८—साध ,, ,,	,,	३२, पत्र ७२ से ७३ तक
९—बृकताई (बिरकाई) कौ अंग	,,	१२; पत्र ७३ से ७३ तक
१०—साध संगति ,, ,,	,,	८; पत्र ७३ से ७४ तक
११—साधमहिमा ,, ,,	,,	१०; पत्र ७४ से ७४ तक
१२—साध पारिष ,, ,,	,,	३; पत्र ७४ से ७४ तक
१३—सांच कौ अंग	,,	३, पत्र ७४ से ७४ तक
१४—पीव पिछांणि कौ अंग	,,	९, पत्र ७४ से ७५ तक
१५—पतिवरता ,, ,,	,,	१२; पत्र ७५ से ७५ तक
१६—सहजै ,, ,,	,,	१; पत्र ७५ से ७५ तक
१७—सबद ,, ,,	,,	३; पत्र ७५ से ७६ तक
१८—भ्रम विधूंस ,, ,,	,,	४०, पत्र ७६ से ७८ तक
१९—विचार ,, ,,	,,	१७; पत्र ७८ से ७८ तक
२०—जीवत मृतक ,, ,,	,,	४; पत्र ७८ से ७९ तक
२१—चांणिक ,, ,,	,,	४७; पत्र ७९ से ८१ तक

२२—चिंतावणी	,,	,,	,,	४२; पत्र ८१ से ८३ तक
२३—मन	,,	,,	,,	८; पत्र ८३ से ८३ तक
२४—माया	,,	,,	,,	२; पत्र ८३ तक
२५—काल	,,	,,	,,	११; पत्र ८२ तक
२६—संजीवनि	,,	,,	,,	१, पत्र ८४ से ८४ तक
२७—भेष	,,	,,	,,	१३; पत्र ८४ तक
२८—धीरज	,,	,,	,,	१४; पत्र ८५ तक
२९—विसवास	,,	,,	,,	६; पत्र ८५ तक
३०—विनती	,,	,,	,,	४; पत्र ८५ तक
३१—मधि	,,	,,	,,	४; पत्र ८५ तक
३२—निरबैरता	,,	,,	,,	३; पत्र ८५ से ८६ तक
३३—मास हरी	,,	,,	,,	२; पत्र ८६ तक
३४—उपदेश	,,	,,	,,	१; पत्र ८६ तक

संख्या २६६ घ. गुरुमंत्र जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषापुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस ।

आदि—

अथ गुंमंत्र जोग ग्रंथ लिष्यते ।

मंत्रं नाव गुरदेव सुणायां । सनमुषि करि सतगुर समझाया ॥ १ ॥
पांचू उलटि अगम रमपाया । ऊझड़ जाता मारि गिलाया ॥ २ ॥
उबटही कूं चलतौ बौरा । सतगुर फेरि लगायौ ठौरा ॥ ३ ॥
यौमन दसूं दसा कूं बहैता । सतगुर फेरि कीया है रहैता ॥ ४ ॥
रहता कै संगि बहैता लाया । अस्थिर भया प्रम सुषपाया ॥ ५ ॥
ज्यूं पीया रामू साथिर होई । यूं अब मन चलण न पावै सोई ॥ ६ ॥
सतगुर सोधि लीया सब संधणों । मारया बांण नहीं अब चलणां॥७॥

अंत—

राम मंत्र का बड़ौ विस्तारा । सुमिर सुमिर केते भए पारा ॥ ६६ ॥
मंत्र जपत भए अविनासी । विरदा माही जोती प्रकासी ॥ ६७ ॥
राम मंत्र जपि लीजै भाई । प्रेम प्रीति अंतरि ल्यौ लाई ॥ ६८ ॥
तन मन सतगुर ऊपरै जन सेवा दीजै वारि ।
राम नाम हृदै धरया काम क्रोध विष जारि ॥ ६९ ॥

ररंकार निजमूल है सतगुर दीया लषाई।
जन सेवा दास ले उर धरया सुषमैं रह्या समाई॥ ७० ॥

इति गुर मंत्र जोग ग्रंथ संपूर्ण ॥

विषय—

गुरू द्वारा दिए गए राम मंत्र की महिमा का वर्णन।

संख्या ४९९ क गुर महमां जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—१०३ × ५३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८५१, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ गुर महमां जोग ग्रंथ लिष्यते ॥

हीरा जिम गुर एक रस दूजी पवन छांइ काई।
केइ मिलै केई बीछड़ै गुर रह सदा समि भाई॥
गुर चिंतांमणि गुर कांम धेन कलप वृछ गुर देव।
कांम सिधि समृथ गुरू लहै न कोई भेव॥ २ ॥
गुर उंचा अधिक आकास उंत सरवर जिम गंभीर।
समिदिष्टी रिवसारिषा वसुधा जिम गुर धीर॥ ३ ॥
मारुति जिमि गुर अलिप है लिपै न काहू संग।
सीतल गुर ससि सारिषा गुर नृमल सदा अभंग॥ ४ ॥
गुर पूरण प्रमांनंद है गुर अवगति आप अलेष।
गुर अनंत अपार अपंड है गुर व्यापक सबही देष॥ ५ ॥

मध्य—

धू प्रहलाद कबीर से नामा से निजदास।
पारि उतारे नाम जी राषे अपणैं पास॥ ७७ ॥
मोभा सेनां धरधना रंका बंका सूर।
साध सबै ही तहां रमैं जहां बाजै अनहद तूर॥ ७८ ॥
नाथ मछंदर जलंधरी गोरष गोपीचंद।
तहि सुषि पहुते संत जन तहां नही रिव चंद॥ ७९ ॥
पीपा अर रैदास से जन हरिदास हरदास।
नृभै थका नृबांण पद पहुते हरि के दास॥ ८० ॥

\+ \+ \+

अगम सुष तहां मिलि रहे जन तुरसी संत अनेक।
पूरा गुर तैं पाइयै हरि सुमिरण भाव बमेक॥ ८२ ॥

दादू कान्हड़ आदि सब सकल संत सुष रूप ।
सकल संत तहां बिलंबीया जहां छाया नही धूप ॥ ८१ ॥

+ + +

अंत —

गुर की महमा अनंत है क्या कहूं मोमति थोड़ ।
अनंत सुष रसमां बसैं तोहूं न आवै वोड़ ॥ ८७ ॥
अगम बसत गुर गमि करी पाया आत्म भेव ।
'जन सेवादास' प्रणांम करि न्मो न्मो गुरदेव ॥ ८८ ॥
इति गुरमंहा जोग ग्रंथ संपूर्ण ॥ २ ॥

विषय —

गुरू की महिमा का वर्णन किया गया है ।

संख्या २६६ च. चंद्राइणा, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१०३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि —

अथ चंद्राइणां लिष्यते ॥
॥ अथ श्री गुरुदेव कौ अंग ॥

सतगुर लीए उबारि समंद संसार मैं ।
नौका नांव चढाइ कीये गुर पार मैं ॥
करम भरम सब मेटि साध संगि लाईया ।
हरि हां जन सेवादास भजि रांम सहजि सुष पाईया ॥ १ ॥

नृमल गुर के ग्यांन करम सब कटि गए ।
मन के विषै विकार सहजिही धूपि गए ॥
कांम क्रोध अहंकारक बेरी सब मरे ।
हरिहां जन सेवादास भै नांहि सीस परि करि धरे ॥ २ ॥

सतगुर सबद उलंघिक पग कोई मति भरौ ।
मन का कुसमल धोइ सबद हिरदै धरौ ॥
जहां तहां भ्रम कालक दूरि न जाइयै ।
हरिहां जन सेवादास गुर सबद तहां मन लाइयै ॥ ३ ॥

सतगुर बरजै तौ हियै सौ तूं क्यूं करै ।
पग पग मांही काल तहां ले पग धरै ॥
दृहि दस फूटी ग्मन भ्रम दिन रैणि रे ।
हरिहां जन सेवादास समझाइ कहैं गुर वैण रे ॥ ४ ॥

मध्य—

॥ अथ चितावणी कौ अंग ॥

जीव सीव कूं भूलि माया चित्त धरत हैं ।
यूं आप आपणां नांस मुगध नर करत हैं ।
चैती नही लिगार भार सिरि धरि रहे ।
हरिहां जन सेवा संवारी सूम कंतासूं फिरि रहे ॥ १ ॥

रे फटि फटि जीव अचेत जगतपति भूलीयां ।
हरि सुष सागर छाडि विषै अलि भूलीयां ।
समझै नहीं अचेत सु जड़ निराट रे ।
हरि हां 'जनसेवा' बारौंडी मैं बास पुरांणी घाट रे ॥ २ ॥

अंत—

॥ अथ मन कौ अंग ॥

भवर कंवल बसि भयौ गज तब गरसीयौ ।
यूं आंणि पंहूंतौ काल विषमन रसीयौ ।
मन मीन ज्यूं जांणि स्वादि मंगि दुष शह्या ।
हरि हां जन सेवादास यौ मन चौरासी यूं बह्या ॥ १४ ॥

गुर गहि ग्यान बिचार त्रिषै तैं थेरियै ।
'जन सेवादास' घट मांहि पांच कूं घरीयै ।
लै सास उसासे नांव अनंत नही जाइगा ।
हरि हां यूं मन सहैजैं थीर सु सुषि समाइगा ॥ १५ ॥

इति मन कौ अंग संपूर्ण ॥ अंग ॥ १२ ॥ १३४ ॥

इति चंद्राइणां संपूर्ण ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश वर्णन । इसमें १२ अंग हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं :—

संख्या २६६ छ. चिंतावणी ग्रन्थ, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—$1\frac{1}{2}$, आकार—$10\frac{1}{2} \times 5\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ चिंतावणी जोग ग्रंथ लिष्यते ॥

रचना त्रभवन नाथ की भई चौरासी लष ज्यूंनि ।
तामैं उत्म मनिषा देह है सो लहीये काहू पूनि ॥ १ ॥

या पुनि पाई नर देह सौ सो तौ ठौड़ लगाइ ।
कै तौ सेवा संत की कै गोविद के गुण गाइ ॥ २ ॥

तूं आयौ थौ एस कांम कूं रे करि साहिब सूं कौल ।
तू भलौ सेवा बंदगी भयौ हरामी टोल ॥ ३ ॥

रे गरभि कसौटी सा कषै तहां रिछक सिरजन हार ॥
तूं पवन लगत ही बीसर्यौ वांकों रह्यौ करतार ॥ ४ ॥

मल मूतर बहतो मुष परि जठर अगनि तलि अंच ।
बंधै मुषि तहां झूलतौ दुष बहौ सुष नहीं रेच ॥ ५ ॥

इहां सुष पायौ रमि बसि भयौ वा दुष कूं गयौ भूलि ।
यौ सुष तजन हरि भजै यौं चौरासी लष झूलि ॥ ६ ॥

अंत—

गरब निवारो हरि भजौ यौंही बड़ा बमेक।
और सगा सूझै नही अंति सगा हरि एक ॥ ९६ ॥
तेरो तेरै पासि है तूं आपा झजटि संभालि।
आपा की सोधी बिना यूं जग पाधौ कालि ॥ ९७ ॥
बाकी बुराई दूरि करि तूं नूमल हरि गुण गाइ।
"जन सेवा" दूसर ना कहैं ब्रह्म होइ तजि काइ ॥ ९८ ॥
"जन सेवादास" सुख सिंध मैं मिलि रहै सोई प्रान।
जहां काल कीर की गम नहीं अगम ठौड़ अस्थान ॥ ९९ ॥

इति चितावणी जोग ग्रन्थ संपूर्ण ॥ इति ग्रंथ अब संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ १० ॥

विषय—

सांसारिकता को सारहीन बतलाकर ईश्वर को न भूलने की चेतावनी दी गई है।

संख्या २६६ ज. तत निरणौं (तत्त्व निर्णय), रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०१/२ X ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा बनारस

आदि—

अथ तत निरणौं जोग ग्रंथ लिष्यते ॥

सतगुर का चरणां चित धरिहूं। निति अनित्य कौ सोधन करिहूं ॥ १ ॥
निति आत्मां देह अनंता। याही समझि कहैं सब संता ॥ २ ॥
असुचि अनंत अमंगल देही। सति चित आनद आतमा एही ॥ ३ ॥
षट बिकार देह संजुगता। आत्म सदा जांणीयें मुकता ॥ ४ ॥
सतगुर सबदा बुधि लुभांणी। आत्म सदा मुकती ही जाणी ॥ ५ ॥
गुरु कृपा तैं मारग पाया। अंजन मांहि निरंजन राया ॥ ६ ॥
दिष्टि पड़ै सबही सो माया। तत सरूप गुरदेव बताया ॥ ७ ॥
अलिप असंग ससि घट मांही। यूं आत्म अलिप लियैं कहूं नाही ॥ ८ ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

करता हरता एक तूं और न दूजा कोइ।
सुमिरि सुमिरि जन नूमला रहै आनंदी होइ ॥ ६३ ॥

साची माला सुरति की फेरै बिरला कोइ।
सुमिरि सुमिरि रस पीजीयै जन सेवादास सुष होइ ॥ ६४ ॥

"जन सेवादास" साची कथा सतगुर देई सिषाइ।
अंतरि के पट दूरि करि गुर दीया अलख लषाइ ॥ ६५ ॥

निरविकार सो ब्रह्म है सब्य कारी है जीव।
"जन सेवा दास" यू जाणिकरि सुमिरो अपणापीव ॥ ६६ ॥

गुर मुदे नैन उघाडीये सूते लीए जगाइ।
जन सेवादास आनंद भया सुष मैं रह्या समाइ ॥ ६७ ॥

इति तत निरणौ जोग ग्रंथ संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ ५ ॥

विषय—

पर ब्रह्म तत्व का निरूपण किया गया है।

संख्या २६६ क. तिथि जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी-नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ तिथि जोग ग्रंथ लिषते।

मावस मन उलटाइ करि हरि रस पीवै संत।
हरि सुष मांही पेलीजै जुग जुगि मास बसंत ॥ १ ॥

पडिवा परषै परम सुष परम जोति परकास।
पूरण ब्रह्म विचारि करि मन कीया निरंतरि वास ॥ २ ॥

बीज व्यवधि भ्रम मेटिकै बस्त पिछान एक।
दूजी मेटी दुष सब गया दीहै एकै नांव अनेक ॥ ३ ॥

तीजि तीन कूं मेटि करि चौथें रह्या समाई।
पूरण पद आराधीया अब मन अनंत न जाइ ॥ ४ ॥

चौथि स चौक पुराइ करि मंगल गाव मन।
सब घरि सहजि बंधावणा पाया राम रतन ॥ ५ ॥

पांचै पांचू पलटि करि मन रह्या गिगन मठ छाइ।
अब सहजै सब सुष बिलसीए और कछु न सुहाइ ॥६॥

अंत—

तेरसि तेरह सुष हम पाया तीनि गुणां तैं आगै ।
तिह सुषि पेलि नृभै होइ बैठा जम की चोट न लागै ॥ १४ ॥
चौदसि चित चेतन भया छुटि गए भरम जंजीर ।
सांसा भागा सुष भया परस्या पद गंभीर ॥ १५ ॥
पूंन्यूं पीव प्रगट लिह्या पूरण सबै प्रकास ।
"जन सेवा" बरनहीं बादलां बरषा छह रुति बारामास ॥ १६ ॥
इति जोग ग्रंथ संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥

विषय—

तिथियों का दार्शनिक वर्णन किया गया है ।

संख्या २६६ ञ. नाव महमां जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवाराम, कागज—देशी पत्र—१¾, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६ पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ नांव महमां जोग ग्रंथ लिष्यते ।

प्रथम गुरदेव के बदु चरणां । जिन नांव जिहाज दई भव तिरणां ॥ १ ॥
सब संतन कूं करू प्रणांमा । हरि नाम सुमिर भये नहि कामा ॥
सबही संत सकल सिर मोरा । एक नांव गह्यां पांचू करि ठौरा ॥ ३ ॥
सब संतन मिलि कीया बिचारा । कलिजुग केवल नांव अधारा ॥ ४ ॥
सतजुग त्रेता द्वापुर कहीयै । कलिजुग नांव प्रम सुष लहीयै ॥ ५ ॥
कलि के संत वेद यूं गावै । नांव प्रतापि जम पुरी न जावै ॥ ६ ॥
अज्यामेल गज गिनका तारे । हरि नांव अनेक पतित निसतारे ॥ ७ ॥
सधनां आदि जेहुते कसाई । नांव प्रतापि प्रम गति पाई ॥ ८ ॥
ज्यां सुमिर्यौ सो उतरे पारा । और सबै बूडे विषधारा ॥ ९ ॥

अंत—

नांव की महमां जौ श्रवणां सुणिही । ते भौ सागर सहजै तिरही ॥११८॥

॥ दोहा ॥

"जन सेवाराम" भजि नांव है सब मिथ्या सुष संसार ।
संतो इह बिचार करि हरि सुमिरौ बारं बार ॥ ११९ ॥

अनेक पतित पावन भए केवल हरि के नाइ।
"जन सेवादास" उर मैं धरया ताकी मैं बलि जाइ ॥ १२० ॥
"जन सेवादास" कलिजुग में हैं केवल नांव अधार।
जिन यौ निरत हिरदा मैं धरयौ यौ जन उतरे पार ॥ १२१ ॥
इति नांव महमा को अंग संपूर्ण ॥ ग्रंथ ॥ ४ ॥

विषय—

नाम की महिमा का वर्णन किया गया है।

संख्या २६६ ट. पद, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा, पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ पद लिष्यते ॥
॥ राग गौडी ॥

मन रे तूं भरमि भुलानां भाइ रे।
नां कोई तेरा न तूं काहू का ज्यूं आया त्यौं जाइरे ॥ टेक ॥
तात मात बनिता सुत बंधू तेरा नांही कोई रे।
राम बिसारि ताहि तू गतौ यूंही जन्म विगोई रे ॥ १ ॥
आयौ निसरि बंधि रहे प्रांणी ज्यू ललनी का सूवा रे।
हरि भजि सुफल करी नही देही यूंही यूं पचि मूवा रे ॥ २ ॥
यौ औसर जात है बीतौ बहौडि न पावै भाई रे।
'जन सेवादास' पुकारि कहैत हैं तूं रांम सुमिरि सुषदाई रे ॥ ३ ॥ १ ॥

गाफिल क्यूं होइ भाई रे।
यौ तन चल्यौ जात है बीतौ तू राम सुमिरि सुषदाई रे ॥ टेक ॥
तूं काची परषि षांहि मति षोटा तोहि कहि समझाऊं लोई रे।
सुमिरण साबण लाई दाग सब तूं साध संगति मिलि धोई रे ॥ १ ॥
वेद साध तोहि टेरि कहैत है दिन ही दिन समझावै रे।
कह्या न मानैं मन सठ मेरा दोदिर विष फल षावै रे ॥ २ ॥
सतगुर मिल्या कीया मोहि सनमुष भरि पेम पियाला पाया रे।
'जन सेवादास' पूरण अविनासी मैं मन कूं तहां लगाया रे ॥ ३ ॥ २ ॥

मध्य—

॥ राग रामगरी ॥

जागिर जपौ जगपति माधौ ।
बिन हरि भजन कांचि जग बाधौ ॥ टेक ॥

हरि बिन झूठे देवी देवा छाल न आडे काची सेवा ॥ १ ॥
पांहण करता दुनी ठगाई सुनारस्य लावट लई बुराई ॥ २ ॥
जे इहु मूरत करता होइ तौ परवसि होइ रहै क्यूं सोई ॥ ३ ॥
सब जग भूला भ्रम मंझारी 'जन सेवा' समझि न जपै मुरारी ॥ ४ ॥

अंत --

॥ राग धनाश्री ॥

तुम बिन क्यूं रहूं परम सनेही पीव ।
साहिब दरसण दीजीये तालाबेली जीव ॥ टेक ॥

बिरहण तड़फै मीन ज्यूं जल बिन व्याकुल प्राण ।
मोहि पेम पियाला दीजीये सुणि हो कंत सुजाण ॥ १ ॥

चात्रुग धर जल ना पीवै सीप स्वांति की प्यास ।
साहिब इम्रत पाइये मेरी पुरवौ मन की आस ॥ २ ॥

जैसें चंद चिकोर ज्यूं नैनन पंडै धार ।
सेवादास जन वीनवे मोहि मिलीए सिरजन हार ॥ ३ ॥ १४ ॥

॥ आरती ॥

रमईया राम तेरी आरती ।
सकल बियापी राइ अनत भवन के गाई ॥ टेक ॥

अतुल अतीत सकल घटि व्यापक अचित अजूनी देव ।
बरणन वय रूप नही जाकै अबरण अलष अभेव ॥ १ ॥

अगहि अगोचर प्रम प्रकासी आदि अंत मधि नाही ।
जहां पावक पवन सूर नही ससिहर संत रमैं ता मांहि ॥ २ ॥

जहां बसुधा गिगन नहीं तहां उडिगण निरभै अबगति राइ ।
निरभैदास करण भौ भंजण 'जन सेवादास' बलि जाइ ॥ ३ ॥ २ ॥

संतो इसि बिधि आरती कीजै ।
मन पवना करि एक अंतर मैं हरि रस भरि २ पीजै ॥ टेक ॥

गिगन मंडल मैं आसण धारै जहां निरंजन देवा।
दीपक ग्यान परम प्रकासा करै संत तहां सेवा॥ १॥
अनहद सबद झालरि तहां बाजै गुर गमि लहीए भेवा।
जोति सरूपी आय बिराजै नाभि कंवल ध्यत देवा॥ २॥
रोमि रोमि रमि रह्यो रमईयौ गोपति दूजा नाहीं।
सेवादास जन करै आरती बहौडि न भौजलि आंही॥ ३॥ १९॥

॥ राग धना श्री संपूर्ण॥

इति श्री श्री स्वामी जी श्री सेवादास जी कौ कृत बांणी संपूर्ण॥ बाणी की विगति (विज्ञप्ति ?) ॥ साषी॥ ३५११॥ ग्रंथ॥ १०॥ कुंडलीया॥ ३९९॥ किवत॥ २०॥ सवईया॥ ४॥ चंद्राइणां॥ १३४॥ रेषता॥ ४४॥ साष्यां का अंग॥ ४०॥ कुंडलिया॥ ३४॥ चंद्राइणा का अंग॥ १२॥ रेषता का अंग॥ ६॥ पद॥ ४०२॥ राग॥२१॥ संपूर्ण॥ संबत्॥ १८५५॥ मीती भाद्रवावे दिवरषे तिथ्यौ नाम पेंत्र्यूं॥ बार सो॥ श्री श्री दयाल जी श्री हरीदास जी का साध श्री स्वामी जी श्री सेवादास जी बृकत (विरक्त ?) महापुरष तिसिष श्री स्वामी जी श्री अमरदास जी॥ ता प्रसादि सिष श्री श्री स्वामी जी श्री श्री दरसणदास जी ता प्रसादि सिष मुकनदास पठनार्थ॥ लिषतं च ग्राम पारह्यामध्ये॥ पोथी बाबाजी श्री दरसणदास जी की कृपा सू लिषी छै॥ बांच बिचारै जाकूं राम राम नमशकारं रं रं

विषय—

निर्गुण मतानुसार दार्शनिक विवेचन एवं ज्ञानोपदेश वर्णन।

संख्या २९९ ठ. बावनी जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ बावनी जोग ग्रंथ लिष्यते॥

अक्षर एक अलष है धरया सुक्षिरता जांहि।
षीं अषर अर्षंडी एक रस ब्यापि रहा सब मांहि॥ १॥

सिधि साधिक जोगी जती सुर नरदेव अनंत।
सब माया की था यार मैं तूभै एक भगवत॥ २॥

माया सूकौ बृछ है छाह की फल मूरि।
हरि तरवर सुफल सदा सो विसरि रहे कहुं दूरि॥ ३॥

ऊँकार तैं उपजै सकल रूप विसतार।
जो अरूप अरंगी राम है व्यापक सिरजनहार ॥ ४ ॥

× × ×

कका करमि धरमि जुग बाधां। संतासुष अगम कालाधा ॥
तृगुण लागि रहै संसारा। संतातौं कछू अगम बिचारा ॥ ७ ॥
षषा षबरि भला बिधि कीजै। साध पकडि मूठ तजि दीजै ॥
गहि गुर ग्यांन ध्यांन हरि धारै। कांम क्रोध सब बैरी मारै ॥ ८ ॥

अंत—

अलष निरंजन है अविनासी। भजतां सबै कटै जम फासी ॥
अबला उम्र बहोडि नही आवै। तूभै होइ परम पद पावै ॥ ५१ ॥

॥ दोहा ॥

बावन अक्षर सोधि करि रसना रटीयै राम।
'जन सेवादास' दुष सब कटैं सबही सुधरैं कांम ॥ ५२ ॥

॥ चौपाई ॥

बावन अक्षर पढिबौ पावै। अक्षर अगम तहां मन लावैं ॥
संत सबद कहै परवाणी। 'जन सेवादास' तूभै होइ प्राणी ॥ ५३ ॥

ग्रंथ ॥ ७ ॥

विषय —

'क' से लेकर 'ह' तक के प्रत्येक अक्षर पर चौपाई रचकर ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या २६६ ङ. रेखता, रचयिता—सेवादास जी, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल— सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ रेषता लिषंते ॥

श्री गुरुदेव कौ अंग

गुरदेव की द्रिष्टि तैं द्रिष्टि दीसैं सही वा राह बारीक कोई साध पावै।
कनक अर कांमणी जुगि जोधा सबल लरै कोइ सूर दल जीति आवै।

पिसण पांचूंप कडि दाव तलि दुरमलै लौभ अरि मोह सब कसि पीवै ।
'दास सेवौ' कहै सुष तवही लहै अलष भजि अलष भजि संत जीवै ॥ १ ॥

कनक अर कामणी तेग करदी सबल मीर अर पीर सब मारि लीयै ।
कोई एक गुरदेव के ग्यान तैं उबरे इक नांव नृबांण सूं लागि जीयै ।
गुरदेव की वोट तैं चौट लागैं नही रहै सबल की बाह नही काल सारै ।
'दास सेवौ' कहैं वोट निबली गहै तौ अभूं कि छाडै नही काल मारैं ॥ २ ॥

मध्य —

॥ अथ साच कौ अंग ॥

सब झूठ कू दूरि करि एक साच ले उरि धनी सति का सबद सुणि लेहु कांनां ।
इक नांव नृमल बिनां पारि पहुचे नही बेद अर पुरांण भावैं पढौ नाना ।
इक साच कूं ग्रहि गुण ग्रासि पांचूं पकड़ि परम सुष रुचि पीवौ सुष छांडि झूला ।
'दास सेवौ' कहैं संत नरभे रहै जगत सब जात है भ्रमि भूला ॥ १ ॥

संता एक साच कूं पकड़ि काठौ गहौ जगत सब रत है झूठै माही ।
निकटि है साचै सो साच दरसै नहीं झूठ की राह कब जगत जांहि ।
राह पछिम चलै नांव पूरब धरै छिने दिनि आंतरौ पड़त जाई ।
दास सेवौ कहै पद कैसें लहै यूं सब जगत कूं काल गहि षात भाई ॥२॥

अंत —

॥ अथ करम कौ अंग ॥

भरम की बाड़ि में करम कांटा सबल करम के कंट कां सब जगत बीधा ।
कोई मीसरे सुर गुर ग्यांन गहि संतजन सब करम की पासि कूं सीधा ।
पंथ आदू लीया पेम प्याला पीया सकल मन बासनां सोधि षोई ।
'दास सेवौ' कहे धनि वे संत जन रांम भजि राम जन मिल्य एक होई ॥ ३ ॥

करम कांटा सबल लागे पैंडा थक्या अटकि उलटा पड्या वार मांही ।
जीव तलफै सदा अजक तन मैं लगी दुषदारण घणा मिंत नाही ।
बैद पूरा मिलै रोग सबही हरै दुष सब जीव का साध षावे ।
'दास सेवौ' कहैं सुष तबही लहै तन अर मन का मैल धोवे ॥ ४ ॥

इति रेषता अव संपूर्ण ॥ ४४ ॥ अंग ९ ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है। इसमें ६ अंग हैं जिनके नाम नीचे दिए जाते हैं :—

१—गुरदेव कौ अंग	पत्र ९१ से ९१ तक
२—सुमिरण कौ अंग	पत्र ९१ से ९२ तक
३—भेष कौ अंग	पत्र ९१ से ९२ तक
४—साच कौ अंग	पत्र ९२ से ९२ तक
५—साध कौ अंग	पत्र ९२ से ९२ तक
६—सम दृष्टि कौ अंग	पत्र ९२ से ९२ तक
७—वांणिक उपदेश कौ अंग	पत्र ९२ से ९३ तक
८—चितांवणी कौ अंग	पत्र ९३ से ९३ तक
९—करम कौ अंग	पत्र ९३ से ९३ तक

संख्या २९९ ढ. वंदना जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास जी, कागज—देशी, पृष्ठ ४, आकार—१०½ × ५¾ इंच, कुल पंक्ति ९, परिमाण (अनुष्टुप्)—८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी. लिपिकाल सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ वंदना जोग ग्रंथ।

नमो नमो निरंजनं ॥ अभै करण भौ भंजनं ॥
निराकार नृबिकारं नृलेपं निराधारं।
नृक्षरं निरालंबं चिदानंद अरूपकं ॥
परम तत्व प्रमतेजं प्रमस्वास स्वरूपकं।
प्रम ग्यानं प्रम ध्यानं प्रानंद प्रमादि पुरष।
अजरो अमर अनूपकं प्रम जोगं प्रम जापं।
सहं जोति प्रकासितं प्रम पदं प्रम अरिचितं।
अपार अकुल अजंनमई अनादि रचित नृगुण ब्रह्म रमतारांम।
अनल देव प्रमपावन पाप हरण पमदेव सुख निधांन।
अछेद अविनासी अलपरूपं अव व्यापक।
"जन सेवादास" वंदन करै। नमो नमो निजदेव।
सुर नर गति पावै नहीं। अलख अलाप अभेव।
जन सेवादास करि वंदना। ग्यान ध्यान धरि।
देषै वार पार कोमति नहीं अपरंपार अलेप ॥ १ ॥

इति वंदना जोग ग्रंथ संपूर्ण।

विषय—

निरंजन परब्रह्म की वंदना की गई है।

संख्या २६६ ए. सवइया, रचयिता—सेवादास, कागज - देशी, पत्र - १, आकार—१०३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—अथ सवईया लिष्यते ॥

सूर लडै स्यांम काम राडि करै आठूं जांम लोभ मोह बैरी सबै सोधि सोधि मारे हैं ।
तत तर बारि लियै सील की सनांह अंगि ग्यान को मुरी ज्यौं हाथि सब कांम क्रोध जारे हैं ।
दल दोड पेलि करि संगराम जीति लीया जाइकै पहूते जहां तहां अविनासी प्यारे हैं ।
साधू सान सूर बीर सेवा जन और कोउ विसए पिछांटि करि राम मैं सिधारे हैं ॥ १ ॥
मैं तो तेरा चौटी कट एक ही भरोसा उरि और कछु चांहि नांही मनमांनि है ॥
भांवै तौ सुरगवास भांवैं तौ नरक वास भावैं तौ चरन के निवास अग्या एही ठांनि हैं ।
है आगै स्यांम पीछै स्याम दसूं दसा भरपर ग्यान के प्रकास भयै ऐसें पीव आनि हैं ।
हिरदा के कपाट पुले सेवा जन सतगुर ज्यू पांणी मांही डूबी मारि कहा पाली जांणि है ॥२॥

इंद छंद

चेते रे चेति काहा नर सोवैत सोवैत सोवैत सब रैणि बिहांणी ।
तूं लोभर मोह विषै रसि मातौ तेरै काल धजा सिर आइदिषांणी ।
सब संधर बंध भए सब ढीले गही हाथि लकटियां बहै नैनन पांणी ।
"सेवादास" कहै जन ग्यांन विचारि जु हरि नांव बिनां सुष नांहिन प्राणी ॥३॥

अंत—

सोवन सोवत रैणि गई बहौरे मन मूरिष चेति संबेरा ।
मात पिता अर बंध तृया सुत आइ मिले सब स्वारथि चेरा ।
ए आवन संगिन जात संगातो तू न काहू कानां कोई तेरा ।
'सेवादास' कहैं जन ग्यान बिचारि जू हरि नांव बिना सबही उरझेरा ॥ ४ ॥

इति सवईया संपूरणा ॥ ५ ॥

विषय

ज्ञानोपदेश वर्णन ।

संख्या २६६ त. सपत बार जोग ग्रंथ, रचयिता—सेवादास, पत्र १, आकार १०३/४×५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि —

अथ सपत बार जोग ग्रंथ लिषते ।

आदित वार अगम घर सोधौ । गुर गहि ग्यांन मन हीय परमोधौ ॥
अरध उरध मधि चौक पुरावो । सास उसास अजपा गावो ॥
मन गहि पवन ज्यू सहज घरि आनैं । अरध उरध मधि पीव पिछानौ ॥
सोमवार सुधि भया सरीरा । काम क्रोध सब झडे जंजीरा ॥
द्वादस छाडि दई मुकलाई । सोलै कला संपूरण पाई ॥
अब मन इत उत जांण न पावै । नौ दरवाजा कुलफ लगावै ॥ २ ॥
मंगलवार सदा आंनदा । सब घटि पूरण परमांनंदा ॥
जल मैं कुंभ कुंभ मैं पाणी । यूं पूरण ब्रह्म मण्डल मैं जांणी ॥
ऐसैं जाणि जुगति गहि जोगी । पूरण ब्रह्म परम रस भोगी ॥
बुधवार बाजै रण तूरा । झिलिमिलि झिलिमिलि दरसै नूरा ॥
नृपै नूर निरंजन जोगी । जो या रस का है कोई भोगी ॥
एक रस लाग्या छक्या रस पीवै । ऐसैं होइ सदा जन जीवै ॥ ४ ॥
बृसपति बिलसै बारा मास । आत्म कंवल कीया परकास ॥
बिषवन धसे न सकै बाड़ी । तृष्णां ले जड सहज उपाडी ॥
आसुष वासुष अंतरि भारी । एक दिनकर एक रैंणि अंधारी ॥ ५ ॥
सुक्रवार सब एकं कारा । परम जोति पूरण एक सारा ॥
जाति वरण कुल तहां न कोई । संत सुमिर मिल एकै होई ॥
तासुषमांहीं पेलैं दासा । पूरण जोति प्रम प्रकासा ॥
थावर थिरि पाया है थांनां । पाप पुनि दोई दीया दांनां ॥
सत गुर कसर हुतां सो षोई । मो सुष मांहि निरंतरि जोई ॥
आया उलटि आथा मैं जोया । जन्म मरण का सांसा षोया ॥ ७ ॥
सपतबार का भेद बिचार्‍या । हरि सुमिरण लागि काल मैं मारया ॥
ऐसैं षालि बहौरि नहीं हारैं । सोह आपणां कारज सारैं ॥
होइ अपंग हरि के गुण गावै । जन सेवादास फिरि कीचन लावै ॥ ८ ॥

॥ ग्रंथ ॥ १५

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

सात वारों का दार्शनिक विवेचन किया गया है ।

संख्या २६६ ग. सात्री, रचयिता—सेवादास, कागज—देशी, पत्र—५१, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५८४,

पूर्ण, रूप—प्राचीन पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री रामजी ॥ श्री निरंजनायन्म ॥ श्री गुरदेवायनन्म ॥ सकल संत माहा पुरषायन्मः ॥
अथ स्वामी जी श्री श्री सेवादास जी कौ कृत लिष्यते ॥
॥ श्री गुरदेव कौ अंग ॥ अथ वंदना लिष्यते ॥

न्मो न्मो निरंजनं । निराकार निरलेपकं ।
सहजानंद अपंड ब्रह्म । अजरो अमर अनूपकं ॥ १ ॥

गुर पूरण परमानंद है । गुर अबगति आप अनंत ।
गुर व्यापक सब ही मांड मैं । गुर निराकार भगवंत ॥ २ ॥

अनंत कला परकास गुर । भयौ तिमर कौं नास ।
'जन सेवादास' वंदन करै । हिरदै चरन निवास ॥ ३ ॥

गुर गोबिंद की बंदना द्वैत भेद कछू नाहीं ।
ऐसा जानि प्रणाम करि सबै विघन मिटि जांहिं ॥ ४ ॥

गुर पूरन आप अनंत है सब विधि पूरवैं काज ।
पारि उतारै सिषकूं बैठे अजर जिहाजि ॥ ५ ॥

॥ साषी ॥

'जन सेवादास' सतगुर मिल्या पाया आत्म ग्यान ।
पूरण एक लषाइया दूसर नाहीं आन ॥ ६ ॥
'जन सेवादास' सतगुर मिल्या पाया आत्म भेव ।
सांसा भागा भ्रम गया भजि अलप निरंजन देव ॥ ७ ॥
जन सेवादास सतगुर मिल्या अंतर पट षोले ।
बहरा फिरि चेतन कीया गूंगा मुषि बोले ॥ ८ ॥
गुर समंद्र सिष तरंग है उलटि समाना मांहि ।
जन सेवादास रलि एक होइ सहज सुष विलसांहि ॥ ९ ॥

मध्य—

अथ मधि कौ अंग ॥

मधि कै पेडै चालणां दुबध्या दूरि निवारि ।
रमता रांम संभालीयै सो सबका सिरजन हार ॥ १ ॥
मरै न जीवै सौ भजौ पूरण पद नृबांन ।
घाटि बाधि नहीं देषीयै इक सब घटि आत्मज्ञांन ॥ २ ॥

द्वै पष छाडै साध सो मधि कै पैडै जाइ ।
मती मोटी तासाध की सुष मैं रहै समाइ ॥ ३ ॥

तुरकां मह्जिद मन दीयौं हींदू देवल देव ।
'जन सेवा' द्वै पष छाडि करि इक सुमिरौ अलप अभेव ॥ ४ ॥

'जन सेवादास' इक राम कहि पष तजि नृपष होइ ।
दोउं कै मधि चालिबौ साधू कहीये सोइ ॥ ५ ॥

कछु न चाहै आपकूं आपा पर का नांस ।
'जन सेवादास' तब ही सुहै (? सुझै) पूरण ब्रह्म प्रकास ॥ ६ ॥

अंत --

मधि कै मारगि चालीयै सब आपा मेटे काल ।
ज्यूं पटतंत जुदा नही यू ऐको दीन दयाल ॥ १२ ॥

मधि मारगि साधू चलै सुमिरै निरजन हार ।
पषा पषी जग बंधीयौ दुलभहुंणौं पार ॥ १३ ॥

'जन सेवादास' संसार सूं रहै निराला होइ ।
जगत सबैही पचिभूंवौ मल ही सू मल धोइ ॥ १४ ॥

नृपष साधू सोधिलैह जिनिकै केवल राम आधार ।
दूजि निवारी दिल की एकलता कर तार ॥ १५ ॥ अंग ५० ॥

इति साषी ग्रथ संपूर्ण ॥ साषी ॥ ३५११ ॥ श्री स्वामी जी श्री सेवादास जी साहिब जी स्मसिकारं ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है । इसमें ५० अंग हैं जो नीचे दिए जाते हैं :- -

१—वंदना और गुरुदेव को अंग	साखी			१७०; पत्र १ से ४ तक
२ गुरु सिष पारष	,,	,,	,,	६३; पत्र ४ से ६ तक
३—सुमरण	,,	,,	,,	४०४, पत्र ६ से १५ तक
४—बिरह	,,	,,	,,	५०, पत्र १५ से १६ तक
५—परचा	,,	,,	,,	८२, पत्र १६ से १८ तक
६—सजीवनि	,,	,,	,,	३०; पत्र १८ से १८ तक
७—बिनती	,,	,,	,,	६७; पत्र १८ से १९ तक
८—ग्यान बिरह	,,	,,	,,	१०; पत्र १९ से २० तक
९—जरणां	,,	,,	,,	८, पत्र २० से २० तक

१०—साध कौ अंग	साषी	३३०; पत्र २० से २५ तक
११—साधुमहिमा कौ अंग	,,	१९; पत्र २५ से २६ तक
१२—साध संगति ,, ,,	,,	४६; पत्र २६ से २६ तक
१३—साध पारिष ,, ,,	,,	२३; पत्र २६ से २७ तक
१४—धीरज ,, ,,	,,	२८; पत्र २७ से २७ तक
१५—जीवत मृतक ,, ,,	,,	१५; पत्र २७ से २७ तक
१६—दया ,, ,,	,,	३४; पत्र २७ से २८ तक
१७—सम द्रिष्टी ,, ,,	,,	८; पत्र २८ से २८ तक
१८—भरोसा ,, ,,	,,	५; पत्र २८ से २८ तक
१९—चाणिक ,, ,,	,,	१३१; पत्र २८ से ३० तक
२०—चिताव ,, ,,	,,	३८९; पत्र ३० से ३६ तक
२१—मन ,, ,,	,,	११६; पत्र ३६ से ३८ तक
२२—माया ,, ,,	,,	७१; पत्र ३८ से ३९ तक
२३—सूषिममाया ,, ,,	,,	२६; पत्र ३९ से ३९ तक
२४—कांमी नर ,, ,,	,,	१०१; पत्र ३९ से ४१ तक
२५—लोभी नर ,, ,,	,,	४६; पत्र ४१ से ४२ तक
२६—कृपण नर ,, ,,	,,	१८; पत्र ४२ से ४२ तक
२७—काल ,, ,,	,,	९१, पत्र ४२ से ४३ तक
२८—सूरातन ,, ,,	,,	१३३; पत्र ४३ से ४५ तक
२९—समर्थाई ,, ,,	,,	१७; पत्र ४५ से ४५ तक
३०—पीव पिछांणि ,, ,,	,,	३५; पत्र ४५ से ४६ तक
३१—साषी भूत ,, ,,	,,	१४; पत्र ४६ से ४६ तक
३२—विचार ,, ,,	,,	५३; पत्र ४६ से ४७ तक
३३—चित कपटी ,, ,,	,,	२७; पत्र ४७ से ४८ तक
३४—निगुणांनर ,, ,,	,,	६; पत्र ४८ से ४८ तक
३५—दया नृबैरता ,, ,,	,,	१८; पत्र ४८ से ४८ तक
३६—उपदेस ,, ,,	,,	१०; पत्र ४८ से ४८ तक
३७—सुंदरी ,, ,,	,,	४; पत्र ४८ से ४८ तक
३८—उपजणि ,, ,,	,,	४, पत्र ४८ से ४८ तक
३९—बूकताई (? विरक्ताई) कौ अंग	,,	५०; पत्र ४८ से ४९ तक
४०—भेष ,, ,,	,,	१२०; पत्र ४९ से ५१ तक
४१—पतिबरता ,, ,,	,,	१०३; पत्र ५१ से ५२ तक
४२—भरम बिधूंस ,, ,,	,,	१६२; पत्र ५२ से ५५ तक
४३—सारग्राही ,, ,,	,,	७; पत्र ५५ से ५५ तक

४४ – वीहक	,,	,,	,,	७; पत्र ५५ से ५५ तक
४५—अकलि	,,	,,	,,	१५; पत्र ५५ से ५५ तक
४६—रसकौ	,,	,,	,,	२१; पत्र ५५ से ५६ तक
४७—साच	,,	,,	,,	२६; पत्र ५६ से ५६ तक
४८—सहज	,,	,,	,,	४; पत्र ५६ से ५६ तक
४९—सबद	,,	,,	,,	८, पत्र ५६ से ५६ तक
५०—करम	,,	,,	,,	२१; पत्र ५६ से ५७ तक
५१—किसतुरीया मृघ		,,	,,	३७; पत्र ५७ से ५७ तक
५२—विसवास	,,	,,	,,	५८; पत्र ५७ से ५८ तक
५३—निंद्या	,,	,,	,,	१५; पत्र ५८ से ५८ तक
५४—हद	,,	,,	,,	१८; पत्र ५८ से ५९ तक
५५—वेहद	,,	,,	,,	११; पत्र ५९ से ५९ तक
५६—हगौ	,,	,,	,,	९; पत्र ५९ से ५९ तक
५७—मधि	,,	,,	,,	१५; पत्र ५९ से ५९ तक

१५६१ साखी

संख्या ३००. श्री मल्लिनाथ चरित्र, रचयिता—सेवाराम, निवासस्थान—डीग, कागज—देशी, पत्र—९६, आकार—११½×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३९१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी; रचनाकाल–सं० १८५० वि०, लिपिकाल—सं० १८७९ वि०, प्राप्तिस्थान—ला० मनोहरलाल जैन व ला० बालचंद जैन, मंदिर खेड़ा, कोसीकलां, जिला—मथुरा

आदि—

॥ ६० ॥ ॐ नमः ॥ सिद्धेभ्यो नमः ॥ अथ श्री मल्लिनाथ चरित्र लिष्यते ॥ श्री भट्टारक सकल कीर्ति कृत संस्कृत ताको वचना भाषा लिष्यते ॥ नमः श्री मल्लिनाथाय कर्म-मल्ल विनाशने । अनंत महिमा सत्य त्रिजगत्स्वामिनिनिर्शं ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

मल्लि नाथ जिनको सदा वंदौं मन बच काय ।
मंगलकारी जगत मै भव्य जीवन सुषदाय ॥ १ ॥
मंगल मय मंगल करन मल्लिनाथ जिनराज ।
आरंभ्यौ मैं ग्रंथ यह सिद्धि करो महाराजि ॥ २ ॥

नमस्कार करू छू ॥ श्री मल्लिनाथ जिनेंद्र कूं ॥ कैसे हैं श्री मल्लिनाथ जिन जिते हैं ॥ अष्ट कर्म्म रूपे मल्लजिन । पुनः कैसे हैं मल्लि जिन अनंत महिमा करि जुक्त है ॥ पुनः कैसे हैं श्री मल्लिनाथ जिन इंद्र धरणेंद्र चक्रवर्ति करि जित है चरणार विंद जिनके ॥ १ ॥ शेष जो

तेईश जिन जिनकूं नमस्कार करूं छूं ॥ कैसे है से जिन धर्म तीर्थ का चलावनै बडा धोरी है ॥ पुनः कैसे हैं शेष जिन भव्य जीवन के घड़े उपकारी हैं ॥ पुनः कैसे हैं शेष जिन पंच कल्याणक का नायक हैं ॥ २ ॥

× × ×

श्री मल्लिनाथ जिनेंद्र को चरित्र महापवित्र है सो संषेपमात्र कहूं हूं आपण वा ओर भव्यजन का हित की सिद्धि कै निमित्त ६ इह जंबूनांमा दीप ताकी पूर्व विदेह तामैं कछकावती णामा देस कैसो है देश धर्म को समुद्र है ७ जा देस मैं पुर पट्टनषेट मठं व ग्राम बहुत शोभै है जिनेंद्र का चैत्यालय बड़ी विभूति करि शोभित ऊंचे हैं शिषर जिन परि ॥ भव्यजन निरंतर पूजा करिवा आवै हैं ॥ ८ ॥

मध्य—

तीन जगत का नाथ आनंदकारी। त्यानैं हू बंद हूं ॥ कैसे हैं जिन चंद्र महामोह रूप अंधकार तीनै दूरि करिवा वाला है ॥ १ ॥ समस्त देव दिकूपालादि करि युक्त यथा जोग्य स्थान दिशा नै व्याप्ति करि उत्सव सूं तिष्ठता हुवा ॥ २ ॥ महामंडप• के विषै देव देवांगना उत्सव करता गीत वाजित्र बजावता हुवा ॥ नृत्य करेता हुवा ता पीछे स्ववर्णमय कुंभ कैसे हैं कुंभ ॥ एक जोजन को तो मुख है ॥ च्यारि जोजन चोड़ो है ॥ आठ जोजन को ऊंचा है ॥ मोत्या की माला मुख परि शोभै है ॥ ३ ॥

× × ×

जिनेश की वय संमान नाना प्रकार का रूप करि देव कुमार ॥ इंद्र मन रंजावानै राषतो हुवो ॥ देवांगनानैं धाइ तुल्य राषतो हुवो ॥ ६० ॥ उपमा रहित परिचर्या श्रश्रूषा क्रीड़ा करि रंजायमान करैं। बहुधा पुंन्य उपार्जि इंद्र देवलोक सिधारे ॥ ६१ ॥ हाथी ॥ वादरादि रूप देव करि जिनेंद्र नैं क्रीड़ा करवता हुवा। देवांगनां ॥ आदर सुं रंजावती हुई ॥ ६२ ॥ कोई देवांगना चित्राम मांडती हुई ॥ कोई देवांगना अंग मंडन करती हुई ॥ बहुधा सुगंध वस्त्र करि ॥

अंत—

ई श्री मल्लिनाथ चरित्र का सार संस्कृत श्लोक ॥ आठ सै पचास हैं ॥ सर्व महा पवित्र हैं ॥ १६२ ॥ इति मूल ग्रंथ की वचनिका संपूर्ण ॥ अथ भाषा वचनिका की कवि लघुता लिष्यये हैं ॥

राम सुख परभाती मल्ल। जोधराज संग ही बुद्धि बल्लू ॥
दीपचंद गोधो गुणवान। इन च्यारयां मिलि कहि वर्षानि ॥ १ ॥
मल्लिनाथ चारित की भाष। करी महा इह अति विख्यात।
पढै सुनै साधरमी लोग। उपजै पुंन्य पाप षय होत ॥ २ ॥

तब हमनै यह कियो विचार । बचन रूप भाषा अति सार
कीजै रचना सुगम अपार । सब जन पढ़ें सुनै सुखकार ॥ ३ ॥
मयाचंद को नंदन जांनि । गोत पाटनी सुख की खानि ।
'सेवाराम' नाम है सही । भाषा कवि को जानौ इही ॥ ४ ॥
अल्पबुद्धि मेरी अति घणी । कविजन सुं विनती इम भणी ।
भूलि चूक जो लेहु सुधारि । इही अरज मेरी अवधारि ॥ ५ ॥
प्रथम वास धोसा को जानि । डीग मांही सुष वासव थानि ।
महाराज रणजीत प्रचंड । जाट वस मैं अति बलि वंड ॥ ६ ॥
प्रजा सबै सुष सुं अति वसै । परदल इत भीत नहीं लसै ।
न्यायवंत राजा अति भलो । जैवंतो महि मंडल परो ॥ ७ ॥
संवत अष्टादश[१८] शत जांनि । और पचास[५०] अधिक ही मानि ।
भादौं मास प्रथम पक्षि मांहि । पाचै सोमवार कै मांहि ॥ ८ ॥
तब इह ग्रंथ संपूर्ण कीयो । कविजन मन वछित फल दीयो ।

× × ×

मल्लिनाथ मंगलकरो च्यार संघ मैं सार ।
भव समुद्र के तरन कूं है जिहाज सुषकार ॥ १२ ॥

इति श्री मल्लिनाथ चरित्रे भट्टारक श्री सकलकाल विरचिते धर्मोपदेशे निर्व्वाण गमननो नाम सप्तमो परिछेद । इति श्री मल्लिनाथ चरित्र की वचनिका संपूर्ण ॥सं० १८७२॥ माघ वदी ११ भौमवार कोसी मध्ये लीषी लेषराज ब्राह्मण शुभंभूयात् ॥

विषय -

जिन तीर्थंकर श्री मल्लिनाथ जी का चरित्र वर्णन । इसमें निम्नलिखित परिच्छेद हैं:—

१—प्रथम परिच्छेद—रत्नत्रय वर्णन	पत्र	१ से १६ तक
२—द्वितीय परिच्छेद—राजा वैश्रवण दीक्षा वर्णन	पत्र	१६ से २९ तक
३—तृतीय परिच्छेद—अहिमिंद्रभव वर्णन	पत्र	२९ ,, ४० तक
४—चतुर्थ परिच्छेद—गर्भ जन्म कल्याणक वर्णन	पत्र	४० ,, ५० तक
५—पंचम परिच्छेद—श्री मल्लिनाथ वैराग्य उत्पत्ति वर्णन	पत्र	५० ,, ६१ तक
६—षष्ट परिच्छेद—श्री मल्लिनाथ निःक्रमण कल्यान केलोपत्ति वर्णन	पत्र	६१ से ७७ तक
७—सप्तम परिच्छेद—धर्मोपदेश तथा निर्वाण वर्णन	पत्र	७७ से ९६ तक

रचनाकाल

संवत अष्टादश[१८] शत जांनि । और पचास[५०] अधिक ही मानि ।
भादौं मास प्रथम पक्षि मांहि । पाचै सोमवार के मांहि ॥ ८ ॥

संख्या ३०२. नल चरित्र या नैषध, रचयिता सेवासिंह, निवासस्थान—राज्य फतेहपुर (संभवतः) राजस्थान, कागज—देशी, पत्र—९५, आकार ६३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १६३३ वि०, शकाब्द १७९७, प्राप्तिस्थान – पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एम० ए०, प्राध्यापक (हिंदीविभाग), काशी हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस

आदि—

श्रीगणेशायनमः ॥ इति नै''' ''ध्यते ॥

॥ कवित्त ॥

''''''(१ अ) तुल विपुल गात मुरि मुरि''''''रि जात पारिजात मृगरथ के ।

''''''शदश के कटैया भये कुपथ लुटैया''''''बकके ।

सुंदर अनूप भये जूप जगती भये कोमल सरूप भये भूप मनमथ के ।

सेवक शुखदायक रघुनायक सव''''''यक दीजे फल इक्षित तनय दशरथ के ॥

\+ \+ \+

॥ दोहा ॥

एक समै ब्रहदश्व ऋषि धर्म्म शुवन के तीर ।

आइ गये अद्वैतवन शुमति स ' गंभीर ॥

आसन दै वहु भाति शो पूजा करी''' ''' ।

कुशल भूप पूछन लग्यो जिय में अति शुष पाइ ।

॥ सवैया ॥

दुष्यतदाश को देपि दयानिधि आइ गयो छिन में शुख माने ।

को यहु प्रेम को पुजक है शक्ति सेशहु पै नहि जाइ वषाने ।

ह्वै है कछू शुभ जानि पन्यो तुव पाद सरोज विलोचन ' ने ।

पोत शो पाइ गये तुमको हम वूडत ते दुष से अकुलाने ॥

॥ दोहा ॥

मध्य –

दमयती ये पथिक जन कुंडनपुर को जात ।

यह मारग अति सरल है कछू न हो उतपात ॥

दमयंती

निषध नाथ की बात शुनि भीम शुता अकुलाइ ।

जानि गई पति चातुरी कहन लगी समुझाइ ॥

मोहि कहा चाहत तजो यह लायक नहि नाथ।
सोकु पुंज सबु काटि हौ जो रहिहौ तव साथ॥
मोहि लषत तव धीरता रहि है नाथ विशेषि।
सेवा करिहौं सौ गुनी दुःख नहि परिहै देषि॥

नल

भीम तनूजा सत्य तुम कही बात निरधारि।
दुष शुष की शंगिनि शुनि येक विश्वमो नारि॥
सपनेहू चाहति नही विरह तुम्हारे संग।
यह बानी काहे कही निरषो कौन प्रसंग॥

अंत —

॥ अथ ग्रंथकार वंस बर्नन ॥

छप्पै

करन देव भे करन जाशु जस पुहुमी पटिट्य।
तेहि के हरि सिंह देव शमर अरिसैन विघटिट्य॥
सारंगधर तेहि शुवन भुवन बदित उदार हुष।
दीप सिंह भे दीप विदित मंडित प्रताप भुव॥
तेहि वंश अंश अवतंश मनि हुअ दयाल करुनावलित।
थानसिंह तेहि तनय शवय किय समर मंडि अरिदल मलित॥
लुह गराह तेहि शुवन राज्य फेनेपुर थप्पिय।
दानवीर रनधीर दान दुज गनह शमीर्प्पय॥
जीतसिंह अजीत शुजशु जाको कुल मंडन।
झारि झारि किरवान समर वर वीर विहंडन॥
तेहि शुवन भुवन अवतार हुव सेवासिंह अरहल धुव।
गहि षर्ग उरग्ग समग्ग रिपु षंड षंड करि पटि भुव॥

॥ दोहा ॥

नल की कथा पवित्र यह कही व्यास अभिराम।
भाषा शेवासिंह कृत नल चरित्र यहि नाम॥
मंगल करन अनूप है राज्य शत्य यहि नाम।
जे यह कथा प्रीति करि शुनत लहै विश्राम॥

इति श्री शेवासिंह कृत विरचितायां नल चरित्र शंपूर्णं॥ शुभमस्तु॥ शंवत् १९१३॥ शाके १७९७ वैशाख माशे शुक्ल पछे तिथौ अष्टम्यां चंद्रवासरे श्लेषा नक्षत्रे गंड जोगे बव नाम कर्णे इदं पोस्तक लिखितं मो प्रति दृष्टं मम दोष न दीयताम् ·· स्कनिमित्त नैषध काव्य नामं श्रीकृष्ण ··· ··· ॥

विषय—

व्यास ऋषि द्वारा वर्णित कथा के आधार पर नल दमयंती की कथा का वर्णन।

संख्या ३०२. कबीर रैदास संवाद, रचयिता—सैंना, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१०३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १८५६ वि० प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ ग्रंथ कबीर रैदास संबादे लिषते॥
नही नही हो माधौ हित मोरा। मैं कैसैं दरसन पाऊं तोरा॥ १॥
॥ कबीर कहै जी॥
एक ही ब्रह्म एक मल मुत्र एक लोही एक गुदा।
पूरण ब्रह्म सकल घटि व्यापक कुंणबांभण कुण सूदा॥ २॥
॥ रैदास कहै जी॥
कुमति तणवल बादल फूटा सुमति तणां प्रकासा।
हृदै ग्यांन ध्यांन धरि देषौ सति भाष रैदासा॥ ३॥

अंत—

कहै कबीर जी सुणौ विष्णु जी तुम हौ चतुर बंबीकी।
हम तौ बुरा भला जन तेरा या तत बसत किन देषी॥ ६८॥
गरड चढे गोपाल कहैत है सति भगत म्हारै दोई।
सत कबीर धनि रैदासा गावै सैंना सोई॥ ६९॥

विषय—

कबीर रैदास संवाद वर्णन।

संख्या ३०३. रिसाला मजजूबुल सालकीन, रचयिता—सैयद अमीन, कागज—देशी, पत्र—४५, आकार—८·६×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—फारसी, रचनाकाल—संवत् १८८१ वि०, सन् १२३६ हि०, प्राप्तिस्थान—श्री० डा० मुहम्मद हफीज सैयद, इलाहाबाद, विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

आदि—

बिसमिल्लाह अर्रहमान अरहीम

शुरू करता हूँ मैं नांव सों उसके कि वह एक नाँव वहीं धरता होर जिस नाँव सों बुलावै तो सिर ऊपर लाता है। आरिफान हरदो कोम के दस नाँव रक्खे हैं एक तो अल्लाह यानी ओम दूसरा रबुल आलमीन यानी सोहं तिसरा जी यानी नित चौथा कदीर यानी

समरथ पाँचवा मुरीद यानी सेवन्त छठा समीअ याने सोना सातवाँ बसीर यानी द्रष्टा आठवाँ अलीम यानी विद्वंत। वाजे इस्म कौन मकान बी कहते हैं। नवाँ हकीम याने ज्ञानवंत दसवाँ करीम ''''यो अजब दो इस्म आजम है एक तो अल्लाह दूसरा रसुल आलमीन उस रसुल आलमीन ने सबकों जोड़ा जोड़ा किया है। अव्वल आप अल्लाह दूसरा मुहम्मद् आसमान होर जमीन रात होर दिन चाँद होर सूरज।

अंत—

अलहम लिल्लाह कि यो रिसाला तमाम हुआ। लेकिन उसकी वे निहायती का निहायत नहीं जो तारीफ उसकी करूं। लेकिन मुसलमानी और हिंदवी किताबान और वेदों का मजकूर करता तो इबारत दराज होती। पस मुख्तसिर किया मैं कि फहम में हरएक के जल्द आवे और सैर करनेवाला इसका जल्द हक ताला के फजल सें अपने मतलब कों पावें।''''''''तम्मत तमाम शुद रिसाला मजजुबुल सालकीन विस व श शुम जमा दिउल सानी व रोज चहार शम्बा व वक्त असिर सन् १२३६ हि० इतमाम याफ्त

विषय—

यह सूफी मत का ग्रंथ है। रचयिता ने इसमें यह दिखलाया है कि सभी धर्म परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग हैं और उनमें नाम के अतिरिक्त कोई वास्तविक भेद नहीं। ग्रंथ का नाम 'मजजुबुल सालकीन' है। इसकी भाषा हिंदी का दक्खिनी रूप है। इसमें फारसी और अरबी शब्दों, मुहावरों और उद्धरणों का बहुतायत से प्रयोग हुआ है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत 'रिसाला मजजूबुल सालकीन' के रचयिता सैयद अमीन हैं। ये शाह अरिफ गंज बक्स के शिष्य थे और इनका संबंध चिश्ती फकीरों की परंपरा से था। इनके कथन के आधार पर इनका खानदान अदहमिया, गिरोह अवदुल वाहिद बिन जैद, मजहब सूफिया और संप्रदाय दौद था। इन्होंने प्रस्तुत रिसाले में दखिनी भाषा का प्रयोग किया है। इन्होंने स्वयं कहा है दखिनी जबान सों'। ग्रंथ का रचनाकाल सन् १२३६ हि० है।

संख्या १०४. बींझे सीणी रा दुहा, रचयिता—सोहणी, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—७३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

सोहणी रा दुहा लिख्यते ॥

गई पलाणी बतियां, बाले रग्त कियांह।
जठ मल कदे जुग पांतरचो, हीन्दूं भेद्र त्रियांह ॥ १ ॥
जठमल कहे रे फूलड़ा, विच धवलो उर रंग।
सही पलहां सोहणी मिलियो को इक संग ॥ २ ॥

अंत—

आजूणों सुख सजनां, तै सौ फूल तलाहं।
सैणी री सन सखजै, हिमाले गलताहं ॥ ७४ ॥
लड़थड़ता गलि लगयौ, सत ओन्माद फिरांह।
बीछड़िया बहु दिन हुआ, बींझड़ आव मिलांह ॥ ७५ ॥
बीझै सीणी रा दुहा संपूर्णम ॥

विषय—

बीझा और सोहणी के संवाद के ७५ दोहे और सोरठे हैं।

संख्या ३०५. वैद्यक, रचयिता—स्याम कवि, कागज देशी, पत्र—३१, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०९, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८१६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

अथ पित्त कफ वात्त परिक्षा

॥ दोहा ॥

व्याकुल चित सुपै अभर मुष कर ओतम जाही।
जरनी मुरछा जानिये पित्त सरस तन ताहि।
सीतल पर बहु चित रहै। पुनि रोगी फन्दा सुभाउ ॥
जानु पित उपचारु अरु दुपु सुपु सज को पाउं।

अथ कफ लक्षन

॥ दोहा ॥

नींद नास मुष मधुरता कछु आलस तन होइ।
अटकोसो कछु कंठ में जानि जानि यहु लेइ ॥

अथ वात लछनं।

बूडो आवै जिउ देह पीड़ा करै ॥
आलसु भरी रहै देह कछुं तरवा जरै ॥
नींद मुष को नासु रुनै तसौं भाषै ॥
सीरो रुपुमस जो कंपवाइ लापै ॥ अथ पित्त कफवात को पचार ॥

॥ दोहा ॥

राति मनै पंषा करै सीत वारि जुन्हाइ।
लसुवसै मीठी भपै तुरत ताप नरु जाइ ॥

अथ कफ ॥

कछु कसैला रुचिर परे दिनि प्रति षानो षाई।
आरुलेह की कै करौ ताते पानी नहाइ।

मध्य--

अथ संकोच विधौ।

लुष शुभ दाष चिरौंजी सरसौ लेहु। दस दस टका तेल मंह देहु वाटि उपटना करै जो नारि अति संकोचन रूप विचारि—

अथ स्त्रि की धातु जाति होइ ताको दोहा—

कदली के फल सुपक मागाई। औ कचूर फल देव मिलाइ
दोहू सो दूनौ ताल मषानौ। पिऔ दूध सो अति सुष मानौ

दोहा

कदली के फल औटिये डारि षाडा औ नीर
पिये सात दिन वाम जो अति वज होइ सरीर

अंत—

पत्र ज सोषाइ तौ धातु वाढ जाइ। कागदीनीवुवा सोलगावै तौ दाहु जाइ ॥ छेरी दूध सो षाइ तौ विसुचिका जाइ। मैन फुल सो षाइ तौ छाट होइ हरै सो षाइ तौ अर्जीन जाइ। आदफर सो षाइ तौ वाडे। हरनषुरी सो षाइ तौ बेठाउतरै। जीरा मिलि सो षाइ तौ पित जाइ ॥ फल गटाते षाइ तौ षर्द्ध सीसी जाइ। धवइ के रस सो षाइ तौ करिहाव की पीर जाइ आमिले के रस सो षाइ तौ वाउ जाइ। वच सो षाइ तौ जीभ शूल जाइ। कपूर घी सो षाव तौ इनं की तपन जाइ। इपक पेच सो लगावै तौ नाहसोर जाइ

इति वैधक श्याम कवि विरचते लिखतरूप गिरि गो-वार मंगल मिती फाल्गुन शुक्ल पछ १० संवत् १८१९ सिवसिवनम

विषय—

वैद्यक विषय वर्णित है।

संख्या ३०६. श्री विष्णु स्वामी चरितामृत, रचयिता—स्यामदास, कागज—देशी, पत्र—६५, आकार—८ X ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९०, अपूर्ण, रूप-प्राचीन, पद्य, लिपि-नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री बाबू बालकृष्णदास जी, चौखंबा, बनारस

आदि—

नवें पत्र का अंश :—

बरनु है। तातें निश्चै रूप हरि इहै तुम ही कौ जौ करनु है ८ तब व्यास द्वैत

बखानि के अद्वैत भ्रांत बताइयौ। जीव सदा हरिदास ही रहै वेद असें गाईयौ ६ जो जीव आपै हरि कहै अहिं कहन द्वैत परतछ लख्यौ। एक है तो कहै कासों हंस यहै परगट कह्यौ १० जब व्यास सूत्र बखान कीने द्वैत तत्व दिखाइ कै। सुनि सदाशिव भट्टाचारज बोले सीस नवाइ कें ११

तीसवें पत्र से उद्धृत :—

श्री जी को हित जानि कै हित कीनो हरिराय।
खिचरी की सौंपी टलह अपने पास बुलाय ॥ ४२ ॥

कर्मा कीया भक्ति को जो सुनिहै चित लाइ।
मन बसे वाको सदा हरि चरनन में धाइ ॥ ४३ ॥

इति श्री विष्णु स्वामि चरितामृते स्यामदास विरचिते कर्मा बाई सेवक चरित्र वर्णनं नाम सप्तमं हुलास समाप्त ॥ ७ ॥

विषय—

इस पुस्तक में श्री विष्णु स्वामी का जीवन चरित है। इसके लेखक कोई स्यामदास हैं। पुस्तक अत्यंत जीर्ण, खंडित और अव्यवस्थित है। फलतः वर्ण्य विषय का ज्ञान संतोषजनक न हो सका। अनुमानतः श्री विष्णु स्वामी जी की 'लीला भूमि' काशी ही है; क्योंकि अनेक घटनाओं का संबंध वहीं से है। प्राप्त पत्रों में पुस्तक के पाँच छः अध्याय इस प्रकार मिलते हैं :—

अ० ३ हरिध्यान वर्णन—इसमें गुरु ने कृष्ण और राधा की युगल मूर्ति का विस्तृत वर्णन किया है।

अ० ४ हरि दर्शन—भगवान का साक्षात्कार होने का वर्णन।

अ० ५ हरिहर प्रसंग—एक शिष्य की कथा।

अ० ६ जै गोविंद शिष्य प्रसंग।

अ० ७ कर्माबाई चरित्र सेवक वर्णन।

अ० ८ (अपूर्ण) तीर्थ-यात्रा।

पुस्तक के अंतर्गत जिन शिष्यों के नाम आए हैं वे हैं :—

सदाशिव, माधोभट्ट, रंगनाथ, जै गोविंद तथा बिल्व मंगल। पुस्तक का संबंध द्वैत संप्रदाय से है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत चरित आदि अंत में खंडित है। पुस्तक अत्यंत जीर्ण दशा में है। साथ ही खंडित और अव्यवस्थित है। इसका संबंध द्वैतवाद का प्रतिपादन करना है। लिपि भद्दी और अस्पष्ट है। शब्द प्रायः अशुद्ध हैं।

संख्या १०७. पांडव यसेन्दु चंद्रिका, रचयिता—स्वरूपदास, कागज—आधुनिक, पत्र—१४२, आकार—११३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३१६, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९२ वि०, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणीसभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाये नमः ॥ श्री शरस्वतियेन्मः ॥ श्री गुरवेन्मः ॥ अथ रसालंकृत बोधनी पांडव यसेन्दु चंद्रिका प्रारंभः ॥

गुणालंकरिणों वीरौधनुस्तौत्र विभारिणौः
भूभार हारिणौ वंदे नर नारायेणावभो ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

ध्यान कीरत वंदना, त्रिविध मंगलाचनं ।
प्रथम अनुष्टपविंचसोई, भए त्रिधा सुभकर्नः ॥ २ ॥
नमो अनंत ब्रह्मांड के सुर भुवन के भूप ।
पांडव यसेंदु चंद्रिका वरनन दास स्वरूप ॥ ३ ॥
स्वामी के पीछे रहे आदि होत उच्चार ।
नर नारायण शब्द कुं दास स्वरूप वीचारि ॥ ४ ॥

घनाक्षरी

गरल ते भीम के सुज्वाला हतं पांच हू कै द्रोपदी के सभा औ विराट वन तीन वार कीराटी कै अछर कै श्राप तें युधिष्ठिर कुं मारिवें कुं मरीवे कुं उदे भए असीधारी । दुरबासा श्राप वे कुं आयो ताकु आदि देके स्वरूपदास के ते कहे एक छंद में प्रकार तेहू मेरे ग्रथ आदि मंगल उदय करो ॥ एते टां प्रमप्रथम कुमंगल करन हार । ५

मध्य—

जन्मेजय उवाचः

कैसे वन कूं गमन किये । धर्मराज जुत भ्रात कैसें विपत्ति के दिन गुप्त रहे कस तात । १ वैशंपायन उवाचः ॥

छंद पधरी ।

कुरुराज विपन दिसि गमन कीन । उठ चले गेल पुरजन अधीन सबको करि धरमा धान दिष रहे गेल छाड़े न संग । नृप भयो सचिंता दुषित अंग । क्यूं बनें सबन को भरन काज । रहिवो वन धन विन भ्रष्ट राज पुरोहित धौम्य दिय सूर्य मंत्र त्रय दिवस भूप साध्यो सुतंत्र उरस्थल मांन विच निर आयः ईश पॉव रह्यो ठाढो अपायः दिय दिन मध्यस्थाली अषय देव सब हिन की यातें बनै मेव ॥ २ ॥

दोहा ।

जोलौं द्रुपद कुमारि नहि भोजन करै सुभाय ।
तोलौं ईक यह पात्र तैं लाषन देहु जीमाय ॥ ३ ॥
अपे पात्र वरदाँन लै चल्यौ हुते बन भूप दिनः२
(दिन) नूतंन होत है वास विहार अनूप ॥ ४ ॥

अंत—

दोहा

रस रूप अलंकृत ग्रंथ में लिपे नाहिं भायः ।
समझहि बुधिजन विनु लिपें अबुध लिवे नै लषाय । ५९
पिंगल डिंगल संसकृत सब समझन के काज ।
मिश्रि सी भाषा धरा छिमा करहु कविराज । ६०
कलिजुग छोटे ग्रंथ कूं लिषे पढ़े सब लोक ।
ताते श्लोक हजार त्रय सर्व ग्रंथ को श्रोक । ६१
कविता कि रचना भई वाच छंद विच लीन
नई उक्ती कवितान मैं कथा संकीरन कीन । ६२
नहि कविता को धर्म है नहिं भारत की बात ।
मिकमें चंचलता करी करहु छिमा कवि पांत । ६३

इति श्री पांडव यसेंदु चंद्रिका स्वरूपदास विरंचिते षोडस मयूषः ॥ १६ चंद्रिका संपूर्णम् । समाप्त । लिषि कृतं वेस्नव रघनाथ दास नीरवाणी नग्र नीमच मध्ये: ॥ श्री रामचंद्र जू कै मंदीरः संमतः १९२६ मीतो माहा शुक्ल पक्ष १२ रवी वासरे । पठीनारथं श्रोजा जी श्री लप जी ग्राम जावद मध्ये सेठ श्री डुगर सीग जी का गुमास्ता श्री रसु

विषय—

महाभारत संबंधी कौरव और पांडवों की कथा का १६ मयूखों (अध्यायों) में वर्णन किया गया है । आदि के पहले और दूसरे मयूखों (अध्यायों) में छंद रचना के नियम आदि बताए गए हैं :—

लिपिकाल सं० १७२६ वि०

रचनाकाल

द्रग[२] ग्रह[९] वसु[८] अर चंद्रमा[१] संवत अंकगीत वाम ।
शुक्ल चैत्र राका ससी ग्रंथ जन्म सुधन्नाम ॥

संख्या ३०८. ज्ञानद्विपंचाशिका, रचयिता—हंसराज (जैन), कागज—देशी, पत्र –४, आकार—९३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)-२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६ अपूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान –पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एम० ए०, प्राध्यापक, हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस

आदि—

... ... निधि है ।
ग्यान की कुदारी भारी मोह की धरा बिदारी डारि के निहारि रजविक... विधि है ।
तामें प्रभु भासमान ज्यौं बिहान भान न समान ताके जाके देषी सिधि है ।
याही कों बिचार वहै सार तार हार जैसो और सब भार वो अषंड तेरी रिधि है ॥ ९ ॥
उत्तिम अचार सुविचार चारु व्यवहार दार अति राम सार परिवार संपदा ।
पाइयै अनूप रूप भूपमान दोर धूप रहित समाज सुष साज बिनु आपदा ।
देव नर देव पद पदम प्रमित धन धन धन जग करै सुजस महा सदा ।
रूटो जिन रांज प्रभु घरी में निवाजकरि 'हंसराज' आप सो निवारि कर्म को फंदा॥१०॥
उरध धरा के तलें कबहूंनि गोद गोद गर (?) भरि रह्यौ यहै भवसिंधु मोजै है ।
कौंन भौंन गह्यो नांही कौन दुष सह्यो रह्यो पराधीन षीन भई तोही तोकों दोजै हैं ॥
चेतना रहीन नर तीन नीर हेतु पीर देत हैं सरीर पाइ नर कोन षोजै हैं ।
सकति संभारि हंस आपुकों निहारि हारि हारि रह्यौ काहे और मोह नृप फौजे हैं ॥११॥

मध्य—

टांड ऐसी कौन जेती जनम मान करि तीन सै तेताल राज मोहि नांहि परसी ।
करम सुभासुभ नें नाना परजाय धरि धरि नाच्या इहां साषी सर्व दरसी ॥

कारन चतुरविध अंतरंग रहै संग सरबंग तातें लोक कियो रंग धरसी।
दुंददसा डालि हंस आपकों संभालि टालि षोटी बानि मानि जिनबांनी सुधाझरसी॥२९॥
ढूँढा चाहै जाहि ताहि मूढ नर ढूंढे नांहि बझो रूढि गूढि भेद कुछ नाहि पावै ग्यान।
तीरथ अनेक धावै ठो ठोर सिर नावै गुन जिन देव गावै पावै न अचल थान।
चएचै अनेक ग्रंथ मन बच करे पंथ धरै पग पंथ निरदोष दै अनघ दान।
निहचै व्योहार रीत जोलों जानैं बिपरीत ठानै किरिआ अनेक कु अंतग को सनान॥३०॥

अंत—

क्षायिक सकति जागी पाप पुन्न भेद भागै लागी जिन मारग में पागै ग्यान रस में।
त्यागै परकों असेष दागै कर्म मल रेष धरै भेष कबहूँ न थावर नरसें में।
आपको सुथिर करै भव नीर निधि तरै हरै द्वैत धरै भाव सरस सरस में।
हंससर वग अंस के विसद भयो आगम अनंत काल लसेगो सुरस में॥५१॥
ज्ञान को निधान सुविधान सूरि वर्द्धमान भान सो विराजमाण सूरि रत्न पाट जू।
परम प्रवीन मीन के तन नवीन जग साधु गुनधारी अपहारी कलि काट जू।
ताको सुप्रसाद पाय 'हंसराज' उवझाय बावन कवित्त मनि पोये गुन पाठ जू।
अरथ विचार सार जाको बुध अवधारि डोलै न संसार षोलै करम कपाट जू॥५२॥
इति श्री ज्ञानद्विपचाशिका संपूर्ण लिखितं मुनि अभय सागरेण स्ववाचनाय।

॥ दोहा ॥

हंसराज उवझायनो करि बावनी सार।
चतुर लोक जे चित धरैं कटे कर्म निरधार॥ १ ॥

विषय—

ज्ञानोपदेश वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण और खंडित है। केवल संख्या २, ४, ५ और ७ के पन्ने उपलब्ध हैं। अंत का पुष्पिका भाग प्राप्त है; परंतु उसमें लि० का० नहीं दिया है। रचनाकाल का भी कोई पता नहीं चलता।

रचयिता का नाम हंसराज है। प्रत्येक कवित्त में यह नाम दिया है। ग्रंथ को पढ़ने से ये जैन ज्ञात होते हैं। जहाँ तहाँ जिन भगवान का उल्लेख है। इनके गुरू का नाम वर्द्धमानसूरि था। इनके अतिरिक्त इनके विषय में और कोई पता नहीं चलता। अंत का कवित्त जिसमें इनका कुछ वृत्त है, विवरण पत्र में दे दिया है।

ग्रंथ की लिपि शुद्ध और स्वच्छ है। अक्षर प्राचीन जँचते हैं।

संख्या १०६. बारहमासा, रचयिता—हंसराज, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्री सरजूचौबे, स्थान व पोस्ट—सहतवार, जिला—बलिया

आदि—

बारहमासा

चढ़ेवोमाश अशाढ़ शषीरी मेघ गरजी शुनावही ।
चात्रीक दादुर मोर बोलत मदन मोही शंतावही ॥ १ ॥
शावन रीमी झीमी बुंद बरषत झीगुर नीशी झनकावही ।
श्याम वीनु मोरी शेज शुनी औ दामीनी दमकी डेरावही ॥ २ ॥
भादौ मह शभ भरनी भरीगौ क्रीशन नही ग्रीह आवही ।
शमुझी शमुझी चरीत्र प्रभु को वीरही नीती शंतावही ॥ ३ ॥
कुआर मह जल शुषन लागो गगन नीमल शोहावही ।
पंथ पथीक शभ चलन लागेवो हमहु आश लगावही ॥ ४ ॥
कातीक-पंक बनाए मही मह वीज लोग डरावही ।
हमहु रूप बनाए अपना स्याम वीनु पछतावही ॥ ५ ॥
आएवो अगहन माश आलीरी कंत लगन धरावही ।
गवन करी नीज भवन आनेवो हमही हरी वीशरावही ॥ ६ ॥
पुशमह जत कंत कामीनी लपटी जाउ गवावहीं ।
क्रीस्न वीनु मन मोर व्याकुल कतहु थीर न पावही ॥ ७ ॥
माघ पाला परत नीशु दीन कंत तीअ उर लावही ।
काघ (? कान्ह) वीनु बेहाल भइ मैं आए हीमी शंतावही ॥ ८ ॥
फागुन मह शभ फागु षेलन पतीशो रंग मचावही ।
हरी बीना हम लाज वाशी अब काही वदन देषावही ॥ ९ ॥
चइत मह चोत भएवो चंचल षवरी कछु न पठावही ।
कोइली कहती की नोर नही कछु झुठ जग भरमावही ॥१०॥
वइशाष पुरी उडाए चहुदीशी मानुष भवन बनावही ।
हमही श्री ग्रीजराज वीनु गेही जग मोह कछु नही भावही ॥११॥
जेठ मह रवी तपन सुंदरी कहा ले दीन शमुझावही ।
'हंशराज' वीचारी वीरही बारहमाशा गावही ॥१२॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

श्री कृष्ण के प्रवास के अवसर पर गोपियों का बारह महीने के विरह का वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना कुछ अन्य रचनाओं के साथ एक हस्तलेख में है । इस हस्तलेख में आगे चलकर इन्हीं हंसराज के चार भजन दिए गए हैं । भजन के आरंभ में लिखा है—'भजन बनावल हशराज शीव चदेल दुवारी के' । भजन इस प्रकार हैं :—

आजु भीज बाजे बधइआ ।
अरध नीश गती जनम लीयौ हरी हरष जसोमती मइया ॥ १ ॥
शुत शुषी पाए आरती शषी शभ लेत बलइआ ॥ २ ॥
नंद महर शुनी रतन लुटावत है हाथी धेनु गइआ ॥ ३ ॥
'हंशराज' अरी कीशुन नीरषी छवी चारी पदारथ पइआ ॥ ४ ॥

पलना झुलत कधइया ।
पैकरे चाह उठत जब उर मह रोअत मइआ मइआ ॥ १ ॥
पुतना आए उठाए गोद मह चौंषी लगाए मुष देइआ ॥ २ ॥
षींचीं लीयो तेह प्रान पलक मह शकल अचम्हव षइया ॥ ३ ॥
'हंशराज' शुनी धाए जशोमती जश बछवा कह गइआ ॥ ४ ॥

तीशर

मही पर षेलत कधइआ ।
छन उतरत छन चढत गोद पर ठुमुक ठुमुक धावत अगनइआ ॥ १ ॥
रोवत हंशत मचन होए वइठत उठी लष चुमत मइआ ॥ २ ॥
श्रीनावरत करी धुध महा अती ले उठाए उर लइआ ॥ ३ ॥
'हंशराज' तेही कंट धरेव हरी हती शभ कह शुष देइआ ॥ ४ ॥
मही पर पेलत कधइआ ॥

चउथ

दही मोर षएलो कधइआ ।
भाड उतारी लेत रजुक ते चढी उषली तेइआ ॥ १ ॥
जहा तहा गइले रोकी गोपीन को गहत पयोधरइआ ॥ २ ॥
छन प्रगट छन दुरीजात होए अएशो नीत नवइआ ॥ ३ ॥
'हंशराज' शुनी कहत जशोमती छाडु शाम लरीकइआ ॥ ४ ॥

संख्या ३१०. ज्ञानस्वरोदय, रचयिता—हजरत हयात वेग, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—५½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल सं० १८७७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० हीपचंद जी, ग्राम—नोनेरा, डा०—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर

आदि—

आष नाक जीवीहा कहु तुव नाक और कान ।
पांचु इदरी गीयान है जाणै जाण सुजाण ॥ ३२ ॥

॥ दोहरा ॥

गुदा लीघ (लिंग) मुषां तीसरौ हाथ पांव लष लैह ।
पांचु ईदरी काम है यह भी कही ए देह ॥ ३३ ॥

कारण सूक्षम लीब (लिंग) है और कहियत असतुल ।
सरीर तीन सौ जाणीए मै मेरी अड मुल ॥ ३४ ॥
चित बुध मन अहंकार जौ आतस करण सुजान ।
गीयान अंगन सौ वारीए कर कर मीत विचार ॥ ३५ ॥
सबध संपूरण और गाय है और कहाय ता रस हुय ।
देह करम ते जाणीए का हाय तन सुय ॥ ३६ ॥
नीरंकार देव अचंल नीरवासी तु जीव ।
नीरलौभ नीरवैर है अजव अवनासी जीव ॥ ३७ ॥

अंत--

सुरत निरत मै जो लो लावे सो चेतन मै जाय समांवे ॥
सुरत निरत कौ जाणैं भेद । तो जोगी कौ होय न षेद ॥
सुरत सो जोगी वीरछ को मूल । नीत पवन है फल और फूल ॥
सुरत सुत मै जाय समारी । सोहो पवन नीत हो जाई ॥
सुत निरत के भेद कुं जे पैहैचाणे कोय ।
जोग जुगत सूं लग रहा जोगी ॥ १३७ ॥
भेद सरोधा वोहोत है सूछम कहौं वणाय ।
ताकू समझ विचार लै अपणे मन चितलाय ॥
धरण टलै गिरवर टलै धू वी टलै सुजान ।
वचन सरोधा न टलै कहो हजरत ह्यातबेग पैहैचान ॥ १३९ ॥
पीर गुरू की दया सूं लीनो तत सरोधा जाण ।
हजरत ह्यातवेग नु कहत है तत सरोधा गीयान ॥ १४० ॥

सरोधा संपूरण लीषतं संमत १८७७ मीती अघन सुदी ८ दसकत उतम चंद के वांचे सुणे ताकु राम राम पोहोंचे

विषय—

स्वरोदय विद्या का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । प्रारंभ के अठारह पत्रे नष्ट हो गए हैं । लिपिकर्त्ता ने प्रत्येक पत्र का आधा अंश छोड़ दिया है और आधा अंश लिख लिया । ग्रन्थकार ने अपना नाम "हजरत हयात बेग" लिखा है । रचनाकाल का उल्लेख नहीं है । लिपिकाल संवत् १८७७ वि० है । ग्रन्थ की भाषा में पंजाबीपन का आभास मिलता है, जैसे :—

"पीर गुरू की दयासूं लीनों तत्त सरोधा जाण ।
हजरत हयात बेग नु कहत है तत्त सरोधा गीयान ॥ १४० ॥

संख्या ३११. वाणियाँ, रचयिता—हणवंत। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र।

संख्या ३१२. सप्तशतिका (विहारी सतसई), रचयिता—विहारी तथा संपादक हरजु सुकवि, संपादक का निवास स्थान—जौनपुर, कागज—देशी, पत्र—४१, आकार—९½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८७९ के लगभग, प्राप्तिस्थान—आर्य-भाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि— ... ...

येक नारि सौं प्रीति दिढ वियसों कपट सनेहु।
वचन क्रिया मैं चातुरी शठ कर लछंन एहु ॥ १ ॥

× × ×

मोहि करत कत वावरी करैं दुराव दुरैंन।
कहे देत रंग राति के रंग निचुरत से नैन ॥ १२ ॥
वाल कहा लाली भई लोयन कोयन मांह।
लाल तेहारे द्रीगनि की परी द्रिगनि मैं छांह ॥ १३ ॥

॥ अथ ध्रिस्ट नायक लछन ॥

और नारि सों बिहरि निसि प्रात आव निज गेह।
वहु विधि धीझै स्वनाइका ध्रिस्टहि लाजन तेंह ॥ ४ ॥

॥ साजथा ॥

दुरै न निघर घटोदऍ ए रावरी कुचाल।
विसु सीलागति है पुनि हंसी पिसीकी लाल ॥ १४ ॥

॥ अथ स्वकीया गंधर्व विवाह लछन ॥

अनुरागिनी जो नाइका पिय अनुरागी होइ।
गहें वाँह दोउ पीय तिय व्याह गंधरव सोइ ॥

मध्य—

॥ भौंह वर्नन ॥

नासा मोरि नचाइ दग करी कका की सौंह।
काटे सी कसकति सुहिय गडी कटी सी भौंह ॥ ४५५ ॥
वौरियन चढि भृकुटी धनुप वधिक समर तजि काँनि।
हनत तरुन भ्रिग तिलक सर सुरुकि भाल भरि तानि ॥४५६॥

॥ अथ नेत्र वर्नन ॥

रस सिंगार मंजन कीये कंजम भंजन ऐन।
अंजन रंजन हूँ विना पंजन गंजन नैन ॥ ४५७ ॥

अरते टरतन वर परे दई मरक मुनि मैन ।
होडा होडी चढि चले चित चतुराइ नैन ॥ ४५८ ॥
जोग जुगति सिषइ सबै मनो महामुनि मैन ।
चाहत पिय अद्वैतता कौंन न सेवत नैन ॥ ४५६ ॥
पेलनि सिषई अलि भले चतुर अहेरी मार ।
कौंनिन चारी नैन म्रिग नागर नरनु सुसिकार ॥ ४६० ॥
सायक संमधायेक नयन रंग त्रिविध रंगगात ।
झप्यौ विलषि जलजात दुरि लषि जलजात लजात ॥ ४६१ ॥

अंत—

हुकुम पाइ जै शाहि को हरिराधिका प्रशाद ।
करी विहारी सतसया भरी अनेक मयाद ॥ ७१९ ॥
॥ अथ हरजू कवि कृत दोहा ॥
सकल विति क्रमै होइ अर्थ अति गौर ।
रामदत्त के हुकुम तें करी सकल येक ठौर ॥ १ ॥
जदपि अहै सौंभागिनी मुकुताहल मै देषि ।
गुहे ठौर के ठौर तें लरि में होत विसेषि ॥ २ ॥
धरयौ अनुक्रम ग्रंथ को नायकादि अनुसार ।
सहर जउनपुर मे बसै 'हर जु' सुकवि विचार ॥ ३ ॥
जड़जन दुर्षन दुढि है तजि फलफूल सुवास ।
ज्यौं सूकर रमनिय बन चहत मलान कुवास ॥ ४ ॥
भक्ति[९] लोक[३] वसु[८] ससिहिन[१] सँवत प्रम प्रकास ।
कार्तिक सुक्लु दुतिय गुर वासर सरस कल सुवास ॥
निज कर कमल सुभग लीष्यो शीवदआल या ग्रंथ ।
भक्ति ग्यान बैराग को जामे नाना पंथ ॥

इति श्री विहारीलाल विरचितायां सत सतिकाया नवरस वरननो चतूर्थो प्रकर्न ॥

विषय—

शृंगार विषय का वर्णन ।

ग्रंथ निम्नलिखित क्रम से संपादन किया गया है :—

१—धृष्ट नायक लक्षण तथा उदाहरण ।
२—स्वकीया गंधर्व विवाह लक्षण उदाहरण ।
३—स्वकीया सुर विवाह लक्षण उदाहरण ।
४—शैशव यौवना और मुग्धा लक्षण तथा उदाहरण ।
५ नवयौवना मुग्धा ।

४०—प्रोषित पतिका ।

४१—स्वकीया प्रोषित पतिका ।

४२—परकीया प्रोषित पतिका ।

४३—स्वकीया प्रवत्स्यत पतिका ।

४४—प्रौढा प्रवत्स्यत पतिका उपायाक्षेप ।

४५—परकीया प्रवत्स्यत पतिका ।

४६—स्वकीया प्रवसित पतिका ।

४७—परकिया प्रवसित पतिका ।

४८—स्वकीया आगमिष्यत्पतिका ।

४९—परकीया आगमिस्यत पतिका ।

५०—स्वकीया आगत पतिका ।

५१—दूती वर्णन ।

५२—दूती वचन नायिका सों ।

५३—दूती वचन नायक सों ।

५४—दरशन पंच प्रकार (स्वप्न, चित्र, छाया, ध्यान, साक्षात्)

५५—नायिका वचन नायक सों ।

५६—मान वर्णन ।

५७—नायिका की पाती ।

५८—दसो दसा वर्नन (चिंता, स्मृति, गुनकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता, मरन दैन्य भाव) ।

५९—प्रोषित नायक दशा ।

६०—नख सिख वर्णन (केस, अलक, जूड़ा, टीका, बेंदो, भौंह, नेत्र, चितवनि, नासिका, कपोल, डीठौना, श्रवणभूषण, दशन, ठोड़ी मुख, किनारी, ग्रीवा, कर, अँगुली, कुच, कंचुकी, त्रिवली, कटि, जंघा, मोरवा, एड़ी, पायल, अनवट, अंगुली, गति, देहद्युति)

६१—सुरता वर्णन (कातिनहारी, गुर्विनी, गँवारी)

६२—रति महिमा ।

६३—प्रभात, हिंडोरा, स्नान, जल विहार ।

६४—ऋतु वर्णन (फागुन, बसंत, ग्रीष्म, बरषा, सरद, हेमंत, शिशिर)

६५—समीर ।

६६—सज्जन दुर्जन तथा कृपण वर्णन ।

६७—प्रास्तावक और अन्योक्ति ।

६८—रस (वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शांत)

६९—चेतावनी तथा भक्ति लक्षण।

७०—नृपस्तुति और अंत में हरजू कविकृत दोहे।

समस्त ग्रन्थ ४ प्रकरणों में है। बीच से पत्रों के लुप्त हो जाने के कारण प्रथम प्रकरण में क्या था, यह ज्ञात नहीं हो सका। दूसरे प्रकरण में संयोग-वियोग शृंगार वर्णन है। तीसरे में नख, शिख, भूषण और ऋतु आदि का वर्णन है। चौथे में नवरस तथा नृप प्रशंसा का वर्णन है।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। प्रथम तथा १३ से २५ तक के पत्रे नहीं हैं। एक पत्र आगे का भी लुप्त है। इसके संपादक हरजू मिश्र हैं जो जौनपुर के रहने वाले थे। ग्रंथांत में इन्होंने ४ दोहे अपने विषय में लिखे हैं जिनमें प्रस्तुत ग्रन्थ के संपादन का भी कारण दिया है :—

"सकल वितिक्रमै होइ अर्थ अति गौर।
रामदत्त के हुकुम तें करी सकल येक ठौर॥ १॥

जदपि अहै सौभागिनी मुक्ताहल मै देषि।
गुहे ठौर के ठौर तें लरि मैं होत विसेषि॥ २॥

धरयौ अनुक्रम ग्रन्थ को नायकादि अनुसार।
सहर जउनपुर में वसैं हरजु सुकवि विचार॥ ३॥

जड जन दुषन दुढि है तजि फल फूल सुवास।
ज्यौं सूकर रमनिय वन चहत मलान कुवास॥ ४॥"

इससे प्रकट होता है कि विहारी के दोहों का क्रम खंडित हो जाने के कारण प्रस्तुत रचयिता ने किसी रामदत्त (संभवतः रचयिता के आश्रयदाता) की आज्ञा से उनका फिर से क्रम लगाया।

उपर्युक्त दोहों के पश्चात् २ दोहे और हैं। प्रथम में एक संवत् का उल्लेख है तथा दूसरे में लिपिकर्त्ता शिवदयाल का नाम दिया है। संवत् का दोहा इस प्रकार है :—

भक्ति[९] लोक[७] वसु[८] ससि[१] हित संवत प्रम प्रकास।
कार्तिक शुक्ल दुतीय गुरु वासर सरस कल सुवास॥

यह संवत लिपिकाल ही ज्ञात होता है; क्योंकि प्रस्तुत ग्रन्थ "नवीनाख्य" (दशरथ) तथा "नवरस" और "चित्रकाव्य" आदि रचनाओं के साथ एक ही हस्तलेख में है। 'नवीनाख्य' और 'चित्रकाव्यन' में लिपिकाल संवत् १८६९ दिया है। अतः प्रस्तुत ग्रन्थ का लिपिकाल उपर्युक्त दोहे में दिया हुआ संवत् १८७९ मानना उचित जान पड़ता है। रचयिता ने जहाँ तहाँ नायक और नायिकाओं के लक्षण भी दिए हैं। ये लक्षण उन्हीं के रचे जान पड़ते हैं, जैसे:—

धृष्ट नायक लक्षण

और नारि शों विहरि निसि प्रात आय निज गेह ।
बहु विधि पीभै स्वनाइका धिस्ट हि लाज न तेह ॥ ४ ॥

संख्या ३१३. भाषा भूषन की टीका, रचयिता—हरि कवि, निवासस्थान—मारवाड़, कागज—देशी, पत्र—५८, आकार—९ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण—(अनुष्टुप्)—१२३३, अपूर्ण, रूप—नवीन, गद्य पद्य मिश्रित, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

अथ लुप्तोपमा

काव्य छंद

वाचक लुप्ता १ एक धर्म लुप्ता २ पुनि जानहु धर्मवाचक लुप्ता ३ वाचक उपमेय न ठानहु । ४

उपमानहि पुनि लयहु ५ वाचक उपमान न सानहु ६ लुप्तधर्म उपमान ७ एक उपमेयहि भाषहु । ८

एक उपमेय हि भाषौ याको अर्थ उपमान वाचक साधारन धर्म इन तीनों को जहां लोपु होय एक उपमेय ही रहै यथा कमल वदन सुंदर लसै सखी कमल से पाय धनु भृकुटी जिय की दिखे कंचन वेलि सुहाय । १०

× × ×

सालग्रामी सरजू की मिली गंग सों धार । अंतराल मौ देस हैं सो सारनि सरकार ।६५
परगन्नां गोआ तहां चैनपुर ग्राम तहां त्रिपाठी रामधन वास कियो अभिराम ।६६
ताके सुत हरि कवि कियौ मारवाड मे वास भाषा भूषन ग्रंथ की टीका करी प्रकाश ।६७
पूरोहित श्री नंद के मुनि सांडिल्य महान में हो तिनके गोत मैं माहे ....

मध्य—

अथ समालंकार

अलंकार सम तीनि विधि जथा जोग को सग
कारज मे जहां पाइये कारन हो के अंग । ९४
श्रम विना कसिद्ध जह उद्यम कर ते होय ।
हार वास तिय उर कियो अपने लायक जोय । ९५
हार और तिय उर दूनौं अनुरूप हैं ताको संबंध वर्नंत है 'मतिराम'
करत लाल मनुहारि है तू न लखति उहि ओर ।
ऐसो उरज कठोर तौ उचिते उरज कठोर ।९६
जहां कारन मैं कारज के समान गुन पाइये ।

...

नीच संग अचरज नहीं लछिमी जलजा आहि।
जस ही को उद्यम कियो नीको पायो ताहि॥ ९७

कारन जल ताको गुन लछिमी में औ जस को उद्यम कियो श्रम विना जस को लाभ भयौ। मीठी तेरी बात मुहि लागति है अति बाल वदन सुधाधर ते प्रगट होत कह्यो हंसिलाल। ९८

अंत—

दारिद के द्विज वारिधि माह वहत गह्यो हरि बाँह प्रवीनैं
चावत चारिक चाँवर के मघवा के समान मही पर कीनैं
मोहनलाल सों दीनदयाल को संच विना जिनके हैं अधीनैं। ७१

हौंतौ महादीन पर्यो दारिद के वारिधि में गेहनी पुकारि प्रीति हरि की जताई है।
तब ही सुदामा सुधि कीनी नंद नंदन की गयो द्विज द्वारि को देषन कन्हाई है।
बहुरी विलोकि कर छीन लीनी घन स्याम संपति सुरेस की सी पात ही पठाई है।
फूली फिरै बाभन की वनिता विलोकि कहै धानी दियै ऐसी राजधानी मेरे आई है। ७२
पूरोहित श्री नंद के मुनि साँडिल्य महान मैं हौं तिनके गोत मैं मोह ·····

—अपूर्ण

विषय –

अलंकार विपयक ग्रंथ भाषा भूषण की गद्य पद्य मयी टीका। इसमें अलंकारों के भेद आदि स्पष्ट करने के लिये मतिराम और विहारी के ग्रंथो से भी उदाहरण दिए गये हैं।

संख्या ३१९ क. ज्ञानबोधामृत, रचयिता–हरिकृष्ण आभा, निवास स्थान—वंसवाड़ा नगर, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—५३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)–१० परिमाण (अनुष्टुप्)—५६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८७९, प्राप्तिस्थान—पं० बालमुकुंद जी भट्ट, स्थान—कामवन, रियासत—भरतपुर

आदि—

भली रीति से पाई मनषा देही। इनमें माया मोह है फंद केई।
मत पड़े माया जाल के फंदना। समझ देष नेहचे करि डरना॥ ८॥
कुटुंब कबीला पिता अरु माता। भाई बंद कोइ नहि तेरे साथा।
अनेक उपाय करि ईनहि कुभरना। समझ देख नेहचे करि डरना॥ ९॥
पाप पुन करि धन कु कमाया। लाष करोड़ जतन करि माया।
बढ्यो लोभ अब घरहि में धरना। समझ देष नेहचे करि डरना॥१०॥
विषया वासना बढ़ायो मन। निस दिन राषो इसहि में तन।
भूल गयो अब हित कु अपना। समझ देष नेहचे करि डरना॥११॥

रथ गाडी अर हाथी घोडा। ये कोई न आवे तेरे आडा।
आषर दे नाहि होगा निरनां। समज देष नेहचे करि डरना ॥१२॥
आयो काल सिर ऊपर तेरे। मत हो गाफल ईत उत हेरे।
सुपनो देष स्यारि करना। समझ० ॥ १३ ॥
या देही छिन भंग है नेरी। मत कर गुमान मेरी मेरी।
धरा रहेगा सब रूपा सुवरना। समझ देष निहचे करि डरना ॥१४॥
जम की मार पड़ेगी जब तेरे। हां हां करत फिरेगो तब फेरे॥
पाप पुन का लेषा करना। समझ० ॥ १५ ॥
पाप पुन के भुगते दुष। किस विद पावे वो नर सुष।
जो जैसा करेगा तैसा भरना। समझ० ॥ १६ ॥
जो तु सुरग लोक ईछा करहे। तो पण मृत लोक पिछे आई है।
मुक्त येक गुरु नाम की सुमरना। समझ देष नेहचे करि डरना ॥१७॥
विस्व उदधि का देष पसारा। सुपना देष सबहि गों प्यारा।
जैसे पानि में बुद बुद पिसरना। समझ० ॥ १८ ॥
जैसाहि आवै वैसाहि जावे। कोट उपाय कर येक न पावै।
जो तुं अपनि करनि पार उतरना। समझ० ॥ १९ ॥
सासतर पुरान सबही ने भाष्यों। संसे करन कों काम नहि राष्यों।
ताते अब तुं पकड़ गुरू के चरना। समझ० ॥ २० ॥
कठिण उपाय ये गुरू किरपा हो हैं। और सत संगत जीव सौं लई हैं।
ग्यान दीप कुं उरमाहि धरना। समझ देष नेहचे करि डरना ॥२१॥
उदर निमित करे अनेक उपावां। कराते उर कछु नहि बन आवा।
ताते मनहि कुं षुब पछरना। समझ० ॥ २२ ॥
राति दिवस करि सोंधि पूठो। अपने अरथ मान करे पर पुठी।
पुन बिनां मनहि मे झूरना। समझ० ॥ २३ ॥
साध संत की सेवा जो बनाये। गुरू महिमा कुं चित दे सुनाये।
उनते मिटे तेरा चौरासी का फिरना। समझ देष निहचे करि डरना ॥२४॥
गुरू कृपाल कों येहि कारण। माया मोह ममता को मारण।
येहि उपाय सौं भवसागर तरना। समझ० ॥ २५ ॥
राज लछमि मद पूरन जानो। अधिरा फाड भूले मत दानों।
छोड गये राना राव न आपर मरना। समझ० ॥ २६ ॥
लाष बात की कहूं येक बात। दया भाव सों होय मीरात।
जनम मरन मे फेर नहि फिरना। समझ० ॥ २७ ॥
लोहा सुना दोई समाना। हरष विषाद कोई नहि आना।
सुष दुष दूर दोनों करना। समझ देष नेहचे करि डरना ॥२८॥

तन मन एक कर अब तुं भज । माया मोह काम क्रोध कौं तज ।
इसी में तेरा भव निस्तरना । समझ० ॥ २९ ॥
वंसबाड़ा नगर के मांहि । ग्यान बोधामृत वन्यो हैं भाई ।
येह भाव हेत सों हरदे धरना । समझ० ॥ ३० ॥
अजोध्या चित्रकोट आसथाना । कासी कैलास वैकुंठ समाना ।
लीलायत पधेरूं अजब हैं चरना । समझ० ॥ ३१ ॥
थाना पत श्री संतोक दास । साधु भक्त संत की पुरावे आस ।
यों हैं मुक्त घर सबी का सरना । समझ० ॥ ३२ ॥
'हरीकृष्ण आभा' की वानी । सतोकदास संतों ने कृपाकर मानी ।
सत संगत नौका ते भवसागर कुं तरनां । समझ० ॥ ३३ ॥
संवत् अठारे[१८] इनासी[७९] । काती बद् एकादसी ।
सौंम्यवार अति सुभदन । ग्यान बोधामृत श्री भगवत अरपन ॥३४॥
जो कोई सुने सुनावें । पाठ करंता निज पद् कूं पावें ।
साध संत के चरनां धरो है माथा । कृपा करि 'आभा' कूं करो सनाथा ॥३५॥

शुभं भवतु ॥ श्री राम राम ....

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

संसार के माया मोह से दूर रहकर हरि भजन करने का उपदेश किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना और आगे की रचना 'ज्ञानबोध प्रकाश' प्रस्तुत ग्रंथकार की ही रचनाएँ हैं और एक ही हस्तलेख में हैं । 'ज्ञान बोधामृत' का प्रथम पत्र नष्ट हो गया है । दोनों रचनाएँ अध्यात्म विषयक हैं । विवरण पत्रों में इन रचनाओं की पूर्ण प्रतिलिपियाँ कर दी गई हैं । 'ज्ञानबोधामृत' का रचनाकाल संवत् १८७९ है, 'ज्ञानबोध प्रकाश' में रचनाकाल नहीं है । लिपिकाल किसी में नहीं दिया है ।

दोनों ग्रंथों की भाषा मिली जुली ब्रज और खड़ी बोली है; किंतु खड़ी बोली का आश्रय अधिक लिया गया है । ग्रंथकार ने ये रचनाएँ वंसबाड़ा नगर में की हैं । थानापत श्री संतोकदास की स्तुति की गई है जिससे पता चलता है कि ये ग्रंथकार के गुरू रहे होंगे ।

संख्या ११४ ख. ज्ञानबोध प्रकाश, रचयिता—हरिकृष्ण आभा, निवास स्थान—बंसबाड़ा, कागज—देशी, पत्र ९, आकार—५½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं बालमुकुंद जी भट्ट स्थान—कामवन, रियासत—भरतपुर

आदि—

॥ श्री सीतारामचंद्रोजयति ॥ अथ ग्यानबोध प्रकास लिष्यते ॥

जोति सरूप अखिल निरंजन । मायातीत हरिजन के मन रंजन ।
जिनकी सता करि बिस्व प्रकासां । पुष समज अब देष तमासा ॥ १ ॥
परम पुरुस कि अब इंछा भई । प्रगटे सेर षीर सागर मांही ।
नारायन सरगुन हुये अविनासा । पुष समज अब देष तमासा ॥ २ ॥
किये सयन अब सेस के ऊपर । श्री लषमि चरन सेवा में ततपर ।
श्री नाथ नाभ ते कमल प्रकासा । पुष समझ० ॥ ३ ॥
वेहि कमल ते ब्रह्मा निपजें । अग्या हुंई अब तुम स्रष्टि किजें ।
स्रष्टि करन कूं ब्रह्मा उलासां । पुष समझ० ॥ ४ ॥
अस्त्रि पुरष कें जोड़ा बनाये । तामें बिस्व ब्रषि कों उपाये ॥
इन के संजोग ते ग्रभ का आसा । पुष समझ० ॥ ५ ॥
गरभ ब्रधि अब लागि होवन । मास सात में भयो जुपूरन ।
अब प्रापति भई जीव की दसा । पुष समझ० ॥ ६ ॥
दुष ग्रभ में अतिशय होय । कल न पडत पल एक न सोय ।
जरे पुकार मेंटो ग्रभ का बांसा । पुष सम‍झ० ॥ ७ ॥
प्रबल दुष ते लागो रोवन । यह काटो संकट जग के मोहन ।
सूनी करणां तब हुंवा निकासां । पुष समझ ॥ ८ ॥

ग्रभ बास ते जब बाहर आया । भूल गयां लगी पवन की माया ।
बाजा बजें हुवा अनंद का बासा । पुष समझ० ॥ ९ ॥
भूक प्यास कि षबर नहि पावें । दुषे भागें सो कोई मन नहि लावें ॥
परम संकट पड्यौ हैं पासां । पुष समझ० ॥ १० ॥
आगें पायां पोगंड अवसथां । षेलत फिरे लरकन के साथां ।
तरुण पयो पुष किया बिलासां । पुष समझ० ॥ ११ ॥
ब्रधपणा मे जर जर देहीं । नोरथ आश्रा कछु नहि बन आई ।
बाधवतादि करि हैं हासा । पुष समझ० ॥ १२ ॥
कटुब कबिला सब परिवार । इनहि के कारण उपाये अपार ।
आसा असनो होत कलेसां । पुष समझ० ॥ १३ ॥
दारा पुत्र धन गेह भंडारा । दौलत मेरि करत पुकारा ।
मदिर मेढि अमर हमारा वासां । पुष समझ० ॥ १४ ॥
वा जिवारत दौलत अनेका । भूल गये सब छुटे बिवेका ।
अभिमान काम क्रोध का फांसां । पुष सक०० ॥ १५ ॥
जड जवाहर सोना रूपा । देषो भूल गये पडे अंध के कूपा ।
अंत समैं जब आयां काल का फासां । पुष समझ० ॥ १६ ॥
जब लों चला हाथ पांव का जोर । तब लों पुष चराये कटुंबी चोर ।
अब आयां अंत हार कंठ में रासा । पुष समझ अब० ॥ १७ ॥

अब पूछन लग्यों सब कूधर में । कोई साह करो मेरो यह दुष में ।
नां कोई बोले तव हुये उदासा । पुब समझ० ॥ १८ ॥
जो कछु धन दौलत गेह कमाया । इसी में कोई यक काम न आया ।
जमदूतों नें पकड़ जकड़ के गासां । पुव समझ० ॥ १९ ॥
अब जमराजा ने दपतर षोला । पाप पुन का हुआ निसाला ।
पाप जोर ते पावा अति त्रासा । पुब समझ० ॥ २० ॥
जनम २ को पुन प्रभावा । ताते तुं नर देह सुभ कूं पावा ।
संतत संपत मे भूले मत सासां । पुब समझ ॥ २१ ॥
दया धरम करो उपकारां । सुमरन ध्यान पुजा उपचारा ।
साधु विप्र अभ्यागत भोजन पांसा । पुव समझ० ॥ २२ ॥
ये ही सफल नर देही धारन । काम क्रोध अभिमान कों मारन ।
सुपना लघु दीरघ होए बिनासां । पुब समझ० ॥ २३ ॥
षट चार सब भयें अठार । यो ही बेदांत सुनो ततसार ।
करो मती गुमान भजो गुन रासा । पुब समझ० ॥ २४ ॥
निसचैं समझ ध्यान राषो उरमाही । हरि सुमरन संत गुर सेवा करो बनाई ।
छांडो दूर करो अविद्या भासां । पुब समझ० ॥ २५ ॥
श्री संतोक दास भये कृपालां । "हरीकृष्ण आभा" तब हुये निहाला ।
अब साध संगत बुध करो प्रकासा । पुब समझ० ॥ २६ ॥
"ग्यान बोध" भरोहये गुनसागर । अरपन हुई श्री नटनागर ।
संतोक चरन सरनागत वासां । पुब समझ० ॥ २७ ॥

— पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

जीव की हीनावस्था को दर्शाते हुए दया, धर्म और उपकार में मन लगाना तथा साधु, विप्र और अभ्यागतों की सत्कारपूर्ण सेवा करना आदि का वर्णन किया गया है ।

संख्या ३१५. रामायणसार, रचयिता—हरिचरण दास, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१३ × ९ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८५, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८३२ वि०, सन् १७७५ ई०, लिपिकाल—संवत् १८७८ वि० = सन् १८२१ ई०, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ हरि चरण दास कृत रामायण लिखते, कवित्त, सवैया,

दोहा

तुलसी तरिका जिहि कियो निरन्तर धाम ।
मोहिय सो पद कंज को धरो सिया वर राम ॥ १ ॥

दछिन लछिन अनुज है जनक सुता दिसि बाम ।
पौन तनै बसो, ऐसे मोहिय राम ॥ २ ॥
रामचरित अभिराम है, यो कवितान विचित्र ।
मन मुक्ता ज्युं ठाह की, गांठ बंधे है मित्र ॥ ३ ॥
रघुवर जदुवर एक है, छवि लखि लाजत मनोज ।
हम हैं सेवक एक कै, यह भक्तन की चोज ॥ ४ ॥

\+ + +

सवैया

सेवन तीरथ को न भयो, न भयो कुल देव न को मान भयो ।
वेद विधान सु दूर रह्यो, हर ध्यान हु को कछु भेद न पायो ॥
आसन साधन जोग कियो, कबहु नहीं सीस प्रान चढायो ।
सोच कहा दुख मोचन राम को, जो जग मांहि गुलाम कहायो ॥ ८ ॥

अंत

॥ दोहा ॥

रचि रामायन सार कों ईहै कियो मन काम ।
हो प्रसन्न या ग्रन्थ तै लच्छिन सीताराम ॥ ३० ॥

\+ + +

पांच अधिक सत हे कवित दोहा हैं इकतीस ॥
तुलसी जुनि मोहि पधारो, चरन ज्याम की ईस ॥ ३५ ॥
संवत् अठारह[१८] भो बिते, तापर बरस बतीस[३२] ।
जेठ मास सुदि पंचमी, बरन्यो जस जगदीस ॥ ३६ ॥

इति श्री हरिचरण दास कृत श्री रामायण सार । संपूर्ण १ संवत १८७८

विषय—

कृष्णगढ में निवास कर हरिचरण दास ने संक्षेप में १३६ कवित्त दोहा छंदों में रामचरित वर्णन किया ।

संख्या ३१६. बिहारी सतसई (सटीक), रचयिता—हरिचरणदास सुरति, शुभ-चिंतक चाकर, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

मूल दोहा

यहि आसा लाग्यो रहै, अलि गुलाब के मूल ।
एहैं बहुरि बसंत रितु, इन डारन वे फूल ॥ १ ॥

१ टीका—हरिचरणदास की (प्रश्न) या दोहा में कह्यो अलि भ्रमर गुलाब के मूल में लग्यो रहत है, मूल नाम जड़ को है, सो तो पृथिवी के मांहि है, तहाँ भवरो कब पहूच्यो ? (उत्तरू) गुलाब के मूल कह्यो तहां गुल कहिये फूल, आब कहिये जल, पारसी को प्रमाण, गुल को आब सो गुलाब जल भयो, ताको मूल कहे कारन कहा, गुलाब को झाड़, तामें लग्यो रहतु है...... .....

२—टीका—सुरति की, इहां कह्यो इन डारन में वे फूल हों तहां (प्रश्न) वे फूल भूत काल में जो हो गये, ते भविष्य काल में कब होयगे ? अर्थात वे तो हो बीते, नये दूजे होयँगे तहाँ (उत्तरू) इहाँ काकोक्ति सों अर्थ कीजै, कोई गुनी पुरुष काहू संपत्तिवान की चाकरी में घना सुख पाया हो, फिरि वाकी संपत्ति कछुक दिन को हीन हो गई है तब वही गुनी पुरुष कहतु है—इन डारन वे फूल होय सो......गे

\+ + +

३ टीका—शुभचिंतक चाकर की 'अलि गुलाब के मूल' कहा......गुलाब के मूल कहे समीप में लग्यो रहत है, किंवा मूल कहे निकुंज अर्थात गुलाब की निकुंज में लाग्यो रहत है अर्थात गुनी पुरुष माही प्रीति पूर्वक निकट वर्ति सेवा चाकरी में लग्यो रहतु है।...

—अपूर्ण

विषय

सात दोहों की टीका तीन कवियों ने की है। कवियों के नाम हैं—हरिचरणदास, सुरति और शुभचिंतक चाकर।

संख्या ३१७. श्री स्वामी हरिदास जू की बानी, रचयिता—श्री स्वामी हरिदास, निवासस्थान—वृंदावन, कागज—देशी, पत्र—३३, आकार—४'८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

कबहूं कबहूं मन इत उत जात यातें व कौन अधिक सुष ॥
बहुत भांतिनि घत आनि राष्यौ नाहीं तौ पावतौ दुष ॥
कोटि काम लावंनि बिहारी ताके मुहां-चुही सब सुष लीयें रहत रूप ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यामां कुंज बिहारी कौ दिन देषत रहौं विचित्र सुष॥१॥

एक समैं एकांत वन मैं करत सिंगार परस्पर दोई ॥
वे उनिके वे उनिके प्रतिबिंबनि देषत रहत परस्पर भोई ॥
जैसे नीके आजु बने अैसैं कबहुं न बनें आरसी सब झूठी कैसी अब कोई ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यामा कुंज बिहारी रीझि परस्पर प्रीति मोई ॥ ११ ॥

मानि तू अब चलि री एक संग रह्यौ कीजै ॥
तौ कीजै जौ विन तेरे जीजे ॥
ए स्याम घन तुम दामिनि प्रेम कुंज बरषा रस पीजै ॥
श्री हरिदास के स्वामी स्यामां कुंज विहारी सौं हिलि मिलि रंग लीजै ॥ १६ ॥

\+ + +

बनी री तेरी चारु चारु चूरी करन ॥
कंठ श्री दुलरी हीरनि कौ नांसां मुक्ता ढरनि ॥
तैसोई नैननि कजरा फबि रह्यौ निरषि काम डरनि ॥
श्री हरिदास के स्वामी स्यामां कुंज विहारी रीझि रीझि पाइनि परनि ॥ ५० ॥

\+ + +

सुनि धुनि मुरली बाजै हरि रास रच्यौ ॥
कुंज कुंज द्रुम बेली प्रफुलित मंडल कंचन मननि पच्यौ ॥
नितंत जुगल किशोर जुवति जन मन मिलि राग केदारौ मच्यौ ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यांमां कुंज विहारी नीकै री आजु प्यारो लाल नच्यौ ॥ ५२ ॥
आऊ लाल ऐसें रस पीजै तेरौ भगा मेरी आगीया भरि ॥
कुच की सुरही नैननि के प्याले दारु देउगी पौ अंकोल भरि ॥
अधर निचाई लेहु सगरो रस तनकौ न जान देहु इतउत ढरि ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यामां कुंज विहारी की सौहवति असर जहो आपुनु हरि ॥७१॥

अंत—

चूनरी मैं जाडो लागे कीजीयें सुष सैन ॥
घरी घरी के रूस नै पहर मनावत आत मीठे बैन ॥
इठि सदिकै वलाइ लै उपकृति यौ न चाहीयें चाहीयै ज्यौं मैंन ॥
श्री हरिदास के स्वामी स्यांमां कुंज विहारी अटपटाइ रहे मांनि सुष चैन ॥ ८० ॥
यह अचिरज देष्यो न सुन्यौ कहू नवीन मेघ संग बीजूरी एक रस ॥
तामै मौज उठेनि अधिक बहु भांति नस ॥
मन के देषिवेकौ और सुष नाहिनै चितवत चितहि जु करत बस ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यांमां कुंज विहारी विहारनि जू की पवित्र जस ॥ ९१ ॥

राग गौड मल्हार

नाचति मोरनि संग स्याम मुदित स्यांमाही रिझावत ॥
तैसीयै कोकिला अलापत पपीहा देत सुर तैसोई मेघ गरज मृदंग बजावत ॥
तैसीयै स्याम घटा निसि सी कारी तैसीयै दामिनी कौधि दीप दिषावत ॥
श्री हरिदास के स्वांमी स्यांमां कुज विहारी रीझि राधे हसि कंठ लगावत ॥ ९१ ॥
इति श्री स्वामी हरिदास जू की बानी संपूर्ण ॥ शुभं ॥ अश्लोक ४०० ॥

विषय—

राधा कृष्ण के लीला एवं विहार संबंधी पद। आरंभ में १८ पद सिद्धांत के और तत्पश्चात १ पद भेंट का और ११० पद "सिंगार रस" के हैं। इस प्रकार पदों की संख्या कुल १२९ है।

संख्या ३१८. हरीदास जी की बाणी, रचयिता—हरिदास निरंजनी, कागज—देशी, पत्र—५६, आकार—१०½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गुर देवायन्म ॥ श्री निरंजनायन्म ॥ श्री सकलसंत म्हापुरसायनम ॥ अथ श्री बाबा जी ॥ श्री हरीदास जी कौ कृत लिष्यते ॥ अथ ग्रन्थ लिषते ॥

॥ अथ ब्रह्म अस्तुति जोग ग्रन्थ लिष्यते ॥

ग्यान न ध्यांन अबीह अजाप। अरत अतत न माय न बाप ॥ १ ॥
जगदीश अरीस निकंप निघात। इतो जहतो जनि संभर तात ॥ २ ॥
असुरीद अपीग अहेत अहाथ। अदुष असुष निरंजन नाथ ॥ ३ ॥
अहुंमेव न टेव अभेव अदेव। अबात अघात अमिंज अभेव ॥ ४ ॥
निरलेप निसाज निहचोभ निलोभ। नृकाम निजांम निरास नृलोभ ॥ ५ ॥
नृमूल नृसूल नृसिघ नृधंध। अजीत अतीत अबंध अकंध ॥ ६ ॥
निछोह नद्रोह नृमोह निसास। निर्यंक निसंक निडंक नृवास ॥ ७ ॥

मध्य—

॥ अथ बीरारस वैराग जोग ग्रंथ ॥

क्या कहीए कहणी कहा रजमां रहणी मांहि।
सो साहिब के हाथि है देतौ अचिरज नांहि ॥
रहणी तौ जे हरि भजै रहै निरंतरि लागि।
बलता बुझै अंगार सब, बहौड़ि न जंल कै आगि ॥
को चरनै कौ बंदिजै कौ नीदै गहि छार।
पेलै साध समाधि मैं कजपै नहीं कगार ॥ ३ ॥

\+ \+ \+

॥ चित कपटी कौ अंग ॥

"जन हरिदास" हरिजन मिलै तब ही आनद होइ।
चित कपटी कोई मति मिलौ जाकै अंतरि द्रोह ॥

मुष तैं मीठी देमिलै चित्त मांही कछु और।
हरीदास जन यूं कहै पंहुचैगे किस ठौर ॥ २ ॥
ध्यांनी दरीया दोइ है साहिब अर संसार।
तुम किस दरीयाव की मछली हमसूं कहौ बिचार ॥ ३ ॥
जग दरीयाव मैं देह है साधा सेती प्रीति।
हरि दरियाव कूं चलत है इह हमारी रीति ॥ ४ ॥ ३१४ ॥

अंत —

अथ असतूती की साषी

अगम सुप तहां मिलि रहे जीति मोह मदन रिप कांम।
जहां लोक बेद की गम नही अगम ठौर विश्राम ॥ १ ॥
सुर नर गति जाणैं नही ब्रह्मा विष्णु म्हेस।
"जनहरीदास" तहां रमि रह्या पार न पावै सेस ॥ २ ॥

+ + +

कलि मांही हु कलिपतर सबदन मैं सिधंत।
याकूं सुमरै रेंणिदिन कबहू न होवै अंत ॥ ८ ॥

इति श्री श्री स्वांमी जी श्री हरीदास जी कौ कृत संपूर्ण ॥ अब कृत की संख्या ग्रंथ ॥ ४७ ॥ पद ॥ २०८ ॥ राग ॥ २२ ॥ किवत ॥ १६ ॥ कुंडलिया ॥ १११ ॥ अंग ॥ ॥ १५ ॥ चंद्राइणा ॥ ६४ ॥ अंग ॥ १४ ॥ साषी ॥ ३१४ ॥ अंग ॥ ३५ ॥ इलोक ॥ ४ ॥ अस्तूति की साषी ॥ ८ ॥ समत ॥ १८५५ ॥ मिती आसोज वदि कृष्ण पष्यौ तिथ नाम ७ वार सोमवार कै दिन सुभं भतु ॥ लिषतं च ग्राम षारड्या मधे लिषतं च श्री बाबा जी श्री हरीदास जी का साधां श्री स्वांमी जी श्री सेवादास जी साध तिस स्यष श्री स्वामी जी श्री अमर दास जी महा विरकति ता प्रसादे सिष श्री श्री स्वामी जी दरसण दास जी ॥ ता प्रसादे सिष्य मुकनदास पठनारथ ॥ कृपा तैं पोथी लिषी छै ॥ बांचै बिचारै सो राम राम बांचज्यौ ॥

श्री निरंजनायनम ॥ रं रं रं रं ... ...

विषय —

संत मतानुसार दार्शनिक विवेचन तथा ज्ञानोपदेश।

इन वाणियों में निम्नलिखित रचनाएँ सम्मिलित हैं :—

१—ब्रह्म अस्तुति जोग ग्रंथ	पत्र १२१ से १२२ तक
२—मूल मंत्र जोग ग्रन्थ	पत्र १२२ से १२३ तक
३—नाँव माला जोग ग्रन्थ	पत्र १२३ से १२४ तक
४—नाँव निरूप जोग ग्रंथ	पत्र १२४ से १२४ तक

संख्या ३१६. हरिनाथ महापात्र के कवित्त, रचयिता हरिनाथ महापात्र, निवास-स्थान—असनी (फतेहपुर), कागज—देशी, पत्र—२२, आकार ६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति-पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६९३, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

देवता दंपत नर चरन सरन जात विघन विलात जाकें दीन्हें सुभ सेन सी।
सिद्धिन को हेत सिद्धि सागर को सेन ऐसो ध्याऐ धूमकेत देत मुकुति सुषेन सी।
महिमा कहे महामोह के हरनिहार हर के हिये की हर भगत के भेन सी।
के जो काम केलि छेदि छिति तें उठाइ देन गिरो सुमेरु सोहे सोने की सनेन सी।१
बेठे कविलास में विलास करे गौरी कंत अति ही ऐकंत जहां बोलत विहंगना।
ऐसे ही में आगें आनि लागे लेन लागे हरि जागतें समाधि सुति सुन्यो कान कंगना।
देखो महामोह महा मोहनी को महारूप मोह्यो महदेव देव देषत देवंगना।
निपट निरंग ह्वे अनंग रिपु धरयो सिर संग हूं को गंग छूटी अंग हू की अंगना।२

मध्य—

मेर महबति षान तेरी सम सेर कियो जेर जे तो चपरि चलैया बदराह को।
तेरी तरवारि जहांगीर साहि सिर करे निरको डरेप्यो न देवैया दुपदाह को।
दिल्ली के मुकाम लरि आलम तमाम सों तू जीतो इतमाम करि आलम पनाह को।
सोहे पातिसाही पर साया किओं खोदाइ को त्यों तेरे पर क्यों न सोहे साया पाति
साहि को।१०१६

एक ढहे नृप एक बहे निबहे जिन सोम सुमेर कि नो की।
आइ मसंदनि येक घसे तिनकी सब संपति आवति हांकी
साहि समुद्र की जोर हिलोर गइ तरबोरि विलाइन वांकी
कोनु बच्यो सुत संपति ले चढि बोहित बांह महावति षांकी।१०१७

अंत—

अंतिम कुछ पृष्ठ अत्यंत जीर्ण हो गये थे, अतः जिल्दसाज ने उनके ऊपर कागज चिपकाने के समय अधिक जीर्ण अंश निकाल दिया।

विषय—

शंकर की वंदना के अनंतर जहांगीर की प्रशस्ति वर्णित हैं।

संख्या १२० क. गोसइश्रा के बश्रान की कीताब, रचयिता—हरिनाम, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—६¾ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास. डाकघर—दोहरी घाट, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ राम ॥ गोसइश्रा के बश्रान की कीताब है ॥

वो जिस तारीष में कोई नहीं था, लासरीक था मालीक आप ही : उसका सरीक कोई नही था : वो तद इछा हुइ : वो अकास जीमीन वौ पाताल होते हुआ : वो सात-दीप नौ पंड चौद तवक वो होते हुआ : वो मोताब होते हुए : कीस वास्ते होते हुए वो रोस्नी के वास्ते होते हुए : वो ताव होते हुए : वो दीन होते हुए वो रइनी होते हुए : वो षारी पानी जीव होते हुए वो दोउ दीन होते हुए : मालीक ने किस वास्ते बनाया वो अपनेउ मत के वास्ते बनाश्रा : जीसमे हमारा नाम लेहीगे : वो मालीक मल रहीत परदे से आप आवते हुए : जो मालीक था औतार नही लेता : सोइ मालीक आवने हुआ : वो खीस्ठी होता हुआ तद अदम को पैदा किया : वो इसा मुसा होते हुए : वो परदे से मालीक : दाउद पैगंभर :

+ + +

आपु ही गुरु चेला हुआ : आपु उतारे पार।
आपु ही उतरै आपु उतारै : आपु षेले सबसार॥
आपु ही दस अवतार धरीश्रा आपु ही करै वीचार।
आपु ही गावे आपु बजावै आप है सुन नीहार॥
आप ही खीस्ठी शकल होए आया आपु ही बंधा
आप नीबंधा आपु ही नीगुन आपु ही सर्गुन
आपु ही वीराट : सब्द है आपु ही : आपु ही ग्यान
वौ ध्यान : आपु ही वेद भेद सभ गावै आपु ही करैं
पुकार : आपु ही वोकार नीरजन होए आवे :
कोई नही करत बीचार : "दास हरिनाम" आपु

लषी पाएवो : गुर पद नाम सुधारी :
गुर चेला है नही : मालीक केवल आप :
मल रहीत पुरन : पुर्स पुरान : सभी पर है सोह
चीन्हो : आतम अर्चीत नाम है : मन में
कर परतीत : "दास हरीनाम" नाम सोइ चीन्हेवो
टुटीगइ भ्रम भीत इंद्री रहीत सत्य साध नाम दसीतं
सुध पवीत्रं इत उत नाही सनमुष द्रसीतं : सोइ
साध साहेवं : सत साहीतं

॥ इति ॥

विषय—

परमात्मा के स्वरूप का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता हरिनाम है। प्रस्तुत रचना अधिकतर गद्य में है। बीच बीच में तथा अंत में कहीं २ अंत्यानुप्रास मिलाए गए हैं, परन्तु वे पद्य नहीं कहे जा सकते। उनमें मात्राओं और वर्णों का कोई नियम नहीं है।

गद्य की भाषा विचित्र है, फिर भी खड़ी बोली की ओर अधिक झुकी हुई है। विषय वर्णन करने में मुस्लिम दृष्टिकोण और हिंदू दृष्टिकोण दोनों ही प्रकट किए गए हैं तथा दोनों का ही समन्वय करने का प्रयास किया गया है।

संख्या ३२० ख. ग्रंथ आतम बोध, रचयिता—हरिनाम, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—६३/४ × ४३/४ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन गद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरुबालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास, डाकघर—दोहरी घाट, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ सतनाम ॥ ग्रंथ आतमबोध ॥

थकेउ सभै जुग पाएवो नही थाहा।
सोइ नोकट प्रभु रहेवो समाये। वै तो कहां आवै नही जावै ॥
अभै अर्चीत रूप वीग्याना। आतम पुर्स पुरान देषाना ॥
तुलसी सूर कथही जेही ग्याना। कथही कबीर काआ धरो ध्याना ॥
गुदर कथहो गुस नही जाना।

\+ \+ \+

कथही मलुक रवीदास । कथही नानक जोती परकास ॥
परम पुर्स जेही पहुचे पास ।
षट दरसन कथही वौ भेषा । अनंत कोटि की मती है एका ॥
पलक पलक सनमुष दरसाए । दसए द्वार मो दीयो देषाये ॥
दरसे नाम परम तनु लष्याये । जोग जुगती सो सासा ले जाए ॥
वंक नाल की राह सुधार । मेरु डंड है पंछीम द्वार ॥
पल पल नीषै टुटै न तार । तब आतम को रूप नीहार ॥
सो प्रभु मोही माह दरसान । नैनन देषी के कीयो वषान ॥

\+ \+ \+

यह वंक नाल की राह तमाशे सुरती जाई ।
शापीन डारे मारि शुक्रीत ठाढे समुदाई ॥
जीव ब्रह्म भयो एक शकल दुतीआ दहाई ॥
भौवोन भआ उजीआर प्रेम शाफीलीए तनु अंग शोहाई ॥
वेधे षट चक्र त्रीकुटी आशन लाई ॥
षुला दसवा द्वार गगन में दरश परश हरी शुधी पाई ॥
आचल तषत आशन उपर आनंत ब्रह्म दरशाई ॥
ब्रह्म भआ प्रकाश अनंत कोट ताहा शंत षडे छवी बरनी न जाई ॥
"दाश हरीनाम" के दाआ कीयो शतगुर शुरतीशमारी के देषन जाई ॥
राम हो राम आकाश पाताल त्रीलोक है राम का शकल है भुअन भाई ।
राम ही राम में राम रहते फरै राम ही शकल में रहेवो छाई ॥
राम ही प्रेम है राम ही ग्यान है राम ही भाव वो भजन भाई ।
राम ही वेद की सेव कोरान है राम नहीं धरै अवतार भाई ॥
दाश हरीनाम एक राम ही जानी है दुजा नही जानी है सुनो भाई ॥
रामनेजा लीवो चरन साचौ गहो डहा नही नेम साचा रे भाई ।
ग्यान की मौवोज मे सुरती रहती रहै ताहा पाच पचीस गुन तीन लाई ॥
रूप के देषी के मगन भए वो आप मे देषो रघुनाथ तव चरन चीत लाई ।
गगन के महल में सुरती रहती रहै महल के वीच एक वोलै शाई ॥
वार नही पार वोह मध मे रहत है भौवोन मे जाइ शो चीन्ह पाइ ।
त्रीकुटी मध्य है भेद शाचौ कही जानी है शंत जेह नाम पाही ॥
दाश हरीनाम एक नाम ही जानी है दुजा नही जान ही शुनो भाई ॥

विषय—

निर्गुण मतानुसार ज्ञानोपदेश किया गया है ।

संख्या ३२० ग. पद, रचयिता—हरिनाम, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—६¾ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४, पूर्ण, रूप—प्राचीन,

पत्र, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्र० सभा, वाराणसी। दाता—श्री गुरु बालकप्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास, डाकघर—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़

आदि—

मन वसी करै सोइ है जोगी पका जोग कमाया है हो।
मन मै गर को झपटी ले आवौ आकुस दे लवटा भा है हो॥
मन मन कही सुर नर मुनी हारेवो मन को अंत न पाआ है हो।
पाच पंचीस को पकरी कैद करीए कै राह म लाआ है हो॥
आतम भानु सो धाम झलपती है भान ही माह समाआ है हो।
पौन साधी लै जाए त्रीकुटी में बंकनाल चढी धाआ है हो॥
'दास हरीनाम' दया सत गुर की नाम टौर लषी पाआ है हो॥

× × ×

मन तुम ऐसो भजन करो।
जैसे गनिका गिध अजामिल सेवरी निन्त तरेवो॥ १॥
जैसे ध्रुव प्रहलाद नामदेव मिरा सर्न परेवो॥ २॥
जैसे अंक वंक सदन कसाई भूप वेवान चढेवो॥ ३॥
जैसे तुलसि सूर कबीर जी गाये वो नान्हक नाम जपेवो॥ ४॥
जैसे भीषा गोविंद पलटु दूलम्हदास भयेवो॥ ५॥
जैसे मन माहि पाहि देषे वो सो जन जग दुवरेवो॥ ६॥
मन मनसा जाहा येक नही 'दास हरीनाम' राम दरसेवो॥ ७॥

मध्य—

प्रम आनंद रामानंद आदी ब्रह्म गुरू देवा।
आस्थीन आतम पुरन ब्रह्म तन मन करी ले सेवा॥
देव प्रम प्रकास कीए है त्रीकुटी मध्य लेहु देषी।
तीन लोक जो कीआ सात दीप नव षंड॥
चौदह भुवन चराचर ताको अहै एह भेद।
चारी वेद छ सास्त्र अस्तुति करते भेष॥
नौ ब्याह (?) कर्न चर्न प्रभु सेवही कथा पुरान विसेष॥
है ब्यापीक नर देषत नाही केवोकर फिरत अचेत।
प्रम आनंद आनंद भयो है 'दास हरीनाम'
दया सत गुर की आदी ब्रह्म को देषी॥
दरसन दरसेवो आतमा दरपन नैन समीप।

परम हंस परकास आपमे इरद महाल हजूर ॥
'दास हरीनाम' दरस मे भुलेवो मीलेवो है जहुर ॥
नुर मे झलकै पलक मो ले आवै सौदा पुरमपुर ॥
सुषमनी सेज देषी मन भुलेवो भ्रम गइ सभ दुरी ॥
दरसे अचींत चींता नहीं वाके साहेव नीमल रूप ।
सभै वेद भेद जो गावै सभ संतन के भूप ॥
सभै ग्रंथ मो आपु लषावै सभ को अहै वह भूप ॥
रूप नाम ब्रहमंड पंड में संग सोइ दरसाये ॥
'दास हरीनाम' नुर मे देषेवो झलकत वरनी न जाय ॥
सुरती नीरती के बीच ग्यान की पान है ।
तस काआ के बीच देषो नीज नाम है ॥
इंगला पींगल के षेल उलटी देषु भान है ।
सुषमनी सेज विछाये, उगै जैसे चांद है ॥
दरसे दसआ द्वार ब्रह्म नीवान है ।
'दास हरीनाम' दआ सतगुर की सुरती पाये परधान है ॥

पंच तत में नाम प्रकासा । वाहर भीतर एको दासा ॥
आसा रहीत त्रीकुटी में जाता । त्रीवेनी के घाट नहाता ॥
कर्म भ्रम सव दुरी वहाता । सुषमनीघाट सतगुर गमपाता ॥
दसए द्वार ने ब्रह्म दरसावता । तुलसी सूर कबीर जो गावता ॥
पंच तत्तु मे नाम है साचा । दास हरीनाम ताही को दासा ॥

\+ \+ \+

तुलसी सूर कबीर जो गावै । नानक और रवीदास जेही ध्यावै ॥
मलुक सलुक करी दरसावै । गुदर की गती प्रभु पद पावै ॥
गोरष गोपी भरथर चंदा । सुमीरत प्रभु पद होही आनंदा ॥
अंमरीक प्रहलाद सुदामा । प्रभुपद सुमीरत दुर्गत भागा ॥
सीव सनकादीक नारद सेसा । नाम लेत सो भयेउ दीनेसा ॥
उगे सूर्ज भये प्रकासा । जागे ग्यान लोचन षुली जाता ॥
मल रहीत मालीक एक आतमा । 'दास हरीनाम' सोइ दरसवो गाता ॥

विषय—

निर्गुण भक्ति संबंधी ज्ञान का प्रतिपादन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । रचयिता का नाम दास हरिनाम है जो प्रत्येक पद और भजन के अंत में प्रयुक्त हुआ है । इनका अन्य परिचय नहीं मिलता । इन्होंने एक पद में पलटुदास दूलन्हदास और भीखादास आदि संतों का वर्णन

किया है। इससे ये इनके पश्चात् के संत जान पड़ते हैं। कहीं २ रामानंद का भी गुरू के रूप में गुणगान किया है, अतः हो सकता है कि ये कबीरपंथी रहे हों। हस्तलेख सभा के लिये प्राप्त हो गया है। इसके पत्र एक ही ओर लिखे गए हैं। रचना का नाम नहीं है। अधिकतर पद होने के कारण 'पद' नाम दे दिया गया है।

संख्या ३२१. जोगरत्न, रचयिता—हरिरायपुरी, पत्र—९, आकार—९ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः

। दोहा ।

सभकै आदि अंत में गुर ईसन कोईस। दूजे संगत साधकी तौ मिल है जगदीस ।१

सोरठा

जो तू चाहै पार नित कर संगत साध की। यही मंत्र ततसार सतगुर सेवै परम पद ।२

चौपाई

श्री गुरुदेव अलेप निरंजन। चिंता सकल दुःख भंजन।
चिदानंद गुरदेव अपार। चर अरु अचर कियो विस्तार।
गुरुतै सकल सकल गुर करी भांत भांत की रचना धरी।
ऐसे गुरु की करहु सेवा। ता समान दूजा नहिं देवा।
ऐसे गुरु को निसदिन गाऊं। मन क्रम वचन चरण चित लाऊ
ऐसे गुर की पूजा करूं। सर्वसु वार चरण चित धरूं।
तन मन सिर नवछावर कीजै। बदला कहा गुरां को दीजै ॥
अखिल लोक देखे सभ मांही। बदला दुरों को दीजै कौ कछु नाहीं।
बदला कहा गुरों को दीजै। कहो किस भांति सुउरगता हूजै।

अंत—

जो कंचन अरु भूषन कहै। ऐसे अलष सृष्ट मैं रहै।
जैसी बरफ अरू कह नहिं पानी। अलष पलक की यही निसानी।
मूर्त अनेक चतेरा करै। कागज मूल नाम कछु धरै।
बहुत भांते दुनियां का भेष। एकै लषै पुरुष अलेष।
परम तत्व पुर सीतल कहै। सर्व व्यापी सब मैं रहै।
बालपुरी पद रहै समाय। सर्व व्यापी अपने भाय।
लालपुरी सम भीतर लाल। अलष लोक कहै जाको ख्याल।
पुरी गुरु चेला हर राय। अलष पुरुष पटण पहुंचे जाय।

दोहा

अलष मिले अलषे भए परम तत्व निर्वान ।
'हरिराय लाल' परसाद तै गगन मगन गलतान ॥

सोरठा

सत पद रहै समाय एक रूप मूरत घनी
साध कहै हरिराय सतगुर मिलै तौ पाइयै ।

दोहा

जोग रत्न अद्भुत ग्रंथ कहत सुनत सब पाय ।
श्री लालपुरी परसाद तै कथ्यो पुरी हरिराय ।

सोरठा

मूल जोग को आहि जोग रत्न संबू लहै
जो कोई समझै ताहि सभै वासना थक रहै ।

दोहा

विश्वंभर मैं बावरो बवरो नाउं । पलक राह गाड़ी चलै मैं उलटो औंडों जाउँ ।

सोरठा

पलकत पांउ सो पाउं पलक न देखै देखहू ।
तातै ववरो नाउं वसू चरन दीसू गगनः ॥

इति श्री अद्भुत ग्रंथ चतुर्दशोऽध्यायः । १४ शुभं भवतु । समत् १९२० वर्षे मिति-भाद्रवावाद ॥१४

लिषतं व्यास रताणी बुधला वीकानेर मध्ये ।

विषय—

चौदह अध्यायों में योग सिद्धांतों का वर्णन है ।

संख्या ३२२. नित्यकृत्य, रचयिता—हरिराइ, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—११½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री कृष्णाय नमः । श्री विट्ठलनाथ जी सहाय । अथ श्री नित्य कृत्य लिष्यते । प्रातः काल ४ घड़ी रात्र बाकी रहै तब पलंग पर उठ बैठिये । श्री कृष्ण नाम । श्री आचार्य गुसाई जी को नाम लेत नीचे उतरिये । तनिया उतार धोती पहिर जलदान के गडुआ तैं हाथ धोइ आचमन करिये । श्री नाथ जी जा दिस होइ ता दिस सनमुख होइ नमस्कार करियै ॥ पाछै श्री आचार्य जी श्री गुसाई जी को नमस्कार करिये

अंत—

पाछे कथा कहितदीयन सो अगह करिये। पाछे यथोचित अनिशि दिवस भोग करिये। हाथ पांठ धोइ तनिया पहिर माती उतारिये॥ श्री प्रभु कौं गुरु कौं स्मर्णपूर्वक आलस्य भावार्थ थोरो सोइये। इति श्री हरि राइ जी कृत नित्य कृत्य समाप्ता: ॥ श्री वल्लभो जयति। श्री बिट्ठलनाथो जयति श्री मद्व्रजा भरणदीक्षित चरण कमलेभ्योनमः।

विषय—

वल्लभ सम्प्रदायानुरूप भगवान् की सेवा अर्चना के नियमों का और भक्तों के नित्य कृत्यों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

संख्या ३२३, वाणियाँ, रचयिता—हालीपाव। इनकी वाणियाँ संख्या ५९ के विवरण पत्र में दी हुई हैं, अतः देखिए उक्त संख्या का विवरण पत्र।

संख्या ३२४, धर्मचरित्र, रचयिता—हिरदैराम, पत्र—२०, आकार—५$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८३७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० दीपचंदजी, ग्राम—नोनेरा, डाकघर—पहाड़ी, रियासत—भरतपुर

आदि—

अथ धरम चरित्र लिषते॥

कहै नाई सुत जाय। सुनौ गुन धर्म जी।
हथनापुर येक नृप धर्म कौ पुत्र कहावै।
इच्छया भोजन देइ कनक पात्र जिमावै।
जाकौ जस मृत लोक मै और कहै सतकी वात।
मनसा पुजवै सबन की जो इच्छया करता जात॥
सुनौ गुन धर्म जी
हथनापुर सुभधाम गंगा तट राजत सोभा।
धुजाधौर इह कलस ··· ··· ··· ···
देवपुरी की धौर चिता मम और न कोइ।
कथा होत नित राम की सुनत नाच अध होइ॥
सुनो गुन धर्म जी॥

मध्य—

येक पुरुष है नार येक सु सरभर राषै।
येक सु करै गृहैं येक सुबातन भाषै॥
औगुन बिन मारी तजै कन्य मूल ते षाय।
चंडल तेई न लजानियौ भीम जी हरकै मन नहीं भाय।
कहै गुन धर्म जी।

तजै पुरष कै संग त्रीया तीरथ कू आई।
भजै पुषचंडल तौ वाके धर्म नसाई॥
तीरथ ते गृह ही तजै कुल हीन अज्ञान।
चंडल तेई नज आनीयँ भीम जी पीवत है सुरापान॥
कहै गुन धर्म जी॥

अंत—

जो फल होय द्वारिका के दरसै। जो फल होय बद्रीनाथ के परसै।
जो फल होय गंगा गोदावरी के न्हायै। जो फल होय धर्म चरित्र कहै सुनायै।
धर्म चरित्र जे कहौं मोहत आठौं जाम।
जग में जाहर होहिगें सो गावत "हिरदै राम"
कहै गुन धर्म जी॥

संवत् १८३७ मीती मांगश्र कृष्ण पछे तिथउ ४ तथा ५ गुरवार पोथी लिषी भ्राता भाई मनसा राम तथा ··· ··· ···॥

विषय—

धर्मराज युधिष्ठिर के आतिथ्य सत्कार का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथकार ने ग्रंथांत में अपने नाम का स्पष्ट उल्लेख किया है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८३७ वि० है। ग्रंथ की लिपि अत्यंत अशुद्ध है।

तृतीय परिशिष्ट

अज्ञातनामा रचयिताओं की कृतियों के उद्धरण

तृतीय परिशिष्ट

अज्ञातनामा रचयिताओं की कृतियों के उद्धरण

संख्या १२५. अंजना सुंदरी कथा, पत्र—५, आकार—१०×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२२, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १७६२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

॥ [० ॥ श्री पार्श्व नाथाय नमः ॥

सरसति स्वामिणि प्रणमि यह गोतम स्वामिना पाय रे
अंजना सुंदरीनी कथा नारि नर सुनहुं मनुलाइ रे । १
सील भवियण भलइ पालियइ पामियइं सुजसु संसारि रे
सवि कुसंगति छली टालीयइं जाईयइ भव समुद्र पार रे सी० २ आं।
जस प्रतिष्ठाहणि भवि जयइ विघन सवि सील वो जाइ रे
सुर सिव सुप पर भवि लहइ दोइ भवि निर्म्मल थाइ रे सी० ३
जंबू दीवं मिइणि भरत मंइ भलो वैताढ गिरिजाणि रे
नया प्रल्हाद निय परगऱ्यं राय प्रल्हाद वषांणि । सी० ४
तासु प्रल्हादनी सुंदरी पुत्र पवन जयना मिरे
रिजभदत्त नाम इवि वहारियो सुं व रहता तिण ठामि रे । सी० ५

मध्य —

मालती सव रस जिण विचरचो केवली
तीजै मासिसु गर्भ प्रगट हूवउ सासू मन इम चिंतइ रे
वहू घई निश्चै विभीषाणी चडिउ कलंक निभतैर २१ सील
भली परिणालो प्राणीया भीय धरो मनि एमरे सती आपणो
साजो रापती पाछइ रापइ के मरे सरि २ बाल प्रगट हुई सासती
प्रिय करि मुद्रा अणोरे प्रगटि दिषाई सासू सुसरा नई ।
पनिते चुभमा नैरे सी० १३
आहि वहूहि वनिज पीहरइं मूठो करियो उपाय रे
मार्ग अब विचालं परि हरी दुप माहि कोइन सहाय रे सी १६

अंत—

जिन सासन राजा घणा भोग विराग अनूप रे
चारि तुल दूतजि भोगन इ ऊया मुकति पुरि भूप रे सी० ५६
दान सील तप भावना चारइं धर्म उपाय रे
जनमु सफल करि आपणो रह्या मुकति पुरि जाइ रे सी० ५७
परभविहिव आराधियो विषय तजऊ विष जाणि रे
पइ राणी राजाथयो मारि वचन सु प्रमाण रे सी० ५८
राजु दीयो हनुमंत नइं पवन जइ धरि धीर रे
संजम लीयउ दंपती जीव भला वभ्र वरि रे सी० ५९
पंचमहाव्रत पालि न इं संजम निरती चारि रे
स्वर्गि गया ते बारमइं भोग विसुरु सुष सार रे सी० ६०
तिहथीच विहून्यो जणा महा विदेह अवतार रे
लहिस्यइं मुकति तहां भलइं होस्यइं केवल धार रे ।६१
धन २ अंजना सुमिरिउ चित्त त्रिकाल रे
सील भलो तिण पालीयो जसु गावइ मुनिमाल रे
सील भलो जगि पालीयइं सी० ६२

इति श्री अंजना सुंदरी की कथा चउपइ संपूर्ण मिति संवत् १७६१ ज्येष्ठ मासे शुक्ल पक्षे तृतीयायां सोम वासरे लिषत बसंता ।

विषय—

पौराणिक ख्यात के अनुसार थोड़े हेर फेर से अंजनी के गर्भ से हनुमान की उत्पत्ति का वर्णन है ।

संख्या १२६. अन्तर्लापिका, कागज--देशी, पत्र—१, आकार—६ x ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२, अपूर्ण, रूप-- प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

पंचानन तीजो प्रकट, मृग चौथो मुनी राज ।
वेद मात्र आदिक वरण, करैं तुमां कविराज ॥ १ ॥
(जीव)

एक कलासी धुरि लिखी, लागी लगन यह रीत ।
रेख २ करवट चली, हम तुम ऐसो प्रीत ॥ २ ॥

अंत—

जम पुत्ती आगी जिका, वाजित्त वाजेवा।
तोहू तेतीवार, मीली न सक्थो मेह वत ॥ १ ॥
(चपटी)
—अपूर्ण

विषय—

ओहे सवैयों में पहेलियाँ वर्णित हैं।

संख्या ३२७. अचलदास खीचीरी बात, कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१४, पूर्ण, रूप-प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः

अथ अचलदास खीचीरी बात लिख्यते
गढ़पति गवरी नंदन, विघन हरन मंगल करण।
आपण बुधि सुं सुध कंद, वरदायक वाणी दियण ॥ १ ॥

अथ वार्ता

अचलदास खीचो गढ गागुरु राज्य करे छे, लालां मेवाड़ी पटराणी छे, मेवाड़ रोधणी मोकल, तिण रे बेटी नि रीटियो पुरुष अपछरा रो अवतार छै। इण तरे राज्य पालंता थकां॥

अंत—

सूरां पूरा तिकेनै अपछरा आय बरसी स्वर्ग रा विमान आवसी तरे अचलदास जी लड़ाई मांडी, लड़ाई करतां काम आयो, लालां मेवाड़ी उमा सारंवली दोनुं सती हुई, लाला मेवाड़ी रो रूसणो भागो॥

इति श्री अचलदास जी री बारता संपूरण संवत् १८४३ रा फागुण वद ४ लिखंत मं 'बाघमल'

विषय—

अचलदास खीची की वार्ता सविस्तार है। अंत में उसके युद्ध में काम आने पर लालां मेवाड़ी और उमा सारंवली दोनों सती हो गईं।

संख्या ३२८. अभिमन्यु कथा, कागज—देशी, पत्र ३९, आकार—५३/४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८०, अपूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि—

षरथिन मे हेले पाय । यहो रत्र हो माहे जैने आवें नगर वैराट्य मध्य ।११ राजो राई को एणी पेरिबोले । राजा बयण सूणेय । वार सहे सांठही ओमाहारे । वषांणू के हिये रिभलेय ।१२ पंषालिआ काश भमति । सन कारि पैया लें पवन वेग अहोभुवने । चाले घड़ी एक माहे ताले ।१३ हीस करे मल पंति चालेनि निआरे वाजे पाय ॥ "पुछड लालि-करि करुका । जाणेम्पलिया वाय । १४ उलालि आकाशे पोहोचे । षरथि न मे हे ले पाय ॥ पो होर बेही माहे जैने आवे नगर वैराट्य माध ।१५ काजो रहि को एणी पूही बोल्यो, राजा वैयणा सूणेय सोल सहे सांठडी ओ मांहारे । वंषाणू केसी वेरि भणेय ।१६

अंत—

सुणे जनमेंजे राजा वात । एटले हौ या कोठा सात । साते सहस्र शूरणे मारयो योधा तोहे कुयण विमाने कोध ॥ अभीभून्य मोटो ते समरथ एटला आ षुपर वजेंद्रथ । ७०५ अभीमूने कथा भणे सांभले । तेहनां पंचे यात्य गटले । धर्माधर फल पांमे घणु । श्रुणतां उतरानु ओहणु ७०६ पूत्र वियोग शोक नहीं हास नरनारी नियो हो आस । कविजन ये म देशो षोडे देहभरमे कहर जोड़ां ७०७ । सुमंभवतु कल्याण मस्तुः संवत १७०५ वर्षे माघ शह शूदि ८ खे ओमशुहमेस्तू ।

विषय—

अभिमन्यु की कथा का वर्णन किया गया है ।

संख्या ३२६. अभिमन्यु बध, कागज—आधुनिक, पत्र १४, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०१, अपूर्ण, रूप—कुछ पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

गजमुख सन्मुख होत ही बीती कुमति कुतर्क ।
कोक सोक मेचक महा यथा विलोकत अर्क ॥
देवी मो मति मन्द अति करौ कृपा हरि मोहि ।
माता निहरति कपूत पर करत बहुतहि छोह ॥
तेरे आस प्रकास सब जसुदानंद अनन्द ।
बानी घरी प्रमान जुग ग्रथा का की हरि आदि ॥
हरिथापन हरिथापनो हरि जाचक हरि दानि ।
हरि बिसारि नर चहत सुप बड़ी आचरज मानि ॥

चौपाई

कौरव पण्डव भये भुआरा । अति बल राज करै संसारा ॥
बन्धु विरोध करत ते रहही । पीति कीन्हि नहि केसव चहही ॥

येक बार पारथ बनबारी। गये जुगुल सुरपाल गोहारी ॥
बीचहि कपट कौरवन्ह कीन्हा। प्रेरि परम बन्दी जन दीन्हा ॥
विदुर भाट ते कहा बोलाई। कहौ पण्डवन्ह ते असजाई ॥
चकाव्यूह की जूझे आवै। मुद्दु मसिलाइ कै वनहि सिधावै ॥

॥ दोहा ॥

चूरी तरकी विदुर लै कीन्हौ तुरित पयान।
धरम तनै बैठ्यो जहाँ तहाँ भाट नियरान ॥

मध्य—

॥ दोहा ॥

भ्राता पिता परिवार जुत निश्चर निकर निकाय।
तात तिहारे मधपुरी मारे जादवराय ॥

॥ चौपाई ॥

यादव वंश निकन्दन हेता। अवराधहु सादर वृषकेता ॥
दौर जनक बन्धव कर लीजै। तात उपाइ वेगि यह कीजै ॥
तव जननी अनुसासन पाई। गयौ गोदावरि तट महिसाई ॥
धूम्र पाँन कीन्हेउ वहु भाँती। जपेउ निरन्तर त्रिपुर अराती ॥
प्रगट भयउ तव सम्भु कृपाला। पञ्च वदन तन गौर विसाला ॥
माँगु माँगु वर जो मन भावा। बार बार मोहि सम्भु सुनावा ॥
सम्भु वचन सुनि उर सुषभयऊ। हाथ जोरि तव मैं अस कहेऊ ॥
सो आयुध मोहि देहु पुरारी। जामे हतौ रमाबनवारी ॥
विन प्रयास जदुवंस निपातौ। राम स्याम सुंदर उर हातौ ॥
एव मस्तु गिरिजा पति कीन्हा। अविचल कुलिस मजूषा दीन्हा ॥
सोरह सहस करी तेही माही। अति विचित्र कहि जात सो नाही ॥
प्रविसि मजूषा करेहु लराई। कोउन सकै तोहि जीति सदाई ॥

अंत—

॥ सोरठा ॥

आइ गये बगमेल बासव नन्दन नन्दभट।
बाढ़ा समर दुहेल सुभट सुसर्मा कोट पट ॥

॥ चौपाई ॥

परत मारि ब्याकुल भट कीन्हा। रस स्वारथी परत नहि चीन्हा ॥
रुधिर भरे भट भाजत कैसो। मानहु अरुन अवनि धरि जैसो ॥

भभकहि घाय भयंकर भारे । मनहु झरन झरि झरत अपारे ॥
वराह नासिका श्रवन विराजे । रोमावली वेलि छवि छाजे ॥
वरषत वाँन वुन्द अधिकाई । मघा नक्षत्र मनहु झरि लाई ॥
सुभट सुसर्मा टरै न टारै । जिमि हरि भजन विनास दुषारे ॥
वाजे सूरवीर दहु वोरा । हाहाकार मचावत घोरा ॥
इतही ब्रत जैद्रथ दोहाई । महामारु संग्राम मचाई ॥

॥ छंद ॥

संग्राम भूतल भूरि भट ... ...

—अपूर्ण

विषय—

अभिमन्यु बध की कथा का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । इसके पत्र नष्ट नहीं हुए वरन यह लिखा ही अपूर्ण गया है । अंत में एक छंद लिखा जा रहा था जिसके प्रथम पद की केवल आधी पंक्ति लिखी गई है । रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं लगता । रचयिता का नाम भी अज्ञात है ।

संख्या ३३०. अर्थ पंचक विवेक, कागज—देशी, पत्र—३१, आकार—४$\frac{1}{10}$ × ७$\frac{1}{10}$ इंच पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारागंज, इलाहाबाद

आदि—

श्री मते रामानुजाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

वेंकटेश कमलापती कृपासिंधु भगवान ।
दासन कैं मंगल करौ देव ज्ञान विज्ञान ॥ १
चरण कमल वंदौं सदा श्री गुरु दीनदयाल ।
अरथ पंचक भाषा करौं दीजै बुद्धि विशाल ॥ २
नारायण के मिलन की जिनके मन में चाह ।
तिनकू नित्य कर्तव्य है अर्थ पंचक अवगाह ॥ ३

॥ सोरठा ॥

जीव ईश्वर उपाय, फल विरोधि जनिये ।
नाम रूप स्वभाय, भिन्न भिन्न करि कहत है ॥ ४

अंत—

श्री वैकुंठ के किंकरा अनघ सदा निषकाम।
दिव्य ऐश्वर्य प्रापति भये तिनको नहीं परिणाम ॥ ४३
सज्जन कूं संमत भलौ सकल वेद कौ सार।
स्वपर विशद वोधी सदां मोक्ष सिढी सुखसार ॥ ४४
परमेश्वर परसन लीये भक्तन कूं सुख दैन।
अरथ पंचक विवेक शठरिपु रचना वैन ॥ ५४५
इति श्री पुरण भयौ अरथ पंचक विवेक।
ताकरि कै श्रीपति मिलै होय मुक्त अभिषेक ॥ ५४६

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम अर्थ पंचक विवेक है। इसमें विशिष्टाद्वैत मत के अनुसार ईश्वर, जीव तथा प्रकृति का निरूपण किया गया है। आरंभ में जीव का नाम रूप और स्वभाव वर्णित है। पश्चात् ब्रह्मा का निरूपण है। ब्रह्मा के चार व्यूहों का विस्तारपूर्वक वर्णन है। जीव की मुक्ति के उपाय तथा मुक्ति का स्वरूप कहा गया है।

'अर्थ पंचक विवेक' दोहा तथा सोरठा छंदों में रचा गया है। दोहा और सोरठों की संख्या ५४६ है। भाषा ब्रज है।

संख्या ३११. अलंकार वर्णन, कागज—देशी, पत्र—७, आकार—१२ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१३, खंडित, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

............इ वचन मस्य को कहई ॥

कुवलयानंद

असंभवोऽर्थ निष्पत्तेरसंभाव्यत्व वर्णनम्।
कोवेद गोपशि शुकः शैलमुत्पाट येदिति ॥

॥ अतद्गुणालंकार लक्षणम् ॥

तहा अतद्गुण संग को जत गुण लागै नाहि।
पिय अनुरागी न भए बस रागी मन माह ॥

यथा

खलौ करहिं भल पाव सुसंगा। मिटै न मलिन सुभाव अभंगा ॥

पुनः

अहि अवगुणहि अहि मन गहई। हरै गरल दुप वारिद दहई ॥

चंद्रावलोके

संगताम्य गुणा नंगी कार माहुर तद्गुणम् ।
विर रागिनि मच्चित्ते निहितोमि निरंजसि ॥

मध्य—

॥ अन्योन्यालंकार लक्षणम् ॥

है सहाय जहां परस्पर अन्योन्या है सोइ ।
निसिते सोहत चंद्रमा चंद्रहि सो निसि सोइ ॥

॥ सलाका विषै ॥

भेटि गिद्ध रघुराज सो वढ्यू दिश हिये हुलास ।
सवक पाइ मुसाहेवहि साहेव पाइ सुदास ॥

कुवलयानंद

अन्योऽन्यं नाम यत्रस्यादुपकार परस्परम् ।
त्रिया माया शशिना भाति, शशि भाति त्रिया माया ॥

॥ अथ इकार शून्यम् ॥

॥ अथ उकारादि कथनम् ॥

॥ तत्र उपमालंकार लक्षणम् ॥

उपमा श्रौती आरथी द्वै विधि मन में ल्याइ ।
पूर्णो लुप्ता भेद सो दोउ दुविधि गनाइ ॥

॥ श्रौती वाचक जथा ॥

इमी जिमि ज्यौं जैसो कहत लौं यो सो से जानि ।
इव आदिक पद में दिये वाचक श्रोती मानि ॥

॥ अर्थी वाचक जथा ॥

सरिस तुल्य समतूल सरि तत्सम कहत समान ।
धर्मा मिलै जहं अर्थवल सो आरथी सुजान ॥

अंत—

॥ अथ तकारादि कथनम् ॥

॥ तद्गुणलंकार लक्षणम् ॥

तद्गुण निज गुण त्यागि करि संगी के गुन लेइ ।
नासा मोती अधर मिलि पद्मराग छवि देइ ॥

जथा

धूमौ तजै सहज करुआइ । अगर प्रसंग सुगंध······

—अपूर्ण

विषय—

अलंकारों का अकारादि क्रम से वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के आदि अंत के पत्रे नष्ट हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी उल्लिखित नहीं। अलंकारों के लक्षण दोहों में दिए गए हैं जिनमें कहीं कहीं 'केशवराइ' नाम आया है— "इष्टैबात अनिष्ट जहँकैसहुँ हु जाइ। तासों जुक्ता युक्त कहि बरणत "केशवराइ"।" अलंकारों को स्पष्ट करने का क्रम ऐसा है कि पहले हिंदी में लक्षण दिया गया है, फिर उदाहरण और तत्पश्चात् संस्कृत ग्रंथ•कुवलयानंद और चंद्रालोक से लक्षण दिए हैं। उदाहरण एकमात्र गो० तुलसीदास जी के ग्रंथों, अधिकतर मानस से उद्धृत हैं। अलंकारों का विवेचन अकारादिक्रम में है। ग्रंथ का नाम अज्ञात है। विषय को देखकर ही इसका 'अलंकार वर्णन' नाम लिख दिया।

संख्या ११२. अवतार मालिका, कागज देशी, पत्र—१५, आकार—४'५ × ७'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसी दास का बड़ा स्थान, दारागंज, प्रयाग।

आदि—

श्री मते रामानुजाय नमः।
बहुरि सुनो नृसिंह रूप पातक क्षय कारा ॥९२॥
आदि आसुर भयो हिरण्य कश्यप हरि ज्यो वेर कराई ॥
वाराह रूप होय मारियो हरिणा दग निज मेरो भाई ॥९३
चलौ तपस्या करन को देत्य दानव को अज्ञा दीनी ॥
वेद यज्ञ गो ब्राह्मण वैष्णव को पीडा कीनी ॥९४
दिव्य एक सत वर्ष भये बिना अन्न और पानी ॥
नाक कान कुश जामियो निज देह सुकानी ॥९५
मेद मजा त्वचा मास सबकों ह''''''न षायो ॥
प्राण सथन करि रह्यो जाय स्तन माहि समायो ॥९६

अंत—

एह प्रकार अवतार भयो ध्रुव चरित्र उदारा ॥
बहुरि सुनो जा कारने भयो पृथु अवतारा ॥ ७१
हरि निंद्या ते पतित वेणु तारो पुत्रद पायो ॥
बाहु मथन ते पृथु प्रघट भयो आदि राज्य दोलायो ॥ ७२
पृथ्वी दुही सब वृत्ति लई प्रीति दुहिता कीनी ॥
पुर पत्तण आखेट बाट ग्राम नाम सब संज्ञा दीनी

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम विषय के अनुसार 'अवतार मालिका' कल्पित किया गया है। इसमें भगवान् के नाना अवतारों की कथाएँ संक्षेप में वर्णित हैं। ग्रंथ आदि अंत में खंडित है। प्राप्तांश में नृसिंह, हरदेव (गजेंद्र मोक्ष), वामन तथा ध्रुव चरित्र वर्णित हैं। राजा पृथु की कथा अपूर्ण ही रह गई है। ग्रंथ ब्रजभाषा तथा रोलाछंद में लिखा गया है।

संख्या ३३३. अश्वमेघ जैमनीय, कागज—देशी, पत्र--८६, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ७$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)--२०१६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्रीनाथाय नमः अथ श्री जैमन असमेद री कथा लिष्यते।

एक दिन राजा जनमेजय राजा परीक्षित रो बेटो ने जेंमन रिख व्यास किसन द्वीपायन जी रो सिख तिणने पूछे छे, महाराज! आप मोने महाभारथरी कथा सुणाई, सो तो सुणी, पण महाभारथ पछे महाराव डेरा असमेद जिग कियो, तिणरी कथा मोनुं कहो।

अंत —

जेमन रिख राजा जनमेजय ने कहे छै हे राजा! मै मनै असमेध जिगरी कथा पूछी सो मै तोनै कही, हे राजा : आ कथा कोई मिनख बांचसी, सुणासी, लिखसी, लिखावसी, तियाने महाभारथ संपूर्ण सुणियां रो धरम होसी, ने सुग (ते सुरग ?) लोक रो इधकारी होसी, ते मन वांछित फल पामसी ॥

इति श्री महाभारथ जेमन असमेधनी री कथा संपूर्ण, श्रीरस्तु-शुभमस्तु ॥

विषय—

महाभारत के अंत में युधिष्ठिर राजा ने अश्वमेध यज्ञ किया था जिसकी कथा मारवाड़ी भाषा में लिखी है। जैमिनी मुनि ने यह कथा जनमेजय राजा को सुनाई इसलिये 'जैमिनीय" कहलाती है।

विशेष ज्ञातव्य—इसमें चित्रों के लिये बीच बीच में कोरे पत्र छोड़े गए हैं। कथा की तीन प्रतियाँ और हैं, यथा २ री प्रतिः—देशी पत्र—११३, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, आकार—६ × ८$\frac{3}{4}$, अनुष्टुप् छंद—२०११, रूप-प्राचीन, भाषा—मारवाड़ी

आदि-अंत पहली प्रति के अनुसार। संवत १८४३ रा वर्षे फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे १५ शनौ लिखित तिवाड़ी हरकरण। ३ री प्रतिः—

देशी पत्रा—२२८, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, आकार—१०×६इं०, छंद (अनुष्टुप्)—३१७८, रूप—प्राचीन, ब्रजभाषा में अपूर्ण प्रति, १२ अध्याय हैं।

४ थी प्रति:—देशी पत्रा—१९ (पृष्ठ १७ से ३५), पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, आकार—११×७ इं०, छंद दोहे ६४६, अध्याय ६ से १० तक और ११ वें के ३३ दोहे ही हैं। ब्रजभाषा में भगवानदास ने दोहों में कहा। अपूर्ण प्रति।

आरंभ--(१७ वें से)

> प्रान वहाँ ते वल चढ़े, अग्र अग्र अश्व जाय।
> सो वंध्याचल की सिला, खस्यो जो खाजि खुजाय॥

संख्या ३३४. आदसर रेपता, पत्र ४, आकार १०×४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१६६७ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, बनारस

आदि--

> ॥ ई० ॥ श्री पार्श्व नाथाय नमः ॥
> गुरु गण पति मनि ध्यावउं। चितु चरण सरण ल्यावउं
> मति मांग लेउ अइसी मुनि मानि लेहि जइसी १
> आदी सरगुण गावउं। वरू साध संगु पावउं
> चारित जिनेस लीआ। भरग कुं राज दीआ।२
> तजि राजि भए भिखारी। जिन मोन विरत धारी
> तब आपनीकमाई। भई उदै अंत राई।३
> मुनि भीष काज जावइ। नहीं भात हाथ आवइ
> कोई कन्यका सरूपा। कोई रतन अति अनूपा।४
> गजरथ तुरंग नीके। जे देहि लेहि जी के
> जिन चित नहि भुलावइ। सुनि सुकल ध्यान धावइ।५

मध्य--

> मिल सकल इंद आवइ। जिन चरण सीस नावइ
> विधि समो सरण साजइ। तिह माह जिनेस विराजइ।३१
> गढ़ तीन अति उतंगा। मणि कण कनक सरंगा
> बिच पीठका बनाई। मनि भांति भांति लाई।३२
> कनक मै भूम कीनी। तापर सुवास दीनी
> सुर कुसुम वृष्टि करते। पंच वरन भांति भरते।३३

असोक तरू विराजइ । तिन देष सेक (सोक ?) भाजै
भा मंडल भव पूरे । तेहां देष सूर कूरै ।३४

अंत—

उपदेस देत सामी । सद हंस मुकत गामी
सुणि भव कलेस छूटइ । मोहनी बंध तूटइ ।६६
इम मोहनि पर हरी यै । संसार जलध तरीयै
जिन मोहनी विमारी । जिय वरी मुक्ति नारी ।७०
रिष सहसु गुण गावइ । फल बोध वीर्य पावइ
कर जोडि मुनि भाषइ । प्रभु चरण सरण राषइ ।७१

॥ दोहा ॥

समो सरण जिन राम की गावइ जे नर नार
मन वंछित सुष भोगवई तरि पहुँचै भव पार ।७२
सोलह[१६] सै सतसठ वरष कातिग सुदि बलि राज
साल कोट सुभथान वर जपो सिद्ध जिन राज ।७३

इति श्री आवी सर रेषते समाप्तं । लिषतं मंगू हर साहाव पठनार्थं

विषय—

जिन भगवान् की अर्चना वंदना करके संसार सागर पार करने की युक्ति बताई गई है ।

रचनाकाल—

सोलह सै सतसठ वरष कातिग सुदि बलिराज
सालकोट सुभथानवर जपो सिद्ध जिनराज ॥७३॥

संख्या ३३५. आपत बतीसी, कागज—देशी, पत्र १, आकार—११ X ७$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३० (४ कवित्त), अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि— कवित्त

प्रथम जनम पंच में वरस देखै लखण विधि,
पंच तूण पूगंता जाणि अमलो हलिया आदि ।
बारह ग्यारह विद्या पाण धारण करि पोथो ।
तेरा चवदा तदन कियो घर में अन केतो ।

वृश पंच बारख विगड़ी दिसा इसा अगंलाइ कहरै ।
परिणाम खपत मूंडा पुरुष ये वसि हुआ अमल्ल रे ॥१॥

मुरझावे मन मात का तिमिनि अमल करावे ।
हुवा कंद अपहाति माति नह नेही नेह निम्हावे ।
बीगड़ी तदि सूं बात भान जीवण पह भावै ।
रहै सूग दिन राति आन्य घर में किम आवे ।
नजि साथ जिकण दालिद्र नपट कपट तात सूँ करै ।
परिणाम खपत भूंडा पुरुष ये वशि हुआ आ अमल्ल रे ॥२॥

(अपूर्ण)

विषय—

अमल (अफीम) के अवगुण वर्णित हैं। अमली की भी बुरी दशा का वर्णन है।

संख्या ३३६. इंद्रजाल, कागज—देशी, पत्र—४१, आकार ४'५ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, (अनुष्टुप्)—६२१, पूर्ण, रूप प्राचीन, पद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० महेश प्रसाद मिश्र, गांव-लिदहावरा, पो०—अटरामपुर, जिला—इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशायनमः ॥

अथ इंद्रजाल लिख्यते ॥ दोहा ॥
कुमति मोलिया ग्रंथ के नैयन किये आराम ॥
सुमति सराई डारी कै ता गुरु को प्रनाम ॥१॥

मूषक वाहन गज वदन सब पर होता सहाय ॥
विघ्न सांप को गरुड सम जै जै जै गणराय ॥

\+ + +

एक दिना अज्ञा करी राजा राम नरेश ॥
इंद्र जाल भाषा करौ औषद कछुक विशेष ॥

अंत—

इदं यंत्र अष्ट गंधेन लिखित्वा त्रैलोक्य
मोहन होई सौभाग्य सर्व कार्य करोति

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ 'इंद्र जाल" का विषय औषध तथा तंत्र है। इसमें विचित्र औषधियाँ तथा जंत्र मंत्र लिखे हुए हैं। ग्रंथ ब्रजभाषा तथा दोहा छंद में लिखा गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत "इंद्र जाल" के रचयिता का नाम अज्ञात है। केवल इतना उल्लेख मिलता है कि रचयिता ने यह ग्रंथ किसी राजा रामनरेश के आश्रय में उनकी इच्छानुसार रचा :—

"एक दिना आज्ञा करी राजा राम नरेश। इंद्रजाल भाषा करौ औषद कछुक विशेष॥"

ग्रंथ के रचनाकाल लिपिकाल भी अप्राप्त हैं।

संख्या ३१७. ईश्वर सेवा सिद्धांत, कागज—देशी, पत्र ६३, आकार—४'३ × ६'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

... ...

कृपा करी भूमि सफल किये काम ॥८॥
तिनके भावुक सुत भये वर्ष एक सहस तास।
तिनके हर्षण सुत भये राजे सुत्र पचास ॥९
आचारज हरिदास जू दो सह वर्ष प्रमाण ॥
ज्ञान देव तिनके भये ६ सह वर्ष सुज्ञान ॥१०
वासुदेव तिनके भये वर्ण सात सह संत ॥
विष्णु स्वामि कौ वंश सर्व प्रकट्यौ इन पर्यन्त ॥११
श्री माधव मंदिर धनी अपनी गादी जानि ॥
श्री सेवा सिद्धांत सो श्री मुख कियौ वखान ॥१२

अंत—

वासुदेव आचार्य जू भोजन क्रम कियौ ग्रंथ ॥
करवे की विधि इन सवन विविध भोग कौ पंथ ॥८३॥
बढती में अनुसारता की हां विधि सू चाहि
करमौ जन्म सफल करै सो नर धामहि जाहि ॥८४॥
यह सेवा सिद्धांत में ग्रंथ जुगल प्रिय भाख
वैष्णव कूं दर्पण भयौ तू याकौ रस चाख ॥८५॥
गीत गोपिका नाथ अरु ग्रंथ गीत गोविंद ॥
तृतीय गीत माधव करौ तारौ संसृति वृंद ॥८६॥

—अपूर्ण

विषय—

प्रस्तुत "ईश्वर सेवा-सिद्धांत" में माध्व संप्रदाय की सेवा विधि का वर्णन है। यह मूल ग्रंथ श्री वासुदेवाचार्य रचित संस्कृत में है। उसी का प्रस्तुत भाषानुवाद है :—

"ताकूं भाषा में कहूं लाड राधिका कंत।"

ग्रंथ में दो प्रकार की सेवाओं का वर्णन है – नित्य और उत्सव। नित्य में राग, भोग तथा आरती का वर्णन है और उत्सव में फूल डोल, दिवाली आदि अनेक उत्सवों का वर्णन है।

संख्या ११८. उत्सवप्रणालिका, कागज—देशी, पत्र—४१, आकार—९¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१५, पूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३१=सन् १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि--

श्री कृष्णाय नमः॥ श्री गोपीजन वल्लभाय नमः अथ जन्माष्टमी तें प्रारंभ रक्षाबंधन प्रजंत उत्सव प्रणालिका लिष्यते॥

जन्माष्टमी के पहेले दिन राज भोग में सीरा मोहन भोग॥ नित्य के भोग ते अधिकी में आवे॥ संध्या आरती पीछें प्रभू को श्रृंगार बडो करिये॥ चोकी पर पधराय बडो सिंगासन बाहिर काढीये॥ सिंगासन ऊपर नीचें झाडीये पीछि सिंघासन वस्त्र नयो होय तो बिछाइये नयो न होय तो घर में ते जो आछो होय सो बिछाइये गादी तकीया ऊपर धरि सिंगासन ढांकिये खंड तथा चोपड की चोकी पहू झाडि पोंछिये॥ सिंगार बडो करि छोटे सिंगासन पर पधराईये॥ सयन भोग में पूरी चून की॥ सीरा मगद के लडुवा टोर सकरपारा दूध॥ सोंठ का बुकनी में लोंन तथा हींग कुलाय मिलाय के धरीये॥ भुजेना जो बणि आवे सो॥ तथा साक॥ ४॥ कोहला को॥ अरइ को॥ तोरइ को॥ केला को। सधाना॥ ४॥ नीबू को टेंटी को केरी को आदी को॥ तथा कटोरी में बूरा धरें॥ ओर नित्य की रीति॥ जन्माष्टमी सतमी विधान करीये॥ सूर्योदय समये सप्तमी उदया दुदया प्रोक्ता हरिवासर वर्जिता॥ इति वाक्यात्॥

मध्य---

श्री गोकुल चन्द्रमा जी श्रावण कृष्ण॥ ४॥ हिंडोला वेटतहे॥ तातें वा दिन अभ्यंग कराइये॥ केसरी कुलही पिछोडा साडा प्रभृत॥ आभर्ण विसेस सिंगार भोग में सेव राखी॥ रायता॥ राज भोग में॥ सेव॥ वडा॥ तीन कूडा॥ मीठो साक॥ पूरी सीरो॥ सिखरन वडी॥ जलेबी॥ बूंदी॥ खीर सेवकी॥ मणिका की॥ चामर की॥ मुखाकेरी को भात दाल घोवा: समें भये भोग सराय आचमन मुख वस्त्र कराय॥ झारी भरि बीडा धरि आर्ती करीये ओर नित्य की रीती॥ संध्या आर्ती पोछें हिंडोला को अधिवासन करि कटोरी में मिठाई धरि। हाथ में अक्षत तथा जल लेई मंत्र पढीये॥ भगवनः॥ श्री पुरुषोत्तमस्य हिंडोलादि रोहणार्थं हिंडोलादि वासनं करिस्ये॥ अक्षत तथा जल भूमि में डारीये। हिंडोला भीतर गादी तकीया धरि झालरि लगाय हिंडोला सिद्ध कीजिये॥ फूलन

की झूंमर लगाईये ॥ ता पीछें प्रभू युग्म हिंडोला पर विराजे ॥ झारी भरि सीरामात्र भोग धरीये पर्में भयें आचमन मुख वस्त्र कराय झारी भरि वीडा धरि आरती करिये ॥

× × ×

वृस रासि को चंद्रमा आछो होय जा दिन ऊतरे ता दिन आर्ती होइ ॥

॥ इति हिंडोले को उत्सव ॥

अंत—

ए दोऊ लिखेला प्रकार सेवा करनी न करीये तो भक्ति मार्गीय प्रत्यवाइ होइ और लीलारस की प्राप्ति न होइ ॥ यह दुल्लभ पदार्थ अवस्य करनों अंगीकार भगवान कीये तब जांनीयें जो अन्याश्रयत असमर्पित छुटि जाई ॥ मार्ग में रुचि होई ॥ काहु के सिखाये बहकीये नही ॥ एसी द्रढता राखीये ॥ इति श्री चंद्रमा जी के घर की उत्सव प्रणालिका संपूर्णम ॥ संवत् ॥१९३१॥ फाल्गुन वदी ॥११॥ बुधवार कूं लिखी श्री गोकुल मध्यें श्री द्वारिकानाथ जी के मंदिर में वडी वेठक पास मोजीराम तिवारी ने जो वांचे तिन सवन कों जेसी कृष्णः श्री ॥ अब इनके घर के श्री गुसांई जी के जन्म उत्सव लिखत हें ॥ १ ॥ श्री मद् श्री वल्लभाचार्य जी को जन्म उत्सव संवत् १५३५ मीती वैसाख वदी ११ कुं जिनके पुत्र श्री गुसांई जी श्री विट्ठलनाथ जी को जन्म संवत् १······२ (? १५७२) मीती पौस वदी ९ श्री गुसांई जी के पुत्र श्री गीरधर जी संवत् १५९७ कातिक सुद १२ संवत् १६०··(? १६०१) श्री गोविन्द जी महाराज अघन वद ७ श्री बलकृष्ण जी त्रतीय पुत्र संवत् १६०१ मीती आसोद वदी १३ चतुर्थ पुत्र श्री गोकुलनाथ जी सवत् १६०८ अघेंन सुदी ७ पंचम पुत्र श्री रघुनाथ जी संवत् १६११ कार्तिक सुदी १२ सष्टम पुत्र श्री जदुनाथ जी संवत् १६१३ मिती चेत सुदी ६ सप्तम पुत्र श्री घनस्याम जी संवत् १६२८ कातिक दी १३ श्री रघुनाथ जी के मांथें श्री गोकुल चंद्रमा जी ठाकुर श्री रघुनाथ जी बडे संवत् १६११ बुध कातिक सुदी १२ श्री रघुनाथ जी के पुत्र श्री देवकी नंदन जी संवत १६३४ अघेन सुदी ७ कूं जन्म दिवस श्री देवकी नंदन जी के पुत्र श्री रघुनाथ जी संवत् १६६० श्रावण कृष्ण ११ अब रघुनाथ जी के पुत्र फेरि श्री देवकी नंदन जी मीती श्रावण सुदी १५ श्री विठलेस जी संवत् १७२० असाढ़ सुक्ला ३ गिरधर जी चेत सुदी २

विषय—

श्री वल्लभसंप्रदायांतर्गत चंद्रमा मंदिर के उत्सवों के नाम तथा उन्हें मनाने की विधि का वर्णन।

संख्या ३१६. उत्सव मालिका और सेवा प्रकार, कागज—देशी, पत्र—८६, आकार—६¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१०, अपूर्ण,

रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री कृष्णाय नमः

अथ उत्सव मालिका श्री गुसांई जी के वाक्य लिख्यते ॥

सप्तमी विद्धा जन्माष्टमी न करनी। सप्तमी को वेध सूर्योदय समे को मानीये। अष्टमी के दिन जो सूर्योदय सप्तमी होइ तो अष्टमी को उत्सव वृत न करीये। किंतु शुद्ध नवमी को करीये। और जो शुद्धाष्टमी घड़ी ६० साठ भइ हो तो पहिली ही करिये। और जो सप्तमी थोड़ी होइ। और पाछे अष्टमी होइ। और तृतीय दिन अष्टमी क्षय होइ। तबहू शुद्ध नवमी को व्रत उत्सव करिये। यह श्री महाचार्यन को सिद्धांत हैं। सप्तमी के दिन शयन भोग के साथ संधानो। हींग को सोंठि फेनी। बूरा। दूध इतनो समर्पनो। यह छोटे घरन की रीत हैं। श्री नवनीत राय जी के नहीं करीये तो बाधक नहीं। सप्तमी की पिछली रात्रि अष्टमी को सवारो रात्रि प्रहर रहे तब उठें।

मध्य—

॥ अथ राधाष्टमी प्रकार ॥

भाद्रपद शुद्ध अष्टमी राधाष्टमी कहीयतु हैं। ताको निर्णय जो राधाष्टमी विद्धा हू होई तो विद्धाहू उत्सव करीयें। याको विद्धा को विचार नांही। मंगलार्ती पाछें श्री स्वामिनी जू को कांसे की थारी में रोरी को अष्टदल पद्म पूरि पूर्व मुख पधराइ रोरी की टीकी करीयें। दूध शंख में मेलिकें न्हवाइये। पाछें अभ्यंग कराइये।

अंत—

विश्वास आदर पूर्वक राखें। अन्यमार्ग शंका नहोय पाछें जा भांति बणि आवें नाही भांत सेवा कर्तव्य जीव को धर्म सेवा हें सेवा बिना जीव कों और आश्रय नांही ताते द्रव्य को संकोच होय तो पत्र पुष्पादिक सों ही पुष्टिमार्गिय सेवा करै। वैष्णव संग राखे। वृथा काल व्यतीत न करै। इति सिद्धं ॥ इति सेवा प्रकार लिखतं वैष्णवदास छांगाणी जेठ मल श्री जोधपुर मध्ये ॥

विषय—

वल्लभ संप्रदाय में मनाये जानेवाले उत्सवों का तथा ठाकुर जी की सेवा के प्रकार का वर्णन किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। बीच के कितने ही पत्रे लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी ज्ञात नहीं। ग्रंथ रचना गद्य में है।

संख्या ३४०. उत्सव मालिका, कागज—देशी, पत्र—२७, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१२, पूर्ण, रूप—नवीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि -

श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीमन्मुकुंद रायो जयति। श्री मत्गोपाल लालो जयति। जन्माष्टमी सूर्योदय में सप्तमी तब विध्या भई तातें दूसरे दिन करें सप्तमी विद्धा कौ निषेध है तातें प्रथम भाद्रपद ६ जन्माष्टमी श्रावण सुदि ८ सूं ही ताल पखावज सों बधाई गवाइये प्रातः काल सप्तमी को वेध पल हू होय तो उत्सव नवमी के दिन करिये ता दिन प्रातः काल वेगि उठिनो। रात्रि कों श्री प्रभु जी कौ जगाइये मंगल भोग समर्पिये मंगला आरती करिये श्री प्रभु जी कों रात्रि कौ शृंगार होय सौ वड़ौ करिये पीरे पाट के धोती उपरमा पहिराइये श्री हस्तन में सोने के कड़ा और चरणारविंदन में सोने के घुघुरा श्री कंठ में तुलरी सोने की इतने आभरण हैं और नहीं।

मध्य—

अब अन्नकोट की विधि

प्रातःकाल श्री प्रभु जी कौं जगाइये हरड़ी को भोग सराइये मंगल आरती भये पीछे रात्रि को शृंगार बड़ो कीजै ता पीछें स्नान करवाइये दिवारी के दिन कौ शृंगार सब आज धारन करैं इमें न नहीं कुलही के ऊपर लाल जरी कौ तुररागो कर्णं इतनौं विशेष ता पीछे शृंगार होत होय तबहीं तें निज मदिर की तिवारी में बाहिर में अन्न कूट पूरवे को आरंभण करिये राजभोग में सेव खीर संजाव को बड़ा और सब नित्य कौ ता पीछें राजभोग धरिकें श्री गोवर्धन पूजा की सामग्री सब सिद्ध करिये।

अंत—

श्री बाल कृष्ण जी कौ उत्सव आश्विन वदी १३ श्री गोकुलनाथ जी कौ उत्सव मार्गशीर्ष सुदि ७ कौं श्री रघुनाथ जी कौ उत्सव कार्तिक सुदि ७ को श्री रघुनाथ जी कौ उत्सव कार्तिक शुक्ल १२ कौ श्री यदुनाथ जी कौ उत्सव चैत्र शुक्ल ६ कौ श्री घनश्याम जी कौ उत्सव मार्गशीर्ष वदि १३ कौ निज गुरुन कौ उत्सव होय ता दिन उत्सव कीजिये अपनौ जन्म दिवस तथा लड़कान कौ जन्म दिन होय ता दिन श्री ठाकुर जी कौं सामग्री भोग धरिये। इति श्री उत्सव मालिका संपूर्णम्

विषय—

वल्लभ संप्रदायानुरूप उत्सवों का प्रकार तथा विधि वर्णन की गई है।

संख्या ३४१. औषधि रोग निदान (वैद्यक ग्रंथ), कागज—आधुनिक, पत्र—६५, आकार—७'७ × ४'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११३८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—श्री० ठा० पूरनसिंह जी, गाँव—सोराँव, जिला—इलाहाबाद

आदि -

श्री गणेशाय नमः ॥

नारी का नाम इंगला, पींगला सुषमना
सीव सुत वंदौं नीतही सदा रीध मीध देही ॥
॥ कुमार ॥ कुमती विनासन सुमती कर मंगल मुदित गनेस
अलष अमूरती अलष गती कीनहु न पाए पार ॥
ओरी जुगल करक पी कहै ॥ देव देवी ॥ मत्तीसार ॥
वेद ग्रंथ सब मथी कै रचेव जो भाषा ध्यान ॥
अरथ देषाए परगटी करी औषदी रोग नीदान ॥
मम मती अल्प जो कहत हूँ
कपी मति प्रम अगाध .... ॥

मध्य—

बांझ का वियान है
ही काएत बांझ का ॥

एक रोज सलेमान पैगंमर वैठे थे ॥ तास जगह एक बांझ औरत आइ अरजी कीहीस जो सभको लड़का होता है हमको लड़का काहे न होता है ॥ तब सलेमान पैगंबर ने कहा तुम्ह सुनो हम परीवो को बोलावता है ॥ त मेहनर सलेमान ने गए परी सो पुछा बांझ को लड़का काहे न होता है ॥ तब परीओ ने कहा ए पैगंमर साहेव बांझ का सबब इआह है जो सात तौर का बांझ कास होती है ॥ सात रोग होत हौ ॥ नो लड़का कैसे होए ॥ तब पैगंमर ने पुछा इसका सबब आ गो कहो ॥ सात रोग सो बांझ होती है सो कहो ॥ इआह रोग कैसे मालूम होए ॥ तब परी ने कहा एक बांझ वआह होता है लड़काइ मे मरद के पास जाए रहीम उसका फूटे तीमको लड़का नहि होए ॥ दुसरा बांझ जानिए जीसके वोजुद में चरवी होए जो बुंद परें सो फज नहीं रहै ॥ कैसे लड़का होए ॥ तीसरी बाझ जानिये जीसका रहीम मो कीरा होए ॥ जो बुंद परें सो कीरा खाए लड़का कैसे होऐ ॥ चौथी बांझ जीसके वजुद में गरमी होए ॥ बहुत बुंद सो पानी होए लड़का कैसे होए ॥ पंचइ बांझ होति है जीसके वोजुद में सरदी हाति है जो बुंद परै सो रच जाऐ लड़का कैसे होऐ ॥ छठई बाँझि होति है जिसके वोजुद मे वावगोला होए जो बुंद परै सो डम जाऐ ॥ लड़का कैसे होऐ ॥ सातई बांझ वोग्रह होति है जीसके देव का धका होऐ ॥ दो महीना का अमल होए तब गाऐव होए ॥

अंत—

दवा पुस्ट का—गोषरू थांब मीलाइ के षाए ॥ चतुरदस रोज ॥ पुष्ट होऐ·········
दिन सात मै वेगी करै ॥ जी आ पोथी ॥ श्री राम

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'औषधि रोग निदान' है। इसमें चिकित्सा शास्त्र का वर्णन है। यह ग्रंथ यूनानी ग्रंथों के आधार पर लिखा गया है। इसकी रचना में क्रम अथवा संबद्धता का अभाव दिखलाई पड़ता है। 'औषधि रोग निदान' में वैद्यक विषय के साथ ही तंत्र का भी समावेश है। इसमें मोहन, मारण तथा वशीकरण इत्यादि के जंत्र भी दिए गए हैं।

ग्रंथ की विशेषता यह है कि यह अवधी गद्य में लिखा है। किंतु यह गद्य शुद्ध और परिष्कृत नहीं है। अवधी के साथ साथ खड़ी बोली भी मिश्रित है।

संख्या ३४२. काम रूप का किस्सा, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

ॐ श्री गणेशाय नमः

ॐ पोथी काम रूप का किसा लिष्या ॥

अलाही बाह काम कार है। दु आलिम का पैदा करनहार है ॥
न कोई करै तेरी कुदरत बहुआ। नही इलम तेरा किसी पर अहुआ ॥
दुजग मे सकल काम तेरा आपारा। अचंभा दिसा जग मैं तेरा भंडारा ॥
भंडारे सै तेरे जीते जीऊ जंत। न तेरे भंडारे का पाइआ है अंत ॥
सकल जीव डर सो तेरे कपे। तेरे इसक सो नाम तेरा जपे ॥
तुही इसक सो सभको पैदा कीआ। तेरी इसक नै सभ को सोदा कीआ ॥
कीआ इसक से राम सीता की चाह। धनष तोर सीता लिआए बिआह ॥
ये ही इसक से राने कृसन सुदामा। करै दीप पनघट मै हर सबे बीम ॥
वही इसक सै महा वेचैन है। मिहर का षियाल उसको दिन रैन है ॥
ये ही इसक से बातसाह अउधमुलक। कीआ जा अरज मे परी से सकल ॥
इही इसक जू सबसेजलीषा जीआ। जलीषा को कुरके से बाहर कीआ ॥
सबासाह महीमूद बाइजुनाज। हुआ इसको जो गुलामे अजाज ॥

\+ \+ \+

सुनो अब कथा इसक के नाम की। कुअर काम रूप अउ कला काम की ॥
अवधपुर गोरष मे था राजपत। कहै नाम उसका महा राजपत ॥
मुलक माल आमाल था बेसुमार। महलों बरंगी व जंगी नगर ॥
जुथा पृथमी मो सो सब थान था। मगर एक फरजंद उसके न था ॥
रहै राजपत नित इसी फिकर मे। कि होवै पुदा एक फरजंद मे ॥
महाराज इसी फिकर मै नित रहै। नाम यना मरम वहि किसी से कहै ॥
छै उसके मुसाहब छिओ बहु हुनर। रहैं नित, महा (रा) ज जी के मंदग (?र) ॥
अकलचंद था करमचंद नामे वजीर। सबे पूर हुनर इरदो अकलचंद बीर ॥
मिसर दूसरा था कवल रूप नाम। महाराज के पास रहिता मुदाम ॥
है था तीसरा पंडत गिआन वंत। अजारज कहे नाम उसका इंत ॥
चउथा रहे जउहरी पूर हुनर। कि हरि भ्रज बाहर प्ररषता नजर ॥
मुसाहब चतेरा हे पांचवो। करे चित्रकारी बहुत बेगुमा ॥
कलावत छटा नाम रस रंग था। कि हरदम महाराज के संग था ॥

मध्य —

व दरवेस आकर षरा जब हुआ। तब उसको करमचंद ने सब कहा ॥
कहा राजपति को येही है फिकरि। महाराज फरजंद पावै मगर ॥
मइआ करके दरवेस इसी वात मे। श्रीफल जंगल का ली हाथ मै ॥
दीआ तब करमचंद दीवान को। कि जादे महाराज पुर गिआन को ॥
वले कै श्रीफल खिलावै उसे। जु रानी महाराज के मन बसे ॥
पुसी हो करमचंद ने फल लीआ। महाराज के हाथ जाकर दीआ ॥
सुना था वचन वहि दीवान ने। कहा सब महाराज के सामने ॥
महाराज सब सुन के फल हाथ कर। पुसी हो गिआले महिल के भितर ॥
जपा नाम गुर का रषा मन मो आस। लिआ लेकर रानी सुंद्र रूप पास ॥
सुंदर रूप रानी थी सुंद्र बदन। मिला थां महाराज के मन सो मन ॥
महाराज नैं फल उसी को दीआ। सुंद्र रूप रानी नै वह फ (ल) लीआ ॥
सो फल रानी लेके असनान कर। रषा (?खा) नत अ ओलाद का धिआनकर ॥
वही फल दुरवेस नै था दीआ। वही फल रानी नै भोजन कीआ ॥

\+ \+ \+

अजब राजवंसी है राजा सपूत। रषा नाम उसका कुअर कामरूप ॥
मगर एक दिन का जु षतरा हुने। कि सूरत किसी को दिल इसके बसे ॥
वही एक बारहि (बरस का घरी। कठन है कुअर को आकर परी ॥
दुअदश बरसै कुअर काम रूप। करै हाल अपना बिउगी का रूप ॥

\+ \+ \+

कीआ चाव मै सैर जिस बाग का। बैथा बाग रानी कला काम का ॥
अवधपुर में था बहुत दिन का जुराह। कुअर ने कीआ चाव मैं सैर गाह ॥
कुअर काम सुपने में हैदर चिमन। सुनो अब कला काम के जो बचन ॥
पिता सा कला काम का कामराज। करे सभ सरन दीप मे राजकाज ॥
उसे कनिआ थी येक परवार मै। पिता निकला से रहे पिआर मे ॥
कला बिन न छरजंद (?फरजंद) दूज उसे। नवासा जुदा था सु दिलबंद उसे ॥

+ + +

सुलछनी थी पदमनी थी एक अंग। चित्रनी सी चेरी रहे एक संग ॥

+ + +

सुकचिती चले चाल जब पग उठा। बजै पग मै घू (घ) र महल झनझना ॥
भरे हाथ महदी लगा लाल लाल। भरे केस मोती लगा बाल बाल ॥
दुननो मे काजल दीआ मन हरंन। कहा न आवै उसके मष की बरंन ॥
दुरूष सारस उसंनदु हंम मिले सेव। भरा सहद चाह जक नहि हुआनसेव ॥
सूआ नासका कारंक जिउ को कल। पंजन की सी नैंन हंस का गल ॥
कमर संघ की सी व ए गति गहंद। न जाने कपट भेद दुनीआ का छंद ॥

+ + +

सरज देष सूरत सदा ब्रषरात। चंद्रमा बदन देषकर मुष छपात ॥
सहेलीआ सभी संग मे नित रहे। कला काम रानी ओसे सभ कहे ॥

अंत—

रहो घुस से घुस होके अपने नगर। करो राज अब बैठ के बिफिकर ॥
कर इसक हक इस तरह जो कोई। नहीं इसक इआंह की जो अउलीआ चही ॥
मुकरर हो मिहनत से राहत मिले। दरी नेक बपनीव हितारत घुले ॥
धरूदबर महंमद कहो हर का दाम। हुआ ढजलहक का ऐह किसा तमाम ॥

॥ समापतं ॥

॥ दोहिरा ॥

अवधपुरी मे राजपत महाराज जिस नाम।
यंको (? उनको) सुत भइओ कामरूब हु सुंदर सुषधाम ॥

॥ चौपाई ॥

कुंअर काम रूप अछे यार। देषत बाग चिमन भइआ निज मंदर ॥

× × ×

तब[१] फिरगिओो रावता मंदर । पव एक मैं निकला[१] मुंदर ॥
आगे लै गई परी उडाइ । फिर फैंकिठ तिन पतथमाहि ॥
ससम पैर के फिरइ था आइआ । मास दुवादस असब कहइआ ॥
फिर आओो सरन दीप मौ । जइ बिआहन रानी सौ ॥
इति श्री पोथी कला काम का कुअर काम का विरहो की केसा समाप्त ॥

विषय—

अवध गोरखपुर के राजकुमार और सरन द्वीप की राजकुमारी काम कला की प्रेम कथा का वर्णन किया गया है । कथा का सार नीचे दिया जाता है :—

अवध गोरखपुर के राजा महाराजपत को एक दरवेश की कृपा से एक पुत्र हुआ । उसका नाम कामरूप रखा गया । ज्योतिषियों के कथनानुसार उसके भाग्य में बारह वर्ष की अवस्था में एक विपत्ति का योग लिखा था जिसके अनुसार उसे वियोगी बनना था । निदान वह समय आने पर राजकुमार को एक स्वप्न हुआ जिसमें उसका प्रेम सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला से हो गया । स्वप्न भंग हो जाने पर भी उसका प्रेम नहीं छूटा । स्वप्न की राजकुमारी काम कला के बिना उसे जीवन भार सदृश लगने लगा । बहुत उपचार किया गया, परंतु सब असफल रहा ।

उधर सचमुच में सरनद्वीप की राजकुमारी कामकला की और उसकी भी वही दशा थी । सुमित नाम के अपने प्रोहित को उसने राजकुमार कामरूप को खोजने के निमित्त भेजा । भाग्यवश सुमित ब्राह्मण की भेंट राजकुमार से हो गई । राजकुमार को सुमित द्वारा कामकला का वास्तविक परिचय मिला । वह अत्यंत प्रसन्न होकर अपने छः मित्रों तथा उस पुरोहित के साथ सरनद्वीप को चला । जहाजों द्वारा वे सरनद्वीप के निकट पहुँचे ही थे कि यकायक समुद्र में भयानक तूफान उठा और जितने जहाज थे सब डूब गए । राजकुमार कामरूप तथा उसके मित्र और सुमित पंडित डूबने से तो बच गए, परंतु साथ न रह सके । सब एक दूसरे से अलग होकर समुद्र में बहने लगे ।

राजकुमार किसी प्रकार बचकर एक द्वीप में आया जहाँ वह रानी रावता के बंधन में पड़ा । वहाँ से किसी प्रकार छुटकारा पाया तो एक परी उसे ले उड़ी और कोहकाफ पर्वत पर ले गई । वहाँ से भी निकला तो ससम पैर नामक जंतु के अधिकार में आ पड़ा । इस प्रकार राजकुमार को बारह मास तक विकट कष्टों एवं कठोर दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा । पश्चात् उसे वह दरवेश मिला जिसकी कृपा से उसका जन्म हुआ था । उसकी सहायता से उसका भाग्य पलटा । उसको एक एक करके सभी मित्र मिल गए तथा सुमित प्रोहित भी बच निकला । इनके साथ राजकुमार फिर सरन द्वीप को चला । वहाँ पहुँचकर कुछ कष्ट झेलने के उपरांत कामकला से उसका विवाह हो गया । अपने छः मित्रों में से प्रधान मित्र मित्रचंद का भी विवाह कामकला की सखी कामलता से जो दीवान की पुत्री

थी, कर दिया। इस प्रकार सफलता प्राप्त कर कुछ दिन सरनद्वीप में रहकर राजकुमार मित्रों सहित तथा कामकला और कामलता को लेकर अपने देश को वापस आ गया।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत प्रति के पत्रों के क्रम में गड़बड़ है। पत्र संख्या १० के पश्चात् २१ से लेकर ३० तक के पत्रे हैं तथा ३० के पश्चात् २१ से लेकर २० तक के पत्रे हैं। शेष क्रम ठीक है।

संख्या ३४३. काव्य प्रकाश, कागज—बाँसी, पत्र—२, आकार—७½ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान -आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः

॥ दोहा ॥

विघ्न हरण तुम हो सदा ॥
विघ्न हरण तुम हौ सदा गणपति होहु सहाइ।
विनती कर जोरै करौं दीजे ग्रंथ बनाइ ॥ १
जिहि कीन्हौ परिपंच सब अपनी इच्छा पाइ।
ताको हौं वंदन करौं हाथ जोरि सिर नाइ ॥ २
करुणा करि पोषत सदा सकल सृष्टि कौ प्राण।
ऐसे ईश्वर को सदा रहौ रैनि दिन ध्यान ॥ ३
मेरे मन में तुम रहौ ऐसी क्यों कहि जाइ।
ताते यह मन आपु सों लीजे क्यों न लगाइ ॥ ४
यह अचरज उज्जल भयो तज्यौ मैलि तत्काल।
रागी मन मिलि स्यामु सों भयो न गहिरो लाल ॥ ५
अथ चतुर्विध नायक वर्णनम् ॥
एक नारि सों हित करै सो अनुकूल बखानि।
बहु नारिन्ह सों प्रीति सम ताको दक्षिण जानि ॥ ६

मध्य—

जाको पति आधीन है स्वाधीनै पति काहि
मोर सुनै सिय को गमन प्रोषित पतिका आहि। १९
आयो पति जु बिदेश ते आगत पति का आहि
खेलनि बिहँसनि सखिन्ह में फिरि फिरि करत उछाहि। २०
अथ वक्रोक्ति गर्विता वो अन्य संभोग दुःखिता वर्णनम्।
प्रेम रूप अभिमान ते द्विविध गर्विता जानि
अन्य संभोग दुःखिता अनत मिलन पति मानि। २१

अथ धीरादि भेद

गोप कोप धीरा करै प्रगट अधीरा कोप
लक्षन धीर अधीर को प्रगट कोप अरु गोप । २२

अंत—

व्रीड़ा जड़ता हरष धृति मति आवेग बखानि ।
आकृति गोपन चपलता अपस्मार भय जानि ॥ ४१ ॥
उत्कंठा निद्रा स्वपन बोध उग्रता आइ ।
व्याधि विषाद वितर्क म्रिति ए तेंतीस गनाइ ॥ ४२ ॥
इति श्री काव्य प्रकाश पूर्ण शुभमस्तु ।

विषय—

ग्रंथ में नायका भेद वर्णित है । अंत में स्थायी, संचारी आदि भावों का वर्णन किया गया है । पूरे ग्रंथ में ४२ दोहे हैं ।

संख्या ३४४. किमियासार, कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—८½ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८३७, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२=सन् १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

॥ ॐ ॥ श्री शंकर्शणायनमः ॥

अथ ग्रंथ किमियासार लिख्यते ॥ वचनिका ॥

तातैं जाणि तू जो जग्यासी की आदि अवस्था पाप हू का त्यागु है ॥ अरु धरम मारग विषै सर्व मानष हूं कुं अवसमेव त्याग की अपेछया होती है । काहें तें जो यहु मानष विथ में ही निहपाप नहीं होता ॥ जो केवल निहपाप अरुनिर्मल देवते कहे है ॥ अरु सर्वथा पाप रूप असर है ॥ तातें प्रसिध हुवा जो भगवत के भै करि कैं पाप हू का त्याग करणां ॥ मानष हीं का अधिकार है ॥ अर सर्व आरजा प्रजंत पापहू विषै असकति (? आसक्त) रहणां असरहू का लछिन है ॥ सो जिस पुरष ने पापहू की मनसा का त्याग कीया है ॥ अरू ········हुवा है । सो उतम मानस वही कहीता है ॥ अरु प्रिथमैं इस जीव की उतपति नीच अर मलीन है । इस कारिकै जो आदि उतपति बीये भगवत ने इसके ऊपरि भोगहू कूं प्रेर्‌या है ॥ अरु भोग हू का सब निर्मल बुधि है ॥ सो पीछे किसोर अवस्था ···

\+ \+ \+

तब इस जीव कू अवसमेव भोग हू के । त्याग अरु पुरषारथ की अपेछया होती है सो । तिस करि वै रूपी गढ कूं सत्रहू ते छुड़ाया चाहता है इसी कारन ते कहा है । जो

प्रिथम सर्व मानव हू का अधिकार पापहू का त्यागु है ॥ अरु जग्यासी की आदि अवसथा इही है ॥ सो त्याग का अर्थ इह है जो असुभ मारग की वोर ते आपने मुष कूं फेरना ॥

मध्य-—

अरू इस संसार बिषे भगवंत की प्रिति अरु पिछांणि कूं प्रापति कीया है सो तिनकूं परलोक विषै भगवत ऐसा प्रभु सुष देवैगा जो माया के सुष श्रव भोग इस सुष के षिणि समान भी न लागें होंगे काहे तें जो वहू आत्म सुष ऐसा अपार है जो उस सुष के समानि कोइ सुप अरु कोई दिष्टांत नही·संभवता इस करिकैं जो वहू आत्म सुप श्रव सुषहू का सार है जैसे कोई जवारी पुरष कहे जो रतन का मेल महोर है तब उस रतन का तोल अरु अकार तो सो महोर के समान नहीं होता परु उसके कहणें का अरथ इह है जो वहू रतन महोर के सोने अरु रूपे का सर है तसैं ही इंदी ादिक सुष हू तें आत्मसुष की अधिकता ही है सो मजादा अरु अकार करिकैं नही कही परिहू आत्मसुष श्रव सुषहू का सार है तातै उसकी आदिक वरनन कीया है १०

इति दसवा सरग ॥ १० ॥

॥ अथ ग्यारहवां सरग ॥

अथ प्रगट करणां भेद वैराग की अवस्था का तातैं जाणि तू जो वैराग कीया तीन अवस्था है सो प्रथम यह है जो जिसने स्थूल माया का त्याग किया है अरु चित्त विषै माया कूं रमणीक जांणता है परू जतन अरू हठ करीकैं अंगीकार नहीं करता सोतिसकूं कनिष्ठि बैराग कहीता हैं बहुरी दूसरी अवस्था इह है । जो चित विषै माया कूं रमणीक नहीं जानता पर अपणें बैराग कूं बसेष समझता है जो मैंने बड़ा बैराग कीया है सो मधिम अवस्था कहीता है तातें चाहिये जो वैराग तें भी बेराग होवे अरथ यहे जो अपणें बैराग कूं विसेष जांणि करि अभिमांनीं न होवे ।

अंत—

अर चित विषे कोई अवर वचनौं कौं बिचारता है तब उस प्रथम बचन के अर्थ तें दूरी पड़ता है बहुरि एक अवर सांई लोक ने भी कहा है जो जब भजन अर पाठ विषें मुजकू कोई विवहार का संकलप फुरता है तब मैं उस संकलपौं ते अपणां मरणावसेष जानता है ताते इस पुरुष कौं चहिता है जो जब किसी बचन का पाट करणे लागै तब चित विषे अवर फुरणौं न देवें जदिप्प संकलप साति की (? सात्विकी) होवै तऊ भी उसकू विसारणां बिसेष है तातैं चाहिये जो भगवत का भजन का पाठ करणें लागै तब इस प्रकार बिचार करैं सो इह महाराज सरबतें निरलेप है अर संकलप तें परं हैं अरु सबनौं के समृथ हैं अरप सरबेता है बरम न होवें तब महादीनता कूं ग्रहण करै अर जाणैं जो महाराज की असतूति अर बडाई के बरनन करणे की मेरी बुधि ही नहीं तातैं लजामान होकरि अस्तुति करै इसी परकर सरब

बचनूं के अनुसार चित की अवस्था कूं बधावैं बहुरी छठवी जुगति यह है जो बचनौं बिषै यस प्रकार प्रतीति करै जो यह बचन मैं भगवंत के मुष तैं सुनता हूं इसी पर एक संत जन ने कहा है जो आगै मोकूं बचनौं के पाठ का रहस्य न आवता था तब मैंने यस प्रकार प्रतीति करी जो मैं यह बचन महापुरषौं के मुष तैं सुनता हू तब मुझकूं रहस्य आवणे लागा बहुरि मैंने यस प्रकार चिंतवनां करी जो मुझकूं यह बचन अकाम बांणी होती है तब मैं उसतैं भी अधिक रसकूं पाया बहुरि मैंने ऐसे भावनां करी जो यहु बचन मुझकूं भगवत ही पढ़ा कहता है तब मैंने ऐसा परम आनंद रहसि पाया जो उसका बरनंन नहीं कीया जाता: ॥ १ ॥

इति पाठ बरनन समापत: ॥

इति श्री कीमीयासार के सरग संपूरणं ॥ मिती आसोज सुदि ५

विषय—

आध्यात्मिक ज्ञान का वर्णन किया गया है। ग्रंथ की रचना सर्गों में हुई है, परंतु लिपिकर्त्ता ने यथास्थान सर्गों का क्रमानुसार उल्लेख नहीं किया। बहुत ही कम स्थलों पर तथा दूर दूर सर्गों तथा प्रकरणों का उल्लेख किया हुआ मिलता है। विषयानुसार जिन जिन सर्गों तथा प्रकरणों का नामोल्लेख मिल सका है वे अधोलिखित हैं :—

१—जिज्ञासी की आदि अवस्था पत्र १

२—प्रगट करणी उत्तम तनि त्याग की प्रगट करणी अर्थ त्याग तथा ममोषि परकरण (मुमुक्षु प्रकरण) पत्र २ से १५ तक

३—इकांत सतसंग की सरग पत्र १५ से ४५ तक

४—प्रगट करणी संगति के गुनहूं का भेद पत्र १५ से ४५ तक

५—मानसी नरकहू का वर्णन पत्र ४५ से ५७ तक

६—प्रगट करणी भेद बैराग की अवस्था का पत्र ५७ से ६१ तक

७—प्रगट करणी मरज बैराग की पत्र ६१ से ६८ तक

८—भजन को प्रकरण पत्र ६८ से ७६ तक

९—धर्म मारग की जुगति वर्णन तथा भले सुभावहू (स्वभाव) का वर्णन पत्र ७६ से ८६ तक

१०—अधिक बोलणे का वर्णन तथा रसना विषै नाम सरग पत्र ८६ से १२१ तक

११—पोथी का पाठ पत्र १२१ से १२९ तक

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ खंडित है। संख्या २५, ६७, ३२, ९०, ९१, १०५, ११६ तथा १२७ के पत्रे लुप्त हो गए हैं।

हस्तलेख पत्राकार रूप में है। यह अरबी फारसी के किसी ग्रंथ का अनुवाद ज्ञात पड़ता है। नाम से तो प्रकट होता है कि यह रसायन विषयक रचना है। परंतु ऐसा न होकर यह अध्यात्मविषयक उत्तम ग्रंथ है। इसकी भाषा आरंभिक खड़ी बोली है। समस्त ग्रंथ गद्य में है। इस दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण है। भाषा में पंजाबी और राजस्थानी ध्वनियाँ मिलती हैं। इस प्रकार की भाषा के ग्रन्थ पंजाब, राजस्थान तथा काश्मीर की ओर के लिखे हुए प्राप्त हुए हैं। प्रस्तुत रचना में यद्यपि रचनाकाल नहीं है तथापि लिपिकाल संवत् १८७२ दिया है।

संख्या १४५. कुरसीनामा (केवल एक जीर्ण पत्र), कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१६'८×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनीटोला, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री जी ॥

कुरसीनामा गुसाई श्री हरिवंश जी के वडे पुत्र वनचंदजी तिनके पुत्र सुंदरवरजी तिनके वडे पुत्र दामोदर जी तिनके वडे पुत्र रामदास जी तिनके वडे पुत्र कमलनैन जी दूसरे पुत्र विहारीलाल जी तीसरे पुत्र कुंजलालजी ये तीन पुत्र रामदास जी के भए तिनमै वडे कमलनैन जी कै पुत्र नहीं भए तव साठ वरस की उमर में अपनी दोनों इस्त्री भागमती मानकौंर की सलाह ले कै वृजवाल जु विहारी लाल के वेटा भतीजे लगते हे सो गोद लीने और माल मिलकीयत अधिकार उर सातर का सबके मालकि कीने। कुंजलाल तीसरे भाई छोटे कमलनैन के थे तिनके पुत्र हरलाल भए तिनके पुत्र रूपलाल तिनके पुत्र किशोरीलाल तिनके रसिकानंद भए। और वृजलालजी जो विहारीलाल के पुत्र कमलनैन जी नैं गोदी लीये वेटा कीये तिनकैं सुंदरलाल भए सुंदरलाल के तीन पुत्र वडे चंदलाल दूसरे ललितलाल तीसरे दयालाल तिन तीनों में चंदलाल वडे थे तिनके पुत्र श्री कीरतलाल जी तिनके गु० चतर सिरोमणि लाल जी मौजूद है मिलक अधिकार के कागद पत्र अमल दखल सब हाजुर हैं और अधिकार श्री जी को है॥ सो गुसाई श्री हरिवंश जी तैं ले कै आज तांई बड़े पुत्र कूं हो तो आयो है या वात की लिषन सौगंद सह है। छोटे को वंश होइ ताको दायो नहीं तावेदारी गादी की करवो करै।

—पत्र पूर्ण रूप से उद्धृत है

विषय—

इस प्राचीन पत्र में श्री हरिवंश जी से लेकर गो० चतुर शिरोमणिलाल जी तक की गद्दी के अधिकारी गोस्वामियों की वंशावली है।

विशेष ज्ञातव्य—प्राप्त प्राचीन पत्र का वंशवृक्ष इस प्रकार है :—

- श्री हरिवंश जी
  - वनचंद जी
    - सुंदरवर जी
      - दामोदर
        - रामदास
          - कमल नैन — निस्संतान इन्होंने विहारी लाल के पुत्र व्रजलाल को गोद लिया
            - व्रजलाल
              - सुंदरलाल
                - चंदलाल
                  - कीरतलाल
                    - गु० चतुरशिरोमणि लाल जी
                - ललितलाल
                - दयालाल
          - विहारी लाल
            - व्रजलाल (गोद कमलनैनजी के)
          - कुंजलाल
            - हरलाल
              - रूपलाल
                - किशोरी लाल
                  - रसिकानंद

लिपिकाल नहीं दिया गया है।

संख्या ३४६. कुसुमाञ्जली, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१०×७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३; परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

केवड़ा में केसव राय, गुलाब में गोपाल लाल।
मोगरा में मदन मोहन प्यारी छवि देत है।
करुणा में कल्याण राय, चंपा में चतुरभुज।
पाडल में परब्रह्म व्यापक मनेत है।
केतकी में कनैया लाल, बवलसरी में बद्रीनाथ।
कमल में जु कमल नैन कमला समेत है।
कदंब में करुणाकर, केसर में कृपासिंधु:
जाव मांझ श्याम राय जग कूं सुख देत है।

अंत -

मालती में मनोहर दाउदी में दामोदर।
पेचे परमेश्वर के आनन्द निकेत हैं।
माधवी में माधव जी, मजयागार मधुसूदन।
जूही में जगन्नाथ वांछित फल देत है।
मोतिया में मुकुन्द प्रभु, अमर में अखंडाकार।
गुलसोसन गोविन्द लाल छापे कर हेत हैं।
चमेली में चीर हरन सिहूंज में सिरोमन स्याम।
सेवंती में सीताराम सबको रस लेत हैं।
संपूर्ण ॥ (आगे प्रस्तावित ४ सवैये हैं)

विषय —

पुष्पों के नामोल्लेख करते हुए उनके प्रथम अक्षरों से निर्मित होनेवाले भगवत्‌नामों का वर्णन किया गया है।

उदाहरण : —

केवड़ा के 'कं' को लेकर केसवराय, गुलाब के 'ग' को लेकर गोपाललाल आदि। संभवतः पुष्पों के ब्याज से भगवत् नाम स्मरण करना उद्देश्य है।

संख्या १४७. कृष्णलीला, कागज—देशी, पत्र —२२, आकार—९ × ८½ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ —१०, परिमाण (अनुष्टुप्) —१००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी लिपिकाल—सं० १७९७ जेठ सुदि ४ रविवार, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि -

श्री गणेशाय नमः

श्री कृष्ण जी की लीला लिख्यते ॥

श्री वृंदावन विहार जांन उजेण को वास छांडी इसडी घन रविसुर की माता पुनमासी जी वृंदावन में वास करन आई, वेटो एक साथ ले आई, ताको नाम मधु मंगल हो, सो श्री कृष्णजी को ग्वाल भयो, सो उनके साथ फिरे, गऊ चरावे, श्रीकृष्ण को हँसावे खिलावे ॥

अंत —

श्री गोरधन परबत पर चढे राधा जी अपनी सखीयन में आई, अर अपनी अपनी मटकियां सिरपर धरी सखियन सहित घर कूं चली, तब पेंडा बिच मुखरा (राधा की माता) मिला, तब मुखरा सब सहेली समेत श्री राधा जी की बाँह गही ने घर कूं ले चली, इहां आनी अब नीको भोजन करायो ॥

इति श्री माधो श्री राधा को ललिता बिलास रस हेत संपूर्ण। श्री रस्तु—संवत १७९७ रा जेठ सुदि ४ रविवासरे लिखितेयं पुस्तिका श्री जोधपुर मध्ये ॥

विषय—

ग्वाल मधुमंगल और राधा सहित कृष्ण लीला का वर्णन।

संख्या ३४८. कोकशास्त्र, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०३ वि०=सन् १७४६ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्रीयुत परमेश्वरीलाल गुप्त, सद्रावती आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ [ ]० ॥ अथ भाषा कोक लिख्यते ॥

श्री रणथंभौर नगर तहा राजा श्री भैरवसैन राज करै तिह राजा कै अनेक कोठार भंडार छै तिह राजा कै प्रधान उजीर ४०० च्यारि सै छै राजा सात छत्र धरावै छै उजीर महाविचक्षण छै उजीरा का नाव। हंस सोम १ मदन २ कामराज ३ पद्मसेन ४ सूर्यसेन ५ चंद्रसेन ६ कोकदेव ७ काममोह ८ हंसराज ९ बुधिसेन १० इत्यादिक उजीर सै च्यारि छै। तिह राजा कै स्त्री ७०० छै बड़ा राजा की बेटी छै त्यांह माहे दस पाटराणी छै त्याका नाम। चंद्रावती १ कामसेना २ पद्मनी ३ कामकंदला ४ कोकसेना ५ कर्णलोचना ६ हंसावली ७ हंसगमनी ८ कामलहरी ९ चंद्रावली १० ए दस पाटराणी छै राजा बहुत कामी सर्व काम कला को जाणणहार छै स्त्री महा चतुर छै। राजा भैरवसेन राज काज उजीरा ने सौंप करि आप राण्यां सु विलास करै छै बेटा नै राज भार मे राख्यौ छै। एक समै राजा दरीषानै आयौ सगलाही उजीरा जुहार कियो। राजा कोकदेव ने कह्यौ तू परदेसि जाइ भली स्त्री ल्याव टका कोडि ५ ले जाउ अर स्त्री ल्याव बरस १६ को सर्व कला की जाणणहार अति चतुर ल्याव। पछै कोकदेवनै चलाइ करि राजा गैर महल हुवो पछै कोकदेव दषण जाइ करि सोरठ गयो तिहा भली स्त्री बरस १४ की लीन्ही तिहसुं कोकदेव वीलास कीयो टका कोडि ५ तिह सुं षाया।

मध्य—

इतनै पूरव दिशा थी जोगनी १ आई तिह को नाम पषणी बरस १६ की अति सुंदर छै महास्वरूप चतुर छै। सो जोगनी राजा भैरव सेन की सभा माहै आई नग्न होइ उजीर ही राजा अचंभे रह्यौ सभा सगली माहे हाहाकार हुवो पछै राजा भैरव सेन आपना उजीर बुलाया त्यांह उजीरा नै कह्यौ इह नै पूछौ तू कुण छे तव वाह पूछी जब कह्यौ हुं पंषिणी जोगणी छुं। हुं नगन इतरा कै वासते हुई राजा भैरवसेन वडो राजा पणि राजा की सभा माहि कोई पुरुष दीसै नहीं राजा आदि देकरि सगलो स्त्री देषुछुं पणि पुरुष कोई देषुं न छु पछै उजीरा इ राजा आगै सगली बात कही राजा पीउसी पछै अंतेवर माहि गयो राजा नै अति चिंता उपनी राजा ने राणी पूछ्यौ महाराजि कौण चिंता छै। राजा कह्यौ कोई

नहीं। दूजै दिन राजा दरीखानै सभापूरि बैठो गाममाहे ढंढेरौ फिरायो ज कोइ पुरष पंषणी जोगणी नै जीतै तिहनै कोडि १ टका द्यौं अर उजीर करूं। सो श्रबै गाम वासणी जोगणी आइ राजा......

अंत —

स्त्री की योनि मांहि एंद्री घालि अर पेडु उपरि हाथ म्हेलिह अर हथेली सुं पगवि हलावै ते पेट कासन ५६ योनि पूरी संग करै ते इंद्री थोभी रहै ते जोनि स्तंभासन ५७ संग करता स्त्री इंद्री देषै ते दृष्टासन ५८ चत्रठामि राषि दोइ हाथ धरै ते भद्रासन ५९ वलाका......करै ते विकटासन ६० पग दोनु उंचा राषि पग का अंगूठा गला माहि राषि संग करै ते मुकुटासन ६१ पुरष नै सुवाणि उपरि ममरी षाइ ते जुरासन ६२ परेवा की नांई संग करै ते परेवासन ६३......संग करै ते चिडकलासन ६४ मृगासन ६५ सिंहासन ६६ गजासन ६७ शुकासन ६८ अश्वासन ६९ गरुडासन ७० हरिणासन ७१ पालीत लै म्हेलिह संग करै ते पुरकासन ७२ कोकिलासन ७३ हंसासन ७४ कछिवासन ७५ ईश्वर पार्वती की नांई संग करै ते रुद्रासन ७६ कृष्ण राधा की नांई संग करै ते भैरवासन ७७ आसन ७ अगोप्य छै। प्रगट नही ८ ए चोरासी आसण करया। कोकदेव कहै ज को नर चतुर विचक्षण चौरासी आसण जाणे अर करै ते मनुष्य स्त्री ने जीतै महासुष पावै। कोकदेव परोपकार कै वास्तै कोक शास्त्र कीयो। इति श्री भाषा कोकशास्त्रं संपूर्णं ॥ संवत् १८०३ वर्षे आषाढ़ मासे कृष्णपक्षे पष्ठम्यां लिखितं तक्षक नगरे पंडित जी श्री चोषचंद्र जीत छात्रेण रायचंद्रेण ॥

विषय —

कोकशास्त्र का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य — ग्रंथ अपूर्ण है। १९ पत्रों में से केवल ९ पत्रे वर्तमान हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८०३ वि० दिया है।

यह ग्रंथ कोकदेव कृत कोकशास्त्र का हिंदी अनुवाद है। अनुवादक का नामोल्लेख ग्रंथ में कहीं नहीं हुआ है। अनुवाद राजस्थानी गद्य में है। इस दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। लिपिकाल संवत् १८०३ है। अतः अनुवादक का समय इससे पुराना अवश्य होगा।

संख्या ३४९. कोक स्वरोदय वैद्यकी, कागज — देशी, पत्र — ११६, आकार — ५¾ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) — ७, परिमाण (अनुष्टुप्) — १३२९, अपूर्ण, रूप — पुराना, गद्य, लिपि — कैथी, लिपिकाल — १८७४ वि० = सन् १८१७ ई०, प्राप्तिस्थान — परमहंस निर्भयराम जी, संस्कृत पाठशाला, बीबीपुर खुटौली, डाकखाना — कप्तानगंज, जिला — आजमगढ़

आदि —

......मी आर्द्र एक चादर भरी अगर मीमी आर्द्र नहीं मिले तब दुनो चीज एक

जगह मीलाए क रोजीना पीए ॥ जतना मनीष पकरे शो भरी जाए ॥ मोकरर षाहनषाह ॥ १६ ॥

× × ×

॥ दवाई पेशाब जलका ॥

काशनी छव दमरी भरी शौफ छव दमरी भरी धनीया छव दमरी भरी शपेद जीरा छव दमरी भरी वंडी लोनी छव दमरी भरी वलभा षीरा के बीआ छव दमरी भरी ई शभ दवाई कै मेदा बनावे शकर मीलावै वाशी मुह षाए तव आराम होए ॥ ४४ ॥

॥ दवाई पेशाव जलन का ॥

वाशी पानी दुइ शेर गाई के दूध दुई शेर दुनो मीलाए के रोजीना पीए शातए रोज आराम होय मोकरर ॥ ४५ ॥

॥ दवाई ढांकी का ॥

जव गीडुरे एक पैशा भरी तुतीया एक पुट आतो मीती शोपारी एकठो पपरा पेर दुई कौडो भरी इ शभ चीज लोहा का बरतन मो जुदा जुदा पीश देव करें तव एक जगह मीलावै तव एक दिन मे पांच बेरी घाव पर लेपन करे तब आराम होय मुकरर फजल षोदाएक ॥ ४६ ॥

मध्य—

॥ अथ छाया पुरुष भद्र रूप दरशन ॥

फलाफल काल ज्ञान ॥

दोहा

गरदन को छाआ नीरषी द्रीडरो जव अइथीर लेषे ।
नीरमल नभ दीशी ताकी के एकर रूप की देषे ।
शफत शेत दीश दीन मे श्यामो वीप्र रंग रोग ।
वाम वाहु नहो शीशा नही दहीने वंधु वीयोग ॥
वोदर फीही कमर चरनन ही वंधे दोए एक शाथ ।
शीर नही माश में मरन होए जंघ आठही शाथ ॥
कवीत्य ध्यान मरन बुझे के ॥

कर पलव शीर पर धरी पउचा को नीहारे मोट दरशे तव मरन नगीच यो पानर देषी फल वीचारे फर्क शक शे चंद्र वढे शुभ एकर शक रवी भवन बचारे पात तीनी दीन वढे वीनी कम छव माश में काल पुकारे ॥

॥ शरोदए मत समाप्त ॥

अंत—

॥ काश्रा कल्प ॥

तेल माल टागुनी का एक शेर घीव गाए कै एक शेर दुध गाए के पाच शेर शहत एक सेर शभ को मीलाए के लोहा का कराही मो करकें पकावें आंच आशते आशते शभ शुषी जाइ हलुआ होइ शाफ वरतन मो धरी के पहीला रोज आधी दमरी भरी दुशरा रोज एक दमरी रोज वढावें आठ रोज में पैशा भरी होए छत्र महीना षाये वादी तुरशी परहेज रहै शभ नव कलप होए ॥

इति श्री कोक शरोदए वैदकी जात्रा काल परीष (? परीछा) शपुरन पोथी लीषावन वावु दरशन सींघ लीषन शुदी दाश ॥ शा० वनकट प्र० वंशंशी तालुके श्री० बावु जै प्रगाश शाही जी० प्रगाश शाही जी प्र० शन बारह शौ पचीस शाल मीती कातीक शुदी तीजो रोज मंगर शमत अठारह शौ चौहतरी ॥ (१८७४)

—अपूर्ण

विषय—

स्वरोदय के अनुसार वैद्यक, यात्रा और कालज्ञान का वर्णन किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। आरंभ के ११ पत्रे नहीं हैं। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८७४ है। ग्रंथ गद्य में लिखा हुआ है और इसकी भाषा खड़ी बोली का रूप लिये हुए है।

संख्या ३५०. कौतुक चिंतामणि, पत्र - २८, आकार—३·३ × ६·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हिं० सा० स०, प्रयाग

आदि—

···॥ अथ लोम पातन विधि ॥
सात भाग चूने के लीजै एक हरतार मिलावै ॥
कार्जी के र (स) सेती घोलै घोरि बार पर लावै ॥
रहै न रोम जहा लगु लागै फिरि कै रोम न आवै ॥
बार बार मुंडन ते छूटै अैसा जतन जो पावै ॥

मध्य—

॥ अथ पुरुष स्त्री काम वढै ॥
आनै वीर वहोटी चुनि कै चूरन करै जो कोई ॥
घोरि महाउर पानी काढै पीसि जो होई ॥
पीसि वीर वहोटी लै करि वाती करियै सानि ॥
गाइ घीउ सरवा भरि कै दिया जलावै आनि ॥

जब लगु जोति दिया मो जागी तब लगु काम न छीजै ॥
नारी पुरुष रहै उजियारे आनंद जर मो लीजै ॥

अंत –

तरकीब पारस पाथर जानबे की दीन नछत्र महीन वीचार कै उलुक वै श्रो चीरह का घर हो तहा गोदे जो न सांव मवती करै तो उमीलै ॥ इति श्री कौतुक चिन्तामणि समाप्तिमगात् ॥ शुभं यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं लिष्यते मया यदि शुद्धमशुद्धं वा मम दोषो न दीयते ॥

विषय —

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "कौतुक चिंतामणि" है : इसमें इंद्रजाल या जादू टोने का वर्णन है, जैसे—हाथ न जले, मुर्दा जी उठे आदि। इसमें कुछ अद्भुत बातों को सिद्ध करने का भी वर्णन है, जैसे—मोती, चाँदी या पद्मराग बनाने की क्रियाएँ। ग्रंथ में १४ बाब या अध्याय हैं। प्रत्येक बाब, अर्थात् क्यारी में फसलें हैं। इससे प्रतीत होता है कि यह ग्रंथ किसी फारसी ग्रंथ की सहायता से लिखा गया है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ "कौतुक चिंतामणि" प्रायः पूर्ण है। इसके रचनाकाल लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। यह गद्य में है।

संख्या ३५१. कौतुक रत्नावली, पत्र—१८, आकार—९¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८०, पूर्ण, रूप—नवीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८४६ वि० = १७११ शाके, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि —

श्री गणेशाय नमः । कौतुक रत्नावली लिष्यते। प्रथम पटलइ के १४ प्रथम पटल में स्तंभन १७ प्रकार कहा है सो सुनो दृष्टि स्तंभन १ शेज स्तंभन २ शस्त्र स्तंभ ३ अपनाग दह ४ दुंदुभि बनावना जाके सुने शत्रु के दुंदुभी नाशे ५ शत्रु बुद्धि स्तंभ ६ शत्रु जिह्वा स्तंभन ७ शत्रु ताप ८ अग्नीस्तंभ ९ अपना शरीर जरै नहि पाक स्तंभ १० अग्नि खाइ जरइ जइ नाहिं ११ लागा अग्नि बुझै १२ कराही मे हाथ न जरै १३ जहर स्तंभ १४ जल में न डूबै १५ वीर्य स्तंभ १६ चौकी लगो जाइ १७ प्रथम। अथ द्वितीय पटले वशीकरण प्रथम मनुष्य १ राजवश्य २ स्त्री वश्य ३ पुरुष वश्यं ४ हस्तीवश्यं जोर सा बोलावनो ६ स्त्री नग्न करण ७ इति द्वितीय अथ तृतीय पटले पुष्टयादि कारणः ११ प्रथम वीर्य पुष्टि

मध्य —

रवि दिने मात्रस होइ तब लवंग मे रज लगाइ देइ वश्य होइ। राख मसान की गो लोचन हरताइयो रक्त चंदन कपूर इनको पोटली करि रितु समे राखै रोज ३ पाछे छाया

सुकाइ कै भोजन मो देइ वश्य होइ। चीड़ की लकड़ी तगरआ आगर कस्तूरी कूट ऊख का रस लोवान ए बराबरि लेइ सो अने को धूनी देइ तो वश्य हो ॥४॥ पंचमे हस्तीवश्यं। उत्तरा फाल्गुनी मै पीपरी ल्यावै गुग्गुल की धूप दे बांधइ वश्य होइ। भरणी नक्षत्रे आंवरे का फल लेइ धूप देइ हाथी वाधइ वश्य होइ। षष्टे आकर्षणं। अश्लेषा नक्षत्रे अजुन वृक्ष की छाल लेकै अजा मूत्र सों घसि सुखावै सो चूर्ण जाके मस्तक डारइ सो चल्या आवै।

अंत—

उत्तराषा० पूर्व भा० उत्तरा भा० ज्येष्टा श्रवण अश्वनी रेवती कृत्यका ये सर्वयोग्य स्थान देखै खोदैतै कमल की सुगंधि आवै १ व्याघ्र वा काक वा बकुला वा अन्य जीव सदा बैठे रहै २ जा वृक्ष मै ज्येष्ट आषाढ़ पत्र आवै और मास नाही ३ तले मे एक शाखा ऊपर दो होइ ४ वट मै पीपर का फल पीपर मै वठ फलै ओर वृक्ष मै दूध लाल करै ५ वह जिमी पानी विना शरद रहै।६ जा धरती मैं धूप वहत और जागह मै घास हरी रहे जानवर खाइ तो भी हरी रहै ७ दरखत वहोत और जानवर पर बैठे ८ जा धरती को भरोसा होइ तहां गोहूं एक पुरवा मे भरि गाड देइ रोज सात ७ पाछै काढै जोगल जोगल जाइ सो सही है इतहां कुता चारथो पाव सों मूतै १० तहा नीलकंठ का घर और चित्रावलि वुटी होइ ॥११ इस विधि तहकीक करिकै खोदै तो निश्चै होइ इसही तरह पारस भी जानना स्थान दोइ चीलइ या उल्लूक के घर मैं किल किलासका पिता गो लोचण सों अंजन करै तौ पानी की चीज दीपे सपेद कटाई की जड पुष्यार्क मे लेइ धूप दीप देवै त्रिलोह मै राषै तो लक्ष्मी न जाइ जो राखै ॥ इति श्री कौतुक रत्नावली ग्रंथ समाप्त पूर्णमस्तु संवत् १८४६ शाके १७११

विषय—

इसमें चतुर्दश पटल हैं जिनमें तंत्र, मंत्र, से सिद्ध होनेवाले कार्यों का विशेषरूपेण वर्णन है। लिपिकाल संवत् १८४६ वि०, शाके १७११ है।

विशेष ज्ञातव्य—यह तंत्र विषय का सुंदर ग्रंथ है। भाषा खड़ी बोली लिये है। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकालसं० १८४६ दिया है।

संख्या ३५२. गींदोली जगमाल री बात, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—५ X ६½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ट)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ गिदोली री बात ॥ लिख्यते ॥

नगर मै हवे रावलमलीनाथ जी कुँवर जगमाल जी राज करै छै। रावल जी मलीनाथ जी तो पीर हुआ। तिण समै अहमदाबाद रो पातस्याह महैमद बेगडो राज्य।

करी तिणरी बेटीगिंद्दोली छैतिको पातस्याह रे उमराव १ हातीखांन पठाण, तिको मोटो मनसूबदार तिण नै पातस्याह पटणा रो सूबो दियो ॥

अंत—

बीबी पूछे खान ने, जुध कैता जगमाल ।
पग पग नेजा पाड़िया, डिग डिग पाड़ी ढाल ॥२॥

जगमालरी फते हुई, भूतां ने सीख दीधी, गींदोली ने खवास कीधी, तिको गिंदोली ने अर जगमाल जी ने लुगांया गावे छै, इती बात गिंदोली री छै ॥

—अपूर्ण

विषय—

बादशाह की पुत्री गींदोली को कुँवर जगमाल ने युद्ध में जीतकर अपनी दासी बनाया। यह वार्ता राजस्थान में गणगौर के उत्सव पर गाई जाती है :

संख्या ३५३. गीतगोविंद, कागज—देशी, पत्र—२३, आकार—८½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८३, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दयाशंकर मिश्र, गुरुटोला, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ टीका ॥

दोसरे कमठ रूप अवतारा। धरेउ पीठी पर दिनी के भारा ॥
धरेउ भार अति पीठि वितारा। चक्रे गरिथ भएउ निरमाना ॥

॥ टीका ॥

शूकर रूप धरेउ अविनाशी। रुचिर दंत महि अग्रभ वासी ॥
जैसे ससि कलंक की कांती। मेदिनी दसन रहे तेही भांती ॥
चौथो हरि नरसिंघ की पीरा। हृदय दयाल संत की पीरा ॥
कर सरोज धर नष की धारा। अति प्रचंड हरिनाकुस मारा ॥
भक्त दयाल असुर पै कारा। कृपा कीन प्रहलाद उबारा ॥
बामन रूप छले बलिराई। अद्भुत परग महि मांगेन्हि धाई ॥
तीनि परग तीनीउ पुर कीन्हा। बांधि पताल नृपति बलि दीन्हा ॥
बरनय नित गंगा के तीरा। येहि ते होइ पवित्र सरीरा ॥
परसराम प्रगटे संसारा। सब क्षत्रिन्ह का कीन्ह संघारा ॥
सोनित नदी बहै अस पानी। गएउ भार भव तपति बतानी ॥
राम रूप रावन पै कारा। छन महं बांधेउ उदधि अपारा ॥

वांछित फल बिग्पति का कीन्हा । दस दिस शीश काटि बलि दीन्हा ॥
कृष्णरूप भव प्रगटे आई । हलधर कमलनयन हित भाई ॥
एक स्वभाव वेबि तन धारी । विशद देह वल स्याम मुरारी ॥
कर गहि हलधर यमुन बिदारा । नलटि चली यमुना जलधारा ॥
दयावंत हरि बुद्ध सरीरा । मानहु वहुते जीव की पीरा ॥
सुजिव घात वेद मह आवा । यह विचार हरि हृदय न भावा ॥
कल्कि शरीर म्लेछ के काला । धूमकेतु क्षरता कर वाला ॥
असि भयान अति वरणि न जाई । सुर रिपु देह धरो जनु आई ॥
पालन धर्म साधु सुषदाई । पापिन्ह के मन दह न समाई ॥
कल्कि षंडन हरि नाम धरायो । साधुन जनु परमारथ पायो ॥

दस विध देह धरा हरि असुर दुष्ट के काल ।
सदा संत सुभदायक भक्तन्ह कर प्रतिपाल ॥

मध्य –

॥ टीका ॥

वृंदावन षेलहि जदुनाथा । रस विलास युवती जन साथा ॥
सम्यक प्रीति सवहि के धरहीं । मान भंग काहु नहि करहीं ॥
रास हरि चरित राधि कै जाना । उपजा विरह गलित अभिमाना ॥
प्रति समाज जानि जिय माही । तवहीं भई इरिषा वस राही ॥
जुवती मिलित देषि भगवंता । भई कोप उठि चली तुरंता ॥
कहहुं लता कुंज एक आहा । सषी सहीत वैठी वनमाहा ॥

॥ दोहा ॥

निर्जन लता सुशोभित मुषरित मधुप संघात ।
विरह दुषित चित राधा कहै सखी सौ बात ॥

॥ टीका ॥

कह राधा सुनु सषी सयानी । निज स्वभाव तोहि कहौं वषानी ॥
हरि विलास कीन्हेउ येहि भांती । मन हमार सुमिरै दिन राती ॥
अमृत मधुर अधर संचरई । मोहन वेनु मधुर रव करई ॥
चलत दृष्टि सर होइ विलोला । स्रवण युगल मनि कुंडल लोला ॥
सषा एक मन कह अवधारी । सुनु राधा मेरी प्राण पिआरी ॥
सुमिरत रास विलास विहारी । करि परिहास लीन्ह मनहारी ॥

बरहि पंच शिर भूषण कीन्हा । जनु घन माह इन्द्र धनु चीन्हा ॥
चंद्र अकार पंच कर सोहा । चिकुर समूह देखि मन मोहा ॥
गोपी वृंद निकट सब ठाढ़ी । चुम्बन वदन लोह जिय बाढ़ी ॥
बंधुक कुसुम अधर नोनु आई । सोभित मुख किंचित विहसाई ॥
गोपीवृंद सहसन्ह रहही । पुलक सहित कर अंकम गहही ॥
मणिमय रुचिर चरण हृदि पानी । तिमिर मध्य जनु किरणि समानी ॥

अंत—

दोहा

हरि बिनु दुखित राधिका छिन छिन दुखित सरीर ।
मन मलीन कै बैठी कठिन विरह की पीर ॥

टीका

हरि गुण बसे सबै हृदि देहा । जस वर जुवती सों अस्नेहा ॥
पुनि पुनि वचन विचारै राही । हरि विनु विरह होइ जिय माही ॥
लता कुंज यह कीन्ह निआरा । हरि आए नहि कवन विचारा ॥
की कवनिहु जुवतिन्ह विथकाए । तेहिने हरि अभिसारन आए ॥

+ + +

टीका

हरिहृदि परिरंभन अनुमानी । इछा करहि प्रीति जिय जानी ॥
युगल पयोधर सघन कठोरा । ऊपर हार मनोहर डोला ॥
तरियन तरल अधिक नोनु आई । दुयहु कपोल हनित भै जाई ॥
गमन सुचचल अधिक सोहावा । कटि तट छुद्र घंटिका रावा ॥

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत ग्रंथ गीत गोविंद का हिंदी पद्यानुवाद है ।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अंत में खंडित है । इसमें केवल २१ पत्रे रह गए हैं । रचनाकाल और लिपिकाल का कोई पता नहीं । अनुवाद दोहे चौपाइयों में किया गया है ।

संख्या ३५४. गीता, कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—१$\frac{१}{२}$ × २$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—गुरुमुखी, लिपिकाल—सं० १८९०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी

प्रचारिणी सभा, वाराणसी। दाता—श्रीयुत छेदालाल गुप्ता, मैनेजर, नरेश हिंदू होटल, असकुंडा बाजार, मथुरा तथा ग्राम—जैरलिया, पो० —जरारा, जिला—मथुरा

आदि—

......मुस्ट को सीतल गती है। जो इती प्रकार सत करमां का तियागु कीजै सो तामसी तियागु कहीये। वहु तियागु के फल को ना पावै। इती प्रकार सत करम करै। किसी प्रकार कहै मेरा...ह...मनषदी का जनम दुरलभु है। इसनान ते आदि लेकर सत करम मैंने अवस करनै। पलै करम करे के तीनी प्रकार के फल लगदे है सो सुनु भले करमों का फल सुषु अर बुरे करमों का फल दुषु। अर भला बुरा दोनों रले मिले करम हु फलु दुष सुष भोगीये है। सो तीन ही प्रकार के फल संसार के मानुषों को होते हैं। अर किनी को जो संसार को तियाग कर मेरी सरनी नाही आए तिनी को। अर जो मेरे चरनारबिंद हु की सरनी आए हे तिनि के निकटि कोई दुष दाइको फलु नाही आई सकता। अब अरजुन और बाति सुनु। जितने करम देहधारी मानषा ते होते हैं भले अथवा बुरे। सो सभी करम देही इन्द्रीया मन इनते होते हैं। अर आतमा कैसा है। आतमा अकरता है।

अंत —

जिसु उडि जोगीसरों के ईसरू श्री कृसन भगवान जी किरपा निधान जी विराजमान है जिसु उडि गाडीव धनुष का धारणहारा पारथु अरजुन है तिथे उडी लषमी भी है अरु तिसी उडि की जै है। मेरी मत विषे एहु बातु निहचै है एही बातु तू भी आपणे मन विषै निहचै करि जानु छडू॥ किया बाति जिनके मधे पर श्री कृसन भगवान जी किरपा निधान जी विराजमान हैं। ऐसे जो हं पांडव बड़भागी तिनकी जै होइगी पांडव जीतेंगे। अरु तेरे पुत्र अधरमी हारेंगे॥ १॥ १८॥

इति श्री भगवत गीता सूपनिषतु सो ब्रह्मविद्या जोगु सासत्रे श्री कृसन अरजन संवादे सरब सासत्र निरनै मोषु धरमु जोगो नाम अठारमो ध्याऊ सपूरन भईया। श्री राम कृसन अरपण समापतं॥ १८॥

विषय—

गीता का हिंदी में गद्यानुवाद है।

विशेषज्ञातव्य—गद्यकार का नाम ज्ञात न हो सका। ग्रंथ के आरंभ के १२ पत्रे नहीं हैं। इसके आगे गीता के अठारवें अध्याय का माहात्म्य और 'गर्भ गीता' लिपिबद्ध है। 'गर्भ गीता' के अंत में लिपिकाल सं० १८९० दिया है यद्यपि वह सं० १७९० भी पढ़ा जा सकता है। रचनाकाल अज्ञात है। गद्य में जहाँ ब्रज और खड़ी बोली मिश्रित रूप में है वहां उसमें पंजाबी ध्वनि भी विद्यमान है। कुछ स्थलों पर पंजाबी शब्द भी व्यवहृत हुए हैं। हस्तलेख गुरुमुखी अक्षरों में लिखा हुआ है।

संख्या ३५५. गीता (भा० टी०), कागज देशी, पत्र ४, आकार—१०३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) ९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, प्राप्तिस्थान—भारतकला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

पासना कैसैं बनैंगी अरे तूं यह कहेगो कि जीवदास है ईश्वर स्वामी है जौ ऐसी भांति सों बनें तौ जीव सों और ईश्वर सों संबंध कों न ईश्वर नित्य सुषी जीव नीत्य दूषी ईश्वर निग्य मुत्यक्त जी (व) नित्य वद्ध इश्वर परमानंद रूपी जीव परम दुष दुष रूषी (? पी) ऐसी भांति करिकें जीव सों और ईश्वर सों बडौ भेद है जौ कबहू यों कहौगे जो सनवंध नही होइगो तौ उपासना कैसें वनिआवै तहां कहत हें जो अभेद में ईश्वर की भक्ति कौ आनंद नही है तौ यामें यह जान्यों गयौ कि तू भक्तिरस कों जानंत ही नहीं है जैसो अभेद मे आनंद है तौ यामें यह जान्यों गयै सौ भेंद में आनंद कहां तूं जानत है कि ईश्वर कौन है ईश्वर परमानंद स्वरूप है और जानें वाहू ईश्वर को आत्म। स्वरूप करिकें जान्यो ताकौ व भेद कौ अनुभव

मध्य—

॥ मूल ॥

॥ संजय उवाच ॥

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थं च महात्मनः संवाद मिमम श्रौषमद्भुतं रोमहर्षणं ॥७४॥

॥ टीका ॥

ए राजा यह अद्भुत श्री कृष्ण को और अर्जुन कौ संवाद है जांकौ
सूनत रोमांच होइ आवै सो तें सुन्यों ॥७४॥

व्यास प्रसाद च्छुतं वाने तद्गुह्यमहंपरं
योग योश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयं ॥७५॥

अंत --

॥ टीका ॥

अब राजा याके सुनिवे में तेरी कछू सक्ति नहीं है मेरे जो गुरू हें श्री व्यासदेव जू तिनकी यह शक्ति है उनके प्रसाद तें यह गुह्य तें गुह्य जो है परेम जोग स्वयं भगवान कौ कह्यौ सो मैं आपु सुन्यों और पार बैठें नहीं सुन्यौ है दूरिसों श्रवन कीयौ है दूरि श्रवन की और दूरि दरस की सिद्धि यह मोकों गुरू प्रसाद तें भई···।

—अपूर्ण

विषय—

गीता का अनुवाद।

विशेष ज्ञातव्य –ग्रंथ अपूर्ण है। इसके केवल चार पत्रे उपलब्ध हैं जिनमें पत्र संख्या दो तरह से दी हुई हैं, यथा ३६२, ३६३, ३६४, और ३६५ तथा ४०९, ४१०, ४११ और ४१२। संभवतः दुबारा शुरू किया गया है। रचना काल और लिपिकाल अज्ञात हैं। टीका व्रज भाषा गद्य में है।

संख्या ३५६. गीता (टीका). कागज—देशी, पत्र १४५, आकार—१०३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६२८, अपूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारतकला भवन, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

आदि—

श्री गणेशाय नमः॥ अथ श्री गीता जी कौ भाषा टीका प्रारंभ॥

अब श्रीधरस्वामी जू या गीता जू की टीका के आरंभ में मंगलाचरन करत है॥ और कहत है कि प्रथम ही ग्रंथ के आरंभ में मंगलाचरन करिबो अवस्य है॥ मंगलाचरन कहावै॥ पंडित जो विग्न के दूरि करिबे कैं और ग्रंथ के समाप्त होइबे कों उपाइ कह्यौ है॥ ताकौ नाम मंगल कहत है सो मंगल तीन भांति कौ है॥ एक तौ आसीर्वाद रूपी॥ और एक वस्तु स्वरूप है वस्तु स्वरूप कहा कहावै जाकी बड़ाई करी चाहीयै जहां तहां वाही की बड़ाई करियै॥ ग्रंथ के पूर्ण होवे तांई॥ यह वस्तु कै सरूप रूपी मंगल है

\+ \+ \+

धर्म क्षेत्रे कुरू क्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय॥१॥

॥ टीका॥

ए संजय पहिलें तौ युद्ध की इछा मेरे बेटा॥ नकी और पांडवन की हीं अब कुरुक्षेत्र मे जाइ के मिलें हैं। कहौ तौ अब जुद्ध कीयौ कि काहु निमित्त करिकें जुद्ध सौं फिरिगए॥

अंत—

और हरिभजन कौ सिद्धांत है कि और या श्लोक मैं भगवान नें कह्यौ कि मेरी सरन प्राव ताकौ अर्थ करत हैं भगवान की सरन ओइबौ दो भांति कौ है एक भेद करिकें एक अभेद करिकें भेद करिकें तौ ऐसी भावना करै कि मे भगवान कौ दास हौं भगवान मेरे स्वामी है और अभेद करिकें उपासना जो है सो उपासना शंकराचार्य ने कही है षटपदी स्तोत्र में महाराज जदपि भेद नहीं है तौऊ सौऊ तुम्हारो हौं तुम मेरे नहीं कैसें जैसें समुद्र कौ तरंग है तुरंग कौ समुद्र नहीं ऐसी भांति सों जो कोऊ सेव्य सेवक भाव है सो कहावै अभेद उपासना या श्लोक में ठाकुर नें अभेद उपासना ही अंगीकार कही है जौ यह कही कि मेरी एक की कसर न आव और भेद में तौ एक तान बनेंगी और जौ कोऊ भेद

वाही को कहै कि अभेद में उपासना न बनैगी तहां वाही पूछीये कहूं तौ तूं कि अभेद में उ······॥

—अपूर्ण

विषय—

गीता का हिंदी गद्यानुवाद है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। अंत तथा बीच के कई पत्रे नहीं है। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात है। अनुवादक का नाम भी अविदित है। अनुवाद व्रज भाषा गद्य में है जो व्यवस्थित और पुष्ट है। श्रीधर स्वामी कृत गीताभाष्य पर प्रस्तुत टीका हुई है।

संख्या ३५७. भगवद्गीता टीका, कागज—देशी, पत्र—११०, आकार—५'५ × ७'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६५०, अपूर्ण, रूप प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० राममनोहर जी, गाँव—कौडिहार, डा० अटरामपुर, जि०—इलाहाबाद

आदि—

···········महता योगेनेष्ट परंतपः ॥ २ ॥

देषि अर्जुन इहि भाति यो परम प्राहु ह्वै आयो ॥ राज ऋषिनि जाण्यौ ॥ सो महांत काल कै ·· ··· ··· मांहां रहे नष्ट न होहिं ॥

(संस्कृत मूल ··· ··· ···)

देषि अर्जुन ते पुरातन योग मैं तौ प्रति कहतु हौ ॥ मेरौ तू भक्त है ॥ अरु सखा है ॥ तौ मैं इह परम रहस्य तो स्यौं कहत हौं ॥ अवर स्यौं जाहि कह्यौ ॥ (··· ··· संस्कृत ··· ···) सो श्री कृष्ण गुसांई मोहि यह कछु संभवति नांही ॥ सूर्य को जन्म पहिलै किधौं गुसांई तुम्हारौ जन्म पहिलै ॥ यह हौं गुसांई कैसे जानुं सु मोस्यौं कहहुं: ॥ देषि अर्जुन मेरौ अरु तेरौ जन्म अतीते बहुत भए इहि ॥ ताहि हौं जानत हौं तूं नाही जानत ॥

मध्य —

यह विभूति योगु मैं काहु स्यौं नाहि कह्यौ पुनि तेरे हेत तें हौं तो स्यौं कहि हूं ॥ सत्‌ प्रवरस्यौ जानि कहहौ ॥ ··· ··· देषि अर्जुन मैं जे सर्वभूत जीव जंतु है प्राणी तिण कै कै विषें स्थित हौं अरु आदि मध्य अंत सर्व ही विषै मैं प्रवर्त्तमान हौ ॥ भूत जंतु जे है प्राणी तिनकैं अंत हौ ॥ ··· ···देषि अर्जुन आदित्य जैसे बारह तिहि मध्य विष्णु मै ॥ ज्योति चक्र महा रवि मैं नक्षत्र महं शशी चंद्रमा मैं ॥ ··· ··· वेद जे हैं च्यारि तेन महा साम वेद मै ॥ देवनि महां इंद्र मैं ॥ इंद्रि जे हैं तिन महां मनु मैं ॥ भूत जे है प्राणी तिन महां बुद्धिवंत मैं ॥ ··· ··· रुद्र जे है ग्यारह तिन महां शंकर मै ॥

यक्षणि महाँ कुबेर मैं ॥ पर्वतनि मैहाँ मेरु मैं ॥ ··· ··· पुरोहित नि महाँ बृहष्पति मैं ॥ सेनानी महाँ स्वामि कार्त्तिक मैं ॥ सरोवरनि महाँ समुद्र मैं ॥

अंत—

देषि अर्जुन सत्वगुण कै द्वंद्व भाव रज गुणः ॥ अरू रज गुण के द्वंद्व भाव तमगुणः ··· ··· देषि अर्जुन सत्व गुण जब होत है तब ज्ञान विषैं प्रकाश होत हैं ॥ जब ज्ञानु होतु है ॥ तब ऐसी जानि जैं ॥ जे सत्व गुण विध्यों देह विषैं ॥ ··· ···देषि अर्जुन रजगुण जब बाढ़त है तब लोभ के कर्म······असंतता इच्छा एसव्वें होंहि ॥······

—अपूर्ण

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ श्रीमद्भगवद्गीता की टीका है। यह टीका हिंदी गद्य में है। ग्रंथ अपूर्ण है। इसमें चतुर्थ अध्याय से चतुर्दश अध्याय तक का अंश है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत "ग्रंथ भगवद्गीता की टीका" अपूर्ण प्राप्त हुई है। अतः रचयिता, रचनाकाल और लिपिकाल आदि अज्ञात हैं। प्रस्तुत टीका की विशेषता यह है कि यह हिंदी गद्य में लिखी गई है। गद्य प्राचीन पर अव्यवस्थित है। भाषा ब्रज है।

संख्या ३५८. गीता के अठारवें अध्याय का महात्म्य, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—३½ × २½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—गुरुमुखी, लिपिकाल—१८९०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—श्री युत छेदालाल गुप्ता, मैनेजर नरेश हिन्दू होटल असकुंडा बाजार, मथुरा तथा ग्राम जरैलिया, पो० जरारा, जि० मथुरा।

आदि—

आगै गीता के अठारमें धियाइ का महातमु चलिया।
॥ श्री नारायणोवाच ॥

ऐ लछमी अब मै तैनऊ अठारमें धियाय का फलु कहे है तू स्रवन करू। सब नदी मै श्री भागीरथ गंगा स्रेष्ठी है सब क्षेत्र में हरिदुआरु स्रेष्टि है। अरु सब तीरथा विषै पुहकर तीरथु स्रेष्टि है। जैसे सब परवता मै कैलास परवति स्रेष्टि है। जैसे सब रिषीसरा मैं गुंसांई नारद स्रेष्टि है। तैसे ही श्री गीता जी के सब धियावा में अठारमा धियाऊ स्रेष्टि है। सुमेरु परबत के ऊपरि देवलोक है। तहाँ का राजा इंद्र अरु कुबेर अरु बरुण अर जछ और सभी देवता तिनके उपरु ब्रह्म लोक है। इक दिन तहाँ का राजा इंद्र बैठा था।

अंत—

तूं डरैं मतु येही तेरा राजु नाही लिंदा। अरु सभी समग्री भोगा की इसको दिखाई देऊ। जा इसकी भोगा ते मनसा पूरी होवेगी तामै इसको वैकुंठ बासी करुगा।

इतनी बातु सुनि करि इन्द्र ने डंडवत करी। आग्या मान करि इन्द्रपुरी को आइया। भोगा की सभी समग्री आणी दिती। ता चतुर भुज रूपधारे को कहिया ए तुम भोगो जी। ता श्री नाराइण जी कहिया ऐ लछमी तैनउ श्री गीता जी के अठारमें धियाई का फल कहिया है सो तै सुनिया है। इति श्री पदम पुराणे सती ईसुर संवादे उतरू खंडे गीता महातमुने अठारमो धियाउ संपूरन भईया। श्री राम क्रसन अरपण समापतं ॥

विषय—

गीता के अठारवें अध्याय के माहात्म्य का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—न तो ग्रंथकार का नाम ही दिया हुआ है और न रचनाकाल ही। हस्तलेख गुरुमुखी लिपि में है। इसकी भाषा व्रज और खड़ी बोली मिश्रित है जिसमें पंजाबी की ध्वनि भी विद्यमान है। विशेष के लिये देखिये "गीता" का विवरण पत्र। लि० का० संवत् १८९० है। गुरुमुखी अक्षरों में लिखे जाने के कारण शब्द अपने मूल रूप से बहुत कुछ विछिन्न हो गए हैं। पंजाबी उच्चारण के अनुकूल शब्द तोड़े मरोड़े गए हैं।

संख्या ३५६. गीता महात्म्य, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—६'३×९ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—वैशाख कृष्ण अमावशी, मंगलवार, संवत् १८२१ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नम ॥ श्री गुरुभ्योन्म ॥ अथ गीता महातम लिष्यते ॥ पदम पुराण मैं गीता महातम कहै ॥ कैलास परवत पै गौरा पारवती गौसटक रैहै ॥ तहा गौरा पारवती महादेव जी कूं पूछत है ॥ महादेव जो तुम अतै करणि किस ग्यान करि पवित्र हो ॥ तासौं तुमकूं सरव जीव पूजत है ॥ तुम्हारो तो औसो सरूप है म्रगछाला ओढ़ै हो ॥ अंग बभूति लगाए हौ ॥ रुंडमाला पहैरै हौ। ध्यन मैं तो कोउ पवित्र नाही ॥ तुम हमसौ यह ग्यान कहौ। जिस ज्ञान करि तुम अंतै करिण मन मैं पवित्र हौ ॥

तब महादेव जी बोले है ॥ गौरा पारवती जी मैं तुमको कहत हौं सो तुम सुनो ॥ जिस ग्यान सौं हम अंतै करण पवित्र हौ। वह जी के करम मोकूं ब्यापत नाही ॥ सो यहै गीता ग्यान है ॥ ताको मै हिरदा मै ध्यान धरत हौं। तब या पारवती जी बोली ॥ श्री महादेव जी योगी ना ग्यान कैसो है ॥ जाकी तुम अस्तुति करत हौ ॥ या ग्यान कौं सुनि कै कोऊ क्रतारथ भयो है ॥

अंत—

या गीता के पढ़ै तै ये तो पुनि फल प्रापति होय ॥ जो च्यारि वेद पढे को पुनि होय ॥ जैसे मेरी नाभि कमल तै च्यारि वेद उपजे सोतो चारि बेद है तिन कमलौ मैं

सुगंध चाहि जे तो मन च्यारो वेदा मैं सुवास गीता है ॥ सरब सासत्रमयो गीता ॥ सरब-देव मयो हरि सरब तीरथ मई गंगा । सरब धरम दया परै । ताते श्री लछिमी जी या गीता मैं प्रगट करी है ॥ जो ब्राह्मण पढै तो बहुत उतिम है ॥ मेरी देह है और क्षत्री वैस्य सुद्र वैसनो होय कै कोई पाठ करै तो अवसि मुकति होय ॥ उधरै वैकुंठ परापति होय ॥ यह गीता सकल जीवां को कल्याण करिवे कौं प्रगट करी है ॥ ताको महातम मैं तुमसौं कह्यौ ॥ जो गीता पढ़ै कै श्रवन धरै तो अवसि करि यन जीव को कल्यांन होय ॥ गीता सब जीवां की कल्यान करणी है ॥ इति श्री गीता महातम ने पदम पुराणे संपूर्णं ॥ इतिश्री गीता महातम सरब वादे संपूर्णं समाप्तं ॥ संवत् १८२१ वैसाष कृष्ण पक्षे ऽअमा-वस्या भौमवासरे लिषी संपूर्णं ॥ लिखितं नैणसुष लेषकः ॥ लिषायतं पूर्वजन श्री शिवलाल जी ॥ श्री सवाई जैपुर मध्ये श्री महाराजा माधो स्यघ जी राज कृतम्यं ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का विषय इसके नाम से प्रकट है । इसमें पद्म पुराण के आधार पर गीता का माहात्म्य लिखा गया है । गीता में अठारह अध्याय हैं, उसके एक एक अध्याय का अलग अलग माहात्म्य दिया गया है । इस प्रकार प्रस्तुत ग्रंथ में १८ अध्याय हैं । इसकी भाषा राजस्थानी है ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत "गीता माहात्म्य" के रचयिता का पता नहीं लगा; परंतु इसकी भाषा से जो राजस्थानी है—ज्ञात होता है कि वह संभवतः राजस्थान का था । लिपिकार नयनसुख भी जैपुर का निवासी है । रचनाकाल का उल्लेख नहीं है; परंतु लिपिकाल संवत् १८२१ वि० है जिससे सिद्ध होता है कि रचना इससे पहले की है । रचना राजस्थानी गद्य में लिखी गई है, पर लिपि इसकी सदोष है । यह जन किशोर कृत 'ऊषा चरित्र', जिसका विवरण लिया गया है, के साथ एक ही हस्तलेख में है ।

संख्या ३६०. गुणसागर, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—१३½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०७२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः अथगुणसागर लिष्यते ॥

॥ दोहा ॥

तन मरदन तिल तेल का उष्ण नीर नहाय ।
पहरै झीनासन और मुख मे पान ॥ १ ॥
परमल पान उसंस भरि सो सुनै राग दै कान ।
देखै अलिता कुंजवन हरी भूमि अस्थान ॥ २ ॥

सुंदर मूरत नयन भर अमृत पांच आहार।
काया काज मै अधिक पुरुष होई कै नारि ॥ ३ ॥
दूध दही औ खांड घृत असी अंक जे होइ।
लवावटेर गरगवा कुकुट ससा कपोत ॥ ४ ॥
गेहु चावल गुड उरद भंटा पिडारू खाइ।
दिन दिन वाढे काम तन दूरी अव नाज ॥ ५ ॥

मध्य—

॥ अथ आम वात चि० ॥

कुसुम के वीज का तेल टंक २ दूध टंक १० एकत्र करि पीवै दिन ७ आम वात जाई १ सोठि टंक ५ धनिया टंक ५ हरदी टंक ५ इंद्रान के फल की मीगी टंक ५ चूर्ण करि टंक २ उष्णजल सो नित्य पीवै तौ आम वात जाइ २ मुंडी गोखुरू त्रिफला सोठि गिलोईन सात समान ले चूर्ण कीजे टंक १ उष्ण जल सो पीवैं तौ सर्व आम वात भाइ पडै ३

अंत—

आषाढ़ मैं चीता की जड़ सो खाइ तौ कंठ वैठा शुद्ध होइ ९ सावन मैं मेवर के वीज सात खाइ तौ देह की सुस्ती जाइ १० भादौ मैं सूदवंती सो पीवै तौ रुद्रवत होइ ११ आश्विन मैं माल कागुनी सो खाइ तौ ताम्र मैं मूतें तौ सुवर्ण होइ १२

॥ अथ हरडै द्वादशमासि अनुपान ॥

ग्रीष्मे तुल गुड सैधव साथ खाइ तौ अनेक रोगन को दूर करै १ वर्षा ऋतु मैं सुद्ध सुंदर संकर के…

—अपूर्ण

विषय—

रोग चिकित्सा वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—अंत के भाग को पढ़कर ज्ञात होता है कि ग्रंथ अपूर्ण है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी अविदित है। रचना गद्य में है। आरंभ में २१ दोहे तथा अरिल्ल अवश्य हैं, परंतु शेष अंश गद्य में ही लिखा गया है।

संख्या ३६१. गोगा पैड़ी, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—११$\frac{1}{2}$ × ७$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ गोगा जी री पैडी लिख्यते।
गवरी नंदन तू गुणदाई, रिध सिध दीयण सुरसती माई।

पीरा हंडी पैडी गाई, गोगा जनम धरै बिंदा ॥ १ ॥
उत्तर दिस पीरूदाँ टीला, जहा बसै सिंधुदा किला ।
नवें नाथ चवरासी सिद्धा, सब उण ठौर रहै बिंदा ॥ २ ॥

अंत—

गोगा लै पालणैं पोढाया, सपत पयाले वास ग आया ।
गद्दन गहर धरे मुख अंदर, आंचल जेम चुवै बिंदा ।
गरल टटार जहर सो यंमृत सकर दूध जने हौ मीन ।
नव षंड लोग हिमायत आयै पीर गोगैदा परचा दीठा ॥
॥ इति ॥

विषय –

गोगा जी के जन्म का वर्णन किया है । पद्यात्मक रचना है । गोरखनाथ जी के वरदान से वत्सल माता के उदर मे गोगा जी का जन्म हुआ ।

संया ३६२. गोस्तन शीतला, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६·५ × ८·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६०१, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पिल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

ॐ श्री गणेशाय नमः

अथ गोस्तन शीतला का बयान ॥

बिलायत इंगलेंड मे गाई के थन पर एक तहं का छाला होता है । उस छाले का पानी नस्तर के नौक पर रष के आदमी के बांह पर चमडे के भीतर पहुँचाने से एक फफोला उठकर कैऐकदिनो में भला होता है । और फिर उस आदमी को कभी सीतला नहीं निकलती है । ओर यह गोस्तन के छाले का पानी जो पाया गया है उसका किस्सा यह है । बिलायत में आगे दस्तूर था वाँ और भी हिंदुस्तान मैं दस्तुर है कि लडकपन में लडकों को माता का टीका जब वह लड़का सरीर से अच्छा होय कुछ वीमारी न होय दिला मे थे काहे सैं कि जो आपई आप माता निकलती है तो दुष बहुत होता है और जो तनदुरुस्ती के हालत में निकलती है तो ईजा ज्यादा पहुचती है । लडकपन में निकलती है तो दुष कम होता है इसी तरह कोई वक्त बिलायत ईगलंड के एक सहर में माता सुरू हुई उसके लगने के डर मे हकीमों ने हुकुम दिया कि यहां के रहनेवाले कि जिनको माता नहीं निकलती है वे सब लोग माता का टीका लेवें ।

अंत—

और उसका असर कुछ न हुआ लेकिन पिछली जनवरी मै साहेब ने उन्हीं दोनों को

अंगरेजी तौर पर पहले भी टीका दिया था कि जिसके बयान में साहेब के पास अब तक एक कागज है और जब अंगरेजी दस्तूर पर टीका नहीं होता था तो अलबत: माता निकलती थी इसी टीके से उन्हे नहीं निकलती। मार्च को ब्रजपाल ने अपने लड़के ठाकुरदास को नेटिव हास्पटाल सै इंग'.......

—अपूर्ण

विषय -

प्रस्तुत ग्रंथ एक छोटा सा बुलेटिन है जो ईस्ट इंडिया कंपनी की तरफ से माता का टीका लगवाने का प्रचार करने के लिये प्रकाशित किया गया था। इसमें लिखा है कि गोम्तन का टीका देने से बड़ा लाभ होता है और प्रत्येक आदमी को उस टीके को लेना चाहिए।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत बुलेटिन का रचनाकाल अज्ञात है। परंतु उसके साथ कुछ अन्य ग्रंथ भी लिपिबद्ध हैं जिनका लिपिकाल संवत् १९०७ है। अतः यह निश्चित है कि प्रस्तुत बुलेटिन संवत् १९०० के लगभग निकाला गया होगा। इससे यह बात ज्ञात होती है कि भारत की राष्ट्र भाषा का प्राचीन स्वरूप क्या था और अंगरेज शासकों ने कितनी बुद्धिमत्ता से उसे पहचाना था।

संख्या ३६३. ग्रहण विधि, कागज - देशी, पत्र—३, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११, पूर्ण, रूप—सुन्दर, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

अथ ग्रहण विधिः

जो उष्ण काल में ग्रहण होय तौ ग्रहण ग्रास्य ते पहिले श्री ठाकुर जी कौ शृंगार करिये और ग्रहण ग्रास समें स्नान करवाइये ता पीछे अंग वस्त्र करिये और धोती उपरणा स्वेत सूत कुपहिराइये और श्री मस्तक पे कछू बांधिये नहीं और सवन की स्वेत खोल काढनी और अकेले मुख कमल को साज रहै और स्वेत वस्त्र सब काड नै और सैय्या के काढनै ता पीछे सिंघासन वस्त्र पिछवाई चंदोवा जो स्वेत होहू सो सब काढै—

अंत—

श्री प्रभुन को पोढ़ाय के पाछे महा प्रसाद लै नौ और दिन में महा प्रसाद नहीं लैनौं याही प्रकार सौं चन्द्र ग्रहन कौ ग्रस्तास्त होय तब करनौं ता पाछें ग्रहण में अप रस सब काढ़ नै और धोती उपरना सूत के नहीं रहैं ग्रग्रह होय तब स्नान करके मुकटा पहिर के मंदिर में जामैं पाछें खान के वा पुरुषन के सब स्वेत वस्त्र काढ़नैं और सिंघासन के सैय्या के स्वेत वस्त्र सब काढ़नै। पाछें रसोई की सखड़ी काढ़ नै और कराई की तरावसी

काढ़नै पहिले दिन मृतिका के पात्र सब काढ़नै पाछे मंदिर के रसोई के जल घरा के सब काढ़ने इति ग्रहण विधि समाप्त श्री श्री श्री श्री

विषय—

वल्लभ सम्प्रदायानुरूप ग्रहण उपस्थित होने पर देव शुद्धि किस प्रकार की जावे इसका निरूपण किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—वल्लभ संप्रदाय में प्रचलित रीति नीति के अनुसार इस ग्रंथ का प्रणयन किया गया है। ग्रहण पड़ने पर ठाकुर जी का शृंगार और पूजा किस प्रकार की जाय, इन सब बातों का वर्णन किया गया है।

संख्या ३६४. चमत्कार चिंतामणि, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—१३$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३९, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः

दिवाकरं नमस्कृत्य धन्वंतरिमिवाम्बरम्।
प्रकाश्यते चमत्कार चिंतामणिरचम्मया॥

+ + +

॥ अथ रस सोधन विधि ॥

प्रथम पारा को सप्त खल करै तिसते पारा का दोष छपित होय। एक बीता भरे का लम्बा चौड़ा एक गड़हा षोदै तिससे छेरी की लेंड़ी और धान की भूसी मिलाइ के भरै आग सुलगावै गड़हे मे लेंडी भुसी डारि देइ तिसके उपर षल धरै लोहे कै वा पाषाण कै शुभवार शुभ नक्षत्र शुभ मुहुर्त मे पारे को षल मे राषै अघोर मंत्र जपिके तब पारे को षोव सांस हरदी अव इट कोह डारै एक रोज षल करैं फेर कांजी के पानी ते वा निबुआ कै रस डारिकै धोइ वा डमरु यंत्र मे उड़ाइ लेइ सो रस का नाम तछवल है इसते पारे का नाग दोष छुटता है।

अंत—

अब सोधा गन्धक दश पैसा भरि डारै वूनौ को दुई घरी ताई घोटै विनारस से तिसके उपरात एक सीसी मे डारि सीसी का मुह बन्द करै बालुका यंत्र मे करिके आठ प्रहर आंच देइ वाजे लोग सीसी का मुह षुला राषत है। तरे की हडी के बराबरि छेद करै

चौगिर्द माटी लगावै सीसी वैठावै व बालू से पूर्ण करैं अब सीतल होय तब सीसी फेरिकै सीसी तरेतामा हो

—अपूर्ण

विषय –

रस और धातु शोधने की विधि।

विशेष ज्ञातव्य – ग्रंथ अपूर्ण है। केवल १५ पत्रे उपलब्ध हैं। रचनाकाल तथा लिपिकाल अज्ञात हैं। रूप रंग से प्रति प्राचीन जान पड़ती है।

रचयिता का नाम भी अज्ञात है। ग्रंथ प्राचीन खड़ी बोली के गद्य में लिखा गया है।

संख्या ३६५. चिकित्सा ग्रन्थ, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६३/४×४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

आदि—

···ताकी औषधि ॥

फटकरि मासो एक लेके कटोरी में पानी करिकै आगि उपर राषि कै ता कटोरी मै फटिकरि की डेली डारि देइ जब गरि जाइ तब पानी को पियै पानी पैसा चारि भरि ॥४॥ ता पाछे चना की चौलनी पोलि कै चवे तो पेट को आजार जाइ ॥ दिना तीनि ही में आजार जातु है ॥

॥ जाको कानु वहतु होइ पीर होहि ताकी औषधि ॥

हींग सोठि तोमर के बीज ॥ ३ ॥ ए तीनौ वस्त सरसौ के तेल मै पकावै तब तेल सिद्ध होइ ॥ तब उतारि लेइ कान मे डारै तौ कान को पीर दूरि होइ ॥

॥ गरवती स्त्री के ज्वर को काढो ॥

गिलोइ ॥ १ ॥ सोठी ॥ नागरमोथे ॥ ३ धनिये ॥ ४ ॥ रक्तचंदन ॥ ५ ॥ षश ॥ ६ ॥

मध्य—

॥ इलाज चोरा को ॥

अफीम पैसा भरी ॥ २५ ॥ सुहाग तेलिया पैसा भरि ॥ २५ ॥ गुड पुरानो टंका तीनि भरि ॥ ३ ॥ औषधि पीसि गुर मे गोली चारि बाधै ॥ एक गोली मुह मै डारि देइ ॥ परमेश्वर के नाइ की गोली नित्य चोरे को देइ ॥ पाछे करि पानी देइ ॥ याही भांति दिन

एक एक देह तौ घोरा नीको होइ औ ये औषधैन पैयहि तौ दिना तीनि एक एक छुहारे देइ तौ नीको होइ ॥

॥ घोरा जौ सरद गरम भयो होइ ताको इलाज ॥

सिंगरफ अधेला भरि ॥ १२ ॥ स्वमलषार संखिया अधेला भरि ॥ सुहागा तलिया अधेला भरि ॥ १२ ॥ गेरू अधेलाभरि ॥ १२ ॥ पाषर कथु अधेला भरि ॥ इन औषधनु की मिकै गोली करै ॥ आदे के रस सौ ए गोली सव इक्यामन करै ॥ ५१ ॥ तौ सरद गरम ते नीको होइ ॥

अंत —

॥ गुटिका और विधि कौ ॥

चीरह के घुसिला मै अंडा होई तिन अंडनु के मध्य एक अंडा मै पारो धरै टाक ॥ १॥ अढाई ॥ अंडा मै पारो मिलि आवे थोरो सो सोतु करि वासोत है पारो अंडा मै डारे आदित्यवार को ॥ शुभम् ॥

विषय—

मनुष्य और घोड़ा के रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । आदि, मध्य और अंत के कई पत्रे नष्ट हो गए हैं । रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं । रचयिता का भी नाम अविदित है । रचना गद्य में होने के कारण महत्वपूर्ण है । इसके नाम का पता नहीं लग सका इसलिये विषय के अनुसार नाम रख दिया है । इसमें घोड़ा और हिरन के रोगों की चिकित्सा भी वर्णित है । यह ग्रंथ अहमद कृत 'रतिविनोद' के साथ एक हस्तलेख में है ।

संख्या ३६६. चितोड़ टूटने का संवत्, कागज—देशी, पत्र--१ (३८ वाँ) आकार—५ × ३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य मिश्रित, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

महाराणोगढ लखमण सिंह जी चत्रकोट महादुरग भागो छै सं० १३७२ रे चैत सुदि ११ रवौ । राणा श्री विक्रमादीत जी री वार छै १६६२ गढ चक्रकोट भागो । महाराणा श्री उदैसीघ जी री वार छै, १६८४ चेत सुद ११ रवे चीतोड़ भाग्गे ।

॥ दोहा ॥

जग कुं बाण जीतिया, के चत्रां थोड़ाह ।
सांई सनमुष चाहिये, साथी संजोड़ाह ॥ १ ॥

विषय—

चित्तौड़गढ़ टूटने के संवतों का उल्लेख उन संवतों में राज्य करनेवाले राणाओं के नामों सहित किया गया है :—

महाराणा का नाम	संवत्	चित्तौड़ गढ़ टूटा
१—महाराणा लक्षमण सिं जी	सं० १३७१ (चैत्र सुदी ११ रवो)	,, ,, ,,
२— ,, विक्रमादीत ,,	,, १६६२	,, ,, ,,
३— ,, उदैसीच ,,	,, १६८४ (चैत्र सुद ११ रवे)	,, ,, ,,

संख्या ३६७. चित्रकाव्य, कागज—देशी, पत्र—५, आकार ९½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१९ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि —अथ चित्रकाव्य मैं एक वर्नन आदि चारि वरनं लौ उदाहरन ॥

उदाहरन ॥

नैना नौनैं न्युनना आनन आनन ऐन ।
सीता सीतापति मपत कोकिल कोकिल वैन ॥ ६ ॥
॥ अथ भिन्नार्थं गतागतौ लछन ॥
सूधे उलटे पढत मैं जहां अर्थ जुग आंन ।
भिन्न अर्थ सुगत गतौ दुंमंन छंद मैं गान ॥ ७ ॥

साजथा

सरस धरम ; मरद सरस ॥
नरत करंन । नर कनरन ॥ ८ ॥
॥ अथ अभिन्न अर्थ गतागत लछन ॥
सूधे उलटे पढत जंह सब्द अर्थ इक होइ ।
एकारथ सुगतागतौ कमल छंद मै जोइ ॥ ९ ॥

॥ साजथा ॥

नलिन । नयन ॥ १० ॥

मध्य—

धर्नबंध (धनुर्बन्ध) लछन
नींचे ते वामा वरत भ्रम करि उरध जाइ ।
धनुषबंध सो जानिये कविवर बधि चित लाइ ॥ ३८ ॥

धनुर्बंध चकर उदाहरन ।

भौ सागर ते उधरन रांम नाम कलिमांह ॥
साधु समागम दुषद वन मनस कथा मंहनाह ॥ ३९ ॥

अंत—

॥ अथ डमरू वंध चक्र लछीन ॥
॥ अथ डमरू वंध चक्रा लछन ॥
मध्य वरंन लै चहूवोर वांचिऐ जौन ।
फिरि फिरि अछर तिनि क्रम डमरू वंध सो तौन ॥ ४० ॥

॥ तस्य उदाहरन ॥

नाम सदा जपियै जग भूप को रीझि कै रूपहि सो रमना ।
नामरनै कै लै करने नित्त मत्सर मांनहि को दमना ॥
ना मद मोह करै कबहूं इक पंकज पाइन को नमना ।
नामन आंन हुआ न कछू रघुनाएक लायक के समना ॥ ४१ ॥

इति चित्रकाव्य संपुर्न सुभ मस्तु समत १८६९ ॥ समै शावन सुदी १५ वार सनिचर ग्रहन परवे संपुरन ॥

विषय—

चित्रकाव्य का वर्णन ।

निम्नलिखित चित्रकाव्यों का वर्णन किया गया है :—

१—एक वर्ण से चार वर्णों तक का चित्रकाव्य ।
२—भिन्नार्थ गतागतौ लक्षण उदाहरण ।
३—अभिन्नार्थ गतागतौ लक्षण उदाहरण ।
४—एक अनेक उत्तर लक्षण उदाहरण ।
५—व्यस्त समस्त लक्षण उदाहरण ।
६—अंतर्लापिका वहिर्लापिका लक्षण उदाहरण ।
७—मंत्रो गति और अश्व गति लक्षण उदाहरण ।
८—कपाट बंध चक्र ।
९—श्रीपदी चक्र ।
१०—अर्धगुप्तचक्र ।
११—चरमगुप्त चक्र ।
१२—पर्वतवंध चक्र ।
१३—चक्र वंध ।

१४—सर्वतोमुख चक्र ।

१५—कमल बंध ।

१६—धनुष बंध ।

१७—डमरू बंध ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है । लिपिकाल संवत् १८६९ है । रचयिता का कोई पता नहीं लगा ।

विशेष के लिये देखिए रूप साहि कृत "नवरस और चतुर्वृत्तिवर्णन" का विवरण पत्र ।

संख्या ३६८. चौपड़ की रूपक, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५, अपूर्ण (केवल १ कवित्त है), रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

॥ श्री जलंधर नाथ जी माय छै ॥

माया ब्रह्म भोर हार जीत सोर चहुं ओर ।
तीन गुन पासा बंध थांवर सु बचना ।
सोय उठै भागी मरै जिये जुग पागी ।
महाराज द्वैष मोचे जंग अंधा धुंध पचना ॥
रंग तै कुरंग पंच तत्व ही को जामें
अंग सिमट समावै सब अंबर के खचना ।
ग्रंथ तें पुरान अवतार वेद सार कथा,
अक्षयतो नाद ब्रह्मांड हू को रचना ॥ १ ॥

—अपूर्ण

विषय—

चौपड़ के खेल का आध्यात्मिक रूपक द्वारा वर्णन ।

संख्या ३६९. कागज—देशी, पत्र—२९ आकार—६$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३२, पूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—कैथी, लि० का० सं० १८७९ के लगभग, सन् १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुक्त गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम—गौंठा खास; पोस्ट दोहरी घाट, जिला—आजमगढ़

आदि—

सत नाम कबीर साहेब गुरु साहेब सत् गुरु साहेब कबीर धर्मदास हंस उबारन को बंदगी ली० ग्रंथ अग समाधी ॥

राय जुधीस्टल (? युधिष्ठिर) अचरज देखा । अचरज सकल देह मह पेषा ॥
अचरज बात कहै चीत राषो । ऐसा भेद काही सो भाषो ॥
काहे होत यह अचरज गाढ़ा । बीना सीस रुंड सब गाढा ॥
दीशा चारी होए घेरै आइ । अचरज बात कही नही जाई ॥
ऐगुन कवन होत अस नेहा । बीना सीस रुंड सभ देहा ॥

केही ऐगुन के कारने अस देषीत है भाव ।
स्री कृष्ण समझावहु मोही होत पछताव ॥

पंडो नंद सुनहु अस बानी । वंस अंस तुम मारेहु जानी ॥
वंधु मारी तुम भारथ कीना । इ सभ कैतुक ताकर चीन्हा ॥
बीना सीस जो रुंड देषावै । ऐह ऐगुन मोही नही भावै ॥
कोटि कोटि तीरथ करी आवहु । नेवता करहु जे पावहु साधु ॥
तव मेटे तन की अपराधु ।
वंधु व्रग तुम वहुतै मारा । सभ छेके अपराध तुमारा ॥
कन्यादान वो हाथी घोरा । इ सभ पाइ चआही वटोरा ॥

॥ सखी ॥

राज पाट धन संपती कन्या देत जो दान ।
जीव दान जग दुलभ इन्हते अवरी न आन ॥

मध्य—

तेही साहिब को सुमिरो ग्याना । तेही की आदी क्रीश्न नही जाना ॥
सवा लाष जीव करै अहारा । ताकर वंस क्रोस्न अवतारा ॥

भगती भेद के कारने भोजन करवै आए ॥
एय दुधीस्टील देखहु तुहरो चीत पती आए ॥

गनी गंध्रप क्रीश्नो संग राजा । इनके भोजन घंट न बाजा ॥
साहेब मानहु कहा हमारा । भगती महातम तछ (? तुछ) तुमारा ॥
बहुती भाती भोजन प्रकारा । थोरै साहेब करव अहारा ॥
कीनो प्रसाद सो तुरंत वीचारी । जैवीजन तै धोती धारी ॥
भगत सुदरसन बैठे आई । द्रोपती थार तुरंत ले आई ॥
भगत सुदरसन नीरगुन मूला । सभ प्रसाद कीन्हे सम तुला ॥
एक मो एक सुपच कीन्हा । भोजन ग्रास तीनी तब लीना ॥
तीनी बार तब घंटा बाजा । ... ...

अंत—

सखी

घटी कहै द्रोपती दीए मन षोटी

सुपच भक्त सदा आज्ञाकी। भोजन के इन भ्रम जानी॥
सात बार जो घंटा वाजा। पुरनहोए जग्य को साजा॥
वीनती कीन क्रीश्न सो थोरी। पुरन जग्य भइ नही मोरी॥
क्रीश्न कहा वेगी उठि धावहु। भक्ती जाए सुपच सो लावहु॥
कुबुधी वचन काहु मंदील भाषा। सुपच भगत जानी चीतराषा॥
गए दुदीस्टल नारद पासा। चरन टेकी कीनो चीत आशा॥
सुपच बहुरी कीन्ह जेवनारा। सात बार घंटा झनकारा॥

॥ सभै॥

सुपच भगत जब भोजन कीना बाजे घंट अकास।
गनी गंध्रप सभ देवता जै जै को प्रगास॥
गान गंध्रप सभ देवता धाए। सुपच को सभै मस्तके नाए॥
भगत सुपच अस भाषही साषी सो क्रीश्न सुनी लेहु।
भेद हमारन जानहु भगती कहा से देहु॥

इति ग्रंथ संपुरन

॥ जो देषा सो लीषा॥

विषय—

महाराज युधिष्ठिर को महाभारत में बंधुओं को मारने का पाप लगा। वह पाप साकाररूप धारण कर उनके पीछे २ लगा। राजा ने उससे पीछा छुड़ाने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण से प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने उनसे एक यज्ञ करने और माँस भक्षण न करने वाले ब्राह्मणों को निमंत्रित कर उनकी पूजा करने का परामर्श दिया। यज्ञ तभी सफल समझा जाता जब भक्त लोगों के भोजन करने पर सात बार घंटा बजता। निदान यज्ञ करने का आयोजन किया गया। बड़े बड़े ऋषि मुनि और ब्राह्मणों को बुलाकर भोजन कराया गया; परंतु घंटा न बजा। भगवान् श्रीकृष्ण के कहने पर एक श्वपच को भोजन कराया गया जो निर्गुण का उपासक था। उसके भोजन करने पर सात बार घंटा नाद हुआ और यज्ञ सफल समझा गया। श्वपच ने राजा युधिष्ठिर को निर्गुण का उपदेश किया और श्रीकृष्ण से कहा—"आप हमारा भेद नहीं जान सकते।" निष्कर्ष यह है कि निर्गुण भक्ति की महानता सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—रचना काल लिपिकाल अज्ञात हैं; परंतु "ज्ञान प्रगास" ग्रंथ, जो प्रस्तुत रचना के साथ एक हस्त में है, का लिपिकाल संवत् १८७९ वि० दिया है। अतः इस रचना का भी लिपिकाल लगभग यही मान लेना ठीक है। रचयिता का नाम अज्ञात है।

संख्या १७०. जोग वशिष्ठ सार, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—९×७$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य,

लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। दाता—महंत श्रीराजाराम जी साहब, स्थान व पोस्ट—बड़कागाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः वसिष्ठ सार लिषते ॥

॥ मंगलाचरन दोहा ॥

है अनंत व्यापक सकल चीनमय सीरो धाम।
अनभौ तें ठहरात जौ ताकों करो प्रनाम ॥ १ ॥
हौं बाधों छूटौ कवै ऐह नीश्चै है जाहि।
नहि मूरष नहि प्रती चतुर यह विद्या है ताहि ॥ २ ॥
जौ लगी नहि जगदीशकी होत क्रीपा को लेश।
तव लगी शतगुर नहि मीलै नहि विद्या उपदेश ॥ ३ ॥
मोह सींधु को तरन को सतगुर कहो उपाव।
ज्यौ धीमर तें पाईए नदी तरन को नाव ॥ ४ ॥
ज्ञाण महा औषध तें मीटै दीर्घ रोग संसार।
को हौं का को जन्म है ऐसो कियो वीचार ॥ ५ ॥
फल अरु सीरो छांह को नहि साधु तरु भेश।
एक दिवस वसीए नहि ऐसो नीर्जन देश ॥ ६ ॥
संगति साधुन्ह की भली जौ कछू सीषवत नाहि।
सहज वचन उन्ह कै सवै ऐही सीषावन आहि ॥ ७ ॥

\+ + + +

भीष भली लेई ठीकरा घर घर गली बजार।
जो अज्ञानी "रामजू" ताको जीवन धार ॥ १६ ॥

अंत—

मीलि समुद्र सब रवि तपो वहो प्रलै को वात।
ताकी घटती होत नहि जाको चीत बिलात ॥ २७ ॥
जो चेतन्य सब भूत को हर्दै अस्ती की शाषी।
पुरणघन आनंदमृत ताहि चीतै चीत राषी ॥ २८ ॥
थावर जंगम सवै कछु मन तें देषो जात।
मन के उनुमुनु भावते द्वैत सकल सीरात ॥ २९ ॥
जो है अविचल सांतसीव जामें जक्त निवास।
थावर जंगम एक सो अहै चेतन्यु विलासु ॥ ३० ॥

जब लोके घुरी नातजै सब लो जानै देह।
तजि पुनि तेहि चीतवै न ग्रहि है जद्यपी सोजेह ॥ ३१ ॥
तज्य दोष मति परिहरै नहि अफीम के जाल।
करै न गुनमती वीहीत कों ज्यौं बालक को ख्याल ॥ ३२ ॥
ज्यौं बीनू रचनाहिं रहै पुतरि पखनी माह।
त्यौं जग है पर ब्रह्म मो जग विनु आतम नांह ॥ ३३ ॥
विनु पूतरी के पखन मो पुतरि रहै समाए।
ऐसे आतम मो जगत संतत मो दरसाए ॥ ३४ ॥
जैसे वारी अगाध मों होई न होई तरंग।
तैसे बुध अरु अबुध को आतम जक्त प्रसंग ॥ ३५ ॥

इती श्री जोग वाषिष्ट सारे जिन्मुक्तलछे निवर्णनो दसमो परिकरणं ॥ १० ॥

विषय—

भाषा में योगवाशिष्ठ का सार वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना अन्य तीन ग्रंथ—'सूरसागर', 'विचार माला' अनाथकृत तथा नंददास कृत 'नाम माला' के साथ एक हस्तलेख में है। इन सब ग्रंथों का लिपिकाल संवत् १८८२ है। प्रस्तुत रचना का रचनाकाल अज्ञात है। समस्त रचना दोहों में है और भाषा इसकी व्रज है।

संख्या ३७५, ज्ञानमाला, कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—५'९ × ९'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारागंज प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥
अथ ज्ञानमाला लिख्यते ॥

एक दिन राजा परीक्षित राजगद्दी पे बैठे थे ता समय श्री कृष्ण व्यासदेव जी के पुत्र श्री शुकदेव जी आये राजा देखते ही सिंहासन से उठि खड़ा हुआ और सत्कार सहित उनको सुंदर स्थान में लेजाके रतन जटित सिंहासन पे बैठाय दोउ चरण कमल को धोके चरणोदक लिया और बिधिपूर्वक पूजन करके नाना प्रकार की सामग्री भोजन करवाई जब श्री शुकदेव जी प्रसन्नता सहित बैठे तब राजा ने हाथ जोड़ के बिनती कीनी कि हे कृपासिंधु दीनदयाला आपको अति दयालता से सदैव वेद और पुरान के सुन्ने से मेरे हृदय में चांदना होता है और मन को आनंद प्राप्ति होता है परंतु अब मेरे मन में एक संदेह उत्पन्न भया है कि संसार में ऊंच और नीच दोउ कर्म है सो आप कृपा करिके इन दोनों कर्मों के भेद भिन्न भिन्न मोसे कहो

अंत—

१२४ शिक्षा

हे अर्जुन जो नर रोटी आज की अगले दिन जो खाय
सदा रहै बेकार वह अंत नर्क मे जाय
रहै दुखी संसार मे उस्के पुत्र निदान
यह सुनि अर्जुन ने कह्यो हे घनश्याम सुजान
की कुन्वीनर के बचे वस्तु आज की काल
तो कैसे या पाप सो पावे मुक्ति दयाल
कह्यो स्याम ने हे हितू मीठाइ पकवान
खावे तो दोषत नहीं रोटी मेमत जान
पै बासी रोटिन को खानो दुख उपजाय ॥
पाप्र अन्न हकि साप दे वह नर सुख ना पाय ॥
चार व्याध उत्पन्न हो जाये बासी खाय ॥
आदि बुद्धि की हानि हो दुजे तन घटि जाय ॥
तीजे आर्वल हीन होय चौथे रोजी घाट ॥
इतने लछन पाप के होवे बारा बाट ॥

१२५ शिक्षा

हे अर्जुन जो मनुष्य इन तीनों बातन को अपने चित्त सो कभी न्यारी नही करे तो इस लोक और परलोक में परम सुख पावे प्रथम स्वामी की सेवा मे हंसमुख और निरलोभ रहै दुजे चाकर के मन को दुखी ना राखें तीजे क्रोध न करे ॥

इति ज्ञानमाला संपूर्ण ॥ श्री राम जी को अर्पणं

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'ज्ञानमाला' है। यह संस्कृत से भाषा में अनुवादित है। 'ज्ञानमाला' में शुकदेव और परीक्षित तथा श्री कृष्ण और अर्जुन का परस्पर संवाद है एवं कर्त्तव्याकर्त्तव्य कर्मों का विस्तार पूर्वक वर्णन है। 'ज्ञानमाला' अधिकांशतः गद्य में है; किंतु कहीं कहीं पद्य का प्रयोग भी हुआ है, पर बहुत कम।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ ज्ञानमाला' के रचयिता, रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसकी रचना गद्य में हुई है। यह गद्य यद्यपि व्यवस्थित नही है फिर भी खड़ी बोली की ओर झुकता हुआ है। ब्रजभाषा के प्रयोग भी बराबर आते गए हैं।

संख्या १७२. ज्ञानस्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—५ X ४'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६५, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः लिषितं सुरोदैज्ञान

॥ दोहा ॥

करता भरता जगत के हरता है हर ईस ॥
सुर नर वंदित आनि कै ताहि नवायौ सीस ॥ १
सर्वं जीव कौ जीव है सर्वं प्रान कौ प्रान ॥
सर्वं विद्या को विद्या सर्वं ग्यान को ग्यान ॥ २
गोप असुर सुर नाग नर काहू लप्यौ न जाइ ॥
पारवती परगट कियौ जग मैं दियौ चलाइ ॥ ३
सो अब हम भाषा करयौ सत गुरू के परताप ॥
सर्वं सिद्धि को जो करौ हरै त्रिविधि को ताप ॥ ४

अंत—

वार नछत्र जोग तिथि करन जो चाहै काज ॥
अमृत बोल सुरोदै सर्वं सिद्ध से राज ॥ ११९
और सास्त्र जनि पढै येक सरोदक होइ ॥
त निर्भैता को राज है व्यापै व्याधि न कोई ॥ १२०

इति श्री ज्ञान सुरोदै लिषितं संपूर्नं समाप्त सुभमस्तु ॥ वैसाष मासे कृस्न पक्षे अष्टमी ॥ ८ ॥ भौम वासरे कइ संवत् १८९५ के साल ॥ लिषा लाला भोपाल कोठी के ॥

॥ दोहा ॥

जो प्रति देषि सो लिषा मोहि न दीजै गारि ।
भूल चूक अक्षर घटै पंडित लेव सुधार ॥
जो कोऊ बाँचै सुनै उतारै पढै तेषा जै श्री रघुनाथ जी की पहुँचै ।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'ज्ञान स्वरोदय' है। इसका विषय श्वास प्रश्वास का विषय है। श्वास प्रश्वास गति विधि के द्वारा शकुन अपशकुन का विचार करना बतलाया गया है। ग्रंथ दोहों में लिखा गया है। इसकी भाषा ब्रज है।

संख्या ३७३. तखत सिंह जी की ख्यात, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—१३ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री माता जी सत छै। (ख्यात महाराजाधिराज श्री १०८ श्री तखत सिंह जी साहिबांरी लिखते)

संवत् १९२५ रा मिती आसोज सुद ८ रो दिन आबू जी सूं पाछा पधारने सहर रै बारे रात आधी बजिया डेरा दाखल हुआ ने नयरे दिन तीसरे पारे पछै असवारी हुई हाती रे हांदे विराजिया खवासां में राणावत जोरावर सिंह गभीर सिंघोत मोर छत्र कियो ते बहुत जलुसायत सूं असवारी रे लवाजमां सुं बहुत उमदा गिरी सूं हुई।

अंत –

पछै श्री जी बाईस कलमां फुरमाइ, सिरदारां रा कामेतियां नै कै थांरा थे हजर करौ हौ, पण या कलमांरो किणत रै सुं, जरा सारा सिरदारां रा कामेतियां कबूल करी नै आ अरज करी कै ऐ बाईस कलमां में कोई गलती नहीं है पण आवरी खांवरी सुं मांने निबावो हो।

—अपूर्ण

विषय—

महाराज तखतसिंह की ख्याति का वर्णन

विशेष ज्ञातव्य—सं० १९२५ से लेकर सरदारों की २२ कलमों को स्वीकृत करने तक की ख्यात का वर्णन किया गया है। आरंभ के दो पत्रों में स्वयं महाराज तखतसिंह के कवित्त हैं।

संख्या ३७२. तीसा चक्र, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—१०½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १९२२ वि० (संभवतः), प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरित्तर भगत; मठिया—मनिअर, पो०—मनिअर; जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेशायेनम् ॥ श्री गौरीशंकर जी ॥ अथ तीसा चक्र लीष्यते ॥

॥ शवैआ ॥

सोई रहोनीति मोह निशामह जानि परे नहि राम पीआरो।
जन्म अनेक गयो शयनातर एकहु वेर न जाग्रीत धारो।
आदि गुरू तव देषी दयाकरी तीशा सूचक्रहि सब्द उचारो।
चारिहु वेद पुरान अठारह सोधि कहौं यह तत्व बीचारो ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

जीव कीतारथ करन हीत भाषा कीन्ह बीचार।
तीसा चक्र सो बुझी के नर उतरही भवपार ॥ २ ॥
कली मह जीवन अल्प है करीए वेगी उपाए।
तप साधन नहि होई शकै केवल नाम सहाए ॥ ३ ॥

॥ जगाइवे का प्रेम ॥

प्रेम जगायो वीरह को वीरह जगायो जीव ।
जीव जगायो पीव कंह वोही पीव योही जीव ॥

मध्य—

॥ जानिये का सभ प्रभुका ॥

जानीये मन वच क्रम सब सो प्रभु के वीस्तार ।
जेंव राषै तुम्हे राम जी रहिहो तेहि प्रकार ॥ १७ ॥

॥ छाडीये का अभिमान ॥

छोडो जब अभिमान कंह सूषी भयो तब जीव ।
भावै कछु कोई कहै मोरे हीअ मंह पीव ॥ १८ ॥

॥ पाइये का सूष ॥

पाइये सूष गुरुदेव सो थीर भये मन मोर ।
मीरपु आपु शरवत्र मह केवल नंद किशोर ॥ १९ ॥

अंत—

॥ सवईआ ॥

भाग्य जगौ जब पुर्वीत को तब श्री गुरु देव दआ करी हेरी ।
ग्यान कपाट उघारि दीयो तब मोह तीसा दीतते सब फेरी ।
थोर ही मो समुझाई दीयौ सब थीर कीयो मति चंचल मेरी ।
बुझी परी सबही भरमो तब छुटि गए सब तरक घनेरी ॥ ३४ ॥

इति श्री पोथी तीसा चक्र संपूर्न ॥

॥ सोरठा ॥

नारद सूत के नाम वीने रतन वान जुत ।
अतने सये प्रमान रुद्र दुगुन तापर अधिक ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

मास असाढ पछ सुदी तीथी षस्टी गुरवार ।
नछत्र नाम गुरु बारहा ता वीन भआ तेआर ॥ २ ॥
मकार नकार झकार रकार जुत ग्राम नाम प्रमान ।
षकार रकार दीकार जुत ताही प्रगना जान ॥ ३ ॥
गकार अकार पकार ओला रकार जानीए ॥
रामखन पठवारथी लीषक गंगा मानीए ॥ ४ ॥

विषय—

बत्तीस बातों का उल्लेख किया गया है जिनका भगवत् प्राप्ति के लिये मनन करना चाहिए।

इनके नाम इस प्रकार हैं :—

१—जगाइये क्या ? प्रेम।
२—पूजा किसकी ? गुरुकी।
३—परखिये का ? शब्द।
४—लीजिये क्या ? नाम।
५—करिये क्या ? सत्संग।
६—हूजिये क्या ? दास।
७—बोलिये क्या ? मीठा।
८—मानिये क्या ? सत्य।
९—बचाइये क्या ? झगरा।
१०—खाइये क्या ? गम।
११—पीजिये क्या ? तामस।
१२—राखिये क्या ? धर्म।
१३—त्यागिये क्या ? मेरा कछु नाही।
१४—जानिये क्या ? सभ प्रभु का।
१५—छोड़िये क्या ? अभिमान।
१६—पाइये क्या ? सुख।
१७—देखिये क्या ? आत्मा।
१८—मिटाइये क्या ? भ्रम।
१९—सुनिये क्या ? गुन।
२०—लखिये क्या ? अपना रूप।
२१—साधिये क्या ? इन्द्री प्रबल।
२२—मारिये क्या ? आशा।
२३—पाप बड़ा क्या ? हिंसा।
२४—पुन्य क्या ? जीव दया।
२५—सुगंध बड़ी क्या ? यश।
२६—दुर्गन्धता क्या ? अयश।
२७—धरिये क्या ? धीरता।
२८—ठहराइये क्या ? मन।
२९—होनी क्या ? होनिहार।
३०— ×

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संभवतः संवत् १९२२ के लगभग है जो दोहे में दिया है; पर जिसका अर्थ ठीक ठीक समझ में नहीं आता। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में पाँच ग्रंथ और हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं:—१—सतसई, गो० तुलसीदास कृत; २—मार्कण्डेय पुरान; ३—दत्तात्रय सतसंग उपदेस सागर, नायक कृत; ४—सुन्दरगीता, सुंदर कृत; ५—सर्वसिद्धांत श्रीराम मोछ परिचै (मोक्ष परिचय), नायक कृत।

संख्या १७५. त्रिलोक दीप का चौपाई, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—९३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९९, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

॥ [० ॥ दोहा ॥

चौवीसे जिन वरनमी सरसति गुरु प्रणाम।
चौवीसे मंमक तणे संबन्धिज्यो लिउं भाम। १
मंमक मंपे पै भणुं संभलिज्यो नर नारि।
गुरु प्रसादि भाषा करूं सुणिज्यो चित्त अवधार। २

चौपाई

साते नरकां मंमक एक भवन पतीनाद स सुविवेक
पांच थावर नोहकर जाणि बिग लिंद्री ना तीन वषाणि। ३
तिर जंधगर्भज नो मंम कमेक, गर्भज मानव नो वलि एक।
जोतिसी वितखे मार्गीया एक एक मंमकतीन वषाणीया। ४
घमावंसा सेला जाण अंजण रद्वाम घामाघवती वषाणि।
भवन पतीके असुर कुमार नाग कुमर विधुधार। ५
अग्नी दीपउ दही दिमा कुमार पवन कुमर घणि अवतार।

\+ \+ \+

? संबन वाण गुपति सुं एह

अंत—

विग्रह गति केवल समुद घात सुंजी अजोगी नह सिद्ध।
आणाहारी एतलाजी सागर पथ्य सास प्रसिद्ध ॥ ५४ ॥
मिश्र सचित अचित वैजी भोजन तीन पकार
नर्क सुर अचितु सुंजी उर सब तीन विचार। ५५
च्यार थावर काल असंच मुंजी वण सै काल अनंत
पंचेंद्री भव आठ छे जी वेइंद्रीवर संख्यात। ५६

तेइंद्री संख्याता दीह डाजी चौरिंद्री संख्या ता मास
गति गति माहि एतावसैजी लष चौरासी योनिवास । ५७
वेदनी कषाय मारणं तीया जी वैक्रीते उजस आहार
केवली समुद घात वैजी पांच तिरीय मंझार । ५८
नर्क सुर वै च्यार वैजी थावर विगला तीन
मानव मैं सातें धरौं जी समुद घात उन्मीन । ५९
करम सरीर भंभो उपकरण जी सब माहि तीन वपाण
नर्क थावर दोय सुं करम सरीर सुजांण । ६०
यह नो यमग निवार सें जी जो जिन सुंकर सी प्रीति
भव पड़तां तूं रापसी जी मुझा मे एह रीति । ६१
गुण ग्राही सो भानि लो जी सुमति गुपति वर वीर
नागौरी गणनाथ को जी श्री सदा रंग जी मन धीर । ६२
गुण छतीसे गाज तो जी अव चल पालो तेज
जे नर नारी समरजे जी ते लहिये सिवपुर सेज । ६३
तास प्रसादे एकरी जी

विषय—

सृष्टि क्रम निर्धारित करते हुए जगत की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—'अरिष्ट नेमि पुराण' (जैन) में इस प्रकार की कथा आई है—किस प्रकार संसार उत्पन्न हुआ, तीनों लोकों की सृष्टि किस प्रकार हुई ? इसी आधार को लेकर प्रस्तुत ग्रंथ का प्रणयन हुआ है।

रचनाकाल अस्पष्ट है:—

'संवत बाण गुपति सुं एह' ?

संख्या ३७६. दानलीला, कागज—देशी, पत्र—१० पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११३, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥
अथ दानलीला लिष्यते ॥

हुए महबूब गोकुल में कीया घर नंद कुल रोशन ।
रमे सीर ओढ़ पीतांबर सबे वीन सोहए विंद्राबन ।
न जावे धेम उतवा सुंदर खेलावत जूलफा भर आगन । १
खेले गोप के लड़के लई सब धेन आगे कर
अनूपं वास की मूरेली बजावत मधूर ओ तामन । २

गए जद कुंज कुंजन्मे पहिर गलमाल फूलन को
धरे सीर मोर के पखवा बरावत वांसरू गायन । ३
गए जब सा करिन्रे वारीन्कीया गुलगस्त हरीवन को
लखी जो ग्वालनी आई अभूषं मना जो मनमन । ४
सहेली सहद की भूमर लखी जो राधिका हरने
डगर को घेर कर हंस वोले चुकावो आज दधि भांजन । ५
गई हो वेच दधि सब दिन दगा दे दे पिगारी तुम
अगर वी रोज पाया है न जैओ विन्दीय दानन । ६
सखी एक उठ हस वोली वे अेवृय गुसान हो लालं
कहा ईतरात पंडे मे सुनी नहि कान दधि दानन । ७
नह पर खेप मोतियों का न लादे लाल ओढी रा
न केसर मस्त की गाद्दी लदाय जात हो दासं । ८
सोपारी जायफर लवगे न मीश्री कंद औ मेवा
नह पर सेव नारंगी न नींबू आम वो जामुन । ९

मध्य —

गया जब पास हम उनके उलहना देन सब आई
कहो गामाये इन ग्वालन देई गुलचा मेरे गालन । ३५
तुम्हारी सास सुन पावे इमन तुमन की वाते
निसायत वेसे वालक है करेगी झूठ सब वातन । ३६
तुम्हारे कंथ त्यागेगे सीखाऊ मोहनी मंतर सकल
जग होय वस तुम्हरे करो इन प्रेम सो ध्यानन ।
कहो जी स्याम तुम कारे उजागर रूप यह बतियां
करत झगरा अवर हांसी कही सब वात यह ग्वालन । ३७
कहो जी संग मीले कैसे की नाही वीन मिले रातन
सुनो री रूप कर भूली छवीली ग्वालनी मूरख । ३८
करत हो स्याम को निंदा सराहत रंग हो जरदन
अगर जो केस तुम कारे नहीं तब कोन पुछे तुम । ३९
दीये तुम नयन काजर रही हो मोह वनी जानिन
वीये तुम मुरको वृंदा जो सोहै खोर चन्नन के । ४०

अंत --

गई जब आपने घर घर पूछे सासु और ननदी कहा
तुम रएन वीताइ है कहो तुम सच सो बतीयां ।
भई बन मांह जो संझा चली घर आपने जब ही
न पाया माय है की भयरी लाचार पर बस मे । ७२

की आने साथ की सखीयां की आने एक बेनाथा
सुनत यह दान दधि लीला मगन होय रामकृष्णजी ने

विषय—

कृष्ण और गोपियों की दधि लीला का वर्णन।

विशेषज्ञातव्य—अठारहवीं शताब्दी के अंत मे लावनीबाजों की जो धारा चल पड़ी थी उससे खड़ी बोली के प्रचार में बड़ी सहायता मिली। प्रस्तुत रचना भी उसी प्रकार की रचनाओं में से एक है। इसकी भाषा में काफी चलतापन है। खड़ी बोली और चलती उर्दू के काफी शब्द हैं। लिपिकाल और रचनाकाल दोनों अज्ञात हैं।

संख्या ३७७. दुलरी लीला, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४'४ × ५'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७४, प्राप्तिस्थान—हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गंग पचीसी लिख्यते ॥
चौ० गंग पचीसी मै कहों गौरी गनेसै ध्याय ॥
सिव विरंचि को सुमिरि के रघुनंदन चितुलाय ॥ १
भूषन वरनन,मै करौं सब सुनियो चितु लाय ॥
धर्म विराजै अंग मो सकल पाप कटि जाय ॥ २
अर्ज करौं महराज सों चरन पकरि सिर नाय ॥
भौ सागर मोहि पार कर अपनी नाव चढ़ाय ॥ ३

॥ छंद ॥

पायन पीत पाय पोस कटि कंकिनी हीरा जड़े ॥
जामा दुसाला पीत धोती रंग कुंकुम के परे ॥
दोउ हाथ पहुँची मुद्रिका भुज नग लगे सब जगमगे
ऐक हाथ भामिनि विराजै माल मोतिन की गरे ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

तब मन मो दाया करी वेह से कृष्न मुरारि ॥
राधे जू के कंठ मो बांधी अपने हाथ ॥ ६१
तेहि पाछे दुलरी मिलै चलौ हमारे साथ ॥ ६२
प्रभु पतिवर से छोरि कै राधे दोउ कर लीन्ह ॥
ऐक सखी सों मांगि के प्रभु को मुरली दीन्ह ॥ ६३

इन दुलरी पाई आपनी इन मुरली पाई आप ॥
कहत सुनत पातक हरै कटै अंग के पाप ॥ १४

॥ शुभं भूयात ॥

संवत् १८७४ आसाढ़ मासे शुक्ल पछे चौथम्यो बुधवासरे

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "दुलरी लीला" है। ग्रंथ के प्रारंभ में लिखा है :—"अथ गंग पचीसी लिख्यते"

परन्तु यह कथन निराधार है; क्योंकि इस ग्रन्थ में गंग कवि का एक भी कवित्त नहीं प्रत्युत इसमें "दुलरी" लीला है।

लीला इस प्रकार है :—श्री कृष्ण राधिका की दुलरी (एक आभूषण) चुरा लेते हैं और राधिका उनकी मुरली चुरा लेती हैं। मधुर वादविवाद के पश्चात् दोनों प्रेमपूर्वक एक दूसरे की वस्तुएँ वापस कर देते हैं। "दुलरी लीला" में दोहा, सोरठा तथा कवित्त आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। भाषा व्रज है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल सं० १८७४ वि० है।

संख्या ३७८. द्रोण पर्व, कागज—देशी, पत्र—२११, आकार—१०.८ X ६.६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधा रमणो विजयते ॥ नारायणं नमस्कृत्यं नरं चैव नरोत्तमं देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जय मुदीं रयेत् ॥ १ ॥

॥ राजोवाच ॥

राजा जनमेजय वैशंपायन ऋषीश्वर ते पूछ्यौ भीषम पितामह बडे कौरवन में मुख्य तिनकौं गिरे सुनि राजा धृतराष्ट्र कहा करत भए फिरि कौरव कहा करत भए सो कहो ॥

वैशंपायन उवाच ॥ राजा धृतराष्ट्र संजय सौं पूछयो हे संजय ऐसे मेरे पितामह वृद्ध तिनको गिर सुनि मेरी छाती फटत नहीं ॥ जो भीषम पिता देवव्रत बड़े सूर वेतो शिखंडी के हाथ मरण कौं पाये फिरि कौरव कहा करत भए सो कहो ॥

संजय उवाच ॥ संजय कहत है हे राजन् जब भीषम पीता मरण को पाए तब तेरे पुत्रन को कुछ सूझ न भयो युद्ध को वन्दिम करि उठे बाजित्र बजावत भए या भांत युद्ध को आए ॥ परंतु बिना सेनापति सैना चारहू डोलत फिरे और पांडवन के मारे भाग फिरे ॥

ता समै नायक बिना कौरवी सैना महा व्याकुल भई ॥ पुकारि सब रोइवे को लगे । राजा यह तेरे प्राताप ते कौरवन की ऐसी अवस्था भई ॥

मध्य—

॥ राजा अंविषत को पुत्र मरुत ॥

जाकों संवर्त्त ने जगिन करायो ॥ जाके जगिन में सब सुवर्ण ही के पात्र जाके जगिन में लोगन वांछित वस्तु पाई ॥ जाके जगिन में देवता कार्य करिवे को रहे ॥ ऐसो वडो रावर को सोउ मरण को पायो तो तेरे पुत्र की कौन गिनती है ॥ जाने न दान कियो ॥ न जगिन करे ॥ ताको तूं कहा दुःख करत है ॥ वह राजा तेरे पुत्र तें चौगनो हतो सोउ मूश्रा तो तेरे पुत्र की कौन गनती है ।

अंत—

संजय राजा धृतराष्ट्र ते कह्यो हे राजा पांच दिवस तांई जुद्ध करि द्रोणाचार्य उत्तम लोक कों पाए जो कोई द्रोण पर्व को सुने जामें पाडौं यादौं की जै है ऐसो द्रोणपर्व जो कोइ सुने सो सब पापतें छूटे ॥ द्रोणपर्व समाप्त भयो । अब कर्ण पर्व को आरंभ होयगो ॥ द्रोणाचार्य के मूए पाछे सब कौरव दीन··· आए पंचम दि (वस)···इति श्री (द्रोण पर्व)···संहितायां वै···संपूर्ण···(आ) वन शुक्ल चतुर्दशी···

—अपूर्ण

विषय —

प्रस्तुत "द्रोणपर्व" में महाभारत द्रोणपर्व की कथा है । भीष्म पितामह के निधन के पश्चात् कौरवों ने द्रोणाचार्य को अपना सेनापति बनाया । पाँच दिन के घोर युद्ध के पश्चात् द्रोणाचार्य मरण को प्राप्त हुए । आचार्य के युद्धकाल के अन्तर्गत संसप्तकों का विनाश तथा अभिमन्यु और जयद्रथ के बध की कथाएँ भी समाविष्ट हैं । भाषा ब्रज है और ग्रंथ गद्य में है ।

विशेष ज्ञातव्य—"द्रोणपर्व" के रचयिता का नाम धाम आदि अज्ञात है । इसका कारण कदाचित् यह है कि उसने समस्त महाभारत का अनुवाद किया होगा; क्योंकि अंत में लिखा है: —

"अब कर्ण पर्व को आरंभ होयगो"

रचना काल तो दिया गया था; किंतु दीमकों की कृपा से वह भी नष्ट हो गया । लिपिकाल नहीं दिया है । ग्रंथ की लिपि सदोष है । बीच बीच में शब्द छूटने की त्रुटियाँ बहुत हुई हैं ।

"द्रोणपर्व" ब्रजभाषा गद्य का उदाहरण प्रस्तुत करता है; किंतु उसकी प्राचीनता विवादग्रस्त है । नीचे दिया गया प्रयोग विचारणीय है:—"तुम सहस्र की छुरी हो"

कुछ अन्य प्रयोगों से ज्ञात होता है कि रचयिता किसी पूर्वी प्रांत का है: —

"अछत", "इग्राइन लाख बान मारे"

"लोव मूआ तो तेरे पुत्र की कौन गिनती है"

"करत हते" और "करत भये" आदि से इसका पंडिताऊपन भी ज्ञात होता है। फिर भी द्रोणपर्व का गद्य व्यवस्थित और परिमार्जित है और उसमें एकरूपता है।

संख्या ३७६. द्वादश स्कंध अनुवाद (भागवत), कागज—देशी, पत्र —३६, आकार—१०·६ × ७ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८०७, लिपिकाल—संवत् १९.. मिति पौष शुक्ला १४, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री मन्निस्य कुंज विहारणे नमः ॥ अथ श्री भागवत द्वादश स्कंध लिप्यते ।

॥ दोहा ॥

रसिक भूप हरिरूप पुनि श्री चैतन्य स्वरूप ॥
हृदै कूप अपरूप रस उमल्यो बहै अनूप ॥ १
मगध वंश के नृप कहे द्वादश पहले ध्याय ॥
भए वरण शंकर शवै कलि प्रसंग कौं पाय ॥ २

॥ चौपाई ॥

राजो वाच ॥

जदु कुल भूषण कृष्ण जु आही—अपने धाम गए ते ताही ॥
कौन को वंश भयो धर में पुनि—यह हम सौं सब कहो अहो मुनि ॥

॥ श्री शुक उवाच ॥

वंश बृहद्रथ के पुनि पाछे—नाम पुरिंजय ह्वै है आछें ॥
ताको मंत्री सुनत जु आही—सोवह रुहो भार कें ताही ॥

मध्य—

श्री रूप सनातन रसिक रस इक ठा किया "बिनु चूंसन छूंछको तिन्है न पूछा" ॥ रसिक बरन मन हरन के श्री प्रिया दास जस बाश ॥ तासु हिय रस रासि कौ कृपा विलास प्रकाश ॥ श्री हरि की जीवनि सदा हरिही जीवनि नित्त ॥ दै रस राधा रूप को हरिहि जिमावत मित्त ॥ तिननि लखी मन नाटिका ''यह हरि रस रंग ॥ चहिय नाहि वि (सदा) टिका लाखो सवै प्रवीन ॥

अंत—

संवत अष्टादश१८ सत सात७ जेठ वदी छठि मंगल मासु ॥१४

इति श्री भागवते महापुराणे द्वादश स्कंधे पर्म वंश संहितायां भाषा रस'' त्रयो दशाध्यायः १३ संवत् १९'' मिती पौष शुक्ला १४

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ भागवत के द्वादस स्कंध का भाषानुवाद है। इसमें कलियुग की दशा तथा राजवंशों का वर्णन है।

विशेष ज्ञातव्य – ग्रंथ के कर्त्ता का नाम ज्ञात नहीं हुआ। ग्रंथ के मंगलाचरण तथा अन्य स्थलों से पता चलता है कि रचयिता गौड़ीय संप्रदाय का अनुयायी था। आरंभ में चैतन्य महाप्रभु की वंदना है और बीच में रूप सनातन का नाम भी श्रद्धापूर्वक लिया है। एक स्थान पर प्रियादास का भी उल्लेख है, पर ठीक ठीक निश्चय नहीं होता कि वही रचयिता है। रचनाकाल संवत् १८०७ है, लिपिकाल १९०० के पश्चात् है। १९ का अंक तो प्राप्त होता है, पर बाद के अंश को दीमकों ने नष्ट कर दिया है। यह अनुवाद दोहा, चौपाई में है और भाषा इसकी व्रज है॥

संख्या ३८०. नंदोत्सव, कागज देशी, पत्र—३९, आकार—९'६ X १२'४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६३९ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री विहारी जी का मंदिर, महाजनी टोला, इलाहाबाद

आदि—

श्री राधावल्लभो जयति ॥

अब श्री नंदोत्सव को प्रारंभ करे हैं ॥ तहां मूल में श्री शुक उवाच असौं क्यों कह्यो ॥ ऋषि उवाच ॥ बाद रायण उवाच असौं क्यों नहीं कह्यौ ॥ तहा यह हेतु है जो काहू कूं संदेह होय तो जानियो ॥ यह कथा झूंठी की सांची तब तौ वेद व्यास ऋषि उवाच असो पाठ लिषे हें ताकौ अर्थ सत्य संदोभ वेदर्षिः ॥ या वाक्य तें तौ सदा साच ही बोलें हें ॥ ते कहावें ऋषि ॥ सो इहां नंदोत्सव में तो कछू संदेह हे नहि ॥ तातें तो ऋषि-उवाच असौ न कह्यौ तब कही बादरायणिरुवाच ॥ असोई क्यौं न कह्यौ ॥ तहाँ कहे हें वदरिकाश्रम में तप करते वेद व्यास को नाम बादरायण है तिनके जो पुत्र सो कहावै बादरायणी सो यहाँ कछु तप आदिक जे साधन तिनकी कछू अपेक्षा हू नही हे याही ते वादरायणि उवाच असो हू नही कह्यौ ॥ श्री शुक उवाच असे ही कह्यो ॥ तहां शुक उवाच ताको अर्थ करे है कि तोता द्वे तरह के होंहें एक तो टें टें टें टें शब्द करि के कान फोरे एक पढ्यौ भयौ तोता राधाकृष्ण कहत ही में चित कुं चोरें है ॥ सो शुकदेवजी तो पढे भए तोता हें ॥ यामें वांमाधुर्यत्व और सर्वमनोहारित्व आयो ॥ अथवा तोता जेसो पढ्यौ होय तेसोई उच्चारण करै है ॥

अंत—

जा दिना ते कृष्ण जन्म भयो ताही दिना ते संपूर्ण व्रज सबरी संपदान करि कैं संयुक्त ह्वै गयो है ॥ यद्यपि श्री नंदराय नित्य प्रति वा खजाने कूं लुटामें हैं ॥ परन्तु जब भंडारी तारो खोलै तबई सबरे कोठे भरेइ मिलें हैं ॥

श्री नंदालय में वह मणि जटित आंगन है तहाँ सगरी गोपी दधि कांदो करि रही हैं और आपहू तहां भाव करि के ठाडे हैं ॥ सो माखन की जो मार भई एक तो प्रथम मणि ही चीकनी तापै परं हैं माखन के लौंदा सो तापै जो पाव परि गयो सो पाव के रपट तेंई जो खिसलै सोई पुकारे हे नृप अरे राजा जो तोहि कथा सुननी है तो मोंहि हाथ पकरि कें लीजौ नहीं तो मैं या दधि कादे की कीच में बह्यौ जाऊं हूं ॥ जो श्री शुकदेव जी सरीके वक्ताई रपटि गए तो ऐसो दूसरो ओर बकता कोन जो इनकी सी कहै ॥

॥ इति नंदोत्सव संपूर्ण ॥

कार्तिक बदी २ संवत् १९३८ मिति ॥ हस्ताक्षर वैष्णव गोपीदास श्री राधावल्लभो जयति ॥

विषय—

ग्रंथ में कृष्ण जन्म के उपलक्ष्य में नंदगृह में मनाए गए उत्सव का विस्तारपूर्वक वर्णन है। इस उत्सव का वर्णन श्री शुकदेव जी द्वारा कराया गया है। नंदोत्सव का मूल भागवत है इसीलिये जहां तहां बीच बीच में भाष्य की तरह टीका टिप्पणी भी होती गई है।

कृष्ण के जन्म लेने के दूसरे दिन दधि काँदो का समारोह हुआ। बड़ी भीड़ इकट्ठी हुई और सबने आनंदपूर्वक उत्सव मनाया। अब भी व्रज में यह उत्सव मनाया जाता है।

विशेषज्ञातव्य—'नंदोत्सव' में 'श्री राधावल्लभो जयति' के पश्चात् तुरंत ग्रंथ का आरंभ हो गया है। इसमें न तो मंगलाचरण ही है और न प्रस्तावना ही। रचयिता और रचनाकाल का भी उल्लेख नहीं है। ग्रंथ व्रजभाषा गद्य में लिखा गया है। इसका लिपिकाल संवत् १९३८ है।

संख्या ३८१. नवनीत प्रिय जी की सेवा विधि, कागज देशी, पत्र—५८, आकार—८'८ × ५'६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५२ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गोपीजन वल्लभाय नमः ॥ श्री कृष्णाय नमः ॥ श्री हरिर्जयति ॥

॥अथ श्री नवनित प्रिय जी की सेवा विधि नित्य की लिख्यते॥ चिंता संताम हंतारो यत्पदांबुजरेणु व स्वीया नांतां निजाचार्यां प्रणमामि मुहुर्मुहु ॥ अथ पुष्टिमार्गीय भक्त सेवा नित्य की को प्रकार लिख्यते ॥

......धोती पहरनी ॥ पाछें प्रभुन को नाम लेवनो ॥ श्री आचार्य जी तथा श्री गुसांई जी तदनंतर निज गुरन को नाम लेनो ॥ पाछें उठि देह कृत्य करनों ता पाछें दंत धावन करनों ॥ पाछे चरणामृत लेनों ॥ विडाखानो मुख शुद्धार्थं जो मंदिर में भगवत्सानिधि वास ता मुख की न आवे एतदर्थ ॥ एकादशी के दिन बीड़ा न खानों ॥ पाछे तेल लगाइ स्नान करनों तदनंतर अगोंछा करनो अपरस की धोती उपरना पहिरनों पाछें आसन पर वैठि तिलक धारन करनों द्वादश तदनंतर मुद्रा धारनों ॥

मध्य—

श्री जमुना जी के सर गुलाल अबीर छिड़किये ॥ प्रभुन को भोग न्यारो ॥ श्री जमुनाजी को न्यारो ॥ ताकी विधि सेव खीर बड़ा छाछि के दही भात अनसखड़ी में खाना ॥ माठ ॥ सेव के लडुवा ॥ गूंझा ॥ सुहारी पीरी श्वेत ॥ मिश्री को पणा राज भोग......... ॥

अंत—

आसाढ़ पुदि पूर्णमासी ॥ अस पहिर मंदिर में जानो ॥ स्त्री पुरुष के सब स्वेत वस्त्र काढनें ॥ रसोइ की सखड़ी काढनी ॥ कढ़ाइ सखड़ी अन सखड़ी...॥ पहिले दिन मृतिका के पात्र सब काढने मंदिर सोई जल घरा के सब कालने ॥ यह ग्रहण की विधि ॥

इति ग्रहण विधि संपूर्णं ॥ इति श्री नवनीत प्रिय जी के इहां की सेवा तथा उत्सव मालिका संपूर्णं ॥ संवत् १८५२ मिती कार्तिक वदी १५ बुधवार श्री हरि ॥ श्री कृष्ण ॥

विषय—

ग्रंथ के नाम 'श्री नवनीत प्रिय जी की सेवा विधि' से इसके विषय का आभास मिल जाता है। यह पुष्टिमार्गीय रचना है। इसमें श्री नवनीत प्रिय (श्री कृष्ण) की नित्य की सेवा विधि तथा उत्सव आदि के मनाने की विधि विस्तार पूर्वक वर्णित है। श्री नवनीत प्रिय जी का मंदिर पुष्टिमार्ग का प्रसिद्ध मंदिर है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में रचयिता ने अपना नाम नहीं दिया। १९ वें पत्र पर जहाँ नित्य सेवा विधि समाप्त होती है और उत्सव विधि प्रारंभ होती है, यह दिया गया है:—'श्री गिरधर जी के घर को सेवक नित्य की सेवा को प्रकार तो लीखें हैं।' इसका स्पष्टतः कोई अर्थ नहीं। लिपिकर्ता का नाम भी नहीं पाया जाता। लिपिकाल संवत् १८५२ वि० है। यह रचनाकाल भी माना जा सकता था, परंतु ग्रंथ के ३०वें पत्र पर इसके विरुद्ध प्रमाण उपलब्ध होता है:—'यह रहि गयो हतो सो पीछे तें लिख्यो है। इससे

स्पष्ट है कि प्रस्तुत पोथी किसी अन्य ग्रंथ से लिखी गई है। अतः रचनाकाल सं० १८५२ के पहले चला जाता है। ग्रंथ का गद्य ऐसा नहीं है कि साहित्यिक दृष्टि से इसे कुछ महत्व दिया जा सके।

संख्या १८२. नसियतनामा (लुकमान हकीम के), कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६३ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १८६९ (के लगभग संभवतः), प्राप्तिस्थान—चतुर्वेदी घासीराम जी, वहलराय घाटी, मथुरा; जि०—मथुरा

आदि—

अथ नसियत नामा लिष्यते ॥

॥ पूछ ॥ वस्त किसपै मागीए ॥ कहाँ ॥ देता पुस्याज रहै ॥ पूछा ॥ कोन बात जासौ जीव पोषिए ॥ कहा ॥ धर्म सौ अथवा बुधि कै विचार सों ॥ पूछा ॥ कौन बात जांकी लोक बहुत ढूढे ॥ कहा ॥ तीन बात पहिले तो देही न रोग ॥ दूजो दिआ पुस्याज । तीजै मित्र हितकारी ॥ पूछा ॥ भलाई करना ॥ कहा ॥ भला ॥ बुराई सौ दूर रहना ॥ पूछा ऐसा कोई गुनी है जो फिर औगुन होइ ॥ कहा ॥ देकर मागना ॥ निहोरा करना ॥ पूछा ॥ ऐसी कौन बात जो बुधि कौ बढ़ावै ॥ कहा ॥ साच बोलना ॥ पूछा ॥ मरदानगी का चिन्ह कोन ॥ कहा ॥ मार सकै ओर न मारै ॥ पूछा ॥ भला काम कोन ॥ कहा ॥ आगला बुरा होइ तो आप बुराई न करिए ॥ पूछ ॥ जीवत छमें बृथा कौन ॥ कहा ॥ भला करि सकीए ओर बुरा न करिए ॥ पूछ ॥ कितनै हुकम मानीय ॥ कहा ॥ तीन ॥ पहिले श्री परमेश्वर कौ तथा अपने षांवद कौ ॥ दूजे सयानौ का ॥ तीजै मात पिता कौ ॥ पूछा ॥ मौत से बुरा कौन ॥ कहा ॥ दालिद्र ॥ पूछा ॥ कोंन बात जो लोकां कै काम षराब करै ॥ कहा ॥ अनीत कौ सराहिबो ॥ ओर झूठी सांहोष बोलै ॥ पूछा ॥ ष्युवेरी न बात सौ ॥ कहा ॥ कलह सौ ओर फिसाद सौ ॥ पूछा ॥ फिकर कौन बात सौ होई ॥ कहा ॥ अकेला रहे ॥ पूछा ॥ कुबुधि की निसानी कौन ॥ कहा ॥ बेसरमी ॥ पूछा ॥ बुधि के ताई कौन काटै ॥ कहा ॥ लालच ॥ पूछा ॥ संसार में भली वस्तु क्या ॥ कहा ॥ बिना मतलब सौं नरमाई ॥ पूछा ॥ ममलत कौन सौ बुझिए ॥ कहा ॥ तिनमें बहुत गुन होई ॥ धरमात्मा होई ॥ रागद्वेष करि रहित जिनकी बुधि होई ॥ भले भले पुरुषनि में जिनका मान होई ॥ पूछा ॥ राजा कौन कौं दूरि राषै ॥ कहा ॥ बे अकलि कौ ॥ झूठे चुगल कौ नई बात बनाइ कहता होइ तिसकौ ॥ पूछा ॥ भलाई कितनी बात सौं हाथि आवै ॥ कहा ॥ तीन बात सौं ॥ पहिले बिना लालच की आदर सनमान ॥ दूजै देना बिना निहोरे का ॥ तीजै भला काम करना सबका बिना मतलब का ॥ पूछा ॥ कौन बात जो दूसरे बिना न बने ॥ कहा ॥ दौलतिवंत कौ मसलति ॥ पहलवाइ कौं दाब बल ॥ धर्मात्मा कौं धर्म ॥ पूछा ॥ कौन बात जासौं प्यार कीया चाहिये ॥ कहा ॥ तीन बात ॥ प्रथम नित में अनित न कीजिय ॥ दूजै कौं लाटो करषना । तीजै सब सौं मीठा बोलना

॥ पूछा ॥ बिद्या सीषतो क्या गुन ॥ कहा ॥ बड़ा होई तो निपट बड़ा होइ नेक नामी होइ ॥ पूछा ॥ सयाना कौन कहा ॥ दिन षोटे आवै सौ भी उद्यम करै ॥ पूछा ॥ सब सौ दोलतवंत कोन ॥ कहा ॥ बुधिवंत ॥ पूछा ॥ बड़ाई की निसांनी कोन बात मै ॥ कहा ॥ लोगों के सिर आसान करना ॥ पूछा ॥ वह कोंन अग्नि जो लगावने वार ही कू जरावै ॥ कहा ॥ क्रोध ॥ पूछा ॥ वह कौन नीव जो कदही न डिगै ॥ कहा ॥ भांवना ॥ पूछा ॥ वह कड़वाई कौन निदान मीठी होइ ॥ कहा ॥ धीरज ॥ पूछा ॥ वह वस्तु क्या कधी पुरानी न होई ॥ कहा ॥ कीर्तिजस ॥ पूछा ॥ वह कौन कास जो सब्रू ही कौं प्यारौ लगै ॥ कहा ॥ इंद्रीन कौ बस करनो ॥ पूछा ॥ वह कोंन रोग जिसकौ ईलाज नहीं ॥ कहा ॥ वेअकली ॥ पूछा ॥ वह कौन बलाइ जिससौ आदमी भाजै नही ॥ कहा ॥ अग्नि ॥ पूछा ॥ वह कोंन ऊचाई नीच तै नीची ॥ कहा ॥ गुमान ॥ पूछा ॥ वह कोंन वस्तु जो मरद ओर महरी सोभा पावै ॥ कहा ॥ मधुराई ॥ अर मुलाइमी ॥ ओर मन कों सांच ॥ पूछा ॥ बुरी नींद कौन ॥ कहा ॥ जो सुमरन बेला सम्हालि न सकै ॥ पूछा ॥ वह कौंन बात जिसमैं पूरी षुष्याली ॥ कहा ॥ बचन बडेन कै ॥ पूछा ॥ वह कोन राह आषर जिसमैं भूलाई नाही ॥ कहा ॥ गरीब परि जो रावरी करनी ॥ लुकमान हकीम अपन बेटा कू नसीहत करै है ॥ पुत्र पहिलै तो श्री परमेश्वर कौं पहिचानि जो काम करे सोई नसीहत माफक करि ॥ ओर थोरा बोलो ॥ लोगों का तोल समझो ॥ सबका अंत इकरन पहिचानो । मित्र टोटैला है अटकलो ॥ वे अकलि ॥ कुबुधि सौं दूर रहना ॥ मसलति प्यार समाने सौ करो ॥ स्त्रीन कौं भेद न देना ॥ बात बनाई कह्या करो माता पिता की भक्ति करौ ॥ षरच उतपन माफीक करो ॥ ओर परैं के घर जावो तो हाथ जीभ ठिकानैं राषो ॥ बहुत आदमी सौ मित्राई करो ॥ कपरा देह पवित्र राषो ॥ बेटा को पढ़ाओ ॥ अदब सिषाओ ॥ धर्म परलोक के वास्ते रषो ॥ मोजा पाव पोस पहिलै डावो पाव सौं पहरो ॥ जीव नै उतारो ॥ काम जिसको फुरमावो ॥ जैसा आदमी होई ॥ ओर राति कूं आस्ते बोलिये ॥ ओर दिन कौं चारौ तरफ देषि करि वोलिए ॥ थोरा बोलिए ॥ जे बात आपको भलि न लागै सो आगलें कौ भी भली न बुझिये ॥ काम बुधि सौं मसलति सौं कीजै ॥ ओर हुनर बिना सीखें उस्ताद न हुंजै ॥ बालक सों मित्राई न कीजै ॥ किसी की बरायत परी चितन राषिए ॥ षरा पसीने की कमाई पर चित्त राषिये ॥ नीच सों भलाई न कीजै ॥ बिगारी काम कीयो न समझिए ॥ सूम सों भलाई की उमैदे न राषिये ॥ बड़ेन सौं बड़ा बचन न कहिये ॥ कोई को आसंगो न कीजे ॥ आस वारें को निरास न फेरिये ॥ बिराने घरि षांवद हो न बैठिए ॥ अपने घर ओर को षांवद न कीजै ॥ बीती लड़ाई के तो जतन कीजै ॥ आपनी बस्त ओर की बस्त सों न मिलाइये ॥ महरी मरद बीच दूत पनो न कीजै ॥ आपने सों अपनाइत न तोंड़िये ॥ बिगरी बीच की बात परि अमल न कीजै ॥ काहू की निंदा न कीजै ॥ रात कू उघाड़ा न उठिये ॥ लोगनि को देषतै देही षुजि-लिय नहीं ॥ उघाड़ी पीठि पर असवारी न करीए ॥ ओर किसी कौं मुष परि न सराहिए ॥ हाकिम सौ मीत्राई न करिए ॥ ओर महिमान आगै किसी सौं आपनी हकीकत मालुम न करिए ॥ नफा जानि कै बस्तनै अपना मुष का पानी न षोइए ॥ सुषीया आके आगै दुष

की बात न करिये ॥ श्रोर की लड़ाई तूफान घर में न लीजिये ॥ छाया सोईये ॥ ऐसी काम न कीजै तिसमैं आपको षुवारी होई ॥ गुमान छोड़िये ॥ काम पंचो माफक कीजै ॥ जो षड़े रहैं तो षड़े रहीए ॥ बैठे तो बैठिये ॥ अंगुलि बीध अंगुली न चलाइए ॥ श्रोर सबकी ईजति राषिए ॥ तब आपनी ईजति रहै ॥ राजा की महवानी उपरी गुमान न कीजै ॥ बुराई जिसके अंग होई तिसके आगै न कहिये ॥ बीमां के उपरी नोन की वस्तु षाईये ॥ जीवनं पहिलै अस्नान करीये ॥ हाथा पगु धोइयं जो न धोइ तो दलिद्री होये ॥ भोजन आदर बिना जिमयें नहीं ॥ श्रोर भूकें कू देषाइय ॥ जिमतां छोटा कोर लीजिये ॥ मिजमान आगैं थाल बड़ा धरिये ॥ जिमत बहुतता न षाईय जिमतां पानी पीजैं ॥ श्रोर सुतां पाछें पानी पीजै पानी कां श्रषा राषैं रोग उपजै ॥ आपना द्रव्य छिपाइये ॥ किस ही कूं कहिए नहीं ॥ बेटे सुं पुनि छिपाईय ॥ छिपाए में दो बात ॥ घटि होई सो आपनो हलकाई ॥ श्रौर बहुत होय तो लोग लागु होय ॥ सांच सील हुनर छिमा धीरज द्रव्य उत्तम मीठा बोलना सत्र मित्र का मन पिछानना इतने अपने जीव के रखवारे हैं ॥

इति श्री लुकमानां हकीम कृत नसीयत नामो संपूर्ण ॥ ॐ ॥ श्री ॥

—संपूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

लुकमान हकीम द्वारा, अपने पुत्र को नाना विषयों पर उपदेश किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—हस्तलेख में क्रमानुसार देवकृत "अष्टयाम", अब्दुल रहीम खानखाना कृत 'रहीम सत' और 'नसीयत नामा' (लुकमान द्वारा अपने पुत्र को नसीयत करना) लिपिबद्ध हैं। लिपिकाल संवत् १९३९ केवल 'अष्टयाम' में दिया है। अन्य दो रचनाएँ कब लिखी गईं, इसका कोई पता नहीं चलता।

'नसीयत नामा' में रचनाकाल नहीं है और उसमें अनुवाद कर्त्ता का नाम भी नहीं दिया है। इसकी भाषा खड़ी बोली है, परंतु प्रति अशुद्ध लिखी गई है ॥ उर्दू शब्दों का व्यवहार बहुत हुआ है।

संख्या ३८३. १—नाममाला, २—अष्टोत्तरी, ३—माघ को ब्यौरो, कागज—देशी, आकार १०$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, पूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १८५६=१७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

अथ ग्रंथ नांवमाला लिष्यंते ॥

॥ अथ श्री ऊंकार के नांम ॥

वो ऊंकार पवन अस्वर । जीव सबद ॥ सूर सूर ॥ उजास ॥ संसा ॥ संघ ॥ सेस ॥ दम ॥ नाद सिंघ ॥ स्याल ॥ मीन ॥ अरुबाद ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ अथ मन के नाम ॥

मींन ॥ मृग ॥ मींडक मंजार ॥ मूसा ॥ मोती मरकटहार ॥ मोर गरुड ॥ गज ॥ पसू ॥ पतंग ॥ सुनहा ॥ सूवा ॥ कउवा ॥ रंग ॥ महादेव ॥ अवधूत ॥ देव ॥ रावल ॥ लोरूं डंडवा ॥ भेव ॥ बगला ॥ बाज ॥ कायथ ॥ मन जोगी ॥ षूंटा बंधू ॥ भवंरा ॥ भोगी ॥ फटक ॥ धौन ॥ कलाल मन ॥ महामूला ॥ मूसल ॥ करहा ॥ कुही ॥ रिंच ॥ सैंतांन जिन राष्या जीति । तिन की कछू हू न टूटै प्रीति ॥ २ ॥

मध्य—

प्रश्णोत्तरी से

जीवन्नूं कहा । सुजस जाग्रत कौ बंवेकी ॥ सोव कूंन । मूढ । अंति चंचल कूंण ॥ माया ॥ सच मैं बडा कूंण ॥ जरनांवांन ॥ दातार कूंण ॥ सतगुर ॥ संसार में गहिए कहा ॥ गुरबाइक ॥

अंत—

साध कौ ब्यौरौ

निरारंजी ॥ १ ॥ निहिस्वादी ॥ २ ॥ नृवंछक ॥ ३ ॥ नहि शब्द ॥ ४ ॥ नहि तरंग ॥ ५ ॥ नरभूमी ॥ ६ ॥ सुलिप अहारी ॥ ७ ॥ गुरसेवा ॥ ८ ॥ सावधांन ॥ ९ ॥ निंद्राजीत ॥ १० ॥ सम दिष्टी ॥

× × ×

नृमोही ॥ ७९ ॥ नृलोभी ॥ ८० ॥ नह कपटी ॥ ॥ ८१ ॥ नहिप्रपंची ॥ ८२ ॥ महतरंग ॥ ८३ ॥ नृसस ॥ ८४ ॥ नृलेप ॥ ८५ ॥ लय कलस ॥ ८६ ॥ ध्यांन ॥ ८७ ॥ समाधि ॥ ८८ ॥ इति साधकौ ब्यौरौ ।

विषय—

नवमाला

संतों की बानियों में आने वाले दार्शनिक शब्दों के अर्थ ।

प्रश्णोत्तरी

संसार में जीवन किस प्रकार बिताना चाहिए इस विषय में प्रश्नोत्तर के रूप में ज्ञानोपदेश किया गया है ।

॥ साध की ब्यौरौ ॥

साधु में क्या क्या गुण होने चाहिए इसका वर्णन है।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १८५६ है। रचयिता का नाम अज्ञात है। विशेष के लिये कृपया देखिये सेवादास की साखी का विवरण पत्र।

संख्या ३८४. नित्यकर्म, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—९३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६८, पूर्ण रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३१=सन् १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री कृष्णाय नमः ॥ श्री कुल चंद्रमा जयति ॥
॥ अथ नित्य कृम लिष्यते ॥

प्रातःकाल उठि माला यज्ञोपवीत सभारे दर्शन करे ॥ माला दास्य धर्म हैं। जनेउ वैदिक धर्म हे। जनेऊ को अधिकार नहोयतें माला मात्र सभारे। पीछे श्री महाचार्य महाप्रभू को श्री गुसांई जी को सातो सरूप को स्मर्ण पूर्वक नाम लेइ दंडोत करीये। मानसिक वाचनिक कायक तीन्यों सिधभये वाहिर आय देह कृत्य करि मांटी सों हाथ पाय धोय कुला करीये॥ ताको प्रमाण ॥ मूत्रे पुरीषे भुक्तातें रेत प्रश्न वर्णेतथा चतुरष्ट द्विषट दुष्ट एते स्तन् शुद्धि माप्नुयात् ॥ १ ॥ ४ ॥ मूत्र के ८ खरचू के १२ भोजनांत् ॥ १६ ॥ विषयात ॥ दातुन सूर्योदय पहेलें करीये मुख धोय पोंछि श्री जी सातो सरूप को चरणामृत अतिका लेइ। व्रतादिक न होय तो मुख सुधार्थ वीड़ा खाईये चरणामृत उठि गयी होय तो और मृत्य का मगाय भिजोय छानि वामें वह चरणामृत मिलाय धेयली वाधि राखीये वामें ते नित्य लीजीये तेल लगाय स्नान करि अपरस वस्त्र पहेरि आसन पर वेठि श्री यमुना जी की रेणु मुख में मेलि हाथ आंखिन सों लगाय तिलक हरि मंदिरंभगवत्यदाकृति करीये इतने तिलक भगवदास्यदाकृति नहीं तै सें नही करीये वर्तुलंतिर्यग छिद्रं ह्रस्वं दीर्घं तरंतनं वक्रं विरूपं वधाग्रम भिन्न मूल पद्माच्युतं ॥

मध्य—

आचमन की झारी भरीये कुंजा के दिन होय तो कुंजा भरीये ॥ चंदन प्रसादी निकस्यो होय तो ॥ १ ॥ हथेरां में ठलाइये रात्रि को अंगराग सिद्ध करीये ॥ वाजल्मि त्रठारगेंदु चोगान झौंपा हाथ सों झाडि फेरि वा तरित गिरदा भरि ॥ यथा समय उठाइ सैया ढाकना सोंठा कीये ॥ कसना तो प्रबोधनी के दिन ते लेइ डोल के दिन तांई न बधे सैया भोग को बंटा वांई ओर तानीचें पंखा दाहिनी ओर झारी तानीचे वीड़ा वा सुपारी ता पास संध्या आरती भए पीछें माला बड़ी भई होइ तो धरीये ॥ बाहिर आचमन की झारी ॥

तथा बीड़ा हाथ में लेई टेरा खुलाइ आचमन मुख वस्त्र कराय बीड़ा धरि तष्टी ठकाइ धोइ चोपड़ की चोटी आगें धरीये ।। माला पहेराइये ।।

अंत—

कूंची ठिकानें धरि प्रसाद लेइ सुख आचमन करि बीड़ा खाइ ।। भगवदीयन सों भगवद्वार्ता करीये ।। काम निवृत्यर्थं स्वस्त्री विषय करि भाव यह राखनों ।। जो संतान होइ सो सेवानुकूल होइ ।। चरणाम्रत ले सोईये ।। तो दुवस्वप्न न होय ।। यह अवांतर फल हें मुख्य फल और हें ।। ओर कदाचित सरीर अनित्य हें ।। जी रात्र कों खाट पर जीव निकसि जाय तो चरणाम्रत लेई के सोवे तो अवगति न होई ।। श्री महाप्रभू को श्री गुसांई जी को जा घर के सेवक हुजीये तिन सेव्य सरूप को स्मरण करि निद्रा कीजिये या विधि सों सेवा करे तो कृतार्थ होई ।। इति निस्क्रम समाप्तं ।।

विषय —

वल्लभ संप्रदाय के अंतर्गत चंद्रमा मंदिर के तथा उसके सेवकों के रात दिन के नित्यकर्म के विषय में वर्णन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—लिपिकाल संवत् १९३१ है । प्रस्तुत रचना अन्य रचना 'चंद्रमाजी के घर की उत्सव प्रणालिका' के साथ एक हस्तलेख में है । 'उत्सव प्रणालिका' में लिपि-काल संवत् १९३१ है । अतः इसका भी वही लिपिकाल माना है । दोनों रचनाएँ एक ही कलम तथा एक ही स्याही से लिखी गई हैं । रचना ब्रजभाषा गद्य में होने के कारण महत्वपूर्ण है । गद्य पुष्ट और विरामों से युक्त है ।

संख्या ३८५. नित्य भावना लीला, कागज—देशी, आकार ४'२ × ८'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, अपूर्ण, रूप – प्राचीन, पद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० बालकृष्ण दास जी चौखम्बा, बनारस

आदि—

श्री रामकृष्णायनमः ॥

सुनि तमचुर को सोर घोष की नागरी ॥
नव सत साज सिंगार चली ब्रज नागरी ॥
नव सत साज सिंगार हार पाटंबर सोहै ॥
एक ते एक विचित्र रूप त्रिभुवन मन मोहै ॥

अंत —

इम खाली तरु तरनि रूप रसरवि ससि मोहे ॥
तिनि लोक प्रताप छत्र सिंघासन सोहे ॥

गयो गर्व गति ग्वालिनी देखि चरित्र तेहि काल ॥
हम अहिरी डीठो दइ तुम्ह जय जय मदन गोपाल ॥

विषय—प्रस्तुत ग्रंथ का विषय दानलीला है ।

विशेष ज्ञातव्य—यह 'नित्य भावना लीला' आठ पत्रों की पोथी है जो अपूर्ण है । कविता प्रौढ़ और उच्च कोटि की नहीं है ।

संख्या १८६. निद्रा विलास, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—३'५ × ८'१ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४५, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० महेशप्रसाद मिश्र, गाँव—लिदहवरा, डा०—अतरामपुर, इलाहाबाद

आदि--

श्री गणेशाय नमः

वंदो गुरुपद रेनु कृपासिन्धु अस ज्ञान निधि ।
महामोह अज्ञान दलन हरन दुष सुष करन ॥
वंदो दोउ कर जोरि बालमीक सुक व्यास मुनि
करीय कृपा करि मोहि ज्ञान सिध्य निधि सकल सुष ॥
माहिषमती विमल वर देशा—तह वसु प्रेम प्रताप नरेशा ॥
एक समय नृप मंदिर जाई—सूतेउ सेज नींद नहि आई ॥
बोलेउ भूप वचन तेहि रानी—नींद न लागि विकल वहुमानी ॥
रानी मदन कुवरि सुनिवानी—बोली वचन प्रेम रस सानी ॥
सुनहु कथा इतिहास अनूपा—तौ पिय नींद होइ वहु रूपा ॥

अंत --

॥ दोहा ॥

तवहि गुलाव कुआव संग सुता सिंधु अहिराज ॥
प्रथम कुंअरि संग मे कतव करि सुष विविध समाज ॥

॥ छंद ॥

कीन्हो विविध रसरंग भूपति सकल प्रिय गुण आगरी ॥
करि नीति नृप वहु रीति वहु विधि यज्ञ करि सुभ आगरी ।
रानी विसद कीरति वषानी भूप मंगल मान की ॥
दीनो विविध वहु दान मंगल भूप द्विज सनमान की ॥

तब सिंधुजा अरु नाग कन्या विमल सुत जुग आइये ॥
येहि भाँति राते विविध नृप सकल जग जस छाइये ॥

इति श्री निद्रा विलासे चतुर्थो विलासः समाप्त ॥ संवत् १८४५ लीषं शिव वदन प्रथम अध्याये दोहा १० द्वितीये १६ तृतीये ९ चतुर्थे २१ चौपाई संख्या ४०० ॥ ६४ छंद ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "निद्राविलास" है। इसमें दोहा चौपाई छंदों में एक कथा दी गई है जो इस प्रकार है:—माहिष्मतीपुरी में प्रेम प्रताप नामक राजा राज करता था जिसकी रानी मदन कुँवर थी। एक रात ऐसा हुआ कि राजा को किसी प्रकार निद्रा न आती थी, इससे वह बहुत बेचैन था। तब रानी मदन कुँवर ने कहा कि महाराज यदि कथा-कहानी सुनें तो रात्रि भली प्रकार व्यतीत होगी। राजा के सहमत होने पर रानी ने अपनी एक सखी बुलाई जो कहानी कहने में प्रवीण थी। उसने कहानी इस प्रकार सुनाई कि कोल्हापुर नाम नगरी में सुमति राजा राज करता था। उसकी रानी का नाम सुलोचना था और उसके १८ पुत्र थे। रानी ने राजा से अपनी यह इच्छा प्रकट की कि महाराज पुत्रों का विवाह ऐसी जगह हो जहाँ किसी राजा की अट्ठारह पुत्रियाँ हों। संयोग से शेशाचल के राजा शील करन तथा रानी इन्द्रमती की अठारह कन्याएँ थीं जो रूप गुण और शील में अद्वितीय थीं। उनकी भी यही अभिलाषा थी कि उनकी पुत्रियों का विवाह किसी ऐसे ही स्थान में हो जहाँ किसी राजा के अठारह पुत्र हों। अंत में दोनों राज दंपतियों की इच्छाएँ पूर्ण हुईं।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ "निद्राविलास" के रचयिता का नाम ज्ञात नहीं हुआ। रचना काल का उल्लेख भी नहीं है, लिपिकाल संवत् १८४५ है। अतः यह स्पष्ट है कि इसकी रचना इससे पूर्व हुई होगी। ग्रंथ खोज में नवीन प्राप्त हुआ है और इसकी कथा रोचक है।

संख्या ३८७. पाडव चरित, कागज—देशी, पत्र—४६, आकार - ८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५३८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि— ... ...

जे थपा माथा उफरा ते मही भाज्या योध ॥ ६ ॥ आस मुद्रांत प्रथवी ये राज्य कीधु भूप। भोम चांपि च्योहो दिशे अति तेज वाध्यु रूप ॥ ७ ॥ ते सुख स्वपने वही गयु जब थयां वरम्ह बार। तेणे समे राय सभा बेठो तजी जब क्योठा हार ॥ ८ ॥ आंण्यु पांडव आवीया थो पेला पांचे वीर। प्रतिबंब एहवां पेषीयां उभ्रशां रोम शरीर ॥ ९ ॥ चंताये आकुल वाकुलो राय जब के बेठो थाये मन। धीर्य छांड्यु धरथकी अति विमांसण

थइ मन ॥ १० ॥ मन भंग कन्हे न थिके हे रह्यो सुभट सांहां सु जोये । दुर्योधन साथे भडे भारथ माहारी मीटे न पडे कोये ॥ ११ ॥

अंत—

॥ ढाल ॥

वचन न वितथा पेरायने घडी बेघडी त्यांहां ठरया ।
शीव्र मागी चढ्या सजथै राय मंदिर प्रवरया ॥ २७ ॥

॥ कडवा ॥

कैया आप मंदिर प्रवरया । शत भ्रात संग सरदरया ॥ मन करया विचार वाटे अति घणारे ॥ १ ॥

॥ ढाल ॥

अति घणे वांटे विचार कीधो हैडे हर्ष अपार ।
आट ले वे हे रे घरबे हे न नु कर्तो जांउ जोहार ॥ २ ॥

\+ + +

॥ कडवां ॥

॥ राग वैराडी जेतमानं ॥

सुंदर आस वमो थंम्य लीने उपर करे आक्रंद । पीहर वोहोणी कीधी ते वीर दीन दांमणां मंद ॥ १ ॥ ध्रुपद ॥ वीरा मुंयुं बोलोरे को हो कौतक नी वात माहा हंजारयु तेन कीधु वीरा कोणे कीधो उपघात ॥ १ ॥

\+ + +

॥ को० ॥

स्थंभनी पेरे स्थिर थया भद्रनतिसम चित्रांग ।

उत्तरातु वस्त्र पेहे ज्ये वे हे न करे भंम ॥ मन शक्या नांगीश कोन्ही जाल वजे युक वीर । नु देमजाद्र्य श भारम भर्णी जेन्हु ग्रध शरीर ॥ ३६ ॥

॥ को० ॥

ब्रह्मचर्य व्रत रे हे सदा मद मो हो न आगे अंग ।
भरयो वस्त्रै रथभा उत्तरा ··· · · ··· ··· ॥

—अपूर्ण

विषय—

पांडवों की कथा का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है । प्रारम्भ में १ से लेकर ३९ तक के तथा ४१ से लेकर ५१ तक के एवं अंत में १६५ के पश्चात् के पत्रे लुप्त हो गए हैं । बीच बीच के भी

बहुत से पत्रे नहीं हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। हस्तलेख प्राचीन विदित होता है। ग्रंथ पश्चिमी राजस्थानी में लिखा गया है। इसमें 'कडवा', ढाल' तथा 'पदों', में रचना की गई है। ग्रंथ का नाम ज्ञात नहीं हो सका। विषय की दृष्टि से "पांडव चरित" नाम रख दिया है।

संख्या ३८८. पा०, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बालमुकुंद भट्ट, स्थान—कामा, रियासत—भरतपुर

आदि—

...लावे नही। अर पीठि का इलाज करि ॥ ५ ॥ पांच सं वीरवल पातस्याह जुरि जमी देषता आवता हुता पात स्याह कही जमीन मैं क्या देषता है। वीरवल कही मैरा वाप जमीन मैं गुमि गया है। ताकूं देषता हूं। पातस्याह कही हम बता देवें तो क्या दे वीरवल कही आधा आपका। षष्टम। ६। अली मरदषां इऐन (? यमन) के पातस्याह स्याहांजिहां कूं अरजी भेजी। जो पंधार मैं आपका अमल करावे हजूर मैं चाकरिकीया चाता हुं परि सब अमीरन नै मोकुं ऊंचा उभारने का हुकुम होय तो हजूरि आऊं। पातस्याह सब उमरावन सूं मसलति पूछी। सवही नैं अरज करी जो आपका फायदा होय सोही हम कूं कबूल है। तब पातस्याह नै अली मरदां षां कू बुलायां। सो आप सबन ते नीचा उभारया। अरज करी मै तो चाकरन की परीक्षा करता हूं। सो हुकुम है कि नांही। सो आपके हुकुम हे। जबतांई एही वंदोवस्त रहूंगा तब तांइ पातस्याही बिगड़ेगी नहीं। अर मै तो छोटा चाकरहु सो सबते नीचा ही उभारहुगा ॥ ७ ॥ सप्तमसं। अली मरदा षांकू पातस्याह फुरमाई जो तिहारे घर मै पारीस कहते हे अरज करि दुरस्त है। नजर करूंगा। सो दीवांन कूं हजूर मे ले जाय। अरज करि यह मेरे घर मै पारसि है। ८ अष्टम।

अंत—

पातस्याह वीरवल कूं फुरमांई च्यारि अहमक पैदा करि ल्याव। वीरवल सहर मै हेरने गयां। एक आदमी देष्यां। जो सरोपांव मिठांईर के वीर में रषि ले जाता है। वीरवल वाकूं कही येह सरंजाम कहां ले जाता है। वानं कहि मैरी लुगाई वोर षसम कीयां है। ताके बेटा भयां है। तांहां ले जाता हूं। वीरवल वाकूं लार लीयां। फेरियेक आदमी देष्या जो घोड़ी परिचढ्या है माथां परि घासका भार है। वीरवल कही भारा घोड़ी पर क्यों न राषे। वाने कही घोड़ी सूबर है सो बोझ लागै। वीरवल कैद करि दोनु कू पातस्याह की हजूरले जांय कही दोय अहमष तो हेरल्यायाहुं। पातस्याह कही दोय अहमष ओर ल्याव वीरवल कही। एक तो आप जो ऐसे काम फुरमांवते हो अर दूसरा मैं जो अहमष हेरता फिरता हूं। पातस्याह आलमगीर एक फकीर कू पूछी जो मेरा वषत भला है के बड़े पातस्याह का। भलाहुता। फकीर कही अकबर के बषत में मेला भया तब एक सुंदर स्त्री गहणां सुंदर जवाहर पहरे। साथ की स्त्रीन ने विछुर गई।

सो महादुषी हुई फिरत हुती सो मै घर ले आये वाकूं आवता सू राषी। अरतलास करि गहणां सूधां घरि पहौचा दई। अर जहांगीर के बषत मे मन म आइ। सारा गहणां नाइक दियां आधा उतार लेता। अरस्याहां ज्यांहां के बषत मैं मन मैं आई सारा गहणां नाइक दीयां। अर तुम्हारैं बषत में बूढां भयां तो भी मन मैं आवती है। जो बास्त्री कूं गहणां सुधा राषि घर में सूष करतां तो भली होति सो आगले बषत मैं अरु हाली के बषत में एता तफावत है ॥

विषय—

मुगल पातसाहों और विशेषतः बीरबल और अकबर के परिहास संबंधी कहानियों का संग्रह।

विशेष ज्ञातव्य—कहानियों का शीर्षक मालूम न हो सका। प्रत्येक पत्र की बाँई ओर "पा०" अक्षर लिखा है। ये कहानियाँ शिवराम के कवित्तों के आगे एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध हैं। इनका रचनाकाल भी अज्ञात है। भाषा मिली हुई खड़ी बोली और ब्रज है जो राजस्थानी पन लिये हुए है। इससे यह निश्चित होता है कि इनका रचयिता कोई राजस्थान का ही है।

संख्या ३८९. श्री पासाकेवली, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—४'२ X ८'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११, पूर्ण. रूप - पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १२६६, प्राप्तिस्थान-म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री राम कृष्णाय नमो नमः ॥

अथ पासा केवली लिषितं ॥

अ ब ज द ॥ ये ही चारि अक्षर पासा कै लीखिजे पासो वार तीनि ठालिजे ॥ जो मन माही होय सो चितवन कीजे अरू येह मंत्र भनीजे वार ॥ अथ मंत्रः ॥ ॐ पसि लाहि चयाबलाही अमर्थ चिर्ं कार्य वनैवली औं मद्दा नी सभागे गुरू संरे स्वाहा ॥ इति मंत्र ॥ अथ केवली ॥ अ ग अ ॥ सुन हो पुछकहार सुजान नर तेरा मन में एक चिंता है तु अकेलो हें सत्रु है तिनि सत्रु खिय होइगी धीरज मन करि ए कारिज होयगो ॥ १ ॥

अंत—

सुणि हो पुछक जो तु कारिज चितवन है ताके वहुत सत्रु है तु थिर चित्त ही है पहिले तो बुराइ होयगी संनि ते ज्यो नहि पाप पुण्य अरु चितवत है ता कष्ट होय कछु भलो कछु करो देषि जे यष्ट देवता की पुजा होम दान करि सर्व उड़ जायगो कारिज सिधि होयगो ॥ १६ इति चतुर्थो अंकंद चरन हुवा अंकं ॥

इति पासा केवली संपूर्णं ॥ संवत् १९६६

विषय—

'पासा केवली' का विषय शकुन वर्णन करना है। इसमें एक पासे के चारों ओर अ, ब, ज द—ये चार अक्षर खुदे होते हैं। मन में कोई बात सोच कर उसे तीन बार नीचे डाले और तब उससे जो अक्षर प्राप्त हो उसका फल ग्रंथ के अनुसार समझे। ग्रंथ ब्रजभाषा गद्य में है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में ग्रंथकार का उल्लेख नहीं हुआ तथा रचनाकाल भी अज्ञात है। यह किसने और कब रचा, यह बतलाने का भी कोई आधार प्राप्त नहीं होता। लिपिकाल संवत् १९६६ है।

संख्या ३६०. पोथी दत्तात्रय शब्द अविनासी, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, दाता—श्री गुरु बालक प्रसाद जी, ग्राम—गोंठाखास, पोस्ट—दोहरीघाट, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ सत्य गोबीद् सत्य गोबीद् ॥
पोथी दातात्रैः सवद् अभीनासी ॥

॥ दाता अऐ वाचा ॥

सामी जीव कवनः मन कवनः पवन कवनः सवद कवनः प्रान कवनः ब्रह्म कवनः हंस कवनः सुनी कवनः काल कवनः जीव कवनः सीव कवनः नीरंजन कवनः

॥ अभीनासी वाचा ॥

चंचल मनः पवन स्वासाः सवद् सुनीः प्रान नीरंतरः ब्रह्म दआः हंस अभीनासीः सुनी प्रम सुनीः काल वीकाल जीवः कर्म बंधन सीवः कर्म मुक्त नीरंजन सर्व ब्यापीः ॥ दतात्रएवाचा ॥ सामी कहा वसै मनः कहा वसै पौनः कहा वसै सब्दः कहा वसै प्रानः कहा वसै ब्रह्मः कहा वसै हंस कहा वसै सुन्य कहा वसै काल कहा वसै सीवः कहा वसै जीवः कहा वसै नीरंजनः ॥ अभीनासी वाचा ॥ हीदैए वसै मनः नाभी वसै प्रानः अनहद् वसै सब्दः नीरंतर वसै प्रानः ब्रह्म मंड वसै ब्रह्मः गगन वसै हंसः अनुपम वसै शुन्यः कवल वसै कालः काए वसै जीवः चंद्र वसै सीवः सुषमन वसै निरंजनः

मध्य—

॥ दतात्रैवाचा ॥

सामी जौ तन छुटे मन कहा समानाः पवन कहा समानाः हंस कहा समानाः काल कहा समानाः सब्द कहा समानाः प्रान कहा समानाः शुन्य कहा समानाः जीव कहा समानाः सीव कहा समानाः निरंजन कहा समानाः ॥

अंत—

॥ अभीनासी वाचा ॥

तन छुटैस्वासा पवन में समाना: पवन सब्द में समाना: सब्द प्रान में समाना: प्रान ब्रह्म में समाना: ब्रह्म हंस में समाना: हंस अभीनासी में समाना: काल हंस में समाना: शुन्य वंकार में समाना: जीव सीव में समाना: सीवं नीरंजन में समाना: नीरंजन अवीगती में समाना: अवीगती अलेष में समाना: अलष अनहद में समाना: अनहद अवीनासी में समाना: अभीनासी आपु आपु: जाके रूप नाही रेप नाही: ग्रीह नाही: ग्राम नाही: सर्व रहीत है: जन्म मीत्रु ते रहीत है: शो करतार सर्वका है: परमेश्वर कहीए: अगम अगाधी है: अपार है: सर्व व्यापी है: जाके काल नाही है: रूप नाही है: दुरी है: काहू को गम्य नाही: ब्रह्मादीक ते दुरी है: जाती अजाती ते दुरी है गुर के गमी ते पाइए:

॥ इति श्री ब्रह्म हरीनाम: दातात्रै अभीनासी सब्द संपुरन: ॥

विषय—

तत्वज्ञान का उपदेश किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता के नाम का भी पता नहीं चलता। रचना तत्वज्ञान विषयक है तथा दत्तात्रय और अविनासी के संवाद रूप में है। दत्तात्रय से अर्थ यहां सुप्रसिद्ध दत्तात्रय से ही प्रकट होता है; परंतु अविनासी कौन हैं ठीक ठीक ज्ञात नहीं होता। जिन जिन बातों का स्पष्टीकरण किया गया है वे संत मत से अधिक संबंध रखते हैं। हो सकता है, यह कार्य किसी ऐसे ही मतावलंबी का हो। 'गोरख कबीर गोष्ठी' तथा 'शिव कबीर गोष्ठी' इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। रचना गद्य में है।

संख्या ३६१. प्रगट विहार, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—९×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशायनम: ॥ अथ प्रगट विहार लिष्यते ॥

॥ हंसा दोहा ॥

गणपथ प्रथम मनाय कर सारद सीस नवाय।
बरणो प्रगट विहार वृज रसिकन कौं सुखदाय ॥ १ ॥
राधारवन उपासको गोस्वामी सुखलाल।
नेह सहित बोलन मधुर करुणा सिंधु दयाल ॥ २ ॥
प्रीत रीत मैं अति चतुर प्रेम भक्ति की रासि।
निस दिन चित चिंतत रहत वृंदाविपुल विलासि ॥ ३ ॥

तिनमो कों कासी विखें आज्ञा दई बुलाय।
वृज रस सुख बरणन करो जसकर प्रेम बढाय ॥ ४ ॥
तिनकी आज्ञा पाइकर हरि गुरू चरण सम्हार।
वृज रस कछु बरणन कर्यौ अपनी मत अनुसार ॥ ५ ॥
वृज रस दुर्लभ सुरण कों बिनाजुगल अनुराग।
जिन पायो तिन प्रेम तैं कर्म ज्ञान नहि त्याग ॥ ६ ॥

अंत—

इह विधि करत बरस इक पूजा। पुन वसुदेव भयो सुत दूजा ॥ ५९ ॥
ताहू कों ले मृत पठायो। दुष्ट चित नहि नैक लजायो ॥ ६० ॥

हंसादोहा

इसी भाँत वसुदेव सुत दुष्ट किये षट नास।
पुन आयो हरि अन्स तह शेस तेज परगास ॥ ६१ ॥
बंद्धन घर मे देवकी तेज बढो बहु आइ।
सुनत कन्स काँपो हियो मुख सों कहित लजाइ ॥ ६२ ॥
तिसहिसमे भगवान निज माया सक्ति बुलाइ।
कहिन भगवती वृजविखें काज करो कछु जाइ ॥ ६३ ॥
अन्स देवकी गर्व मे मेरो प्रघटो आइ।
तिसे खेंच कर रोहिनी गर्भ धरो तुम जाइ ॥ ६४ ॥
निज भक्तिन के हेत मे निज सरूप दिखलाइ।
प्रघट देवकी गर्व मिस केल करू बहु भाइ ॥ ६५ ॥
तुमहूँ प्रघटो नंद घर कारज हित तिहकाल।
पूज्य जगत मैं होउगी कीरत बढै विसाल ॥ ६६ ॥

॥ कलाछंद ॥

इहि विधि हरि जब अज्ञा दीनी।
तिसी भाँति माया ने कीनी ॥ ६७ ॥
गर्भ देवकी को गहि लीनो।
आइ रोहिनी ••• ••• ••• ॥

—अपूर्ण

विषय—

श्री कृष्ण की ब्रज लीलाओं का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। केवल दो पन्ने (प्रथम और नवाँ) प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता का नाम विदित न हो सका। राधा

रमण (गौडीय संप्र० के अंन्तर्गत) उपासक गो० सुखलाल के आदेश से प्रस्तुत रचना का प्रणयन हुआ है । गोस्वामी जी संभवतः काशी में रहते थे ।

संख्या ३९२. प्रेमदास चरित, कागज—देशी, पत्र—१ (७७ वाँ), पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७; रूप—प्राचीन (उत्तम दशा), गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

(प्रसंग)

संतदास जी महाराज रा चेला प्रेमदास जी महाराज बड़ा त्यागी हुआ, स्त्री नामक वृक्ष के नीचे नहीं बेठता, एक दिन गुरु ने शिष्य को प्रेम से उपमा दीनी, थारो नांव ध्रुव, प्रह्लाद, कबीर, नामदेव जिसो है, गुरो ने पाछो कयो, महाराज ! वारे तो लुगांया ही हू तो त्यागी हूँ, जरा गुरां क्रोध सुं कयो थारे भी लुगाई हुसी ॥

अंत —

इसी गुरु भावना राखी, जद दरिया जी महाराज रा भेरव चलियो, संतदास जी रा पोता चेलां घणां प्रसन्न रया, ते प्रेमजी महाराज अभिमान कियो सो उतर गयो, ते पाछो वेराग धारण करने भगवत् भजन कर मोक्ष पाई ॥

— अपूर्ण

विषय—

प्रेमदास जी संतदास जी के शिष्य थे। वे स्त्री वाची वृक्षों के नीचे नहीं बैठते थे। एक दिन गुरु ने प्रसन्न होकर उनसे कहा कि तुम ध्रुव, प्रह्लाद, कबीर और नामा जैसे हो। प्रेमदास जी ने उत्तर दिया कि महाराज उनका तो स्त्रियां थीं और मेरी स्त्री नहीं है, विरक्त हूँ। गुरु ने क्रुद्ध होकर कहा, तुम्हारी भी स्त्री होगी। फलस्वरूप प्रेमदास जी को स्त्री के फेर में पड़ना पड़ा जिससे इनको ज्ञानदयाल नामक एक पुत्र हुआ। इससे प्रेमदास जी का अभिमान जाता रहा और उन्होंने वैराग्य ले लिया तथा भगवत भजन द्वारा मोक्ष प्राप्त किया।

संख्या ३९३. फूलकुवर फूलमती री वार्ता, कागज—पीला मोटा, पत्र—१७, आकार—९·७ × ६·५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—लगभग १०० 'दोहे, कुंडलियां, चंद्रायण', पूर्ण; रूप—अच्छा (सजिल्द), गद्य पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५२, प्राप्तिस्थान—महावीर सिंह गहलोत, जोधपुर

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

अथ श्री फूलकुंवर फूल मतीर वार्ता लिक्यते ॥

सीमरुं देवी सरस्वती । गवरी पुत्र गणेश ।
नमस्कार शिव सुं करूं । ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ १ ॥

फूल नाम नारी तणो । फूल नाम ही थार ।
जोरी दोनुं सारखी । कीनी हे करितार ॥ ४ ॥

नगर उदयपुर बसत हे, मे दया डले मांही ।
गंगाराम महेश्वरी, ताके छोरू नाहिं ॥ ५ ॥
देवी देव मनावतां, बेटी ऊईज ऐक ।
रूप काहा उशको कहुँ, कंचन उसकी देह ॥ ६ ॥

वारता—(दोहा ११ के बाद से)

नगर उदेपुर में शिशोदियो रांणों राज सिंघ जी राज करे छै बड़ो जोरावर है ।

सो उण हिज नगर में, १२ मेसरी गंगाराय रहे छै बडो धरमातमा लखेशरी नगर सेठ छै, तिण रे बेटी फुलमती हुइ, तरे सगाइ उदेपुर मा हेइज कीवी, जहा मनीराम रा बेटा भोजराज सुं कीवी ओपीण घणो फुटरो छे, वरस सोले मे छे, पछे सेहर शिरोहिरो राव ग्रंबसिंघजी सिरोही राज्य करे छे तिण रे बेटो फूलजी छै तिको वरस वीस तथा २५ मे छै साछयात कामदेव रो अवतार छै ।

मध्य—

चोपाई वांक्य, दूहा

दूसरी ठ मोटी हीय ने कही न झूठी वात । वातां करता देखीया, अवर पुरुष सुं रात ॥ १२३ ॥

फुलमती वाक्यं दुहा

माहारे तुं लारे परी, केह सुं भाजी ने जाय ।
अबही दुथां ऊपरे मरशुं फांसी खाय ॥ १२४ ॥

वारता

तरे भोजाइ कयौ, थे भलाइ माजी ने कहौ, झूठी के सुंतो डर सुं, तरे फूलमती जांणीयो, आतो लख गई तरे मोकली खुसामद कीवी, मांहरी सरम था थु रहे सी, तरे भोजाइ कयौ ।

फुलमती रा कागद रा दुहा

सजन हम तुम बिछरतां, वहौत उठी तन पीर ।
आठ पहर चौशठ घड़ी, नयणां वरसे नीर ॥ १ ॥ (+ १४८)

अब मौय शजन जौ मिलै, तो छोंडु नहींज संग ।
आठ पहर लपटी रहूं जींउ भसमी शिव अंग ॥ १५ ॥ (+ १४८)

अंत—

वारता

... ...'फूल जी जीवीया जीतरे फुलमती सुं घणी प्रीत राखी, इतनी बात फुलकुमर ने फूलमती री उदेपुर मे हुइ, सो कवेसरी कही, झूठी साची वात री खबर श्री परमेश्वर जी जाणै।

दुहा—

संवत १८५२ ने कथा करी चित लाय।
सरस्वती कीरपा करी, अबदिनि बुध बताय ॥ १ ॥
कथा करी तिण उपरे, कीरपा करी गणेश।
छेल पुरुष बाचा भणी, वात नराइ वेस ॥ २ ॥
दास आपरो जांण ने कीरपा कीजे मा।
अरज हमारी मांनीये वात करो विख्यात ॥ ३ ॥
आग्या सुं कीनी कथा, माना तेरे दास।
मनछा तेरी पुरजो, वसुं जोधपुर वास ॥ ४ ॥
जल में बसे कमोदूरी चंदा बसे अकास।
जो जाहु के मन बसे तेहु तिहारे पास ॥ ६ ॥

चेत्र मास में शुक्ल पख, नवमी सुकरवार सपुरन कीनो कथा ॥

विषय—

उदयपुर के लखपती सेठ मनीराम महेश्वरी की पुत्री फूलमती अपने पति भोजराज के होते हुए भी पर पुरुष फूलकुंवर से प्रेम करती है। दोनों का मिलन छिप छिपकर होता है। फूलमती की भौजाई भेद को जानते हुए भी प्रकट नहीं करती। जन्म भरतक दोनों का गुप्त प्रेम चलता रहा। फूलमती सुख भोगती रही और उधर फूलकुवर को रावजी अखेसिंघजी कुकुर वालों के देहांत पर नये पाटवी राव जी उमेदसिंघजी ने २ लाख का पट्टा दे दिया। इस दो लाख की जागीर के अतिरिक्त शिरोही का आधा राज्य देने को कहा और उनको उदयपुर में ही रक्खा। प्रेमी और प्रेमिका दोनों उदयपुर में ही सुख भोगने लगे।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत वार्ता अश्लील एवं मर्यादाहीन है। रचना घोर शृंगार रस से ओत प्रोत है। नायक नायिका महल में ही मौज करते हैं। प्रचलित दोहों और सोरठों को कवि ने प्रसंग के अनुकूल रचना में जोड़ दिया है। वर्णनात्मक अंश गद्य में ही है। कवि ने घटना को सुखान्त बनाकर व्यभिचार का समर्थन किया है: इस आरोप का उत्तर इसने मंगलाचरण के ३ रे दोहे में इस प्रकार दिया है —कहे कविसर सांभलो लिख्यो विधाता लेख। पुरब भव को नेहते, पाव्यो अऊ विसेख ।। कवि ने यह रचना छैल पुरुषों के लिये

की है। इस वार्ता की २ अपूर्ण प्रतियाँ भी संगृहीत हैं। वे भी थोड़े से पाठभेद के रहते प्रस्तुत प्रति से मिलते हैं। एक प्रति पत्राकार है। रंग महलों में अधिकतर इस प्रकार की वार्ताएँ पढ़ी जाती हैं।

संख्या ३६४. भक्त चरितावली, कागज—देशी, पत्र—१७ (६ से २२ वें तक), आकार—८'२×६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री पंडित देवीदत्त शुक्ल, 'सरस्वती' संपादक, प्रयाग

आदि—

छठवें पत्र से'''बषाने ॥ क्रीडा कुंज विहार रहस रचना पद ठाने ॥ संत चरन रस पान करि गान रसिक सब जग कीआ ॥ ज'''गोविंद बलबीर कीया ते रूप रसायेन रस पीआ ॥ २७ ॥

श्री नेवासा चारज जी की छपै ॥

श्री नेवासाचार्ज जी तेलंगदेस गाडी धुजा ॥ परमारथ पथ निपुन साधुहीत'''र बनवारे ॥ परिचन जा को सील दुतिय नहि बुधि विचार ॥ साधुन को सनमान करत निज कर नित भारी ॥ व्रिथा काल नहि जात कथा श्रीमत अनुसारी ॥ तनु दरसी हरि पद हीये संष चक्र भारी भुजा ॥ श्री नेवासाचार्य जी वंगदेस गाडी धुजा।

अंत—

हरि माआ वल निसतरे तिन चरन धुर मो भूर सिर
नागा कुल हरिदास वास रघुवर पुर कीन्हा ॥
गंगा राम प्रकाश दास फूल भोजन लीन्हा ॥
गंगादास मेवास सांकपुर के अधिकारी ॥
पुनि सिउराज निवास नाथ मुनि महिमा भारी ॥
हरि हरिजन गुर की क्रिपा भक्तिज्ञान भौ सिंधु तर ॥
हरि माआवल निसतरे तिन चरन धुर मो भूर सिर ॥ १२७

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम ज्ञात नहीं हो सका, अतः विषय के अनुसार इसका नाम 'भक्त चरितावली' रख दिया है। नाभा जी के भक्तमाल के समान इसमें भी छप्पय छंदों में भक्तों के चरित संक्षेप में वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त इसमें दो विशेषताएँ हैं। पहली विशेषता यह है कि भक्तमाल के विपरीत इसमें पौराणिक चरितों का सर्वथा अभाव है, दूसरे जिस के विषय में लिखा गया है उसके निवास स्थान आदि बातों का उल्लेख बराबर किया गया है। ग्रंथ में वर्णित भक्त प्रसिद्ध और प्राचीन नहीं हैं। महाराजा बदन सिंह

(भरतपुर के राजा जो १८७९ के पूर्व वर्तमान थे), जोधपुर के राजा विजय सिंह (१८७९ संवत् में वर्तमान) और शिवराम भट्ट (१८४७ संवत्) के वर्णन भी हैं जिससे प्रतीत होता है कि यह १९ वीं शताब्दी के अन्त की रचना है, इससे पूर्व की नहीं । इसमें वर्णित अधिकांश भक्त राम अथवा कृष्ण भक्ति मार्गी हैं ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत 'भक्त चरितावली'—जो इसका कल्पित नाम है किसी १९ वीं शताब्दी के अज्ञात लेखक की रचना है । ग्रंथ खंडित है । प्राप्त अंश में २७ से १२७ तक के १०१ छप्पय मिले हैं । वर्णित भक्तों में न तो कोई प्रसिद्ध है और न प्राचीन । इनमें तीन नाम ऐसे हैं जिनको ग्रंथकार ने कवि होना स्वीकार किया है: —

१—जयगोविंद (क्रीड़ा कुंज विहार रहस रचना पद ठाने)

२—शिवराम भट्ट (काव्य रचना में नागर)

३—सेवकदास (पद रचना में निपुन)

शेष प्रायः श्रद्धालु और भक्त हैं । ग्रंथ की शैली 'भक्त माल' के समान प्रौढ़ न होते हुए भी उत्तम है ।

संख्या ३६५. भक्तमाल, कागज—आधुनिक, पत्र—२९०, आकार—११½ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०२८, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९६२ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री रामचन्द्राय नमः ॥ श्लोक

सीता रामेति युगुलं वस्तुतस्त्वे करुपणं । परमानंद संदोहं सर्वाराध्यं न तोस्य हम । प्रह्लाद नारद पराशर पुण्डरीक व्यास अंबरीक शुक शौनक भीष्म क दालभ्यान् रूक्मांगदार्जुन वशिष्ट विभीषणादीन पुणपानिमान परम भाग वतान्स्मरामि ॥ १ ॥

तत्रैव गंगायमना त्रवेणी गोदावरी सिंधु सरस्वती च सर्वाणि तीर्थाणि वसंति यत्र यत्रा च्युतोदारकथा प्रसंगः प्रणम्य शिरसा विष्णु त्रैलोक्याधिपतिं प्रभुम् ॥ नाना सास्त्रो धृतं वंक्षे भक्तमाल समुच्चयम् ॥ छंद ॥ प्रथमै गुरुजी के चरण वंदौं जासो ज्ञान पकाशनं । आदि विष्णु जुगादि ब्रह्मा शिवटे शिव शंकरं श्री राम रघुवरं राघ श्री केशव २ कृष्ण यादव केशवं । रामकृष्ण गोविंद माधव वासुदेव श्री वावनं । मच्छ कच्छ वराह नरसिंह पाहि रघुपति पावनं ॥ श्लोक गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु र गुरूर्देवोमहेश्वर गुरू देव पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरूवेनमः अज्ञान तिमिराधस्य ज्ञानांजन सलाकया चक्षु सन्मीलितंयेन तस्मै श्री गुरूवेनमः ॥ २ ॥ अषंड मंडला कारं व्याप्तं येन चराचरम तत्पदं दर्शितं जेन तस्मै श्री गुरूवेनमः ॥ सर्व श्रुति शिरोरत्न विराजित पदाम्बुजं वेदांताम्बुज सुरजाय तस्मै श्री गुर्वेनमः ॥ ४ ॥ यस्य स्मरण मात्रेण ज्ञान मुत्पद्यते स्वयम् स एव सर्व सम्पति स्तस्मै श्री गुरवे नमः । ५

मध्य—

सुर सुरा नंद की घरानी की कथा सुनो सबु कोइ
जाहि सुनत हिय उपजत अब चल भक्ती होय

॥ छंद ॥

एक समय पति पुत त्याग गृह हरिभजन हित वन को गये। तह वस इकंतः भजन लागे करन दोऊसुख छे वहु दिवस वीते इन्हें एक दिन म्लेक्ष कामी महा गुण रुपवती विशेष यह तिय करियतन भोगन चहा पति तासु लै वै फूल समर्पः हेत जब कह कद गयो। तब दुष्ट वह ढिग नारि के अति प्रीती सो गवनत भयो। तकि ताहि आवत सुमिर हरि को करत भई पुकार है। छन ताहि सिंभसरूप हरि ले गये म्लेक्षावतार है।

कवित्त

शीलता भरें हैं नैन भाषती सुधासे वैन ऐन काज करें मैं सुचेन चपला सी है। रति मैं विलासी पति प्रेम की पियासी सब भांति से सुपासी धाम राम तिरमासी है। रहे न उदासी सदा दासी सम जोरे हाथ भाषत "प्रधान" परलोक की प्रकाशी है कीन्हें तपखासी भागि जागे नर जासी ताहि मिलती उमासी ऐसी नारि सुखरासी है

अंत—

ज्यों कुरंग निज अंग रुचिर मद अति मति हीन मरम नहि पायो
खोजत गिरतहु लता भूमि बिल परम सुगंध कहते धौं आयो
ज्यों सर विमल वारि परि पूरण ऊपर कछु सिवार तृण छायो
जारत हियो ताहि तज हौं सठ चाहत यह विधि अषावुझायो
व्यापत त्रिविध ताप दारुण तापर दुसह दरिद्र सतायो
अपनेहि धाम नाम सुर सरि तरु तज विषय ववूर वाग मन लायो
तुम सम ज्ञान निधान मोहि सममूढ़ न आनपुराणन गायो
तुलसी दास प्रभु यह विचार जिय कीजै नाथ उचित मन भायो।

इति श्री भक्त माल टिप्पनी सहित सम्पूर्णम्। श्री रामजी शुभम् मुकाम छत्रपुर हूमी वीज दूसरी कलम आधुनिक रूप से यह लिखा है। वेइनवदास मूलक पर दया करो सब कोय। भक्त माल वर ग्रंथ देखो आपन जोय। १ मु० कों श्री गुरुवैइनवदास जी कृपा करी अधिकाय। शिष्य बनायो आपनो भवतेलियों बचाय। १

+ + +

जहां चूक लिखते परी सज्जन लेह सुधार। पुत्र जान रक्षा करे लिखी बुद्धि अनुसार। १ शहर छतरपुर जानिये राव सागर असनाम दास मलूका प्रेम युत सुमिरत सीता राम। २ पढ़े सुने समझे गुने चार वरन में कोय। सीता राम प्रसाद ते राम भक्त बर होय

राव सागर नाम विख्यात सर समीप निवासनम्। लिषतं मलूक दासेन (न) भक्त दामामृतं प्रति। मिती भादौं वदी ३ सम्वत् १९६२ बिक्रमी

विषय—

भक्तों का चरित्र वर्णित है। इसमें निम्नांकित भक्तों का चरित आया है :— वैजयंतीदास, मीरा, तुलसी, अग्रदास, नर हरिदास, अजामील, गणिका, विभीषण, शवरी, जटायु, अंबरीष, विदुर, सुदामा, कुंती, श्वपच, वालमीक, दत्तात्रय, रंतदेव, नहुष, ययाति, उत्तानपाद, याज्ञवल्क्य, शुकदेव अक्रूर, रामानुज, हरियानंद, राघवानंद, रामानंद, अनंतानंद, कबीर, पीपा, भावानंद, रैदास, धना, योगानंद, कृष्णदास, छीपा, वामदेव, जयदेव, श्रीधर, सुन्दरदास देवापंडा, (मेरते के जैमल) ग्वालभक्त, श्री निःकंचनभक्त, रामदास, जसू स्वामी, वारमुखी आदि।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत पुस्तक नाभा जी कृत भक्तमाल पर लिखी गई प्रियादास जी की टीका के ऊपर दूसरी टीका है। प्रस्तुत प्रति के लेखक का नाम मलूकदास है जो श्री वैष्णवदास के शिष्य थे। ये छत्रपुर रियासत में रवि सागर के निकट रहते थे।

ग्रंथ का लिपिकाल सं १९६२ वि० है।

संख्या ३६६ क. भक्तामर, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८'४ × ११'५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४४ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

॥ अथ भक्तामर भाषा लिख्यते ॥
आदि पुरष आदीश जिन, आदि सुबुधि करतार।
धरम धुरंधर परम गुरु, नमौं आदि अवतार ॥

॥ अथ चौपई ॥

सुर नर मुकुट रतन छवि करै—अंतर पाप तिमिर सब हरै ॥
जिन पद वंदौं मन वच काय—भवजल पतित उधारन सहाय ॥
श्रुत पारग इंद्रादिक देव—जाकी थुति कीनी करि सेव ॥
शबद मनोहर अरथ विशाल—ता प्रभू की वरनौं गुन माल ॥
विबुध वंद्य पद मैं मतिहीन—होइ निलज थुति मनसा कीन

मध्य—

मद अविलियत कपोल मूल अलि कुल झंकारैं ॥
तिन सुनि सबद प्रचंड क्रोध उद्धृत गति धारैं ॥
काल बरन विकराल कालवत सनमुष आवै।
ऐरापति की सरिस सकल जन भय उपजावै ॥

देषि गयंद न भय करै तुम पद महिमा लीन ॥
विपति रहित संपति सहित बरतैं भगति अधीन ॥३७
अति मय मत्त गयंद कुंभ थल नषनि विदारै ॥
मोती रगत समेत डारि भूतल सिंगारै ॥
बांकी दाढ विशाल वदन मैं रसना लोलै ॥
भीम भयंकर रूप देषि जन थर हर डोलैं ॥
ऐसे मृगपतिपग तलै जो नर आयो होय ॥
सरन गए तुम चरन की बाधा करै न सोय ॥३८
प्रलय पौन करि उठी अगनि जो तास पटंतर ॥
वमै फुलिंग शिषा उतंग पर जलैं निरंतर ॥
जगत समस्त निगलि कै भसम करैगी मानौ ॥
तड़तड़ात दावानल जो चहुं दिशा उठानौ ॥
सो इक छिन मैं उपशमैं नाम नीर तुम लेत ॥
होइ सरोवर परिनवैं विकसित कमल समेत ॥३९
कोकिल कंठ समान श्यामतन क्रोध जलंता ॥
रकत नयन फुंकार मारि विसकर उगलंता ॥
फण को ऊचौ करैं वेगि ही सनमुष धाया ॥
तव जन होइ निशंक देषि फन पति को आया
जो चाँपै निज पानु करि व्यापै विष न लगार ॥
नाग दमन तुम नाम कौ तिनके है अधिकार ॥४०
जिस रन मांहि भयानक शवद करांहि तुरंगम ॥
घन से गज गिर जांहि मत्त मानौ गिरि जंगम ॥
अति कोलाहल माहि वात जहां नाहि सुणिज्जै ॥
राजनि को परचंड देषि बल धीरज छिज्जै ॥
नाथ तुम्हारै नाम तैं सो छिन माहि पलाइ ॥
ज्यौं दिनकर परकास तैं अंधकार विनसाइ ॥४१
मारै जहांगयद उतै हथियार विदारै ॥
उमगै रुधिर प्रवाह वेग जल सैं विसतारैं ॥
होंय रणहि समरत्थ महा जोधा बलपूरै ॥
तिस रन मैं जिन तोहि भगत जै है रन सूरै ॥
दुज्जंय अरिकुल जीति कैं जय पावैं निकलंक ॥
तुम पद पंकज मन वसैं ते नर सदा निशंक ॥४२
नक्र चक्र मगरादि मत्थ करि भय उपजावैं ॥
जामैं वड़वा अगिनि तेज निज नीर बरावै ॥

अंत —

पार न पावै जासु थाह नहिं लहिये जाकी ॥
गरजै जो गंभीर लहरि की गनति न ताकी ॥
सुष सौं तरै समुद्र कौं जो तुम गुन सुमरांहि ॥
लोल कलोलनि कैं शिषर पार जान जे जाहि ॥४३
महा जलोदर रोग भार पीड़ित नर जे हैं ॥
वात पित्त कफ कुष्ट आदि जो रोग गहे हैं ॥
सोचै रहैं उदास नाहि जीवन की आसा ॥
अति घिणावणी देह धरैं दुरगंध निवासा ॥
तुम पद पंकज धूलि कौं जो लावैं निज अंग ॥
ते नीरोग सरीर लहि छिन मैं होहि अनंग ॥४४
पांव कंठ तैं जकरि बांधी सांकल भारी ॥
गाढी बेडी पैर माहि जिन जांघ विदारी ॥
भूष प्यास चिंता शरीर दुष जे विललाने ॥
सरन नांहि जिन कोइ भूप कै बंदीषानै ॥
तुम सुमरत छिन मैं बड़ी बंधन सब षुल जांहि ॥
छिन मैं ते संपति लहैं चिंता भय विनसाहि ॥४५
महामत्त गज राज और मृग राज दावानल ॥
फन पति रन परिचंड नीर निधि रोग महाबल ॥
बंधन ए भय आठ डरपि करि मानौं नासैं ॥
तुम सुमरत छिन मांहि अभय थांनक परगासैं ॥
इस अपार संसार मैं सरन नांहि जिन कोइ ॥
याते तुम पद भक्ति हो भक्त सहाई होइ ॥४६
यह गुन माल विशाल नाथ तुम गुननि संवारी ॥
विविध वरन के पुहुप गूंथ मैं भगति विथारी ॥
जे नर पहिरैं कंठ भावना मन मैं लावैं ॥
मान तुंग ते निजाधीन शिव लक्ष्मी पावैं
"भाषा भक्तामर" करी "हेम राज" सुष हेत
जे नर पढ़ै सुभाव सों ते पावें शिव षेत

इति श्री भावना भक्तामर स्तोत्र सम्पूर्ण

विषय —

प्रस्तुत "भक्तामर" तीन पत्र का छोटा सा, किंतु सुन्दर भक्ति विषयक ग्रंथ है। यह जैन ग्रंथ है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ को संक्षिप्त-विवरण में ''ईश्वर वंदना'' विषयक लिखा गया है जो एक भद्दी भूल है। यह जैन ग्रंथ है और छोटी किन्तु प्रौढ़ रचना है। रचयिता का उल्लेख नहीं है। प्रस्तुत ग्रंथ अन्य बृहद् जैनग्रंथ के साथ एक ही जिल्द में लिपिबद्ध है जिसका लिपिकाल संवत् १८४४ वि० है। ग्रंथ की रचना हेमराज के हेतु हुई, ऐसा उल्लेख है।

संख्या १६६ ख. भक्तामर भाषा, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—१०½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२, पूर्ण, रूप—जीर्ण, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री पार्श्वनाथ सहाय ॥

आदि पुरुष आदीश जिन आदि सुविध करतार।
धरम धुरंधर परम गुरु नमो आदि अवतार। १।

चौपई

सुरनत मुकुट रतन छवि करैं। अंतर पाप तिमर सब हरैं
जिन पद वंदौ मन वच काय। भव जल पतित उधरण सहाइ। २
श्रुत पारग इंद्रादिक देव। याकी सुत कीनी करि सेव
सब्द मनोहर अरथ विसाल। तिस प्रभु की वरनौं गुनमाल। ३
विबुध वंद पद मै मति हीन। होइ निलज्ज थुति मनसा कीन।
जल प्रति बिंब बुध को गहइ। शसि मंडल बालक हीं चहै। ४
गुण समुद्र तब गुण अविकार। कहत न सुर गुरु पावै पारू
प्रलइ सवन उद्धृत जल जंत। जलधि तरै को भुज बलवंत। ५
सो मैं शक्ति हीन थुति करौं। भक्ति भाव वसि कछु नहीं डरौं
ज्यों मृग निज सुत पालन हेत। मृग पति संमुख जाइ अचेत। ६

अंत—

महामंत गजराज और मृगराज दावानल
फणपति रण पर चंड नीरनिधि रोग महाबल
बंधन भये ए आठ डरपि करि मानो नासै
तुम्ह समरत छिन माहि अभै थानक परकासै
इस अपार संसार मै सरनि नांहि अरू कोइ
याते तुम पद भक्ति की भक्ति सहाई होई। ४८
यह गुण माल विसाल नाथ तुम गुणयान सवारी
विविध करन के पुहुप गुंथ मंइ भक्ति विथारी

जे नर पहरइ कंठ भावना मन मैं भावै
मानुतुग ते नव निधान सिव लक्ष्मी पावै
भाषा भक्तामर कीयो हेमराज हित हेत।
जे नर पढ़ै सुभाव सों ते पावैं सिव पेत। ४९

इति श्री भक्तामर भाषा संपूर्ण।

विषय—

जिन भगवान् की विरुदावली वर्णित है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ में न तो लेखक का नाम है और न लिपिकाल तथा रचनाकाल ही उल्लिखित है। अंत में लिखा है कि 'भाषा भक्तामर कियो हेमराज हित हेत'। इससे केवल इतना ही ज्ञात होता है कि किसी हेमराज के लिये यह ग्रंथ रचा गया था।

संख्या ३९७. भवानी छंद, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—१९ × ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७७२, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

अथ ऊंकार लिष्यते॥

ऊँकार मंत्र उच्चरणी वाह्याहंस वेद उच्चरणी
करा अनेक कोटि युग करणी।
हर अरधंग शंभु दल हरणी। १

षपर षडग सु उरिषलह लियं कुंगल भरोति किरण कल कलियं
सात समुद्र रेस सल सलियं देवी शंभु निशंभुह दलियं॥ २
जिण दिन पवन धरानहु पांणी मभी व्योमज मांहि मंभाणी।
शीत वात पित्त विना समांणी जोगण तांह जुगां लगि जाणी॥३

अथ छंद त्रिभंगी

किंतु राय राजान मैं रंग भारी किंतु वाचती वेद बयणे विचारी
किंतु शंकरी मंत्र विद्या समाणी किंतु राग मैं रंग मैं जोग जाणी॥५॥
किंतु अंड मै फोडि ब्रह्मांड करणी किंतु धुंधला धुंधला निर्दला ध्यान धरणी
किंतु सागरा सात संचेवि सिंधी किंतु बंधती पाल विणनीर बंधी॥६॥

अंत—

कलश॥

उदौ आदि ईशरी उदौ मगतांड धरणी
उदौ पंड ब्रह्मंडि उदौ कलि चाला करणी

उवौ ईसर अरधंग उवौ चिहुंषांणि अनंती स्वर्ग मृत्यु पाताळि उवौ भय हरण भवंती ईरत्ति परत्ति एतां उवौ सेविजैतां सुंदरी सर्व देव समधर श्रवै सुपरि भणंता शंकरी ॥ ४०

इति श्री भवानी छंदः समाप्तः ॥ संवत् १७७१ वर्से पोस वदि १० दिन श्री कुंभाणा मध्ये लि० पं० चारित्र कीर्ति मुनिना

विषय—

भवानी की वंदना और महिमा वर्णन की गई है।

विशेषज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल सं० १७७१ दिया है जिससे रचना की प्राचीनता विदित होती है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रतिके लेखक कोई पं० चारित्र-कीर्ति मुनि थे जिन्होंने इसे कुंभाण स्थान में लिखा था।

संख्या ३६८. महाभारत विराट पर्व, कागज देशी, पत्र—२६, आकार—९३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) - १८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान - आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

... ...

छेदी मंछ पचाल के देसा। सुरसेनि सुगंध नरेसा ॥
सालूज भोज देस है कासी। महास्वाती देस परगासी ॥
और सभै देस है नाना। जहां मन मानै करौ पयाना ॥
चीत वीचारी कै राजा कहै। मछ देस वेरांट नीक अहै ॥
भ्रमदान धन्य सतपुरा। हमही प्रतीपाल करै सो सूरा ॥
वरख एक रहयै तेही सेवा। जुरजोधन जानै नही भेवा ॥
जीस्ट जन सेवा परवाना। नही दोष जो वेद वषाना ॥

॥ दोहा ॥

अरजून कही राजा सो सत्य भ्रम गूनगाथ।
का सेवा करी रही हौ तुह कहौ वात नरनाथ ॥

॥ चौपाई ॥

पारथ के वानी सुनी काना। भ्रमनंदन तौ करै वषाना ॥
दुदीस्टील राजा के पाहा। रहे वहुत दीन सेवा तहा ॥
कंक वीप्र है नाम हमारा। पासा षेलै भजे भुआरा ॥
एही प्रकार ते पाचौ भाई। वरप एक रहव सेवकाई ॥
कहा भीम करव मे काजा। जो तूम सुनौ सत्य कै राजा ॥

मध्य—

एह चरीत्र कौरौ दल होइ । पारथ अत्रगहे तब सोइ ॥
गहे अत्र पारथ धनुवाना । उत्राकुअर कर जोरो बषाना ॥
छेमहु सब अपराध हमारा । अनजानत तौ कहेव तुकारा ॥
तुम नर रूप नराएन देहा । तौ तुम स्नन तुम्ह करौ सनेहा ॥
पारथ सुनती कुअर सुभाए । वहु प्रकार ते वोध कराए ॥
आपन अत्र धनारजै कीन्हा । देव देइत संप कर लीन्हा ॥
औरौ अत्र सभै तहा धारा । राषेव सवे वीछ मंभारा ॥
अत्र धरे वीरछ पर लीन्हा । पारथ तेही परदछीना कीन्हा ॥
उत्रा कूअर तौ सारथ भएउ । पारथ रथो अत्र कर गहेउ ॥
कंचन वान धजा परवाना । चीतत लगते आइ तूलाना ॥

कै प्रनाम पारथ तव रथपर भै असवार ।
वैस्पान कहे राज ही सारथ उत्रा कुमार ॥

एति श्री महाभारथ वैराट प्रव भाषा कीता ॥ अरजुन वीग वीमै प्रनमो नाम सातमो अध्याए ७ ॥

उत्र सुप तौ करेव पआना । पारथ क्रोध भौ काल समाना ॥
संप धुनी कै धनुष टकोरा । मानौ प्रलै वज्र घनघोरा ॥
एकै रथ नीभै मन आए । देषत जवन द्रोन तौ कहे ॥

अंत —

पंडौ वीजै कथा परवाना । अंत का ने वेद परवाना ॥
आपु बंधन ग्रंथ पवाना : सुनी जन्मै जे पाप नसाना ॥
सत्रु नास धन्य जस होइ । रोग सोग नासै सव कोइ ॥
अंतकाल तेही पद नीवाना ; मन वच क्रम भारथ करू पाना ॥
सारधाहोन पुन्य नतेमा । समाधान ते सुनौ नरसा ॥
·· ···भारथ भाषा गाए । स्रवन पान ते पान सोहाए ॥
भाष प्रबंध उतीम सारा । सहज रूप नर तन संसारा ॥
केवल दान मान भगवाना । ते प्रानो अंनही हांन वाना ॥

वराट प्रव अतीराजा वैसपान जो गाव ।
स्रवन पान करै नर जन्मक पातक जाय ॥
पंडौ वीजै स्रवन रानी होव वीजे संसार ।
मन वाछीत फल पावइ मनमो कहु वीचार ॥

विषय—

महाभारत विराट पर्व की कथा का वर्णन किया गया है।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। प्रथम पत्र तथा संख्या १२ के पश्चात् के ४ पत्रे एवं ३१ के पश्चात् के पत्रे लुप्त हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी अविदित है। रचना अवधी में है।

संख्या ३६६. मार्कण्डेयपुरान, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—१०३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९२२ वि० = सन् १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत श्री रामचरितर भगत, स्थान व पोस्ट—मनिअर (मठ), जिला बलिया

आदि—

श्री गणेशाये नम् ॥ श्री पोथी मारकण्डे पुरान ॥ मारकण्डे जन्म ॥ मारकण्डे जोगाभ्यास करणे ॥ दोसर अभीयर ॥

चौपाई

मारकंडे मीरककंड के बारा। वै किसोर सुंदर सुकुमारा ॥
बडे भक्त ग्यांनी गुनवंता। सती जती सुंदर रूपवंता।
नारद मुनि गए तेहि के ग्रेहा। मारकंडे के देषि के देहा ॥
तीन्ह कि माता सो अस काहा। का तुम प्रीति पुत्र सो गाहा ॥
आजु के तीसरे वरीस के बारा। तेही दीन मरी हे पुत्र तोहारा ॥
जीनी पुत्र मह नीश्चे प्रीति लगावहु। दीन दीन यह सनेह घटावहु ॥
सूनी एह बात मातु बीलषानी। कहली कहा एह बोल तुम जानी ॥

दोहा

तुम्हे राम की सपत हे जो न कहो तुम सांच।
कवन बात तुम कही फेरी कहो सो बात ॥ १ ॥

चौपाई

मुनी पुनी बात कही समुझाई। झूठ कहौ तब राम दोहाई ॥
तीसरे बरीस तुम्हार कुमारा। नीश्चै मरी है ठहरी नाही बारा ॥

अंत—

दोहा

तब जम दुत जब आये देषीन्ह बीत्न स्वरूप।
कै प्रनाम सो फीरि गये धरमराये जाहा भूप ॥ १५ ॥

चौपाई

तीन्ह सों कही संदेसा जाई । इन मह कहा पठाए जमुराई ॥
एह तव प्रम वैस्नव माहा । सून्य स्वरूप माह मीलिराहा ॥
तेही शंते किछु नही वसानो । ताही नेवाजो सारंगपानी ॥
माला तीलक देषि डर होहि । नीकट जाए सकत नाही तेही ॥
तव धर्म राय कहा समुझाई । वार वार मै तुमहि सीषाई ॥
अएशी भक्ति होए जो कोई जाहा । दुर्वद्व मति जनी जानहु ताहा ॥
मारकंड ईमि कालहि जीता । काल के त्रास रहा सो वीता ॥

॥ दोहा ॥

धन्य धन्य दुषहरन प्रभु जनके अमर कीन्ह ।
मर जो पातष हरे प्रभु मुक्ति जीअतहि दीन्ह ॥ १६ ॥

इति श्री पोथी मारकंडे पुरान संपुरन समापत शुभ शमत १९२२ समै नाम मिति असान्ह सूदी ॥ ५ ॥ वार बुध सन् १२७२ साल ॥

विषय —

मारकण्डेय ऋषि की कथा का वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल का पता नहीं । लिपिकाल संवत् १९२१ वि० है । रचयिता ने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया । प्रस्तुत ग्रंथ अन्य पाँच ग्रंथों के साथ एक हस्तलेख में है । ग्रंथों के नाम "तीसाचक्र" के विवरण पत्र में दे दिए गए हैं । हस्तलेख अशुद्ध लिखा है ।

संख्या ४००. रंगभूमि, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—१० X ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६०, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७ वि०, लिपिकाल—सं० १८९८ वि०, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि—

श्री गणेशायनमः । एक रदन करिवर वदन भाल लाल सिंदूर
विघन हरन संकट दलन सिधि बुधि देत जरूर । दोहा १
ऐसे गणपति कों सुमिरि पूजि सारदा पाव ।
रंग भूमि बरनन करौं सुमिरि सिया रघुराव २
शिव को ध्याइ प्रनाम करि शिवा चरन शिर नाय ।
सेश सुरेश दिनेश विधि सब मिल होहु सहाय । ४
मातु पिता गुर चरन रज शिर धरि आयसु लेहु ।
विप्र संत के पाय परि कर संपुट करि सेहु । ५

भरत लखन रिपु दवन हूँ हनूमान सुग्रीव ।
सहित विभीषन अपर भट मरजादा के सीव । ६
सबको सुमिरि प्रनाम करि बहुरि सिया रघुवीर ।
प्रनवौं द्वौं कर जोरि कै हरत सुजन की पीर । ७
धन्य सुनैना सचिवयुत धन्य जनकु महिपाल ।
धन्य नगर के लोग हैं रामहिं निरषि निहाल ८
जनक नगर के पुरुब दिसि रची स्वयंवर भूमि ।
रचना देषि विचित्र अति मन विरंचिगो भूमि । ९

मध्य—

सुनहु कमठ अहि कोल होहु सजग दिग्गि कुंजरहु । धरहु धरनि महि डोल राम तोरही शिव धनुकु । २ दोह । लखन वचन सुनि देवता अवर सकल दिकपाल । भये सचेत प्रसन्न है वरषि प्रसन्न निहाल । १ एहि विधि सो रघुवंश मनि चाप समीपहि आय । जनकु नगर के लोग सब निज सुर सुकृत मनाय ११० छंद श्रोटक-सभकी जो शंशय गाठि अज्ञान मन महँ वाढ़ि जो रहे राजा दुष्ट । मनि मंदहु अति सुष्ट । भृगुपति गरभ गरुआय । सुरमुनिन्ह कि कदुराय, सिय सोच हृदय विलाय । पुनि जनक पश्चाताप रानी बिकलता सूल । दुख भरे सुख निमूल । एतने बहुरि एक संग बहु भाँति भाँतिन रंग । लषि संभु चाँप जहाज चढ़े जाय सकल समाज ॥ दोहा । राम बाहुबल सिंधु है बड़ो गंभीर अपार । उतरो चाहत है सबै कोउ नहीं कंडहार । ११

अंत—

जनक नंदिनी जनकपुर जबते प्रगटी आय—ऋद्धि सिद्धि सुख संपदा रही जनक गृह छाय ९

ग्रंथ नाम "रंग भूमि" यह राम जानकि व्याह । जो गावहि मन मुदित अति तेन्ह कंह सदा उछाह । १०

तुलसी कृत की कथा यह ताको उलथ। कीन मन बुद्धि चित्त हंकार को रघुपति आयसु दीन । ११

अष्टादश शत सठें संवत अगहन मास वार सोम तिथि पूर्णिमा पूरन चंद्र प्रकास १२ इति

मैं का करौं नहि करिवे के जोग कविता छंद प्रबंध बिनु हंसी करैंगे लोग । १३

ताते नाथ निचारि कै अपनी रुचि की कीन्ह । रीझत राम सनेह सों यह निश्चै करि लीन्ह । १४

इति श्रीरंग भूमि सीताराम विवाह उछाह परिपूर्ण मस्तु । श्री राम चन्द्राय नम संवत १८६८ ॥

विषय—

तुलसी कृत रामायण के आधार पर सीता के विवाह की कथा वर्णित है। रचना-काल—अष्टादश १८ शत सठै ६० संवत अगहन मास। वार सोम तिथि पूर्णिमा पूरन चंद्र प्रकास ॥ १२ ॥

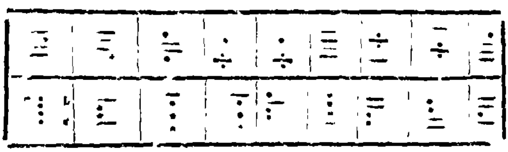
विशेष ज्ञातव्य—तुलसी कृत रामायण को आधार मानकर इस ग्रंथ का प्रणयन हुआ है।

संख्या ४०१. रमल, कागज—देशी, पत्र—४५, आकार—९½×५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, पूर्ण, रूप—सुन्दर, गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥
अथ रमल लिख्यते ॥

जब सूर्य अश्विनी नक्षत्र प आवै तब अष्टधात के आठ कड़े बनावै चोकोर ताके बीच छेद करावै लोह की कील जड़ावै चारि चारि टूक को एक एक पासा बनावै और इस तराते आक कीजे आठ वटुकन में एक तरफ चारि चारि विंदा कोनन पै कीजें वाके नीचे द्वे द्वे विंदा कीजै और इय वगल मैं तीनि तीनि विंदा कीजै तिनको सरूप : : । :' । :. । :.। यह तरह कीजैं पासे बनावै जो कोई पूछै वात तब पासे गेरि कै जाय चातमाम करै उत्पति रमल की सोरह सकल इम हात करि आय चातमाम कीजै और यह चारि तत्वन मौ देषिये और दायरे बहुत हैं तिन मैं सो प्रगट घर कीने है सो आगे लिषयगे ओर यह पोथी शकुन के दायरे पर बनी है अथ दायरा शकुन का लिष्यते सकल सोरह पासे मैं ते निकसती है इति सोलह कलनिका सीते संपूर्ण एक एक सकल मैं चारि चारि तत्व है प्रथम अग्नि



मध्य—

जो पूछै या औषधते अच्छा होयगा कि नहीं। तब ७ साते घर को देखिये सुभचार होय तो सिताब अच्छा होयगा असुभचर होय तो अच्छा होय पय वडे कष्ट तो स्थिर होय तौ ढील से अच्छा होयगा असुभचर होय तौ अच्छा होय। अतिथिर ते बहुत दिन मय नीक होयगा असुभचर होय तो दुसुभाव ते दुवधा से अच्छा होयगा जो पूछय किस तरकी औषध गुन करगा तब दूसरे घर मप देषियें जिस सवाद की सकल वपठी होय सो

सवाद कहिये गुन करता कहिये जो पूछै वैद सुग्यान हय की अग्यान हय तब १० ये घर में देषिये सुभ सकल बयठी होय तौ वैद्य सुग्यान है अशुभ ते अग्यान है पहिले देषिये रोगी जीवयगा कि मरगा तब या बात वासौ सब कहिये।

अंत—

अथ परदेस को जोई जाय तिसका द्रब्य मिलै ताको प्रश्न दूसरे २ में दाषिल होय आठवय ८ मै षारिज होय तौ जलदी प्राप्ति होय अथउदिम प्रश्न १।२।१० शुभ होय चौथे म ≕ न होय तौ उदिम होय इति उद्दिम प्रश्न इति रमल विधि संपूर्णम् ॐ श्रावण कृस्न १ बुधे संवत् १८९० शुभ

विषय—

'रमल' के अनुसार शुभाशुभ फल कथन।

संख्या ४०२. रसतरंगिणी, कागज—देशी, पत्र १६, आकार—६३/४ × ५१/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६३, अपूर्ण, रूप - प्राचीन, गद्य, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान आर्यभाषा पुस्तकालय (रत्नाकर संग्रह), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

... ... वीरा पेषि।
अतिभीता वीभत्सता अति चकिता वसुलेषि॥ २२॥
मिलि विभाव अनुभाव अरु संचारिन के वृंद।
परिपूरन थिरभाव जो सोइ रस रूपक विंद॥ २३॥
ज्यों पय पाइ विकार कछु दिवि दधि होत अनूप।
त्यों परिणत थिर भाव कों वरणत कवि रसरूप॥ २४
सो रस स्वनिष्ठ परनिष्ठ अरु स्वनिष्ठ परनिष्ठ ऊहै॥
अथ रसानां जन्य जनकभावः २५

दोहा

प्रगटत्त हास्य सिंगार सों रौद्र तें करुण सु होइ।
उपजत अद्भुत वीर तें भय बीभत्स तें जोइ॥ २६॥

॥ अथ वैरिणं कथयति॥

वैर सिंगार विभत्स को हास्य करुण सों देषि।
रौद्र अद्भुतहि त्यों जपो वीर भयानक लेषि॥ २७॥

मध्य—

॥ अथ हास्यरस ॥

षेलतीं फागु फवी॑ नवला चपलासी॑ मजें मनि भूषन सारी।
मेलती॑ मंजु गुलालन मूठिन रंगतीं रंगन लै पिचकारी।
लेन रँगीली॑ गतीनि छवीली छँटी गनिका गच सौंध सवारी।
ज्योंहि॑ झुकी चटकी वहुकी न हँकी सुवनी तरुनीन की तारी॥ १॥
इहाँ तारी पदाश्रित हासातिशयता व्यंजित है० अरुह्याँ
व्याल प्रमदानिह्री॑ प्रमदानि प्रति है रति स्थाई
अरु अनुभावादिऊ को अभावई है यातें हास्यरसई की मुष्यता है
अरु मनि मुकुतानि भूषन छटानि छई सेत सारीनि ठई अति उँचीं
अँटाइत उत दोरती ही हैं तातें चपलानि ही सोहि रहीं कही॑
अरु गुलालन 'रंगन' या वहु वचन ऐंथक विधि के वने ते॑ है
समनि भूषन वरननतें वीजुरी की उपमा तें सारी सेत ई सूचित सो
फागु में फवितई उचितई चाँदिनी॑ विछावने॑ याते॑ नहीं चिकन परे
सुधारते भरे मे॑ नृत्य गती निरंग भंग ह्वै है फिरि षेल रंगें सो
घधरि विसरे॑ पिचकानि हने॑ छीटानि टहरें छँटोई चहै

अंत—

॥ अथ सख्य ॥

कालिँदी कूल कदंवनि पास सहास विलास चरावत गाई।
राजत रंगन रंगन के अँगराग न वेप विचित्र वनाई।
भूषन नूतन फूलन गुछन गावें विमोहनी॑ वेनु मिलाई॥
यो॑ छविजाल छये नंदलाल सँगे वर वाल रँगे रस जाई॥ २०॥
इहाँ कृष्ण प्रिये परिहास वेषादिक के आचरणन तें श्री दामादिकन की
सख्यरस रूपा प्रीत्यतिशयता व्यंजित है० अरु विचित्र वसन
विभूषनानि ठयोम है छविजाल छयो नंदलाल ई विषया लंवन
अरु श्री दामादिकसखा आश्रयालंवन अरु तिन समान ई॑ वय
वेषादि वृजभूषन को उद्दीपन अरु संग हो हास विलासादिक
सात्विक अरु अनेगरंग अंगराग ते॑ वेषविचित्र वनाइवे तें
फूलन अरु गुछन के नूतन ऊँ भूषन वनाइ ता वेनु में
मिलाइ गाइवे ते॑ संगही॑ राजतया वद हुते परम प्रवीनता सुठि
सुंदरता सषानहूँ की प्रकाशितई है अथ भक्तिरसामृत सिंधु०
अरु वेणु वृज चंद की मणि मयी वारह आँगुर की दीर्घ अरु अंगुष्ट
समान स्थूल छह छिद्र की है सो पाणिका कथित है ताको कवित्तकी

—अपूर्ण

विषय—

नवरसों का विवेचन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ आदि और अंत में खंडित है। प्राप्त प्रति में कुल १६ पत्रे रह गए हैं। रचनाकाल तथा लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी अविदित है। ग्रंथ का नाम स्पष्ट नहीं दिया है। प्रस्तुत अंश में तीन अध्याय—प्रथम, सप्तम और नवम् हैं। इन अध्यायों में रसतरंगीनी नाम का उल्लेख मिलता है, जैसे—

॥ इति रस तरंगिण्यां सप्तम तरंगे।

अतः स्पष्ट हो जाता है कि ग्रंथ का नाम "रस तरंगिणी" है। इसमें नव रसों का विवेचन किया गया है। विषय को अच्छी तरह समझाने के लिये गद्य का भी उपयोग किया गया है। गद्य ब्रज भाषा में है। रचयिता ने संस्कृत और भाषा के ग्रन्थों से उदाहरण दे देकर विषय को ठीक ठीक स्पष्ट करने का प्रयास किया है। संस्कृत के जो उदाहरण दिए गए हैं वे संस्कृत में ही लिखे गए हैं। भाषा ग्रंथों में से अधिकतर रामचन्द्रिका और बिहारी सतसई से उदाहरण दिए गए हैं।

संख्या ४०३. रागमाला कागज—यंत्र का, पत्र—८, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, पूर्ण, रूप—नवीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हिं० सा० सम्मेलन, प्रयाग

आदि—

श्री गनेस देव जू ॥

अथ रागमाला

॥ दोहा ॥

काम कहत श्रृंगार रस विलसत तहि नर नार
ताके तीन प्रकार है समझत समझन हार
कच कहि नाईक नाइका रसकन कोक कलान
सांगीत मे सिवादिक मोह मगन है गान
वो प्रसिध्ध है विषै जुत ताते बरनै नांह
सांगीत को भेद कछु कहत जथामत चाह
श्रुत जानै यो ताल की बीन बजावह सोहई
धर्म अर्थ यो काम गत नादं बृंम्ह मय होई
सरगम पधनी बाइस श्रुत है भिन्न
तिनके नाम जुदे जुदे आचारज ने किन्न

सप्त सुर नाम षड्ज म रिष गंधार पुन मधिम पंचम राग
धैवत और निषाद ए सप्त सर रच राम

अंत—

तीन घरी रात गये पर राग दीपक को गाइजे
दीपक पत कल्यान कौ और कानरौ बताई
करत अड़ानौ माधवी बंगाली सो जाई
नौ घरी रात गऐ पर राग मेघ को गाइजै
मेघ मनोरथ सोरठ धंमाइच केदार
जाजवंती सौ करत सुख ललित पाइ सुकमार

इति रागमाला संपूरन समापता सगुन गज तुरंग फल फूल दूध दूध कन्यात्र अगम सरसौ पूरन कलस । छत्र चावर सिंघासन धृत दर्पन सुत सहित कामनी मन गोरोचन धुजा वस्त पुनधेन संष वेद धुन पावन । अग्न ज्वाल अंकुश कमल मोर पाष भरद्वान कुल सुभ संमुख वीन मृदंग मधुसेन वृषभ मृदमीन कुल संपूरन

विषय—

संगीत विषय वर्णित है । वर्ण्य विषय निम्नलिखित हैं :—
१—स्वर आदि का वर्णन
२—राग रागिनी और उनके पुत्र आदि का वर्णन
३—उपराग का वर्णन
४—गायन समय का वर्णन

विशेषज्ञातव्य—रागमाला संगीत विषय का साधारण ग्रंथ है । इसमें ग्रंथकार ने गद्य और पद्य का यथास्थान प्रयोग किया है । रचनाकाल और लिपिकाल उल्लिखित नहीं हैं । ग्रंथ की भाषा अव्यवस्थित और अपरिमार्जित है ।

संख्या ४०४. रागमाला, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—३'५×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११६, पूर्ण, रूप—प्राचीन (जीर्णशीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम इलाहाबाद

आदि—

श्री अथ मेघ राग ॥ दू ॥

नीलोत्पलाभ वपुरिंदु समान चैल पीतंबर स्तुषित चातक याच्य मानः ।
पीयूष मंद हसितो घन मध्यवर्ती वीरेषु राजति सुवाकिल मेघराजः ॥

॥ दोहा ॥

नील कमल द्विति पीत पट अमृत हास सित चीर ॥
चातक जाचक मध्य घन मेघ जुवा जुत धीर ॥

\+ + + +

कुंकुम चर्चित कनक छवि पिय मुष चूम्यो आनि ॥
कमल नयनि भैरव प्रिया सो मध्यमा बषानि

अंत—

अथ नट रागिनी दीपक की ॥ ५ ॥

तुरंगम स्कंध निषक्त बाहुः स्वन प्रभुः शोभित शोन गात्रः सयाम भ्रूभौ विषर प्रतापी ॥ नाटीय मुक्तः किल रंग भूतिः ॥

दोहा ॥

हय के काँधे हाथ धरि
मल्लरूप मधि रंग ॥
लोहू चरचो गात सब नाट जुद्ध उतंग ॥
इति श्री रागमाला समाप्तम्

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "रागमाला" है । यह छोटा सा ग्रंथ है । इसमें मूल संस्कृत तथा उसका रूपांतर हिंदी देते हुए श्लोक तथा दोहों में राग रागिनियों का स्वरूप वर्णन किया गया है ।

विशेष ज्ञातव्य —

ग्रंथ में रचयिता का कोई उल्लेख नहीं है । आदि तथा अंत में विशेष प्रस्तावना या पुष्पिका भी नहीं दी गई है । रचना काल और लिपिकाल भी अज्ञात हैं ।

संख्या ४०४. राघौ चेतावनी, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—५'५ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—श्री बाबा तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारा गंज, प्रयाग

आदि—

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ अथ राघौ चेतावनि लिषते ॥ चित चिंता की परीक्षा ।

१—वन बच्छराज कौ पुछौ २—नर वाहनहिं पुछौ ३—भागीरथी कौ पुछो ४—स्वामी कार्तिक ही पुछो ५—राजा सगर ही पुछो ६—हरिचंद कौ पुछौ ७—चंद्रोदकहि पुछो ८—रोहितास हि पुछो ९—नरघोषहि पुछौ १०—चित्रांगद को पुछौ ॥

अपने चलवे की परीक्षा ॥ १ अभिवहि पुछो २ आतम रिषि को पुछो ३ नर पौषहिं पुछो ४ प्रहलाद को पुछो ॥ ५ बलिना है ६ श्री भगवान की पुछौ ७ मारीचहि पुछो ८ बसिष्ठहि पुछो ९ पुलस्ति ह पुछो १०—पेस्न्हनै पुछो ।

अंत—

तब राजा बोले इनको द्रव्य जो ल्यौ ते तै चतुर गुणों द्रव्य इनके नौका भराय देउ तब सेवक जोरा ने करो ६ साथ नाव सो वेर होयगा ॥ ७ परचैसो मिलौ लाभ होइगा ८ द्रोह मति करो । लाभ नाहि है ९ गाउ चलौ आनंद होइगा १० सघर रहौ अनंद होयगा ।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "राघौ चेतावनी" है । इसमें शकुन विषय पर विचार किया गया है । आरंभ में जितनी बातें दी गई हैं उनके फल अंत में क्रम से कथन किए गए हैं ।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचयिता का नाम नहीं दिया है । ग्रंथ का रचनाकाल तथा लिपिकाल भी उल्लिखित नहीं है । ग्रंथ व्रजभाषा गद्य में है ।

संख्या ४०६, वन पर्व, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार -५३/४×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि-नागरी, लिपिकाल—सं० १७०५ वि०, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी

आदि—

श्री गणेशाय नमः । श्री गोपाल जी राग असावरी

माई री भोजाईयां जो रिसयकिधि ॥ नार सेयानि केहि पेरि तपया फूले सप्रमहा मोटु-सान्नि सेवा सविनिकेरी ॥ माई । राग ओसाओरि माई रे भोजाइयाँ जो नार सय किधि नार सेआनि कोहि पेरि । रीसा को वन माहे स्योरी साची रिशे वासि वनि केरे चैत्र शुध सतमी सोमवार नार से मेहेते करिविचार तप मांफूरे उम मारा मोटुरथ्यो निरंतर वन मंझारि । मोलि चक्र वेल्ये प्रसन्न हुआ मस्तक ऊपरि दियो हाथ सोज सहस्र गोपि शूर मतांस देया श्री वैकुंठनाथ हित जाणी ने पोमा ना भाटे । महादेव बोल्या वचन रसाल । नार मे आतुर एह ये गाजे यो सी लातस्मां अवतार । माई री । श्री अगिनलोक कुल युगना वी पदं । अनेक बंदि विसयाते गाई ।

मध्य—

रामग्री ॥

ते तो वैराग पासे न थी याम वोरे हवया भक्ति विन भगवान

मीताक्षरा कटा बिचेरे बलि भठोर पुराण
बैराग्ये समकादीक छूटा हूँ अंबरी प्रेहेलाद
भगत ने कीपा किधि मोरारि। अंतरे दीधो सब्द।
वैराग्य हूतो साचो विदुर नेयम्या युगदाधार।
ता हाटे पेरि हुल्या आय उघाड़ो को न गये शरणगार।
वैराग्य पाले हम आणबे रे तूहनेन दीठल वोहार।

नाथ दुवोहार स्वामी भयो नीथा केरा। भागर संघ लाए हवाम्यक्या घेयो नव नेवे मां हांथा ग्यो। ३१

अंत—

अजांणमा होली ओषी जेरे। मन माने ष्यंत मामो मा हारा वाला तेमे हे लोक मयाणे। भागे दुरीजन लोक अदेषा। ये बोले तेसही श्रेरे। बाद भागो ने प्रेम रस लागो। नंद नंदनो नप लागो रे नर से आयो स्वामी भले म्युली ओ जनम मरण भै भागोरे। ६५

श्री गोपाल ॥ संवत १७०५ वरषे पोषु शुदे ७ रवै माला ने ग्रभेबन परथ लेषु सही। शुभं भवतु कल्याण मस्तु श्री श्री श्री श्री

विषय—

महाभारत वन पर्व की कथा वर्णित है।

विशेष ज्ञातव्य—

ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति पूर्ण होते हुए भी उसमें रचयिता के नामका उल्लेख नहीं पाया जाता। रचना काल भी अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १७०५ वि० दिया है जिससे ग्रंथ की प्राचीनता प्रकट होती है। रचना पश्चिमी राजस्थानी में हुई है।

संख्या ४८७. वल्लभाचार्य जी की वंसावली, कागज—देसी, पत्र—१४, आकार—४'१ X १० इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४६ वि०, लिपिकाल—सं० १८४६ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री बालकृष्णदास जी, चौखम्बा, बनारस

आदि—

॥ श्री कृष्णाय नमः ॥ अथ श्री मद्वल्लभाचार्य जी की वंसावली कल्प वृक्ष प्रमाण लिख्यते ॥ श्री यज्ञनारायण सोम याज्ञी ॥ तिनके पुत्र गंगाधर सोम याज्ञी ॥ तिनके पुत्र गणपति सोम याज्ञी ॥ तिनके पुत्र वल्लभ सोम याज्ञी ॥ तिनके पुत्र श्री लक्ष्मण भट्ट जी ॥ तिनके पुत्र श्री वल्लभाचार्य जी ॥

अंत—

श्री रमण जी के लाल एक श्री व्रजोत्सव जी ॥ १ ॥ श्री व्रजोत्सव जी के लाल एक श्री व्रज रमण जी ॥ १ ॥ इति श्री मद्वल्लभाचार्य जी श्री गुसांई जी के परिवार आज ताई को कल्प वृक्ष प्रमाण प्रागट्य लिख्यो है अब और प्रागट्य हो यगो सो लिखेंगे संवत् १८४६ के अघनवदि २ बुद्धे ॥

विषय —

प्रस्तुत पोथी में श्री वल्लभाचार्य जी की वंशावली का संवत् १८४६ तक का वर्णन है ।

विशेष ज्ञातव्य—वंशावली में केवल नामों का ही उल्लेख है, उनके जीवन वृत्त के संबंध में कुछ नहीं लिखा है ।

संख्या ४०८. वल्लभी पदों की भाषा, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्) -८०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

श्री कृष्णाय नमः श्री वल्लभाचार्य चरण कमले भ्यो नमः ।

राग सारंग—जग वसुदेव किये पूरन तप, तेई फल फलित ।

विषय—

श्री वल्लभ संप्रदाय के कवियों के पदों की भाषा (? टीका) की गई है ।

संख्या ४०६. विष्णु पुराण, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ) १४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५१, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सरल चौबे और रामनरेशन चौबे, स्थान व पोस्ट सहतवार (दखिन टोला वडतर), जि० बलिया

आदि—

श्री राम जी शहाये ॥ श्री गणेशाए नमः पोथनक वीश्नु पुरान ॥
प्रनौ गनपत गौरी गनेशा । जेही वरनंत शभ पातक नाशा ॥
प्रनौ ह्रदयही काम्हुर वारा । जेही शुन लेऐ मती अपारा ॥
प्रनौ चांद शुर्ज कै पाऊ । कीहन सहाय करहु पैशाऊ ॥
व्यासदेव शैवक्या मोरी । करौ वीनै एक दुइ कर जोरी ॥
कैशे सत्य जुग त्रेता भैऊ । कैशे द्वापर कलजुग भैऊ ॥

कैशे भौ जन्म औतारा। कैशे शीरजु सकल शंसारा॥
कैशे पानी पवन उतपनेउ। कैशे भानु ससी औतरेउ॥
कैशे कलजुग कीन्ह पैशारी। कहा गश्रै दहु देव मुरारी॥
सो मोही रीषे कहु समुभाई। कहा गये कौरौ सव भाई॥
पंडौ जातसुना नहीं काना। सो उह निस्चै कहहु प्रवाना॥
कैशे जन्म लीन्ह वनवारी। कैशे असुर मारा परचारी॥
कैशे कै भुंइ भार उतारा। कैशे सीरजु सकल शंसारा॥

एतना सो अव भाषेहु सुनहु रीषे चीतलाए।
हरी के कथा अगम है सुनत पाप छै जाए॥

मध्य —

विलप वदन कै केशो चीत नहीं रहा शुठाउ।
अती वियोग दुख दारुन मन भौ कीश्न वीराऊ॥

आपु छाडी कीश्न मन दीन्हा। शे शुनी कीश्न वीलषी मन कीन्हा॥
हा हा दश्रा कहा अव भश्रऊ। मरइक वेरी न दरशन भश्रऊ॥
अव ही दश्रा वीछोह कीएऊ। इ वड अभाग हमारेउ भश्रऊ॥
करम लिखा सो मेटी न जाइ। वहुत वीछोह वेग राइ॥
तीनो मुए उधौ तोह शाषी। मरइक वेरी न देष्या आंषी॥
जन परीजन शवही शंघारा। एक हो वेगी दैश्रा शभ मारे॥
जौ जग उलटै याह गोशाई। पुनी शीरजै कै करै उपाई॥
इश्रह नीश्चै कै जानत हौ वाता। गौ द्वापर कलजुग उत्पाता॥

वीलषी वदन कै केशो झपही शीश डोलाइ।
उधौ शहीत दुष छाडीन्ही श्रीछ तर वेठे जाई॥

— संपूर्ण

विषय —

विष्णुपुराण का भाषानुवाद है।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल तथा लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता के नाम का भी कोई पता नहीं चलता। ग्रंथ अंत से खंडित है। इसकी भाषा अवधी है।

संख्या ४९०. वेदांत रत्न मंजूसा की भाषा टीका, कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७१२,

पूर्ण, रूप – पुराना, लिपि – नागरी, लिपिकाल – १८५८, सन् १८०१ ई०, प्राप्तिस्थान – आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

हरिः श्री राधा कृष्णाय नमः

आनंद की छटा जाकी जगत को प्रकास करै नियम कर निरुक्ति यह ताकी बखानी है ।
नियमानंद तातें कह्यौ नाम जाको कृष्ण सोई आदि देव जगत गुरू वेद मैं कहानी है ।
भक्त को अज्ञान हरन गुण के समुद्र हरि अर्थ धर्म काम मोक्ष पुरुषारथ दानी है ।
जाको गुण नाम कथा पापिन को ताप हरै ताही को वंदन ध्यान संतन हृदय ठानी है ॥१॥
ब्रह्मा शिव देव वंदित चरणारविंद भक्तन के दु.ख हरणहार गुरू गाइए ॥४॥
करुणा को सिंधु वोर अगनित गति दाता हरि मन वच सहित ताकों नित्य सीस नाइए ॥२॥
वेद वेद्य श्री श्रीनिवास है नाम जाको जासु गुण अंत सेष सारदा न पाइए ॥३॥
कौस्तुभ वेदांत दृग कंठ मै विराजमान भक्ति रूपा श्री जा के हृदे मैं सुहाइए ॥४॥

या लोक मैं ब्रह्म रुद्रादि के किरीट करिकै वंदित पाद पीठ नित्य अनंत स्वाभावीक स्वरूप शक्ति वैभव जाको ज्ञान बल ऐश्वर्य वीर्य कारुण्य वात्सल्य दया तितिक्षादि अनंत कल्याण गुणसागर जगत जन्मादि के कारण सर्व श्रुतिशिरोरत्न वेदांत करिकै वेद्य है चरण जाको रमा के निवास भगवान श्री वासुदेव विष्णु ने अपने थाप्यो वेद मार्ग रक्षा के अर्थ प्रेर्यो निरतिशय अपनो प्रिय अपनी शक्ति सों बढाई अनंत शक्ति जाकी अपने हस्त के आधेय कोटि सूर्य सम प्रकाश भगवान श्री सुदर्शन अवनी मे तैलिंग द्विजवर रूप करिकै प्रगट भयो नियमानंद जाको नाम भगवदीय सनातनी कलि मैं नष्ट भई वेदांत की संप्रदाय प्रवृत्ति कर्यो शारीरिक मीमांसाविचार वाक्यार्थ वेदांत पारिजात नाम ग्रंथ के रचना ब्याज करिकै सर्व वेदांते शास्त्र को अर्थ संक्षेप सों देखावत भये ताको विधिपूर्वक उपनयनादि संस्कृत पुरुष षडंग श्रुति सहित धर्म मीमांसा की जीज्ञासातें जाको कर्म फलादि विषै संशय नाश भयो कर्म फल मैं विरक्त सद्गुरु को लपट गुरू भक्ति संपन्न मुमुक्ष ताको अधिकारी है अनंत अचिंत्य अपरिमित स्वरूप गुण शक्ति ऐश्वर्य परब्रह्म श्री वासुदेव विषै है श्री भगद्प्राप्ति रूप मोक्ष ताको प्रयोजन है वाच्यवाचक संबंध है यह अनुबंधचतुष्टै है तातें या सास्त्र को अचिंत्य अपार अतिगंभीर अर्थ जान कै जे मंदमति हैं और शब सास्त्र के जिज्ञास हैं शिथिल प्रयत्न है और शास्त्रार्थ के विचार मै असमर्थ हैं तिनकी तामैं प्रवेस करनि अर्थ वेदांत रत्न रूप शास्त्रार्थ की कामधेनु दश श्लोकी हूं निर्मान करत भये सो आप ही आरंभ वाक्य मै तैसें ही अनुबंध कह्यौ है जिज्ञासा सूत्र के वाक्यार्थ मै सो अनुबंध प्रतिपादक वाक्य कहत है

\+ + +

नित श्री निवास को मैं शरण को प्राप्त होत हूं इति या दश श्लोकी की टीका का वेदांत रत्न मंजूषा नाम ग्रंथ श्री पुरुषोत्तमाचार्य करयो ताके प्रथम कोष्ठ मैं पदार्थ रत्न संग्रह

करयौ द्वितीय कोष्ठ मैं संप्रदाय निर्यौं पूर्वक परंपरा प्राप्त वाक्यार्थ रत्नसंग्रह करयौ तृतीय मै साधन समुदाय रत्न संग्रह करयौ चतुर्थ मैं पूर्वोक्त शास्त्रार्थ स्मरण शहित फल संग्रह करयो यह अर्थ विवेक है ताकी भाषा यथामति वर्णन न करिये है ।

सोरठा

कहौं यथा मतिसार मंजूषा मैं ज्यो कह्यौ ।
साधो लेहु सुधार चूक लिखन मतिमंद की ॥ १ ॥

तामैं प्रथम परिच्छेद विषे पदार्थन मै त्वं पदार्थ आदि मैं निरूपन करिए है ज्ञान स्वरूप इत्यादि श्लोक के अर्थ भाषा करकै ॥

\+ \+ \+

पूर्व तापिनी मैं द्विभुज को ध्यान कह्यो सुंदर पुंडरीक समान जाके नेत्र है स्याम घनकर जाकी आभा है विद्युत समान जाके अंबर हैं द्विभुज है ज्ञान मुद्रा करि कै संपन्न वन-माला धारी इश्वर गोपी गोप गौअन करिकै वेष्टित कल्पद्रुम तलै स्थिति दिव्य अलंकार करिकै युक्त रत्न पंकज मैं स्थिति कालिंदी जल के तरंगन के स्पर्श सहित जो वायु ता करिकै सेवित ऐसें श्री कृष्ण कों चित्त करकै चिंतन चरत संसार ते मुक्त होत है इति ॥ यह दोउ प्रकार ध्यान को समान फल कह्यो तातें मुमुक्षु अपने मनके अनुसार ध्यान करै यह संप्रदाय को निर्यो है ॥ ५ ॥ इति परमात्मतत्व निरूपण ॥

सोरठा

परमातम को ध्यान श्रुति स्मृति बहु गाइयो ।
संप्रदाय परमाण ध्यावैं संत सुजान नित ॥ १ ॥

इति श्री श्रुति सिद्धांते पदार्थ निरूपण नाम प्रथम परिच्छेद समाप्तः ॥ १ ॥

अंत—

ओर जो अर्थ धर्म काम मोक्ष चारों पुरुषार्थ की साधन सामग्री भिन्न भिन्न शास्त्र मैं कही है ता साधन सामग्री बिनाहूँ नारायण आश्रैन रति न सवपुरूपार्थ कों पावन है इत्यादिक ओरहू वाक्य समुदाय यामैं अनुसंधान करणों ॥

सोरठा

ज्यौं भाष्यों वेदांत मंजूषा अरु सेतुका ।
यथा बुद्धि सिद्धांत सोभाषा करमै कह्यौ ॥ १ ॥
मंदन के उपकार ज्ञानी के संतोष हित ।
कह्यो उपनिषदसार प्रीति अर्थ श्री कृष्ण के ॥ १ ॥

दोहा

या कर रीझो गोपिका मनहारी श्री कांत ।
कीजो मंगल जगत कों मंगल मंदिर शांत ॥ २ ॥

कवित्त

श्री श्री निवास सब वेद जाको गान करें जाके स्वरूप मैं न तर्क को प्रवेस है।
शुक चित संत जन ध्यान कर देखें जाहि मुक्तिदाता श्री मुकुंद जगत को नरेश है।
जाके गुण रूप को न ब्रह्मादिक पावै पार नये नये नाम जाके रटत सदा शेष है।
जगत के स्वामी श्रोर मुक्तन को गम्य हरि ताकी शरण होहु यह वेदन को निदेश है॥ १॥

हरिः ॐ तत्सत्

इति श्री श्रुति सिद्धांते फल निरूपण नाम चतुर्थ परिच्छेदः संपूर्णः शुभं भूयात् संवत १८५८ फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा॥

विषय—

श्री पुरुषोत्तमाचार्य्य कृत वेदांत रत्न मंजूषा नामक वेदांत विषयक संस्कृत ग्रंथ की हिन्दी में टीका की गई है। इसमें चार परिच्छेद हैं जो नीचे दिए जाते हैं:—

१—प्रथम परिच्छेद—पदार्थ निरूपण		...	पत्र १ से २५ तक
२—द्वितीय—"वाक्यार्थ"	...	...	पत्र २५ से ३६ तक
३—तृतीय—"साधन"	...	...	पत्र ३६ से ५० तक
४—चतुर्थ—"फलनिरूपण	...	...	पत्र ५० से ६४ तक

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल संवत् १८५८ वि० है। अनुवादक का नाम ज्ञात नहीं। मूलग्रंथ संस्कृत में है जिसकी प्रस्तुत टीका की गई है। टीका ब्रजभाषा गद्य में है जो पुष्ट है।

संख्या ४११. वेदांत रहस्य (अष्टावक्र भाषा), कागज—देशी, पत्र २२ आकार—१०½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०८, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८६१ वि०, प्राप्तिस्थान- आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० स०, काशी

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः॥

दोहा

तात मुक्ति जो चाहिये विष ज्यों विषय विसारि।
छमा दया संतोषता आर्जवता उर धारि। १

चौपाई

भूनभ नीर अगिन अरु बात ये तों तू न होइ सुनि तात।
इनको साक्षी चेतन रूप आत्मा जानों मुक्तसरूप। २

दोहा

जवही जाने शिष्य तू प्रगट देह हों नाहिं
चित विश्रांत अरु सांत सुख वंधु मुक्ति छिन माह । ३

चौपाई

तूतो वर्णाश्रमतें न्यारो । साक्षी सदा असंग उज्यारो ॥
इंद्री ताहि सकै नहिं जानि । सुखी होइ सुत श्रें में मानि ॥
निरपेक्ष निर लेप हैं अति अगाध चिद्रूप ।
तात अखंडित एक तू आपा जानि अनूप । १६
निराकार निहचल सदा मिथ्या सबै विकार ।
जिन को यह उपदेश हैं सोई भव भयपार । १७
भू[१]प[६]ट्काष्टक[८] चंद्रे[१] वर्षे मासे सहस्य के कृष्ने ।
रंधु तिथौ निशि भाना वंतं नीतं सुपुस्तकं लिपिना ।

मध्य —

दोहा

तजे धर्म सब कामना सुके डारे खोइ
इनहूं ते संसार दुख सांत न कबहू होई । ७

सोरठा

कीने विना विवेक कर्मकाय मन वचन के ।
दुखित जनम अनेक अबहूं तजि भजि सांत सुख । ८
जिन्हें निमिष उनमेष के कियें पेद अति होइ ।
बड़े आलसी यें सुषी तिन समान नहि कोई । ४
यह करिये यह ना करां दिये द्वंद सब डारि ।
अर्थ धर्म निज कामना मुक्तहु दई विसारि । ५
वैरागी विषया तजें रागी अति आधीन ।
वैरागी विरकत नहीं वंधन मुक्त विहीन । ६
यह करि हो वह छाड़ि हों जव लगि यही विचार ।
जगत वृछ के वीज हें ये दोऊ निर्धार । ७
जैसें दुःख निवृत्ति मे त्यों प्रवृत्ति में मोद ।
तजि दोऊ बुध जन करत जैसें बात विनोद । ८

अंत —

चौपाई

कहा अविद्या विद्या कहियें । मैं मेरी तहां कछू न लहियें ॥
रूप अरूप कछू नहिं जामें । वंध मुक्त हों के सी तामें । ३

प्रारब्ध कर्मन को कहिये । जीवन मुक्त कौन कों कहिये ॥
कहा विदेह कैवल्य वतैये । निर्विशेष में कछ न लहिये । ४
कर्ता कहा भोगता कोहें । अक्रिय क्रिया न एसो सोहें ।
कहा परोक्ष फल ताको चाव । सवविन मे हों मुक्त सुभाव । ५
कहा मुमुक्षू मुक्त कहावें । कहा ज्ञानी पुनि जोग कहावै ॥
बंध मुक्त कहूं कछुए नाहिं । सहज स्वरूप जान मो माहि । ६
सृष्ट और संहार कहा अब । साध सिद्ध कहाँ कैसी हें तब ॥
साधक साध तहां कछू नाहिं । स्व स्वरूप अद्वय मो मांहि । ७

कहां प्रमाता कहा प्रमाण प्रमा प्रमेय सो करों बखान ।
किंचित क्यों न पैये नही अचल अमल हो ज्यों को त्यों ही । ८
कहां विक्षेप एकता कहा ज्ञानी मूढ न पैये तहां ।
हर्ष विषाद दोऊ ते न्यारों अक्रिय सदा असंग उजारो । ९

दोहा

व्यवहार हु कहिये कहा परमारथ कछु नाहिं ।
सुख दुःख कहूं न पाइयें अनि वचि पद माहि । १०
विश्व कहा माया कहा वृति कहा अरु प्रीति ।
ब्रह्म जीव नहि पाइयें ऐसी निर्मल रीति । ११
कहा प्रवृति निवृति कहा बंध मुक्त कछु नाहि ।
निर्विभाग कूटस्थ हों अचल सदा रूप मांहि । १२
कहा शास्त्र उपदेश गुरु शिष्य को नाहिं ।
पुरुषारथ कासों कहो निर उपाधि सब मांहि । १३
एक कहां अरु द्वैत पुनि हें नाही किहिं ठोर ।
कहूं कहां लो बात यह मोते नाहीं और ॥

इति श्री अष्टावक्र प्रकरणं विशतिमं २० । इति श्री वेदांत रहस्ये अष्टावक्र भाषा समाप्ता भू॰ष॰टूका॰ष्टक चंद्रे॰ वर्ष मासे सहस्य के कृष्णे रंध्र तिथौ निशिभाना वंतं मीतं सुपुस्तकं लिखिता

विषय—

गुरु शिष्य संवाद के रूप में २० प्रकरणों में वेदांत का रहस्य समझाया गया है ।

संख्या ४१२. वैताल पचीसी, कागज—देशी, पत्र –९२, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०१८, अपूर्ण, रूप- प्राचीन, गद्य, लिपि— नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा, पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी । दाता—ठा॰ ललितसिंहजी, स्थान व पोस्ट मनिअर, जिला—बलिया

आदि—

॥ १ ॥ बै

श्रीगणे''''''दाय दस्तान यों है कि महम्मद साह बादशाह कै जमाने मैं राजा जैसिंह सवाई ने जो मालिक जै नगर का था सूरत नाम कवीश्वर से कहा कि बैतालपचीसी कौ जो जबानी संसकृत में है तुम बृजभाषा में कहो तब उसने बमूजिब बहुकम राजा के ब्रज की बोली में कही ॥ सो हम उसकों जबान उर्दु में छपा करते हैं जो खास और आम कै समुझने मैं आवै । सुरू कहानी का इह है ॥ कि धारा नगर नाम एक सहर उहां का राजा गंधर्वसेन उसकी चारि रानियां थी उनमें छः बेटे थे ऐक से ऐक पंडित औ जोरावर... काज'''बाद चंद रोज कै बाद वह राजा मरि गया और उसकी जगह बाडा बेटा शंक नाम राजा हुआ फिर कितने दिनों के पीछैं उसका छोटा भाई बिक्रम बड़े भाई को मार कर आपु राजा हुआ और बखूबी राज करणै लागा दिन व दिन उसका राज ऐसा बढ़ा कि तमाम जंबू द्वीप का राजा हुआ और अचल राज करकै साका बांधा कितनों दिनों कै बाद राजा ने इह अपनों दिल में बिचारा कि जिन मुलुकों का नाम मैं सुनता हौं उनकी सयर किया चाहियै ।

मध्य—

॥ नवीं कहानी ॥

बैताल बोला ऐ राजा मदनपुर नामक एक नगर है वहां वीरबर नाम राजा था औ उसी देस में हिरन्य नाम बनियां कि उसकी बेटी का नाम मदनसेना था वह एक रोज वसंत रितु में सखियों को साथ ले अपना बाग में सैर औ तमासा कों गई इत्तिफाकन् उसके आने सें पेस्तर धर्मदत्त सेठ का बेटा सोमदत्त नाम अपने मित्र को साथ ले बन बिहार कों आया था वहां से फिरता हुआ उस बाडी में आन पहुंचा इसे देख मोहित हो गया औ अपने दोस्त सों कहा कि भाई जी वह मीले तो मेरा जीना सुफल है औ जो ना मिली तो इस दुनिया में अवस है यह अपना दोस्त में वह कहकर बिरह में ब्याकुल हो बेइखितयार उसके पास जा उसका हाथ पकड़ कें कहने लगा जों तू मुझसें प्रीति न करेगी तो मैं तेरे ऊपर अपना प्रान दूंगा वह बोली ऐसा मत कीजो इसमें पाप होगा तब उन्ने कहा तेरे करिशमें नें मेरे दिल को छेदा है औ तेरी बिरह की आग ने मेरे सरीर को जला दिया इस पीर सें मेरी सुद्ध बुद्ध सब जाती रही है औ मुझें इस्क के गलबे से धर्म अधर्म का लिहाज नहीं है पर जों तू मुझें बचन दे तो मेरे जी में जी आवै वह बोली आज के पांचवें दिन मेरी साढ़ी होगी तो पहिले में तुझें मिल जाउंगी पीछे अपने सौहर के इहां रहूंगी यह बचन दे सौगंध बाध वह अपने घर को गई ॥

अंत—

जग्य करने बैठना हूं तुम समुद्र सें जाकर कछुहा ले आवो अपने बाप की आज्ञा पा एक धीमर से जा उन्होंने कहा कि एक रुपैआ ले औ कच्छप पकड़ दे उसने लिया औ

पकड़ दिया तब उनमें से बडे भाई ने मझले से कहा भाई तूं उठाले उसने कहा छोटे से भाई तूं उठा ले उसने कहा कि मैं इसे न छुउंगा मेरे हाथ में दुर्गंधी आवेगी ओ मैं भोजन करने में चतुर हौं बड़े ने कहा मैं सेंज पर शोने में चतुर हूं इस तरह से तीनो विवाद करने लगे ओ कछुऐ को वहीं छोड़ झगड़ते हुए राजा के द्वार पर जा द्वारपाल से कहा कि तीन ब्राह्मन फिरियाद आए हैं यह जाके तूं राजा से कह यह सुन के दरवान ने राजा को खबर दी राजा ने बुलवाकर पूछा कि तुम किस वास्ते झगरते हु तब उनमें से छोटा बोला कि महाराज मैं भोजन चतुर हूं माझले ने कहा कि पृथ्वीनाथ मैं नारि चतुर हूं

—अपूर्ण

विषय—

संस्कृत के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ वैताल पच्चीसी का उर्दू में अनुवाद किया गया है।

विशेषज्ञातव्य मूल संस्कृत ग्रंथ वैताल पचीसी का अनुवाद महम्मदशाह बादशाह के समय में जैपुर नरेश जैसिंह सवाई के कहने के अनुसार सूरत कवि ने व्रजभाषा में किया था। प्रस्तुत अनुवाद उस अनुवाद का है जो उर्दू जबान में किया गया था। अनुवादक का नाम ज्ञात नहीं। लिपिकाल और रचनाकाल भी अज्ञात है। शायद इनका उल्लेख ग्रंथांत में रहा होगा जो खंडित हो गया है। प्रस्तुत प्रति अंत में खंडित है। अंत में ९४ संख्यक पत्र है और इसके पहले के दो पत्र—संख्या ९२ एवं ९३ नहीं हैं। अनुवाद गद्य में है। यद्यपि अनुवादक ने इसकी भाषा का नाम उर्दू लिखा है तोभी इसे हिंदी कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं हो सकती। इसमें उर्दू के शब्द ऐसे हैं जो हिंदी के अपने ही होगए हैं तथा जिनका प्रयोग हिन्दी के लेखक भी बराबर करते हैं। इस ग्रंथ से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि आधुनिक उर्दू देश भाषा के प्रकृत रूप से कितनी दूर जा पड़ी है।

संख्या ४१३. वैद्यक ग्रंथ, कागज—देशी, पत्र—२३, आकार—९'४ × १०'४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य मिश्रित, लिपि—नागरी. प्राप्तिस्थान—श्री पं० वासुदेव मिश्र, ग्राम—कुड़सर, डा०—इस्माइल गंज, जिला इलाहाबाद

आदि—

······ ··महि पानै का कहता हो सौ सुजान ॥
सब चिह्न देषी लीजिए तौ मानिए प्रमान ॥

पीड़ा तौ अंग में भर करता है ॥ इंद तन में कभी अभौरी कभी कतौं छहै छई ॥ रूचि रापै जो ठंडी वस्तु मनि पथ्य है ॥ तौ जनि लोकमान रही बात सत्य है ॥ तिसका दवा मै कहता हो जानि लीजिए ॥ सब बात सत्य मानो पहीचान कीजिए ॥ चिचिरा समुद्र पैर पदारिक इलाज तीनि साही के तेल में मिलाय गोलिया जेनि। रितु काल वाल गोलिया उजूद में धरै ॥ दिन तीनो एक कभी बीच न परै ॥

अंत—

सो रही निसा गर्भ जो रहही—तासु प्रभाव महा कवि कहई ॥
सकल भुमि पति सो सुत जानौ—सकल जीव पालकते मानो ॥
अपर दिवस में गर्भ न रहही—इद्री स्वाद हेतु कर चहई ॥
सुभ अरु असुभ निसाकर दूनौ—तजौ असुभ निसि सुभ मन गुनौ ॥
जाते होई पुत्र कुल नायक कीर्ति वंत गुन जुत सुषदायक ॥

दोहा

गर्भ नारि के उदर में जेहि विधि करत निवास
वेद शास्त्र मत देषि कै ··· ··· ···

—अपूर्ण

विषय—

स्त्री पुरुष संबंधी रोगों और उनकी औषधियों का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ, "वैद्यक ग्रंथ" अपूर्ण तथा खंडित है। अतएव इसके रचयिता का पता नहीं चला। रचनाकाल और लिपिकाल भी अप्राप्य हैं।

संख्या ४१४. वैद्यामृत दीपिका (अनुवाद), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—१२३/४ × ५१/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८०, पूर्ण, रूप—पुराना, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६०३ वि०, प्राप्तिस्थान—भारत कला भवन, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥

ब्रह्मा विष्णु शदा शिव भगवती गणेश धन्वन्तरि और पूज्यनीयसुश्रुत वाग्भट आदिक संपूर्ण वैद्य गुरूँ को नमस्कार करके श्री मान माणिक भट्ट वैद्य का पुत्र मोरेश्वर नाम वैद्य नाना वैद्यमत को देख के अति रमणीय वैद्यामृत नाम ग्रंथ रचता हूँ ॥ १ ॥ आत्रेय पाराशर सुश्रुतादिकों ने जो ग्रंथ राज बनाये हुए प्रसिद्ध है मेरा ग्रंथ तो तीनों का सेवक ही है क्योंकि जो अपने योग्य कार्य के करणे में चतुर है ॥ २ ॥ हे वैद्य लोको यद्यपि यह वचन मेरा श्रेष्ठ नहीं है तथापि तुमारे हित का ही कारण है जिस वास्ते इस ग्रंथ के करने में मेरा श्री सदाशिव चरण कमल का भक्ति योग मुख्य कारण है ॥ ३ ॥ यो शास्त्र में चतुर है सो हस्त क्रिया में निपुण नहि है और जो क्रिया मे प्रवीण हैं पर शास्त्र में निपुन नहीं है ऐसे यद्यपि हैं उनसे क्रिया वैद्य तो वही कहलाते हैं जो दोनो प्रकार से कुशल हैं अर्थात शास्त्र भी अच्छी तरह जानते है और क्रिया में भी सम्यक कुशल हैं ॥ ४ ॥

मध्य—

आवरे का चूर्ण दूध के संग पीवै तौ जिनकी स्वर भंग भई नीक होइकर सुख करता है जैसे काम मद से पीड़ित पुरुषों को मृगनयनी का संभोग सुख देता है ॥ १८ ॥ इति स्वर भंग प्रतीकारः ॥

सो चर मुनका मरिच जीरा काला जीरा अम्लवेत सहित गुड़ अनार दाना इनकी गोली सभ अरुचि का विनाश करती है परंतु जीरा भुना ॥ १९ ॥ इत्यारुचि प्रतिकारः ॥

अंत—

अब ग्रंथकार उपदेश करते हैं कि भो भो वैद्य पुत्रो तुम मेरा उपदेश इस लोक में सौभाग्यदायक अरु परलोक में हितकारी अति माननीय सुनो कि तुम अच्छे मन करके चिकित्सा करने में दुराशा नगरी को त्याग के हे शंभो हे विश्वपते यह हमारा कर्म तुमारे अर्पण होवे ऐसा ध्यान करो ॥ २३ ॥ अब ग्रन्थकार ग्रन्थ रचने का काल लिखते हैं ॥ हुतासन अग्नि ३ आकाश शून्य ० रस ६ इन्दु १ अंकानां वामतो गतिः ॥ संवत् मे दुर्मति नाम म बाले मे वैद्यामृत अर्थात् वैद्यों का अमृत रूप नाम को धारता हुया यह ग्रन्थ सदाशिव की कृपा करके समाप्त भया ॥ २४ ॥

हुताशनाकाश रसेन्दु युक्ते संवत्सरे दुर्मति नाम भाजि ।
वैद्यामृतं नाम दधान एष ग्रंथः स्मरारे कृपया समाप ॥

विषय—

वैद्यक विषय का वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रन्थ मोरेश्वर कृत मूल संस्कृत ग्रन्थ वैद्यामृत का हिंदी अनुवाद ज्ञात पड़ता है। अनुवाद खड़ी बोली गद्य में है, गद्य व्यवस्थित है। इसमें आरंभ से ही एक, दो से संख्याक्रम चलता है जिससे विदित होता है कि यह संख्या क्रम मूल संस्कृत श्लोकों के अनुसार है। दूसरा प्रमाण जिससे यह मूल संस्कृत का अनुवाद विदित होता है, यह है कि इसमें ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १६०३ दिया है, परंतु प्रस्तुत खड़ी बोली गद्य इतना प्राचीन नहीं जँचता। तीसरी बात यह है कि अनुवाद का नाम वैद्यामृत दीपिका है जहाँ मूलकार ग्रंथ का नाम केवल 'वैद्यामृत' लिखता है। अतः इन कारणों से प्रस्तुत ग्रन्थ अनुवाद ज्ञात पड़ता है। अनुवादक ने न तो अपने नामका ही उल्लेख किया है और न अनुवाद का ही समय दिया है।

संख्या ४१५. वैराट (संभवतः विराटपुर को कथा), कागज—देशी, पत्र—७९, आकार—८३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६१

अपूर्ण, रूप—प्राचीन (अत्यंत जीर्ण), पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—ठा० चंद्रभानुसिंह जी, स्थान व पोस्ट– रतसंड, जिला—बलिया। वर्तमान पता—मैनेजर भारती प्रेस, बलिया

आदि—

बनीक धनीक शभ धन...
पहीरे पट मनी सुष मना...
वस्तु जवनी जो बेचनी हा...
मीशीली मीशीली ..

× × ×

॥ दोहा ॥

उतरी तुरैते ठाड भा धन्य धन्य शभ भाष।
लै जोहारी भाष्यो नीपती जीयो वरष तुम लाष ॥ ३७ ॥

पंचम पुरुष कवन सो आहीं। कहेउ भूप ले आवहु ताही ॥
जाइ सो जन सहदेव ही ल्यावा। सभा सहीत लषी नृप सुखपावा ॥
कहेउ कही आपन वेवहारा। केही गुन कवन रहा अधीकारा ॥
मै शहदेव कुग्रर ठटीवारा। गौचारी मह जन शरदारा ॥
सकल पुरान कथा समुझावो। छंद अहीरी मह कही गावो ॥
बहुरौ जोजन तुट प्रहारी। षोजनहार जो माझ देवारी ॥
तीन्ह मह प्रथम रेष है मोरी। शंको न कोऊ शन कर जोरी ॥
कह नीप कछुक अहीरी छंदन। हमही सुनावहु गुन रघुनंदन ॥
करी जोहारी कही भले नरेशा। वरनत जेही शारद श्रुती शेषा ॥
वरनी जासु जस पारन पावही। नेती नेती कही शीश नवावही ॥

मध्य—

॥ दोहा ॥

शुधी कौरौ पती कुपथ धरेउ कोपि धनुवान।
शर्क शुग्रन दल दाह दली करी हे मही शमान ॥
अश कही कर धनु धरे महारथी दीज द्रोन।
दुरजोधन दल मो अशुभ लागे भयंकर होन ॥ ११६ ॥

गीरी गीरी उठही तुरद हीय हारे। शनवही तुरै लोचन जलधारे ॥
चीडरहीं पीठी पथ रथ जाना। अती आरत रोवही षर स्वाना ॥
रथ नीकडी मध्य बोलत फेका। करही बाम दीशी काक अनेका ॥

उडही गीध शुभटन्ह शीर उपर । गीरही बीर कर आउध भुमीपर ॥
नीरषी महाशुर शोचही बीरा । शीथील होही भट कवच शरीरा ॥
कहही करन का चाह करतारा । वंचह शोइ जेहीं दैव उवारा ॥
बहुत कहही हंशी शोच न कीजै । हरिजन शंतत शीर लीजै ॥
हरी इछा गती पार न पावही । शीव वीरंची जेही शीश नवावही ॥
जा दल भार धरा थहराई । मंदर हलैं शींधु छलकाई ॥
शो लषी रथ अरूढ भट एका । भाजन चहत शाधी अविवेका ॥

रज कह कनक अचल करैं कनक अचल रज रूप ।
कुलीश कुशुम कुशुम ही कुलीश वंदौ शोइ श्रीभूप ॥ ११७ ॥

सुमिर कवल पद श्री भगवाना । आरजुन पंचवान शंधाना ॥
परशीं द्रोन पद पंकज पाना । कोन्ह पंथ श्रोन अस्थाना ॥

अंत—

सो जसोदा नंदन जग पावन । भयेऊ सोच हत भगती व धावन ॥
हैगे मनोरथ वशन हमारे । करेउ नाथ उपहार तोहारे ॥
तापर कुअरी उतरी आजु । पथ ही शुनहु देउ नीप राजु ॥
जीती षेत कुरपती वीचलाई । राषा पती जीन्ह फेरा गाई ॥
करन द्रोन भीषम रन ठाई । ... ... की नाई ॥
... ... तीहु काला । ... ... होइ नीपाला ॥
शुनत जुगल कर पथ (?पारथ) उठावा । मुदेउ कान आही मुष आवा ॥
अइह नीपती अतीशे ममानो । इअइ नी उचीत काह मुष आनी ॥
जाकह नीज मुष पाठ पढ़ावी । मोकह कह तुम सुनत दुष... ॥
कहेउ भीम शुनु अनुज परवोना । इनके उचीत शे शभन कीन्हा ॥
तुम कह उचीत अव गभ कीजे । इन्ह कह तीलक नीपती कर दीजै ।

॥ दोहा ॥

...व पती कर थापी कै काोअ अभै पद दान ।
आनै जगत वीराठ कह कीन्ही आपु शमान ॥

तव शनवंध ठानींदे नीका । तुम्हरे शुत ही दोआइअ टीका ॥
करीअ वीवाह नीशान वजाई । देश देश इअह छाध जाई ॥

—अपूर्ण

विषय—

पांडवों का विराट के यहां जाकर छद्म वेश में रहना, कौरवों का विराट पर आक्रमण करके उसके गोधन को हरना, अर्जुन द्वारा कौरवों का हारना और गौओं का छूटना, विराट

की सभा में पांडवों का प्रकट होना तथा अंत में विराट का अभिमन्यु से उत्तरा का विवाह करना आदि विराट पर्व (महाभारत) की कथा का वर्णन ।

विशेषज्ञातव्य—हस्तलेख अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्था में पाया गया है। किनारे इस प्रकार फटे हुए हैं कि कितने ही स्थलों पर अक्षर नष्ट हो गए हैं। जहाँ तहाँ स्याही भी उखड़ गई है। आरंभ के १७ पत्रे तथा अंत में ९७वें संख्या के पश्चात् पत्रे लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल लिपिकाल अज्ञात हैं। ग्रंथकार के विषय में भी कुछ पता नहीं चलता। ग्रंथ रचना अवधी में है। इसकी शैली रामचरित्र मानस की सी है। दोहा चौपाइयों में रचना की गई है। बीच बीच में छंद भी दिए गए हैं। ग्रंथ का नाम अज्ञात है। पत्रों के बाएँ किनारे पर 'वैराट०' लिखा होने से ग्रंथ का नाम अनुमान से 'वैराट' अथवा 'वैराट पु... कथा' रख दिया है। हो सकता है, यह 'महाभारत विराट पर्व' का अनुवाद हो। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति कैथी लिपि में है जो बहुत अशुद्ध है।

संख्या ४१६. व्रज विहार लीला, कागज—देशी, पत्र ८९, आकार—७½×५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—११४४, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः ॥

श्री नाथ जी सत्य छै।

श्री कृष्ण जी की व्रजविहार लीला लिखते :—

श्री पूरनमासी जी ने उजयनी को बास छांडि के वृंदावन में वास कियो है। एक पोतो साथे ले आई है—ताको नाम मधु मंगल है श्री कृष्ण जी को गुवाल भयो है श्री कृष्ण जी के साथ गाय चरावन जाये श्री कृष्ण जी को हंसावै, खिलावै, वो होत रिझावै, ता ऊपर नंद जसोदा जी प्यार बोहोत करै ॥

अंत—

ओर पिण अनेक बाजा बाजे छै गोपियां निरत करै छै वागमय धणी बनासपति फूलि छै, मेमनी पिण अभा छै। पाणी, अबीर, गुलाल, बावर रह्या छै। अनेक लीला कीनी। अनेक करसी, आ लीला गावसी। वाचसी तैण नुंगंगाणी रा स्नान रो फल होसी ॥

इति श्री व्रज विहार लीला कंस पछाड़ सातमी संपूरण समापत संवत १८५७ रा बरखे ज्येष्ठ मासे १३ तिथौ लिखतु पोथी ॥

विषय—

राधा जी का विवाह, फाग लीला, वनविहार, कंसपछाड़ आदि सात लीलाएँ हैं।

संख्या ४१७. सबदु का महातम या गीतामहातमु, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—३½ × २½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—गुरूमुखी, लिपिकाल—सं० १८९० वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय ना० प्र० सभा, वाराणसी [दाता श्रीयुत छेदालाल गुप्त, मैनेजर, नरेश हिंदू होटल, असकुंडा बाजार, मथुरा तथा ग्राम, जरैलिया पो०—जरारा, जि० मथुरा]

आदि—

आगै सबदु का महातम चलिया ॥

॥ श्री भगवानोवाच ॥

बहुरु श्री नारायण जी कहिया । ऐ लछमी जो ब्राह्मण साधु संत अतीत गृहस्ती श्री गीता जी के अठारहीधियावा का पाठ करै है । नित प्रत तिनके मईसरू असमेघ जगु करे का नित प्रत फल लगे है । अरु कोटक पल गऊदान करे का फलु नित प्रति लगे है । अरु अनेक प्रकार की तपस्या करे का फल लगे है अरु अनेक प्रकार के दान करे का फल लगे है । अरु जि कोई नित प्रति गीता के अठारही धियावा का पाठ करै है । अर प्रीत ... जो श्रवण करे है तिसको भी सभु फल प्रापति होइगे । अरु बैकुंठ प्रामी हावेगे । उतनी आठ ऊंचा विषै बैठि कर श्री गीता जी का पाठ करै । श्री गंगा जी के तट पर या तुलसी के पासु या ठाकुर दुआरे या पीपलु के तलै या बड़ के वृछ के तले जहां जहां उत्तम ठउड़ा होवै वहां बैठकर पाठ करै । ता कलयुग के जितने इन घोर पापु करे है तिनके दुषा ते मुकत होवेगा ।

अंत—

जैसे मेरी नाभ कमलु ते चारु कमलु उपजै है तेई चारु बेद है । तिना मैते जे सुगंधता लैणी होई इणा चारे बेदा मैं सुगंधता की ठउड़ गीता सुवासु है । अरु गीता के पाठ करने हारे के निकटि जाई खड़ा हुंदा हा । ऐ लछमी मे एही गीता पाठ कही है । अरु परगट कही है । काहे ते जो ब्रह्मण पढ़ेता बहुत बहुत उत्तमु है । तहुना मेरी देह है । जो छत्री वैस सूदर पढे तैसनो अतीत पढै ताअवस्य ही बैकुंठ प्रामी होवेगा । एही गीता सकल जीआ के कलिआणी करने के नामिति परगटु करी है । तिस कामहातमु महिमा निज कहिया है । अवसकर गीता का पाठु करै । या श्रवण करै । तिना जीआ की कलिआणी होवेगी । इति श्री गीता महातमु सपूरण भइआ श्री राम कृसन अरपन समापत ॥ १८ ॥ १ ॥

विषय—

गीता और उसके अठारहवें अध्याय के महात्म्य का वर्णन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—कृपया देखिए "गीता" और 'गीता के अठारहवें अध्याय का माहात्म्य' के विवरण संख्या २५४ और २५८ ।

संख्या ४१८. सत्यवती कथा, कागज—देशी, पत्र—१९, आकार ७३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१४, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिली हुई, प्राप्तिस्थान—पं० दयाशंकर जी मिश्र, गुरुटोला, आजमगढ़, जि०—आजमगढ़

आदि—

... ... । से वीवेकी हकुरा मंदा ॥
पहीलेह बोल वह भर देइ । मो धन सरवस आपु हरि लेई ॥
कंचन कांच बरावरी देषौ । पाप पुन्य दुइ सम कर लेषौ ॥
मद लोभ जे करै मदई । जन्म जन्म से नरकही रई ॥

× + ×

कहे जन्मे जै दुइ कर जोरी । मारकंडेव वीनती सुनु मोरी ॥
काह गए दहु पाचौ भाइ । से मोहो रीषै कहहु समुझाई ॥
काह गए दहु पाचौ भाइ । कंवर व पापी मंद भुवारा
तेन्ह न कीन्ह छन वीचारा । कपट वस कै धर्म नीकरा ॥

कहु रीषपन्ह के राजा, पूछत हौ मैं तोही ।
कैसे वटही पंडव अरथ सुनावहु मोही ॥

पहिले वर्ष गए जग्रनाथा । तीसरे वर्ष द्वारिका गयउ ॥
सतए सेतबंध चली गएउ । अठए भरीपंड चली आवा ॥
मारकंडेव कर दरसन पावा । तेही देषी रीषी उठ धावा ॥
कह वसै तुह पंडवउ । कहु अपना सद भाउ ॥
वनोवास वीध हमके दीन्हा । राजपाठ जीर जोधन लीन्हा ॥
वीन के सब तीर्थ मन लावा । अव स्वामी तुअ दरसन पावा ॥

अंत—

सर्ग लोक ब्रह्मकर थाना । वसे देव सकल परधामा ॥
छन एक अनुमति कीन्ह वीचारा । चले तह जह सती कुमारा ॥
ब्रह्म सहित नरमुनीगन आए वीनवत हरी ।
अंधकार कौ काथिकै कथा कहहु वीचारी ॥
जहव रीषै रहै तपसाधी । तेही पंथले आइउ व्याधी ॥
अंगही रीकी गौ वोन्ह के गोसइ । मै नही जानो धरम दोहइ ॥
रीषै कहा दीन होषौ मरना । मै भाषा जनी होउ वीहना ॥
अवतौ पलट भाग हमारा । जो हरी देषा चरन तुहारा ॥
सभै देवता बैठहु कीरीती ऐक गैलेहु ।

कुस्टी कंत मोरा हेइ सुवर कै सुइ देहु ॥
नीकह सुदर के नही सेवौ । अपनक से सती कहवै ॥
जकरा पुरुष नग्न कर अंधा । कुवुजी कुस्टीव उनकर वंधा ॥
माइ सती सत सीता तीन्ह पटतर सत तोरा ।
फेरु आंधार नीक करवौ कहकरवा हम तोरा ॥
जौ मै सती जाउ अंधी आरा । भाएउ आजोर देष संसारा ॥
हरषीत ब्रह्म सेभु मुररी । हरषीत सभै देवता हरी ॥
जै मुनी तहवलगन सोचवा । धोतीन्ह तहव मंडव छववा ॥
फैलन हव वन वर औ नरी । पहीरान पहीरु पटंबर झरी ॥
आवा हर ऐक धैंवो ववा । धोतीन्ह तहव मंडव छववा ॥
वालु कै तह चौक पुरावा । कलस कमंडल भरी धरु पनी ॥
दीव धरेउ सुजं तह अनी । ··· ··· ··· ···
वर कन्या वैस इ कैइ चौक उवार कीहु आनी ॥

—अपूर्ण

विषय—

मथुरा के राजा चंद्र उदै को कोई संतान न थी। उसकी सर्वत्र पुत्र न होने के कारण निंदा होती थी। इसका फल यह हुआ कि राजा अत्यंत उदासीन होकर वन में चला गया। उसने शंकर की तपस्या की जिसपर भगवान शंकर प्रसन्न हुये और उसको एक कन्या होने का वरदान दिया। राजा प्रसन्न होकर घर लौटा। वर्षोपरांत उसको कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम सत्यवती रखा गया। जब सत्यवती बड़ी हुई तो वह एक दिन सखियों सहित सरोवर में स्नान करने गई। वहाँ एक सुन्दर युवा पुरुष ने उसको नग्न देख लिया। उसपर वह अत्यंत क्रुद्ध हुई और उसको अंधा और कुष्ट हो जाने का श्राप दिया। वह युवा उक्त श्राप के कारण शीघ्र ही अंधा और कुष्टी हो गया। एक दिन राजा चंद्र उदै जब भोजन करने बैठा तो नियमानुसार सत्यवती को भी बुलाया; किंतु सत्यवती देवाराधना से निवृत्त न होने के कारण भोजन करने न जा सकी। राजा को इससे बड़ा क्रोध हुआ और उसने आज्ञा दी कि सत्यवती उपर्युक्त अंधे कुष्टी को समर्पण कर दी जाय। फलतः सत्यवती अंधे कुष्टी की सेवा करने लगी। एक दिन वह उस अंधे कुष्टी को एक तीर्थ पर ले गई; परन्तु वहाँ एक मुनी ने कुष्टी से छू जाने के कारण उसको प्रातःकाल मर जाने का श्राप दिया। सत्यवती को इसपर अत्यंत दुःख हुआ और "प्रातःकाल नहीं" कहकर उसने अपने सतीत्व का परिचय दिया। इससे सारे देवलोक में बड़ा हो हल्ला मचा। ब्रह्मा, विष्णु और महेश देवताओं के साथ सत्यवती के पास आए। कारण का पता लगाने पर ब्रह्मा, विष्णु और शिव सत्यवती पर अत्यंत प्रसन्न हुए और उसके पति को रोगमुक्त कर दिया। सत्यवती ने भी "प्रातःकाल न होने" का श्राप वापस ले लिया। यही कथा का संक्षिप्त सार है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ आदि अंत में खंडित है। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी अविदित है। कथा एक पौराणिक उपाख्यान पर आधारित है जो मारकंडेय और जनमेजय के संवाद के रूप में है। हस्तलेख की लिपि अत्यंत अशुद्ध है। भाषा इसकी अवधी है।

संख्या ४१६. समर कवित्त, कागज—आधुनिक यंत्र का बना हुआ, पत्र—७, आकार—४·१×८·३ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१, पूर्ण, रूप—नवीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९१२, प्राप्तिस्थान—संग्रहालय, हि॰ सा॰ स॰, प्रयाग

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ डाक चक्रम् ॥

कवित्त

भानु के भादि को आदि करै रजनीपति लै गनना करिये ॥
हर नयेन के भाग सो शेष रहै ऐक पंथ चलै न भरहि डरिये ॥
भूमि प्रयान कहै दुसरे तिसरे सव सिद्धि सदा कहिए ॥
शिर शत्रुन के रण षंडन को मत गुप्त विचारि सदा रहिए ॥१
ग्राम की राशि निशाकर राशि करै एक में तिथि आनि मिलावै ॥
सप्तगुणा करि वेद भनै तिन्ह को परचिंति विचारि कै धावै ॥
एक रहै रिपु युद्ध करै दुसरे रिपु को नृप सोवत पावै ॥
तीनि रहै मृत लोग सवै जव चारि रहै तव शून्य वतावै ॥२

अंत—

॥ अथ घोर काल नल चक्रम् ॥

यौ करि चक्र निशाक राआदि गनै त्रिनवम औ विपरीत ही ॥
तस्कर वैरि नक्षत्र जवै एक अक्षर हौ हित वै नृप जीतहि ॥
सोवत हि शिर जाइ गहै तन वाहेर भवन के बाहेर मीतहि ॥
मडविशे मुनि ना के नवाहेर नेकु न पाप बचै अभिहहि ॥२१

॥ अथ भूवलम् ॥

चैत्र से मास उदै तिथि लै गतमास जभोल वनै नहियै भय मानी ॥

॥ अथ महमारी ॥

ह्रास पत्र अआदि विषै अपसत्व जाहार वित्रादि परै ॥
कोन नया च घटि कोने बस सदिसा मे अढाइ घटी न टरै ॥

इनकी गति सब्ब सदा कहिए यह चक्र विचारि कै युद्ध करै ॥
नर केहरि है पर सैन्य के बीच परै गज युथ हजार हरै ॥२४

इति समर कवित्त समाप्तम् संमत १९१२ इदं पुस्तकं लिपि ।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "समर कवित्त" है। इसमें युद्धकला (जय पराजय) का निरूपण किया गया है। इसमें धनहावलहां पुर हंता चक्रम्, घोर काला नल, विरंचि, सुख, तथा कोट वेध आदि चक्रों का संक्षेप में वर्णन है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ 'समर कवित्त' का विषय युद्ध विज्ञान है। इस विषय पर अब तक पाँच ग्रंथ खोज में प्राप्त हो चुके हैं, किंतु यह ग्रंथ नवीन है। रचयिता का उल्लेख कहीं नहीं हुआ है और न रचनाकाल ही दिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी ने निजी उपयोग के लिये इस संक्षिप्त ग्रंथ को तैयार किया। इसकी लिपि अशुद्ध तथा अस्पष्ट है। लिपिकाल सं० १९१२ है।

संख्या ४२०. सात वार रा दूहा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—७$\frac{1}{2}$×४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

आदी ते गुण वेलड़ी, पसरी मोरे अंग।
फूली जोबन फूलड़ो, थया फल जो मन रंग ॥ १ ॥

अंत—

सात वार प्रीड भोगवो सातै सुख सूं सेज।
प्रिया के मन खंतड़ी, बालो हिवड़ा हेज ॥ ८ ॥
सात वार रा दूहा ॥

विषय—

सप्ताह के प्रत्येक दिन का उल्लेख कर सात दोहों में रस वर्णन किया गया है।

संख्या ४२१. सात सखी रा दूहा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८×६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि—

अथ सात सखी रा दूहा ॥ लिख्यते ॥
पहली सखी उठ बोली यूं, धान खावे सो जीवे क्यूं।
कदाण खरा खस का थाण, सोवे वेर असी बैठे छाण।

ताकी में चौथाई खाई, सात मास मेरा पेट दुखाई ॥
अहो सखी ! तुम कहो विचार, यौ हुंतीसी सुकुमार ॥ १ ॥

अंत—

सातवीं सखी उठ बोली यूं खाइ सुवै सु जीवे क्यूं ।
पहल पथरणां भरया सुवत केस लग्यां पाउ संग ॥
मच्छर पड़ गयो मेरे अंग, अहो सखी तुम करो विचार ।
हम सातों में कुण सुकमाल, कहत सरूपक काता में नीक ।
कौण हो चातुरी करौ विवेक ॥ ७ ॥

सात सखी री रा दुहा संपूर्ण

विषय—

सात सखियों का पहेली विषयक संवाद ।

संख्या ४२२. सामुद्रिक लक्षण, कागज—देशी, पत्र—२७, आकार—४ × ६'४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—तुलसीदास जी का बड़ा स्थान, दारागंज, प्रयाग

आदि —

(प्रथम पत्र जीर्ण शीर्ण है)

(अथ) सामुद्रक लछन लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

गुन'''बही भल प्रथम विचारौ आउ ॥ १ ॥
जौ ललना जल'''(कौ) न काज की नाउ ॥
बाजन जोरि बरात के आन''' '''ठौर ॥
पहिले दुलह चाहिय जो बाधे सिर मौर ॥ २ ॥
सकल अंग बरनन करौ गुन अवगुन के भेद ॥
सुख दुख जीवन मरन के रचे विधाता भेद ॥३॥
पहले आयु विचारि कै तब सब लछन देह ॥
अस्थल मति बनाइकै पीछे चित्र उरेह ॥ ४ ॥

मध्य—

॥ भौंह लछन ॥

धनुष भौंह राजा बड़ौ मिलि भौंह सो चोर ॥
जौ भौ हमि मधिबर अति दारिद्र गहै कठोर ॥

अंत—

॥ दोहा ॥

सकल अंग आलस भरो छिपो रहै भरी रोस व ॥
रहै न नीद सो यहै सुतनु नीरोसु ॥
नष सिष लै लक्षन कहे अंग अंग विस्तार ॥
तीन के गुन अवगुन सकल देषहु चित्त विचार ॥

इति सामुद्रक लक्षन लिख्यते सुभ संतत मगलं तद्दातु ॥ कुआर मास सुकल पक्षे तीरोदस्यां रवीवासरे ॥

विषय—

इस ग्रंथ का नाम "सामुद्रिक लक्षण" है। इसमें सामुद्रिक विषय का निरूपण किया गया है। पहले पुरुष के लक्षणों का वर्णन है पश्चात् स्त्री के लक्षणों का।

ग्रंथ व्रजभाषा तथा दोहा, सोरठा आदि छन्दों में रचा गया है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ खोज में नवीन प्राप्त हुआ है। इसके रचयिता का उल्लेख नहीं मिलता और न रचनाकाल और लिपिकाल ही दिए गए हैं।

संख्या ४२३. सुखदेव चरित्र, कागज—देशी, पत्र—३३, आकार—१०½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६५, अपूर्ण, रूप—पुराना, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा वाराणसी (दाता—पंडित बलदेव, ग्राम—चिंतामनपुर, पोस्ट—रसड़ा, जिला—बलिया)

आदि—

... ...

अवर कहो हरि क्रम तुम्हारा। देव काज करी दैत मंघारा ॥
एक समै वसुधा जल माही। बुडन लगी थाह जहा नाही ॥
बुडत वसुधा ब्रह्मा संकाना। राषै कवन बीना भगवाना ॥
जब ब्रह्मा मन मह भैए पावा। तब बराह रूप होई आवा ॥

॥ दोहा ॥ ५४ ॥

व्याकुल ब्रह्मा ही देषी के लीन्हा रूप बराह।
दसन उपर धरी वसुधा ल्याए हरीछन माह ॥

एही बीधी बसुधा हरी तुम तारे। अब दुसह दुख हरहु हमारे ॥
अवर कहो हरी भक्तहीत कीन्है। नर हरी रूप देह हरी लीन्हे ॥
दुष्ट दैत भए भक्त दुषदाई। मारे ताही होई भक्त सहाई ॥
हीरंनक कस्यप दुष्ट अन्याई। तीन्ह प्रहलाद हो कस्ट देषाई ॥
बहुत कष्ट जब सही नही जाई। तब प्रहलाद कीए हरी की दोहाई ॥

॥ दोहा ॥ ५५ ॥

प्रगट षंभ ते नर हरी कीए असुर संघार ॥
राषी लीए प्रहलाद ही अब दुष हरो हमार ॥

मध्य—

॥ दोहा ॥ २३० ॥

ताते सुनु सुषदेव सुत मानहु वचन हमारी।
करु बिवाह अब वेगी सुत ल्याहु मंदील नारी ॥

॥ चौपाई ॥

सुनहु पिता अब वचन हमारी। कहो वीचारी सकल उपचारी ॥
प्रुव जन्म कीत क्रम जो करइ। ताको फल नर देह जग धरइ ॥
देह पाइ अस्थीर नाही कोइ। पानी माह बुला जस होइ ॥
होत जात नहीं लागही वारा। छन मह अंग भंग होनी हारा ॥

अंत—

दोहा ॥ २३१ ॥

देह बनीज सब गगरी कंचा माटी कीश्रै।
परत नीर नही रही सकै तैसे देह मे जीये ॥

॥ चौपाई ॥

देह देह के नर मोह करई। सुष वीलास वीत आसा धरइ ॥
नीसु दीन चीतै हृदे वीचारी। केही वीधी इछा पुजै हमारी ॥
जरे धन जब भवन बनावै। करी वीवाह नारी मोह लावै ॥
भइ नारी पुत्र जब होइ। फी नाती कह चाहे सोइ ॥
नाती सो पनाती भैएउ। तबहुंन इछा मनकर गएउ ॥

॥ दोहा ॥ २३२ ॥

लषा लोग भाएकते धन भाला व करोर।
तबहु न मन आसा तजै सुनहु वचन अब मोर ॥

॥ चौपाई ॥

एह जीवन जग मीथ्या न अहइ। काल गहे सब कोइ ना रहइ ॥
सदा रहै घेरे नर काला। दीए फास गले सोग जंजाला ॥
जीवन दामीनी सम न रहै छन। ताम हवाल जोवन मीथ तन ॥
बालक सभै रहै अग्याना। सदा रहै छोडे हरी ध्याना ॥

—अपूर्ण

विषय—

शुकदेव मुनि का चरित्र वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। आद्यंत तथा बीच के कई पत्रे नष्ट हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का भी कोई पता न लग सका। हस्तलेख सभा के लिये प्राप्त हो गया है। ग्रंथ के प्रथम पत्र की संख्या १९ है तथा अंत के पत्र की संख्या ७९। यह अध्यायों में है। प्रस्तुत प्रति में केवल तीसरे अध्याय की ही पुष्पिका है जो इस प्रकार है:—

"इति श्री सुखदेव चरित्रे सुषदेव रंभा संवाद षंडमो नाम
त्रीतीआमो अध्याय ॥ ३ ॥"

संख्या ४२४ सुरसुंदरी कथा, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—९¾ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८१, पूर्ण, रूप—सुन्दर, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७१४ वि०, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

आदि—

॥ [० दोहरा ॥

वेकर जोडी पइ नमो पास नाम जग सार
परम निरंजन परम पद अविनासी अविकार। १
दसमीव्रत जे आदर करइ विनय करी धरि माथ।
रिध सिध संपति सब लहइ आपइ पारस नाथ। २
दसमो व्रत जिण आदर्यो भाव धरी सुविसाल
कथा कहीं हिव तेहनी पायो फल तत्काल। ३।

ढाल चउपई की जंबू द्वीप अनूपम ठाम भरत षंड काती पुरगाम। कामसेन राजा विख्यात रतन माला राणी अविदात। ४ ॥ तिण नगरी मह वसें धनवंता। श्री पति सेठ महा जसवंता पियमाल नारी सुषमाण। सात पुत्र जाणयां निग्रा जाम। ५। आठमो गर्भ धरई ते नारि जनमी पुत्री सुभदिन वार। मगल चार करीते सवं। अनंद धरी परचै बहु दरव्य। ६

मध्य—

ढाल जोगमा का

तिणि अवसर नगरी मैं आवै देवी तत्त त्रिया रूप करइ
चार कोस मैं सिला विकुवी नारन मुष ऊचरइ। ४५

राजादिक सब लोक भयातुर हीण दीन मुख ते बोलैं ।
रक्षन तूं जक्ष प्रतक्ष जो किछ मागइं सोलहों । ४६

तउ गगना तरे देवी बोले रे रे पापी अविकारी
सुर सुंदर महा सती मती सरोवणि करी असातना तुम्ह भारी । ४७

अंत—दसमी व्रत उतमए कियो अ० । सुर बस दियो उदार । द० पालि धर्म सुर पुर गई अ० ॥ जासी मुक्ति मंझारि । दस० । ६९

दसमी व्रत जो नर करइ अ० सुष पावइ संसारि । द० संपति पाव ही अ० । बंछति फलदातार दस० । ७० ॥ दोहरा

सुर सुंदरी नीए कथा सुणीयो जे नर नारि । रोग सोग तनते हरे पावै सुष आपार ॥ ७१ ॥ संवत् सत्रांसइ चउधो तणे कातक वदी सुभमास आदि मुनि सुन्दरि कथा । स्वमनि धर पास । ७२

इति श्री सुरसुंदरी कथा संपूर्ण । लिषत बीरु ऋषि सढौरे नगर मध्ये

विषय—

जंबू द्वीप के अन्तर्गत भरत खंड में कातीपुर गांव में कामसेन नामका राजा था जिसकी रानी का नाम रत्नमाला था । रानी के आठवें गर्भ से एक कन्या उत्पन्न हुई । कन्या विवाह हो जाने पर पति के यहाँ गई । वहाँ उसके ५ पुत्र क्रमशः हो होकर मर गए । छठवें पुत्र की रक्षा के निमित्त उसने दसमी का व्रत किया जिससे पुत्र की रक्षा हो गई ।

संख्या ४२५. सूरिया रा दूहा, कागज—देशी, पत्र—१, आकार—८ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

आदि —

अथ सूरिया रा दोहा

सूरिया सरली डाल, ललके पिण भांजे नहीं ।
तिण चढि मालो घाल, रस लीजे रागां तणो ॥ १ ॥

अंत—

रेंहो लागो जहि, घर घट पर सेवा तणौ ।
लोहां विण लागांह, संक न मानै सूरिया ॥ १४ ॥

इति श्री सूरिया रा दूहा संपूर्ण ॥

विषय—

नीति विषयक चौदह दोहे ।

संख्या ४२६. सूर्य महातम, कागज—देशी, पत्र—११, आकार—५ X ७.५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्) –१९१, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७१, प्राप्तिस्थान—श्री पं० राममनोहर जी, कौडिहार, डा०—अटरामपुर, जिला—इलाहाबाद

आदि—

धरमव्रत धारी ॥ परम पुनीत आदित अविनासी ॥ अजै अगाधि सकल घटवासी ॥ जासु कथा मैं करो बखानी ॥ सोई पुरुष है अगीनि समाना ॥ महिमा आदित अगम अपारा तीनि भुअन जोति उजिआरा ॥

॥ दोहा ॥

आदित कथा पुनीत है गावहिं संभु सुजान ।
तीनि भुअन छवि उदित है करौ प्रताप बषान ॥

॥ चौपाई ॥

सुनहु उमा आदित परितापा । बरनौ विविध सुज कै जापा ॥
नाथ महातम सुनहु भवानी । कहौ कथा पुनित सुभवानी ॥
बांझ सुनै एक मास पुराना । मन वच टेक धरै व्रत ध्याना ॥
नेम धरम सो करौ अचारा । द्वादश बरष करैं व्रतवारा ॥
कूस डसइ करै विश्रामा । हरखित लेहूं सुर्ज कै नामा ॥
येतणो टेक धरै व्रथा जनाही । होहि दयाल दयानिधि तबही ॥
मृषा वचन कह्यो नहीं तोही । मन क्रम वचन जो पूछेसि मोही ॥
पाच पुत्र होई अगिनि समाना । धीर धुरंधर अंतर जाना ॥
तासो जीती सकै नहि कोई । विद्यमान गुनवंत बड होई ॥

॥ दोहा ॥

बांझ कथा मन लाइकै टेक धरै व्रत ध्यान ॥
ते पाच पुत्र होई जोधा अगिनि समान ॥

अंत—

सूर्ज महातम सुनो भवानी । जो नर धरै हृदये मो जानी ॥
ताके कस्ट निकट नहि आवै । सुर्ज प्रताप बैकुंठ सीधावै ॥
जो नर पढै अस्थिन धरि ध्याना । विष्णु लोक सो पावै थाना ॥

इति

श्री सुर्ज महातम संपुरानं जो देषा सो लीषा मम दोखा न देते पंडित जन सौ बिनति मोरी ॥ उलटा अक्षर वच जोरी संवत १८७१ दसखत धनसीव मीसीर कै पोथी माधोदास क लिष... ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम 'सूर्य महातम' है। इसमें सूर्य भगवान की महिमा का उनकी उत्पत्ति आदि की कथा सहित वर्णन है। सूर्य के उदय अस्त का भी वर्णन है। ग्रंथ के अनुसार सूर्य की सेवा, ध्यान तथा व्रत से पुत्र कलत्र धनधान्य की प्राप्ति होती है और मनुष्य इस लोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ के आरंभ का पत्र खंडित है। ग्रंथ का नाम और रचनाकाल अज्ञात हैं। लिपिकाल संवत १८७१ वि० है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रतिलिपि दोषपूर्ण है।

संख्या ४२७. सृष्टि क्रम कथन, कागज—देशी, पत्र—३, आकार—८ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—सेठ शिवप्रसाद साहु, गोलवारा, सदावर्ती, आजमगढ़, जिला—आजमगढ़

आदि—

॥ अर्थ सिष्टेः कर्म कथनं ॥

सत चित आनंद एक रूप पुरुष परमात्मा जे हे ॥ ता जगत कार्ज सो ईछा नही ॥ त प्रकृत मया जो हे सो न्यत (? नित्य) है। कैसे हे जैसे सूरज की छाया हे। तैसेई ब्रह्म औ प्रकृत है। जब सो ब्रह्म हे तब सो प्रकृत हे ॥ परंतु कैसे हे ॥ पुरुष चेतन हे ॥ प्रकृत अचैतन हे ॥ सो अचेतन से चैतन्य होत हे ॥ परमात्मा के जोग ते सो संपूरन जग को करत हे ॥ सो जगत कैसो हे ॥ अन्यत हे ॥ अन्यत मिथ्या को कहत हे ॥ नट के स्वाग की नाई हे ॥ प्रकृत जे विस्व संसार ताकी माता हे ॥ सो प्रथम ही बुध्य को उपायो ॥ बुध्य कैसी हे ॥ इछा में हे बडो रूप हे ॥ ताते अहंकार भयो ॥ सो हंकार तीन प्रकार को भयो रजो सतो तमोगुन जुक्त ॥ सो अहंकार यो सतोगुन यो रजोगुन मिलिके दस इंद्री भई ॥ताते मन भयो ॥ दस इंद्री सो कोन कोन ॥ सो कहत हो ॥ कान ॥ चाम ॥आष॥ जीभ ॥नाक॥ वचना ॥ हाथ ॥ पाऊ ॥ उपस्थ ॥ गुदा ॥ एतानि दस इंद्रियानि ॥ आदही पंच ग्यानेंद्रि हे ॥ इतर पंचक कम एंद्री हे ॥ तमोगुन सतोगुन यो हंकार तिहू मिलि पंच तन्मात्रा होत हे। ताके नाम कहत हो ॥ सब्द तन्मात्रा ॥ अस्परस तन्मात्रा ॥ रूप तन्मात्रा ॥ रस तन्मात्रा ॥ गंधतन्मात्रा ॥ ए पंच पंडित कहत हे ॥ तापंच तन्मात्रा ते क्रम ही सो पंच अस्थूल भूत होत है ॥ ताके नाम ते कहत हों ॥ अकास ॥ वायु ॥ अगिन ॥ जल ॥ प्रिथी ॥ एते अस्थूल भूत ॥ सब्द अस्परस रूप रस गंध ॥ एते पंच विषय ॥ पंच जे हे हे ग्यन एंद्री ते सब्दादि विषै को ग्राहक हे ॥ भाषन ॥ देनलेन ॥ चलन ॥ मूत्र मल ॥ रत दानादि को कर्ता हे ॥ प्रधानः प्रकृति सक्ति नित्या विकृतिः ॥ एते पकृत के नाम हे ॥ सो जे सिव कहिए ब्रह्म ताश्रित हे अस्थित हे। बुध्य हंकार ॥ पंच तन्मात्रा ॥ प्रकृति विकृति ये सप्त ॥ दस एंद्री चित्त पंच महत्भूत ए षोडस विकार पंडित कहत हे ॥ ए सर्बं

मो व्यापि कै जग्त मो अस्थित हे ॥ या प्रकार सो ए जे चतुर्विसत तत्व हे ॥ तासो सिद्ध जो एह देह ग्रिह है ॥ जीव आत्मा निस्चै सो निर्अंचन अंतःकरन दूत वान वसत साछी रुवेन ॥ ताको देही कहत है ॥ पाप पुन्य दुष सुष आदि कै व्यास वो वध्य है ॥ मनसा कृत करम बंधन सो ॥ काम क्रोध लोभ मोह हंकार ए जे पांच वो दस एंद्री बुध्ये ॥ इनकर बध्या है देही ॥ अज्ञान करि वध्य है ॥ ज्ञानकरि छूटे हे ॥ ता दुष करता जे हे से व्याधि हे ॥ ता सुख करता जे हे अ· · ·ता है ॥

॥ इति सृष्टि कर्मं ॥

—पूर्ण प्रतिलिपि

विषय—

संसार के उत्पन्न होने के क्रम का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ में केवल तीन पत्रे हैं। रचना काल और लिपिकाल अज्ञात हैं। रचयिता का नाम भी अविदित है। रचना गद्य में होने के कारण महत्वपूर्ण है। गद्य ब्रजभाषा और खड़ी बोली मिश्रित है

संख्या ४७८. सोनार विद्या, कागज—देशी, पत्र—२१, आकार—९ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, पूर्ण, रूप—नवीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२९ वि०, सन् १२८० फसली, प्राप्तिस्थान—पं० सुदामाजी, स्थान—नारायणपुर, डाकखाना—कुटवाँ नारायणपुर, जिला—बलिया

आदि—

श्री गणेशाय नमः

सोनार विदया लिषते ॥

उत्तीम सोना सुरुप है तेही के कुंदन नाम।
मधीम सा जरद रंग है मोहर ताके नाम ॥ १ ॥
दोम सोना इलुका जरदा है तेही के रेसमी हे नाम।
सवसे नीच सेत रंग हे तेही के रेशमी हे नाम ॥ २ ॥
उत्तम चांदी सुरुप रंग है राभे तवाए वेदाग होए।
मधीम चांदी सीआह भरद है मो जवनी जानो सोइ ॥ ३ ॥
सात वार परे कटोरि आ करो काजी नाहवे होए जाए।
जसता जरदी करत हे मा··· मुलाएम माहां ॥ ४ ॥
जरदी लीए काला है सुनी लेहु सभ कोई।
तामो जसत दुनो मीलाए कै सुभहा करे ने कोइ ॥ ५ ॥
रुपआ भरी चांदी मे है जहता आधनी होए।
जरद रंग हुकीम रहै जानी लेहु सभ कोए ॥ ६ ॥

लीला वोही के जे की रहै तेही के लेहु गलवाइ ।
रंग देषी चपल भरे जल एही डपाए ॥ ७ ॥

अंत—

सौवगंध लीषा जाता है सो जो इह वीदा पढ के सोनार के वो वो गाहकी से मीली के षाए जो हिन्दु होए तव वाछी मारेगा ॥ पीछे परै मुसलमान होवै तो ७४ सुग्रर हराम हुए षाए तीलाक ७४ तरफदारी मोलाहीजे न करे कोई पुछे तव वताए देना धरम हवे ग्रवर सीषाए देए दागावाजी न करे कपट न करे आगे जहा रहे दुइ एक आदमी मीलीके मीलाये के तालीम कर राषे दस आदमी एक आदमी के झुठा कर देते हैं जो जानत नहीं इत झुठा कर जानते हैं के न झुठा करी आगे मुंगा मोती के हीसाव पथर के सुरहुनी नथीआ के छेदन होए त ताके छेद वनावे केराह लोहा के तार घसे वालु पानी मीमातव फएल होए जाए जतना चाही तेतना फएल करीलए आना के नाम एक आना -) नेतन नाम आना नाम =) दुइ आना के नाम सोहन आना नाम तीन आना के ≡) आना के नाम रषा आना एकाई आना ।) चारी आना के नाम चहटाई आना भोकाई आना पांच आना के नाम ।-) पचाई आना छव आना ।=) फुलाई आना सात आना । ≡) वएत आना आठ आना ॥) ठएल आना मझाई आना नव आना ॥-) के नाम कीनाई दस आना ॥=) सलाई आना एग्यारह आना के नाम ॥ ≡) एकलाई आना वारह आना के नाम ॥।··तेरह आना के नाम ॥।-) षलाइ आना चउदह आना के नाम ॥।=) फोकलाइ आना पंद्रह आना के नाम ॥। ≡) सुबलाइ आना सोरह आना के १) आना आना ।

॥ दोहा ॥

जेतना तीला वेचे सो जाने ततने आधा आने जाने ।
तीन तीहाई एक रती परे लेषा के हीसाब सवहे जानी लेहु सभ कोइ ॥

इती संपुरन सोनार वींदा हुआ मीती चैत सुदी १२ वार वुध सन् १२८० फसली ॥

विषय—

सोना चांदी के भेद, उनकी ठीक २ पहिचान तथा सुनार की धोखाबाजी का वर्णन किया गया है ।

विशेषज्ञातव्य—ग्रंथकार का नाम तथा रचनाकाल ज्ञात न हो सके । लिपिकाल फसली सन् १२८० है जिसके अनुसार वि० संवत् १९२९ होता है । ग्रंथ गद्य पद्य दोनों में लिखा गया है । गद्य खड़ी बोली का है । ग्रंथ की लिपि अत्यंत अशुद्ध है, ठीक २ पढ़ने में नहीं आती ।

संख्या ४२६. सोनारी विद्या, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—१२×४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, पूर्ण, रूप—सुंदर, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, काशी

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः ॥

पोथी सोनारी विद्या

उत्तम सोना सुरुष रंग है जेहि के कुंद नाम ।
मध्यम सोना जरद रंग है मोहराना है नाम । १
दोम सोना हलुक जरद है ते के रासी नाम ।
सब से नीचा सेत रंग है जाहि रेसमी नाम । २

इति नाम सोने का

उत्तम चांदी सूषहाड सम तवन वेदागी होए ।
मध्यमा चांदी स्याह जरद है मिलवम जानेहु सोए
सूवर परे कठोर अति काला निश्चै होइ ।।
जस्ता जरदी करत है माल मुलायम होय । ४
जरद लिहे काला रहे सुनौ सुजन सब कोय ।
ताम जस्त दूनौ मिला सुवाहा करै न कोय । ५
रुपया भरि चादी महे जस्त अधन्नी होय ।
लीला वहि की जिगिर है सुनौ सुजन सब कोय ।
रुपया भरि चांदी मंहे जस्त अधन्नी होय ।
जरदु रंग सुक्षुम रहे जानि लेव सब कोय ।
थोरो थोर मिलाय कै जेहि का लेहु गलाइ
रंग देषि चितमा घरै जानै यही उपाय । ८

अंत—

एक मासा भरे के दाम १॥≶) रती भरे के दाम ≶)४॥ खरीद तोला भर रे के दाम २०॥) रुपैआमा साढ़े चारि रती ४॥ एक चाउर पौने चारि तिल ३॥ । माषा भरे के दाम १॥≶) ४ रती भरे के दाम ≶) ५ खरीद तोला भरे के दाम २०॥।) रुपैआ मासा साढ़े चारि रती परा ४॥ एके चाउर मासा भरे के दाम १॥≶) ४ रती भरे के दाम ५ खरीद तोला भरे के दाम २१ रुपैआ ९ मासा ठे चारि रता परा ४॥ साढ़े चारितिलापरा ४॥ मासा भरे के दाम १॥।) रती भरे के दाम ≶) ६ जे एहि वीजक पढ़िकै सोनार ने गहना मिलि कै दुवाई तौ हिंदू होयतो गंगा के कसम है जतने तोला बिकै सुजाना । तीनि तिहायें आधे आना जाम तीनि तिहा पर काटे क लेषा कै कै मरै आना के नाम ॥–) नेत्र आना =) सोहम आना पलो आना ≶) राष आना =) एक बाई आना ≶) फोक आना ।) बूच आना ।=) कुलक आना ।≶) पैत आना ।।) भाभी आना ॥–) कांन आना ॥≶) सलाय आना ॥≶) एक लाय आना ॥।) दुलाय आना राष लाय आना ॥≶) फोक लीय आना

॥।≡) बुध लाय आना १) थान रुपैया अर्ध डरद की दालि से भूजि सो लेई। लीला थोथा डारि के सोन के टांका देई। मेहरी कुंती कहत है लरिकै बुबुआ नाम। राम राम राम

विषय—

सोने चांदी का काम कराने वालों के लिये सुनारी विद्या संबंधी अनेक ज्ञातव्य बातों का वर्णन किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—सुनारों के काम की बहुत सी बातों का संकलन है। सुनार लोग किस प्रकार सोना चुरा लेते हैं। और चांदी में नकली चीज मिला देते हैं तथा उनकी कुछ गणनाओं का संकेत जो कि प्रायः सब के काम का है एक अच्छी चीज है। रचनाकाल लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। रचयिता का भी कुछ पता नहीं चलता।

संख्या ४३०. स्तोत्र, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—७½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्ति स्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी। [दाता—सरल चौबे और रामनिरेखन चौबे, स्थान व पोस्ट—सहतवार, जिला—बलिया]

आदि—

... ... राधापति भवभै दहन।
दीन बंधु संसे दमन। त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ २ ॥
नमो नमो रघुवंस हंस शिव हृदय विहारी।
नमो नमो घनस्याम वंसिधर गिरवरधारी।
नमो नमो अच्युत अनादि अन अद्य वनवारी।
नमो नमो जलसाय जलज लोचन दुतिकारी।
नमो नमो खल ध्वंसनो जनरंजण भव भय दहन ॥
दीनबंधु संसे दमन त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ ३ ॥
नमो कौसल्या नंद धनुधर असुर प्रहारी।
नमो जाना रजण रूप अज्ञ तापस त्रिय तारी ॥
नमो जसोनंद जगत गुरु तिमिर तमारी ॥
नमो चतुर भुज रूप सच्चिदानंद खरारी ॥
नमो वेद पति निगम हित सोक दमन कमला रमन।
दीन बंधु संसे दमन त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ ४ ॥

अंत—

पंछी नाना जाति कोकिला कीर विराजे।
कुंजहि करहि कलोल डबहि मनि बरन अनि भ्राजे ॥

द्वारावती समलोक आदि सब नीच लषाई ।
सहसानन सारद महेस नहि सकै गुणगाई ॥
धौल धाम तोरण धजा पवन परसि फर फर करन ।
दीनबंधु संसै दमन त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ २७ ॥
प्रवल प्रताप उदित भानुकर राज नमामी ।
निर्गुण रूप तन श्याम कुंअर राजाधि नमामी ॥
हृदये बसहु मम कान्ह रूप मुरल्यादि नमामी ।
मन वांछित जुत विभौ भक्ति वैराग नमामी ॥
दआ सरन पोगे बने राधाकंत औढर ढरन ।
दीन बंधु संसै दमन त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ २८ ॥
रास बसंत समाज कुंज बन क्रस्न नमामी ।
गोपि कादि सुर करन रमन बनवारि नमामी ॥
संघर्ता करतार कार पालन प्रनमामी ।
जेहि प्रताप अज शंभु श्रष्टि लै कर प्रनमामी ॥
बयरी विहंडन रूप प्रभु दआदीन आरत वयन ।
दीनबंधु संसै दमन त्राहि त्राहि आरत हरन ॥ २९ ॥
इति श्री अस्तोत्र समाप्त ॥

विषय—

श्री कृष्ण की स्तुति की गई है ।

विशेष ज्ञातव्य—रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं, रचना प्रारंभ के एक पत्रे के खंडित हो जाने से अपूर्ण है । रचयिता के नाम का भी उल्लेख नहीं है ।

प्रस्तुत रचना के साथ एक ही हस्तलेख में निम्नलिखित अन्य रचनाएँ भी हैं :—

१ भजन - शिवनारायण स्वामीकृत
२ स्तोत्र ×
३ बजरंग चालीसा—लोकनाथदास कृत
४ रामरछ्या—रमइराम कृत
५ कवित्त—दुखहरन
६ कवित्त रामायण आरति तथा पद— ×
७ हिंडोलवा— ×
८ भजन गीतावली—
९ विष्णु पद या कंठमाल—कृपाराम
१० पद विनैपत्रिका तथा होरी आदि—विभिन्न कवि
११ दोहे— ×

१२ दृष्टि कूट — ×
१३ कवित्त हनुमान — ×
१४ बारहमासा—हंसराज
१५ कवित्त कुंडलिया आदि – विभिन्न कवि

संख्या ४३१. स्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—४.६ × ९.४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८१, अपूर्ण, रूप - प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० महेश प्रसाद मिश्र लिदहाबरा, डाकघर—अट्रामपुर, इलाहाबाद

आदि—

॥ श्री गणेशायनमः ॥
॥ अथ स्वरोदय लिष्यते ॥

पद पुरुषोत्तम जे भजैं सुमति धर्म गति लेहि ॥
विघ्न विनाशैं दुषन सैं सिद्ध सकल सिव देहिं ॥ १
सत गुरु ब्रह्मानंद हैं प्रान नाथ पतिधाम ॥
तिन पद पंकज प्रेम सौं सेवहि कर हित नाम ॥ २
जे नहि समझैं संस्कृत तिनहित अति अभिराम ॥
मोपत भाषत जथामति ग्रंथ स्वरोदै नाम ॥ ३

॥ शिव संवाद ॥

सैल सिखर कैलास पर बैठे गौरी नाथ ॥
निकट उमापति विनै करि कहि जोरि जुग नाथ ॥ ४

अंत—

॥ चौपाई ॥

पतिरत करै सूर्ज स्वर होई निश्च पुत्र गर्भ मह सोई ७९
सो चंद्रा स्वर मैं कीजै गर्भ माह तव कन्या लीजै ॥ ८०
चलत पुर्ष को रवि स्वर जवै-नारी स्वर चंद्रा जतवै

विषय —

ग्रंथ का नाम स्वरोदय है। इसमें गुरु विचार, पंच तत्व विभाग, नाड़ी भेद आदि प्रसंग आते हैं।

संख्या ४३२. स्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०७, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी दोनों, प्राप्तिस्थान—आर्यभाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी, दाता—महंत श्री राजाराम जी, स्थान व पोस्ट—चिटबड़ा गाँव, जिला—बलिया

आदि—

श्री गनेसाय नमः ॥

चौपाई

बहुरो प्रस्न कीन्ह सीव वंदनी । नमीत सीस सो मैना नंदनी ॥
भो प्रभु कृपा कीन्ह अपारा । भाषे पींडग्यान वीस्तारा ॥
अब परम्रीती केर जो कामा । भाषहु मोही होइ वीस्रामा ॥
भाषत सेभु गौरी पती वांनी । प्रमदेयाल जक्त अभीरामी ॥
दया समुद्र ग्यान की दाता । सुनो गौरी स्वर भेद वीख्याता ॥
जाते सर्वं ब्रह्म को धाना । कहो सो हेतु सुनो करी काना ॥
जो देवग्य होइ स्वर हीना । मानो मंदिर नाथ वीहीना ॥
वक्ता ससत्र हीन जो होइ । जौ स्वर हीन सीस वपु कोई ॥
ज्यौ स्वर साधी करम सव कीजै । सकल मनोरथ वांछीत लीजै ॥

॥ दोहा ॥

चंद्र सूर वीचो नासीका करत सर्वदा वास ।
इगल पीगल सुषमनी नारी तीनी प्रगास ॥ १ ॥

अंत—

जौ संसी सुर सुत्र प्रगासै । कै रवी तीथी मो चंद्र अभासै
अती उदवेग हानी उपजाई । चीत उचाटी कछु न सोहाई ॥
कन्या मीन करक ब्रीष लगना । बीस्चीक मकर छयो ससी मगना ॥

॥ दोहा ॥

मेष सीह धनु मीथुन की तुला कुंभ पुनी होइ ।
एह छवो रवी कील ग्रहे बूझत वीरला कोइ ॥

॥ चौपाई ॥

वाम प्रवाह लगन ससी लीजै । दछ लगन रवी कारज मीचै ॥
प्रात ही उदै मेष ते जानें । मीसा की उदै मीन ते मानें ॥
एक एक लगु लग्न प्रमाना । घरी पाच तहां भोग बषाना ॥
साठी दंड दीन रैनी दीवाई । नेम तहां सकवन माई ॥
संसी सुर सुक्क पछ स्वर कीजै । कुर कार्ज रवी कसुना लीजे ॥
वामें दहीने सुरजो कहीये । तहां पवाही तुल न लहीये ॥

\+ \+ \+

काल ग्यान साध नेवारन । मास पछ म्याही वीचारन ॥
एक रैनी दीन एकै वोर । वहै पवन सरकै न मोर ॥

तीनी ब्रष आयुब्रल मानी । सुमीरन सेभु कहो जीय जानी ॥
दुइ तीनी दीवस सुभ के अंगा । वहत पींगला होइ न भंगा ॥
ब्रष दुइ तव आउ वीचारी । धंध सकल तजी राम संभारी ॥

॥ दोहा ॥

तीनीरा ... ... ॥

—अपूर्ण

विषय —

संस्कृत के स्वरोदय ग्रंथ का भाषानुवाद ।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत रचना अपूर्ण है । संख्या ८ के आगे के पत्रे नहीं हैं । रचनाकाल और लिपिकाल उल्लिखित नहीं । रचयिता का नाम भी अज्ञात है ।

प्रस्तुत ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में हरिदास कृत 'गीता' (अनुवाद) और गो० तुलसीदास कृत 'सतसई' भी लिपिबद्ध हैं । ये दोनों ग्रंथ पहले विवृत हो चुके हैं ।

संख्या ४१३. स्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—१३, आकार—५ × ६'२ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य-पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८९५ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिस्पल म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ हरगौरी संवादे स्वरोदयाः ॥

जोवन विजई पुस्तकं पिंडे सो ब्रह्मांड ॥ प्रथम तत्व फेरि दोऊ सुरपच पंचतत्वन के भेद ॥ त्वच रोम नष अस्थि मास ॥ ५ ॥ प्रिथवी के गुन ॥ वीर्जमूत्र रुधिर मज्झमल ॥ ५ ॥ ये ते जल के गुन ॥ क्रांत मुष स्वास निद्रा आलस ५ ये ते अग्नि के गुन ॥ वामी निसचल करषो आनंद गंधवन येते वाउ के गुन ॥ राग दोष मोह भय लज्जा ॥ ५ ॥ ये ते आकास के गुन ॥ इति पंचतत्व गुनाः ॥

प्रिथवी की सुधा गति ॥ जल अधोगति ॥ तेज उधगति ॥ वाइ अधोगति ॥ अकास सर्वगति ॥

प्रिथवी पीता ॥ जल उज्वल ॥ तेज रक्त ॥ वाइ हरित ॥ अकास सर्वरंग ॥

अंत—

दुष्ट संग ना करै ॥ बहुत चलैना ॥ अर्ध भोजन ॥ षट मीठा चरपरा त्याग करै ॥ चंद्र सुर्ज के सनमुष रहै ॥ जोगाभ्यास करै सवदना सुनि परै ॥ उत्तर दिसा मुखार बिंद रापै ॥ बंग नाल सूधा रापै ॥ जोगाभ्यास रतो नित्य प्रभवे जप ततपरः ॥ चंद्र सुर्ज रतो नित्यं सो जोगी नात्र संसय ॥ १ ॥

इति सुरो दै समाप्त सुभमस्तुलिषा लाला भोपाल ॥ श्री सीता राम जू सहाइ ॥

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ "स्वरोदय" में स्वर विज्ञान का संक्षेप में वर्णन है। ग्रंथ गद्य-प मिश्रित है। गद्य का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग हुआ है। भाषा व्रज है।

विशेष ज्ञातव्य - ग्रंथ का लिपिकाल अन्य ग्रंथ के आधार पर दिया है जो इ ग्रंथ के साथ एक ही हस्तलेख में लिपिबद्ध है। रचनाकाल अज्ञात है।

संख्या ४३४. स्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—१५, आकार—४'६ × ६'२ इं पंक्ती (प्रतिपृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप - प्राचीन, गद्य, लिपि- नागरी, संवत्—१८८६ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री पं राजाराम तिवारी, गाँव—पंडित व पुरवा, (मौजा, वरीओज), डा०—अट्टामपुर, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः श्री महादेव स्वरोदा लिष्यते ॥ टीक कैलास सिषर पर आई ॥ सुनो सखी पारबती ये बात कथा है ॥ सुनो तुमसों कहत हूँ ॥ सुनौ पाछें अका रूप होइ है ॥ हे पारबती गुपत बारता कों तत्वसार है ॥ सरबदेव की बार्ता है ॥ सरबने कौ पिता सों तत्वसार है ॥ सो तुम सूं कहत हौ ॥ हे पारबनी य स्थूल कहत घनी है सुक्षम कहत मारग झीनो है ॥ गुन कों मुदा है ॥ पंडित जन कौ गावौ है ॥ अरु और लो संसार में अचीरज है ॥ अनेक साछ में ततसार है ॥ जानैगा सो सरोदा सूं जाग रहैगा हे पारवती सरब सख कौ अभ्यास करै है ॥ सो देवता की संन्या में प्रापति होय देवता है ॥ अथवा ब्राह्मण होवै अथवा संन्यासी होवे अथवा प्रोहत होवै सो जानौ है ॥

अंत—

अथ प्रदेसी विचार कहत हूँ ॥ पृथ्वी तत्व में कोई आंनी पूछै तों प्रदेसी आवै है ॥ ते तत्व में कोई आनी पूछै तो परदेसी को दिल लाग है। वायु तत्व में कोई आनी पूछै पादेसी आगें गया ॥ आकास तत्व में कोई आनी पूछै तौ परदेसी मुवा ॥ सुर साधै लराई नहीं होई ॥ अंब घात नहीं होई ॥ सरप नहीं डसे ॥ बाघ नहीं खाई ॥ चोंर ना लागै ॥ सुर साधै तो विषन नहीं खाई ॥ सदा सुषी रहै सरोदय की बात कीनी है। सरो ग्यान ऐसा है ॥

हे पारबती सरोदा ज्ञान तों सौ संक्षेप मा बरनन कर्यौ है ॥

इति श्री महादेव पारवती संवादे सरोदा ज्ञान तत्वसार शुभ अशुभ भेद निरु संपूरण समापतं ॥ समस्त श्लोक २००७

\+ + ×

फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे तीथ ९ बुद्ध वासरे लिषतो संपूरण संमत् १८८६ शा १७५१ मुलुक गुजरात सहर बणौंधा मद्धे लिषतं।

विषय—

प्रस्तुत ग्रंथ का नाम "स्वरोदय" है। यह गद्य में लिखा गया है। इसमें शि और पार्वती के संवाद रूप में स्वरोदय विज्ञान की चर्चा है।

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ, "स्वरोदय" के रचयिता का नाम ज्ञात नहीं हो सका। ग्रन्थ की विशेषता इसका प्राचीन गद्य में लिखा होना है। लिपिकाल सं० १८८६ है और यही इसका रचनाकाल भी प्रतीत होता है। गद्य व्यवस्थित नहीं है। इसमें कहीं कहीं खड़ी बोली के प्रयोग भी आए हैं।

संख्या ४३५. स्वरोदय, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—९ X ४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जनार्दन तिवारी, ग्राम—गुसाईंपुर, डा०—काजीपुर, जिला—बलिया

आदि—

... ...

वायु तत्व वर्तुलाकार जानई अग्नि तत्व त्रिकोण जानै
पृथ्वी तत्व जानै चतुः कोण वारुण तत्व सो धनुष की
आकृति जानै २२ वायु तत्व को आंव स्वाद कहिए खाटो
अग्नि तत्व को स्वाद तीक्ष्ण माहेन्द्र कहिए पृथ्वी तत्व
ताके स्वाद मीठो आप तत्व को स्वाद कटु आकाश
तत्व शून्यता को प्रमाण नहीं अकार नंही संख्या नंही
स्वाद नही इति नाडी तत्व लक्षणम् सित पक्ष कहिए उजिआरो
ताको तीणी दिन चंद्रमा वहै पाछे तीनि दिन सुर्ज को गमन
तेरसि चौदसि पूरणमासी चंद्रमा आवइ कृष्ण पक्ष
परिवा दुइजि तीज एइ दिना तीनि सूर्ज के पाछे दिन तीनि
चंद्रमा के गमन तें अमावस्यां सूर्ज आवई

अंत—

वायु तत्व वहै तो कलहादिक करइ मरन उपजावै ॥ ५६ ॥

चैत्र सुदि परिवा के दिन प्रातकाल वह मार तत्व विचारइ जो तत्व वहइ ताको फल अग्नि तत्व वहइ तौ राज्य माहे उत्पात उपजावे दुर्भिक्ष होइ हानि होइ निश्चै करि ॥ ५८ ॥

पृथ्वी अप तत्व वहइ तौ ए फल जानिए ६१
पृथ्वी तत्व अप तत्व चंद्र नाडी वहै तौ बिखर मध्य जानै
रात्रि के अंत वेला विषे कामिनी स्त्री जन सूतइ यो
पुरुष ब्रह्म पीवइ तेहि पुरुष के स्त्री वस्य होइ ६४
स्त्री को संग करे होइ पूर्व शिव कहि सूर्य नाडी पलटि
शक्ति कहिए चंद्र नाडी श्वास छाडी ततकाल चंद्र
आवइ तौ स्त्री वश्य होइ मोह प्राप्ति होइ
इतीविउ एक बार जेहि पुरुष के छूटहि तेहि पुरुष के
आयुर्बल घटइ दश दिवशं मंह मरइ निश्चैइ ६६

विषय —

संस्कृत के स्वरोदय ग्रंथ का हिन्दी गद्य में अनुवाद किया गया है।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। केवल संख्या ३ और ५ के पत्रे उपलब्ध हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं। स्याही और कागज को देखने से तो ग्रन्थ १०० वर्ष से अधिक प्राचीन जान पड़ता है। रचयिता का कोई परिचय नहीं मिलता। ग्रन्थ का गद्य बहुत कुछ व्यवस्थित और सुपाठ्य है। विरामों का भी उपयोग किया गया है।

संख्या ४३६, हरिचरित्र (दशम स्कंध), कागज देशी, पत्र—२६, आकार—७३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी और कैथी मिश्रित, लिपिकाल—सं० १७९१ के लगभग=सन् १७३९ ई०, प्राप्तिस्थान—आर्य भाषा पुस्तकालय, ना० प्र० सभा, वाराणसी (दाता—ठा० रामदत्तसिंह, ग्राम—लछीरामपुर, डाकखाना—रानी की सराय, जिला—आजमगढ़)

आदि—

... ... । सो मोही रीषै कहहु परवाना ॥
कैसे जन्म लीन्ह बनवारो । कैसे असुरन्ह मारेउ परचारी ॥
कैसे कइ भुइ भार उतारा । कैसे सीरीजु सकल सौं सारा ॥

॥ दोहा ॥

इ सभ मोसइ भाषहु सुनहु रीषै चीतलाइ ।
हरी कै कथा अगम है सुनत पाप पैराइ ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

तब कीछु रीषै कहा समुझाई । अब तुम सुनहु कहौ चीत लाइ ॥
जौ तुम राउ पुछतइहु मोही । नीस्चै ज्ञान सुनावौ तोही ॥
अलष निरंजन जाइ न लेषी । कहौ ध्यान हरि रूप बीसेषी ॥
कवन रूप कवन कीहु ठाना । कहा जोती इहु रहै समाना ॥
कवन से रूप कवन अस कहइ । अंत काल को ठाकुर अहइ ॥
बहुत दुष देषा रघुनाथा । बंधु एक लछन रहु साथा
सीआ एक संग जनऐ कुमारी । कठीन संताप सहा दुष भारी ॥
जो पइ जोती सदा सुषदेइ । दुष नही पाउ नाम के लेइ ॥

॥ दोहा ॥

जैसे राषै ठाकुर तइसे परसै दास ।
सुष मइ नाम न आवै दुष मइ सदा नेवास ॥ २ ॥

॥ चौपाई ॥

अठए कीस्न रूप अवतारा । जनमत प्रथम पुतना मारा ॥
बसुदेव तात देवकी माई । भगती हेतु हरी जन्मे आई ॥
बालचरीत्र कीन्ह बनवारी । बका बकासुर घालेन्ही मारी ॥

अंत—

॥ चौपाई ॥

सुनु राजा हरि चरित सोहाइ। हरी हर भगती हरषी गुनगाई ॥
तेहीं पाछे बीनती अनुसारी। भाग्य हेतु संतन्ह हीतकारी ॥
मइ तुम्ह सै कीछु भाषौ ग्याना। सो तुम उधौ सुनहु प्रवाना ॥
बीता द्वापर कल जुग भैउ। पांचौ पंडव सींझन गैउ ॥
देवता सभै गए कवीलासा। हमनीस्चै परसोतम बासा ॥
कलजुग केर भए पइसारा। कोइ न पाइही अंत हमारा ॥
मोष मुकुती गती उतरीही पारा। जो नर सुमीरन करीहीं हमारा ॥

॥ दोहा ॥

हरी की कथा मन लाइही वंदी ही चरन हमार।
कलजुग पाप बीआपी बीरला सुमीरन करीही हमार ॥ ५७ ॥

॥ चौपाई ॥

उधौ हम सभ दहु गीवलाई। देहु बीदा तौ ··· बन लाई ॥
हम कह उधौ मीलहु गीवलाई। बोध रूप हम होवे जाई ॥
तब अंकम लै उधौ लए। तजा प्रान वेलंबु न लाए ॥
रोवही उधौ करही पुकारा। नाव चढाइ बोरेहु मंझधारा ॥
हाहा दइव इका भएउ। अबही दइव बीछुरी सो गएउ ॥
चंदन काठ तब उधौ आना। तेही पर रापे श्री भगवाना ॥
दीन्ह अगीनी जे तवही लगाई। औकृत जोग कीन्ह तेही आइ ॥
दीन अगीनी तबही परु पानी। तब उधौ नीस्चै कै मानी।

॥ दोहा ॥

देषत चले तब उधौ नग्र पहुंचे आइ।
आपुन चले ब्रीज कह गोपीन्ह ग्यान सुनाइ ॥ ५८ ॥

॥ चौपाई ॥

उधौ रूप कीन्ह भगवाना। समुंद तीर गै कह अस्नाना ॥
इंद्र दवन तहां सुतत रहेउ। तहंवा जाइकै ··· ··· ॥

—अपूर्ण

विषय—
भागवत दशम स्कंध की कथा का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—ग्रंथ अपूर्ण है। प्रथम पत्र के पश्चात् कुछ पत्रे नहीं हैं तथा अंत में २७ वें पत्र के पश्चात् के पत्रे लुप्त हो गए हैं। रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात हैं; परंतु कर्णार्जुनी रचना के लिपिकाल के अनुसार इसका भी लिपिकाल संवत् १७९६ के लगभग माना जाना उचित है। ये दोनों ग्रन्थ एक ही हस्तलेख में हैं तथा एकही कलम

और एकही स्याही से लिखे हुए हैं। रचयिता के नाम का भी उल्लेख नहीं है। रचना का आधार संभवतः भागवत पुराण है।

संख्या ४१७. हितोपदेश, कागज—देशी, पत्र—९९, आकार—११×७½ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९७०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५८ वि०, प्राप्तिस्थान—म्यूनिसिपल, म्यूजियम, इलाहाबाद

आदि—

श्री गणेशाय नमः ॥
अथ हित उपदेश ग्रंथ गुवालेरी भाषा लिख्यते ॥
॥ दोहा ॥
श्री महादेव प्रताप तें सकल काम की सिध।
चंद्र सीस गंगा वहतु जांनत लोक प्रसिध ॥ १ ॥

\+ + +

॥ वार्ता ॥

मंदार नांम परवत पर एक विद्रुम नाम सिंघ रहतु हैं ॥ सो समस्त पसुवन कौं मारैं ॥ तब सब पसुवनि मिल वीनती करतु हैं ॥ मृगराज तुम सुनो। सब पसुयन कुं काहे कुं मारतु हैं ॥ तुमारं आहार कुं जीय एक २ पसु पहुंचावेंगे ॥ तब सिंघ कही भली बात ॥ ऐसेहुं कीये जावो। तब सिंघ कु एक एक जीव नित्य पहुंच तो करें सो सिंघ सुषसु नित्य पसु कुं षात है ॥ ऐसे करत एक दिन बुढे सुसें का वारो आई ॥ तब सुसै बिचारी जो हुं जीयत ही उर की त्रास दूर करू मरन तो नहवै ही है। यें बुध उपाईये तो भली पै हुं दीनता सिंघ पें

मध्य—

कहे कुं आयु यह विचारि कर वेहरवें सिंघ पें गयो ॥ आगु सिंघ क्रोध में रिसाय घनी दुष भूष तें पीरत बैठो है ॥ इत सुसा आवत देष्यौ ॥ तब कहो कहा रे तू अबेरो आयो ॥ तब सुसै कही ॥ राजये मेरे वसु नांहीं ॥ राह में आवत एक सिंघ मोकूं पकर रहे सो मैं वाकुं सूं सपति करकै तुम पास कहिबे कुं आयो हु ॥

॥ चौपाई ॥

कोप सिंह ठाढो भयो दूरे। सुसा तोहि खाऊं नहीं मूरे ॥
मोहि बताय देहु वा ठाहर। जिहां कहे तू दूजौ नाहर ॥
सुसा आछुर नाहर हूआ। गया लिवाय जिहां है कूवा ॥
यामें तेरो बैरी रानां। सिंघ जाय तिहां देखें नैना ॥
करम संजोग फिरी है माया। सिंघ जु देषत अपनी छाया ॥
परयौ हाक कूवा में तबही। शत्रु मारूं जायरू अबही ॥

सो वो नाहर विन विचारैं कूवा मैं डाक पर्‌यौ परत ही मूवौ ॥ तातैं कागली विन विचारैं कांम न कीजै ॥ जाकैं बुध जाकै बलु ॥

अंत—

पछैं राजा बांभन विस्नु सरमा कुं बहुत द्रव्य दे बिदा कर्‌यौ गाढौ संतोष्यो ॥ तब विष्नशर्मा आशीर्वाद देत है तुम री जै हो ॥ कल्यांन हो ॥ तुम्हारे हिरदै श्री परमेश्वर कौ ध्यान रहौ ॥ इति श्री हितोपदेश ग्रंथ संपूर्ण ॥

विषय—

हितोपदेश नामक संस्कृत ग्रंथ का गद्य-पद्य मय अनुवाद ।

विशेषज्ञातव्य—प्रस्तुत भाषा 'हितोपदेश' के रचयिता का नाम ज्ञात न हो सका । इसके साथ एक ही जिल्द में 'नारद नीति' और 'लुकमान हकीम री नसीहत' नामक दो अन्य ग्रंथ भी लिपिबद्ध हैं । ये दोनों ग्रंथ नीति विषयक हैं । ग्रंथों की लिपि समान है जिससे प्रतीत होता है कि वे एक ही लेखक द्वारा एक ही काल में लिखे गए हैं । 'हितोपदेश' का लिपिकाल 'नारद नीति' के आधार पर सं० १८६८ वि० दिया गया है । नारद नीति में लिपिकाल का उल्लेख इस प्रकार है : —

'संवत १८६८ विषे शाके १७३३ मिती चैत्रमासे कृष्ण पक्षे तिथौ ४ चंद्रवासरे लिखितम् प्रोहित जगरांम ज्ञात सनावठ वासवीं कोल्यां कोटा नगर मध्ये लखायीतं गुसांई श्री श्री श्री १०८ श्री दयालगिर जी श्रीरस्तु ॥'

इससे स्पष्ट होता है कि लिपिकार का नाम प्रोहित जगराम है जो सनाढ्य (सनावठ) ब्राह्मण थे जिन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ का लेखन गुसाईं श्री दयालगिर के कहने से किया ।

'हितोपदेश' में रचयिता ने गद्य और पद्य दोनों का यथास्थान प्रयोग किया है । इसकी भाषा—जैसा की आरंभ में उल्लिखित है 'गुवालेरी' अर्थात् ग्वालियर की है :—

'अथ हितोपदेश ग्रंथ गुवालेरी भाषा लिष्यते' । कहने की आवश्यकता नहीं है कि अनेक स्थानीय विशेषताओं को लेकर भी भाषा का यह रूप व्रजभाषा के बहुत निकट है ।

पद्य के लिये रचयिता ने दोहा, चौपाई, सोरठा, छप्पै और चंद्रायनी छंदों का प्रयोग किया है । गद्य को 'वात' कहा गया है । ग्रंथ सुंदर लिपि में लिखा गया है और अच्छी दशा में वर्तमान है ।

संख्या ४३८ पुष्टिमार्गीय सेवा विधि, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा गोपालदास जी अग्रवाल, मंदिर चैतन्य महाप्रभु, चैतन्य रोड, बनारस

आदि—

श्री गोपीजन वल्लभाय नमः ॥

श्री बल्लभाचार्य जी सों कुंभनदास तथा चतुर्भुजदास आदि और वैष्णव मिलि के पुछों जो महाराज हम कछु समझत नाहीं ॥ तब श्री आचार्य जी कृपा करिकें कहे जो तुम

पुछो सों कहु । तब सब वैष्णव की आज्ञा लेके कुंभनदास श्री प्रभु जी सों पुछों जो हमसों धर्म के स्वरूप सिद्धांत कहो जाते श्री ठाकुर जी को निर्विघ्नता सों सेइयः ॥ आचार क्रिया कहो देस काल कहो लौकिक विवाहार कहो अलौकिक व्यावाहार कहो ॥ तब श्री आचार्य जी कहें तुम भली पुछोः परि आगे काल कठिन है ॥ तुम पुछोगे सो तुम करोगे ॥ आगे कोई करेगो नाही ॥ और कोई पुछेगो नाही ॥ जाको श्री जी की कृपा होयगी सो पुछेंगो । और करेंगो ॥ कलियुग को जीव काँह ताई करेंगे । अष्ट उपाधि असत्य जीव हैं ॥ प्रात काल ते संध्या पर्यन्त चोरासी अपराध हैं ॥ तब वैष्णव पुछा जो महाप्रभु जी अष्ट उपाधि को लक्षण कहों ॥ चोरासी अपराध को लक्षण कहों ॥ तब श्री प्रभु जी चोरासी अपराध को लक्षण कहत हैं सोवत उठी कें भोमि मर्जन न करे तो अपराध हें ॥ माटी विना गडुवान जावें ॥ सूरिज्यो उदय पूर्व दांतुन न करें तो अपराध हें ॥ नग्न नाहुनो नही ॥ ४ ॥ नाहय के सीतल जल सों आचमन न करें तो दोश ॥ ५॥ चोक केरे विना ठाकुर जगावने नहीं ॥ ६ ॥ प्रसादि जल सों आचमन करनो ॥ ७ ॥ नाहय के सीतल जल सों पाउ धोवने ॥ ८ ॥ ठाकुर जल सों हाथ धोय के मंदर में जानो ॥ ९ ॥ तिलक मुद्रा करे विना श्री जी कु जगावने नही ॥१०॥ ठाकुर के काजे चंदन घसीये तामें तें लेकें तिलक न करिए ॥ ११ ॥ प्रसादि चंदन सों करियः ॥ १२ ॥ जीव के लीपने श्री ठाकुर जी कों जगावे नहीं ॥

अंत—

अब श्री आचार्य जी ममता को लक्षण कुहत हें। तामसी ममता सु करें ॥ तो मेरो मेरो करत डोले ॥ लोक में दिखावे जो सब ठाकुर को हैं । कोई सिक्षा दे तासों लढन लागें । तुम बड़े बड़े वैष्णव काठे (?) अथ राजसी ममता सो करें जो ठाकुर सेवत ग्रह में उतावल को रोजो हमारे राज रा द्वार जानो हें ॥ फलाने वैष्णव कु रखावनो हें ॥ मेरे साथ वाठी लोटें या कुमाभ के सेम रूप सों वैष्णव पति प्रणा करें ॥ आप कुहो हेउ उर सों कहे हमारो अपराध को नाइ । तुम वडे दुष्ट हो ठोरे नहीं ॥ जब राजद्वार गयो तब राजा ने यथमें न्याव कियो ॥ तव उलटो कारागृह राग्यो ॥ तब ठाकुर संभारन लाग्यो ॥ एसो अहंकार सेवा ते दुर हे ॥ अथ राजसी अहंकार सों करें ॥ ठाकुर भलीभांत्य सों सेवे ॥ पारिलौकिक लौकिक करि सेवे नहीं ॥ प्रीति न्यारी हें ॥ अपने स्वामी आगे वाठी बोलें में भजों हों ॥ भली भांति सेवा करत हुये हें ले वैष्णव काइ करने ॥ में वांहोत सामग्री अरोगवतहुः ॥ वैष्णव कों देत हुः ॥ अहंकार वोहोत वोले करे कछु नाहीं ॥ माला तिलक सवकु दिखावें सो एसो मनुष्य जुठों हें ॥ सात्विक सों सेवा करे सेवा के विखे सेवा कों अहंकार उपजावें ये वैष्णव हुं ॥ हमारे ठाकुर सेवे को धर्म है ॥ चित लागो तो बहुत काल ठाकुर सेए संगरे अहंकार तें यह अहंकार भलो है ॥ परि जीव अनुराग भरगो हे तब वैरागी को न मिलें अनुराग छुटे ॥ तातें वैष्णव प्रीत पात्र के संगरेहें तो सेवा निर्विघ्न करें ॥ अथ तृष्णा को लक्षण तामसी तृष्णा सों भरयो जीव ठाकुर आगे सेवा करत अनेक विचार करे जो जगदीश की दिनी संपति हें परि मरना अहि न होय जानत हें जो मरनो नहीं जानत हें जो पृथ्वी को

द्रव्य लाडँ पाछे वृद्धि होइगो तब ठाकुर वेठों सेवा करोगो ॥ अब तो काहू करिए ॥ अच्छा एसी ज्यो त्यो करि द्रव्य ले ड पड़ोसी को घर लें ठ राज्य पं······॥अपूर्ण छोड़ दी गई

विषय—

यह ग्रंथ ब्रजभाषा गद्य में लिखा गया है। इसमें महाप्रभु वल्लभाचार्यजी कुंभनदास आदि वैष्णवों को 'धर्म का स्वरूप', 'आचार क्रिया', देशकाल, लौकिक तथा अलौकिक व्यवहार का उपदेश दे रहे हैं।

विशेषज्ञातव्य—यह गद्य का ग्रंथ एक बड़ी पोथी में अन्य दूसरी पुस्तकों के साथ लिखा हुआ है। साथ के अन्य ग्रंथ संस्कृत के और वल्लभाचार्य के द्वारा रचे गए हैं। पुस्तक अच्छी दशा में है, क्योंकि वह अन्य पुस्तकों के मध्य में है। पुस्तक अपूर्ण है। चार पत्र बीच में छूटे हुए हैं। ग्रंथ ब्रजभाषा गद्य का प्राचीन तथा उत्तम उदाहरण है। रचना-काल नहीं दिया है।

चतुर्थ परिशिष्ट

(क) परिशिष्ट १ और २ में आये उन रचयिताओं की नामावली जो प्रस्तुत खोज में नये मिले हैं।

(ख) पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं।

(ग) संग्रह ग्रंथों (पद-संग्रहों और कवित्त-संग्रहों) में आये उन कवियों की नामावली जो पहले अज्ञात थे तथा जिनका उल्लेख पिछले खोज विवरणों, मिश्रबंधु विनोद और शिवसिंह सरोज में नहीं मिलता।

चतुर्थ परिशिष्ट (क)

प्रस्तुत खोज में मिले नवीन रचयिताओं की नामावली

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
१	अजैपाल	१		१	
२	अभयसोम	४	१७ वीं शताब्दी	१	
३	अमृतलाल	५	१९ वीं शताब्दी	१	
४	अश्वपति ऋषीसुर	६		१	
५	आत्माराम	७	१८ वीं शताब्दी	१	
६	आत्माराम	८		१	
७	आनंद कवि	९	१८ वीं शताब्दी	१	
८	आनंद घन मुनि	११		१	
९	इंद्रदत्त	१३		१	
१०	ईसवी खाँ (नवाब)	१४	१८ वीं शताब्दी	१	
११	उदय	१५		१	
१२	उदैराज	१६		१	
१३	उदैराज	१७	१७ वीं शताब्दी	१	
१४	उमराव कायस्थ	१८		१	
१५	कणेरी पाव	१९		१	
१६	कमकसोम	२०	१६ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
१७	कृतारा्म द्विज करता	२२	१८ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
१८	जन किशोर	२६	१८ वीं शताब्दी	१	
१९	किसन या जनकिसन	२७		१	
२०	किसनिया	२८		१	
२१	कृष्ण प्रसाद भट्ट	३२		१	
२२	केवलराम वृंदावन जीवन	३३		१	
२३	केशव	३४	१७ वीं शताब्दी	१	
२४	केशवदास	३५		१	
२५	केशवदास	३६		१	
२६	कोविद	३७		१	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
२७	खड़िया खेमा	३९		१	
२८	खड़िया वखता	४०		१	
२९	खींवड़ा	४१		१	
३०	गंगादत्त	४३		१	
३१	गंगाराम (कायस्थ)	४४	१७ वीं शताब्दी	१	
३२	गंगाराम तिवारी	४५		१	
३३	गजानंद	४६		१	
३४	गरीबदास	४८		१	
३५	गुरुदत्त	५०		१	
३६	गुरुप्रसाद नारायण	५१	१९ वीं शताब्दी	१	
३७	गोपाल या (जनगोपाल)	५६	१७ वीं शताब्दी	१	
३८	गोपालदास चाणक	५७	×	६	
३९	गोपीचंद	५८	×	१	
४०	घनश्याम	६२	१९वीं शताब्दी	१	
४१	घोड़ा चोली	६३	×	१	
४२	चंडीदान	६४		१	
४३	चिंतामणि	६७		१	
४४	चिंतामनि	६६	१८वीं शताब्दी	१	
४५	चिरपट	६८		१	
४६	चेतन	६९	१८वीं शताब्दी	३	
४७	चौणकनाथ	७०		१	
४८	चौरंगीनाथ	७१		१	
४९	जन छबील	७२		१	
५०	जगराम	७५		१	
५१	जन प्रसाद	७६		१	
५२	जयसिंह दास	७८	१८वीं शताब्दी	१	
५३	जलंधरी पाव	७९		१	
५४	जानकी प्रसाद	८०	१९वीं शताब्दी	१	
५५	जीवन धन	८२		१	
५६	जुगतानंद	८३	१८वीं शताब्दी	२	
५७	जेठुआ	८४		१	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
५८	जेतसिंह (महापात्र)	८५	१७वीं शताब्दी	३	"मुअज्जम शाह के कवित्त" की २ प्रतियाँ मिली हैं।
५९	ज्ञानदास	८६	१९वीं शताब्दी	१	
६०	टीपू सुलतान	८७	१८वीं शताब्दी	१	
६१	टोडरानंद	८८		१	
६२	ठाकुर कवि	८९		१	
६३	ठाकुरदास "ठाकुर"	९०		२	
६४	तेज	९२		१	
६५	दत्तात्रे	९४		१	
६६	दयादेव	९५		१	
६७	दयाल नेमि	९७		१	
६८	दयालाल	९८		१	
६९	दलपतिराम	९९		१	
७०	दिनेश पाठक	१०३	१७वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
७१	दिलेराम	१०४		१	
७२	दुखहरण	१०५	१७वीं शताब्दी	३	
७३	दुर्गा देवी	१०६		१	
७४	देवकीनंदन साहब	१०७	१९ वीं शताब्दी	३	२ प्रतियाँ शब्द की
७५	देवदत्त	१०८		१	
७६	देवजनाथ	१०९		१	
७७	देवाराम बाबा	११०		१	
७८	देवीदास व्यास	१११	१७ वीं शताब्दी	१	
७९	देवदास	११२		१	
८०	द्विज प्रयोग	११३		१	
८१	धुंधली पाव	११५		१	
८२	नरसी मेहता	११६		१	
८३	नवलदास साहि	१२१		१	
८४	नवलराय	१२३		१	
८५	नागदा	१२४		१	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
८६	नागा अरजन	१२५		२	
८७	नायक	१२८		२	
८८	नैनकवि	१३०		२	
८९	परमदास	१३२	१६ वीं शताब्दी	१	
९०	परमानंद	१३३		१	
९१	पारवती	१३४		१	
९२	पृथ्वीनाथ	१३५		१	
९३	सांदू पृथ्वीराज	१३६		१	
९४	प्रताप कुंवर बाई	१३७		१	
९५	प्रभानाथ	१३८	१८ वीं शताब्दी	१	
९६	प्रह्लाददास पाठक (जन)	१३९		१	
९७	प्रेमदास	१४३	१७ वीं शताब्दी	१	
९८	प्रेमरंग	१४४		१	
९९	प्रेमा	१४५		१	
१००	शाह फकीर	१४६		१	
१०१	फकीर सिंह	१४७		१	
१०२	फरीद जी	१४८		१	
१०३	बद्रीलाल गुसाईं	१४९		१	
१०४	बलदेव	१५०	१८ वीं शताब्दी	२	
१०५	बलवीर	१५१		१	
१०६	बलिहारी "बलि"	१५३		१	
१०७	बाँकीदास आसिया	१५४		२	
१०८	बाघरा	१५५		१	
१०९	बालकृष्ण	१५७		१	
११०	बालगोदाई	१५९		१	
१११	बावरी साहबा	१५९		१	
११२	बीठू बांकीदास	१६०	१५ वीं शताब्दी	१	
११३	बीरू साहब	१६१		१	
११४	'शाह' बुरहान	१६२		२	
११५	'शाह' बुरहान उद्दीन जाना	१६३		१	
११६	बुलाकीनाथ बाबा	१६४	१८ वीं शताब्दी	३	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
११७	भगवानदास	१६६		१	
११८	भगवानदास	१६७		१	
११९	भगवानदास	१६८	१९ वीं शताब्दी	१	
१२०	भगवतीदास	१६९		१	
१२१	भगौतीदास	१७०	१७ वीं शताब्दी	१	
१२२	भजनदास (हित)	१७०		१	
१२३	भरथरी	१७२		१	
१२४	भुवनदास	१७५	१९ वीं शताब्दी	२	
१२५	भूपराम	१७७		१	
१२६	भृगुपति	१७८		१	
१२७	मगनिया	१८१		१	
१२८	मन संतोष	१८३		१	
१२९	मनिवेद, वेदमनि, बेदविद	१८४		१	
१३०	मलूक	१८७		१	
१३१	काजी महमूद बहरी	१८९		१	
१३२	महादेव	१९०		१	
१३३	माखन	१९१		१	
१३४	माखनदास	१९२		१	
१३५	माधौदास द्वितीय	१९७		१	
१३६	मीड़की पान	२००		१	
१३७	शाह मीरान जी	२०१		१	
१३८	बारैठ मेहराम जी	२०२		१	
१३९	मोहनलाल	२०३		१	
१४०	मोहनसुंदर	२०४		१	
१४१	यारी साहब	२०५		३	
१४२	युगलानन्य शरण	२०६		२३	
१४३	रघुनाथ	२०७		१	
१४४	रघुबर	२०९	१९ वीं शताब्दी	१	
१४५	रतनरंग	२१२		१	
१४६	रमइराम या रमैयाराम	११४		१	
१४७	रमनदास	२१५		१	
१४८	रसखान	२१६	१९ वीं शताब्दी	२	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
१४९	राघोदास उपाध्याय	२२१	१८ वीं शताब्दी	१	
१५०	रामचंद्र	२२३		१	
१५१	रामचंद्र	२२४		१	
१५२	रामभरोसादास बाबा	२२७	१८ वीं शताब्दी	२	
१५३	रामरंग	२२८		१	
१५४	रामसिंह (महाराजा)	२३०		२	
१५५	रासमंजरी	२३२		१	
१५६	लक्ष्मणदास (रुलिंग चीफ बहादुर)	२३५	१९ वीं शताब्दी	१	
१५७	लखनसेनी	२३६		२	
१५८	लाल या नेवजीलाल दीक्षित	२४१	१६ वीं शताब्दी	१	
१५९	लालजी शाह	२४४	१८ वीं शताब्दी	१	
१६०	लाल विनोदी	२४६		१	
१६१	लोकमनिदास	२४८		१	
१६२	वंशमनि या वंशराज	२४९		१	
१६३	वजदी	२५०		१	
१६४	बटुनाथ, या बटुकनाथ	२५१		२	
१६५	बिरंच गोसाईं जन बिरंच या बिरंचराम	२५२		१	
१६६	विश्वेश्वरदास	२५३		१	
१६७	विष्णुदास	२५४		१	
१६८	विसराव या विसरावदास	२५५		२	
१६९	शिवदयाल	२६२		१	
१७०	शिवराम	२६४	१८ वीं शताब्दी	१	
१७१	शिवबक्स राय	२६५	१९ वीं शताब्दी	१	
१७२	शेख महमूद चिश्ती	२६७		१	
१७३	श्रीकृष्ण चर्चरीक	२६८	१८ वीं शताब्दी	१	
१७४	श्रीकृष्णदास	२६९		१	
१७५	श्रीधर मुरलीधर	२७०	१८ वीं शताब्दी	१	
१७६	श्रीलाल रघुवंश वल्लभ	२७२	१९ वीं शताब्दी	१	
१७७	श्रीलाल शाह	२७३		१	ये और लालजी शाह दोनों एक ही हैं।

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और दो की क्रम संख्या	रचना का शताब्दी क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
१७८	सदालाल	२७५		१	
१७९	साँई फूला	२७६		१	
१८०	साधु शरण	२८२		१	
१८१	सिद्ध गरीब	२८३		१	
१८२	सिद्ध मालीपाव	२८४		१	
१८३	सिद्ध हदताली	२८५		१	
१८४	सीतलदास	२८६		१	
१८५	सुकलहंस	२८९		१	
१८६	सुखदान	२९०		१	
१८७	सुखलाल मिश्र	२९२		१	
१८८	सूरदास	२९५		१	
१८९	सैंगी	२९६		१	
१९०	सेवाराम	३००	१८ वीं शताब्दी	१	
१९१	मैना	३०२		१	
१९२	सैयद अमीन	३०३	१९ वीं शताब्दी	१	
१९३	सोहणी	३०४		१	
१९४	स्यामकवि	३०५		१	
१९५	स्यामदास	३०६		१	
१९६	हंसराज (जैन)	३०८		१	
१९७	हंसराज	३०९		१	
१९८	हजरत हयानबेग	३१०		१	
१९९	हणवंत	३११		१	
२००	हरिकवि	३१३		१	
२०१	हरिकृष्ण आभा	३१४	१९ वीं शताब्दी	२	
२०२	हरिचरणदास, सुरति शुभचिंतक चोकरे—	३१६		१	
२०३	हरिनाथ (माहापात्र)	३१९		१	
२०४	हरिनाम	३२०		३	
२०५	हरिराय पुरी	३२१		१	
२०६	हालीपाव	३२३		१	

चतुर्थ परिशिष्ट (ख)

पिछले खोज विवरणों में आये उन रचयिताओं की नामावली जिनकी प्रस्तुत खोज में नई रचनाएँ मिली हैं।

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
१	अनंतदास	२	१६ वीं शताब्दी	१	एक ही ह० ले० में ३ ग्रन्थ हैं।
२	अनाथ	३	१७ वीं शताब्दी	२	
३	आनंदघन (घनानंद)	१०	१८ वीं शताब्दी	१	
४	आलम और शेख	१२	१७ वीं शताब्दी	१	
५	कबीर	२१	१५ वीं शताब्दी	१६	
६	कल्यान पुजारी	२३	१७ वीं शताब्दी	१	
७	करणीदान या कवि या करणीदान	२४	१८ वीं शताब्दी	२	
८	काशीराम	२५	×	१	
९	कुलपति मिश्र	२९	१७ वीं शताब्दी	२	
१०	कुशल सिंह	३०		१	
११	कृष्णदास हित	३१		२	
१२	कृपाराम	३८		१	
१३	खेम जी	४२		१	
१४	गणेश	४७	१९ वीं शताब्दी	४	
१५	गिरधरदास (गोपालचंद्र)	४९	१९ वीं शताब्दी	२	
१६	गुलाल साहब	५२	१७ वीं शताब्दी	२	
१७	गुलाब सिंह	५३	१९ वीं शताब्दी	१	अध्यात्म रामायण का र०का० सन् १८२५
१८	गुविंद	५४		२	
१९	गोकुलनाथ	५५		१	४ प्रतियाँ

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
२०	गोरखनाथ	५९	१३ वीं शताब्दी	१	
२१	गोविंद स्वामी या गोविंद प्रभु	६०	१७ वीं शताब्दी	३	
२२	गोविंद सुकवि	६१		१	
२३	चंद्रदास	६५		१	
२४	जगजीवनदास	७३	१८ वीं शताब्दी	१	
२५	जगन्नाथ (जन)	७४		१	
२६	जयराम	७७		१	
२७	जिनदास	८१		१	
२८	तुरसीदास (गुसाईं)	९१		१	
२९	त्रिलोकसिंह	९३		१	
३०	दयाल कवि	९६		१	
३१	दलेल सिंह	१००	१७ वीं शताब्दी	३	राम रसार्णव ३ प्रतियाँ र० सन् १६९३, शिव-सागर ३ ,, र० सन् १७०० ई० मुक्ति रत्नाकर ३ ,, र० सन् १६९८ ई०
३२	दशरथ	१०१		२	नवीनाख्य की ३ प्रतियाँ मिली
३३	दामोदरदास (हित)	१०२	१७ वीं शताब्दी	५	नैम बत्तीसी २ प्रतियाँ र० सन् १६३० ई०
३४	धरमीदास	११४	१७ वीं शताब्दी	६	
३५	ध्यानदास	११६		१	एक हस्तलेख में ३ ग्रन्थ हैं।
३६	ध्रुवदास	११७	१७ वीं शताब्दी	२०	वृंदा शतक, र० सं० १६८६ वि० सभा मंडली श्रृंगार र० सं १६८१ वि०
३७	नंददास	११८	१७ वीं शताब्दी	३	
३८	नरहरि	१२०	१६ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
३९	नवनिधिदास (बाबा)	१२१	१९ वीं शताब्दी	१	मंगल गीता र० सन् १८४८ ई०
४०	नाथ कवि	१२६	१९ वीं शताब्दी	१	
४१	नानकदास	१२७	१८ वीं शताब्दी	२	
४२	नित्यानंद (नंद)	१२९		१	
४३	पदुमन (प्रद्युम्न)	१३१	१७ वीं शताब्दी	१	
४४	प्राणनाथ (त्रिवेदी)	१४०	१७ वीं शताब्दी	१	जैमिनी पुराण र० सन् १७००ई०
४५	प्रियादास	१४१	१८ वीं शताब्दी	३	
४६	प्रियादास	१४२	१६ वीं शताब्दी	१	
४७	बलिराम 'बलि'	१५२	१६ वीं शताब्दी	१	
४८	बाजीद	१५६		१	
४९	बुल्लासाहब	१६५		१	
५०	भागवतदास	१७३	१९ वीं शताब्दी	१०	
५१	भीखा साहब	१७४	१८ वीं शताब्दी	५	
५२	जन भुवाल	१७५	१७ वीं शताब्दी	१	
५३	मंडन	१७६	१७ वीं शताब्दी	१	
५४	हित मकरंद	१८०	१८ वीं शताब्दी	१	
५५	मतिराम	१८२		१	
५६	मनिराम	१८५		१	२ प्रतियाँ
५७	मनोहरदास	१८६	१७ वीं शताब्दी	१	
५८	मलूकदास	१८८	१७ वीं शताब्दी	२	
५९	माणक	१९३		१	
६०	माधौदास	१९४		१	
६१	माधौदास	१९५		१	
६२	माधौदास	१९६		१	
६३	माधौ सिंह	१९८	१८ वीं शताब्दी	१	मनोज लतिका र० सन् १८५६ ई०
६४	मानमुनि	१९९	१७ वीं शताब्दी	१	
६५	महाराज रघुराज सिंह	२०८	१९ वीं शताब्दी	१	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
६६	रघुवर सखा	२१०		१	२ प्रतियाँ
६७	रज्जब जी	२११	१७ वीं शताब्दी	१	
६८	रेखकवि	२१३	१८ वीं शताब्दी	१	
६९	रसानंद	२१७	१७ वीं शताब्दी	१	
७०	रसिकदास	२१८	१७ वीं शताब्दी	२	
७१	रसिकराइ	२१९		१	
७२	रसिक बिहारी लाल	२२०		१	
७३	राम कृष्ण	२२२		१	
७४	राम चरणदास	२२५	१८ वीं शताब्दी	१	
७५	रामदास	२२६		१	
७६	रामराइ	२२९	१७ वीं शताब्दी	१	गुणसागर र० सन् १६२१ ई० में
७७	रामानंद स्वामी	२३१	१५ वीं शताब्दी	१	
७८	रूपसाहि	२३३	१८ वीं शताब्दी	१	
७९	रैदास	२३४	१५ वीं शताब्दी	१	
८०	लल्लू जी लाल	२३७	१९ वीं शताब्दी	१	
८१	कविलाल	२३८		१	
८२	लालदास	२३९		१	
८३	लाल	२४०	१७ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
८४	लालचराम या लालच (हलवाई)	२४२	१७ वीं शताब्दी	१	२ प्रतियाँ
८५	लालकवि	२४३	१९ वीं शताब्दी	१	
८६	लालमनि	२४५		१	
८७	लालस्वामी (हित)	२४७		१	
८८	वृंद कवि	२५६	१७ वीं शताब्दी	४	
८९	वृंदावनदास	२५७	१८ वीं शताब्दी	११	
९०	वैष्णवदास (रसजानि)	२५८	१८ वीं शताब्दी	१	
९१	व्यास जी	२५९	१६ वीं शताब्दी	४	
९२	ब्रजराज पंडित	२६०		१	२ प्रतियाँ
९३	ब्रजवासीदास	२६१	१८ वीं शताब्दी	१	ब्रजविलास की र० सन् १७७०ई०
९४	शिवनारायण स्वामी	२६३	१८ वीं शताब्दी	११	

क्रम संख्या	रचयिता	परिशिष्ट १ और २ की क्रम संख्या	रचना का शताब्दि क्रम	ग्रंथ संख्या	विशेष
९५	शिवाराम स्वामी	२६६	१८ वीं शताब्दी	१	
९६	श्री भट्ट जी	२७१	१६ वीं शताब्दी	१	
९७	संतदास	२७४	१८ वीं शताब्दी	१	
९८	सरस्वती (कवींद्राचार्य)	२७७	१७ वीं शताब्दी	१	
९९	सर्व सुखदास	२७८		२	
१००	सहजराम	२७९		१	
१०१	सहदेव	२८०		१	
१०२	साँईमूला	२८१		१	
१०३	सुंदरदास	२८७	१७ वीं शताब्दी	३	
१०४	सुन्दरलाल या सुन्दरसखि	२८८	१९ वीं शताब्दी	३	
१०५	सुखदेव मिश्र	२९१	१७ वीं शताब्दी	१	
१०६	सूरति मिश्र	२९३	१८ वीं शताब्दी	२	
१०७	सूरदास	२९४	१६ वीं शताब्दी	१०	
१०८	सेनापति	२९७	१७ वीं शताब्दी	१	
१०९	सेवक या सेवकराम	२९८	१६ वीं शताब्दी	२	
११०	सेवादास	२९९	१७ वीं शताब्दी	१७	
१११	सेवासिंह	३०१		१	
११२	स्वरूपदास	३०७	१९ वीं शताब्दी	१	
११३	हरिजू सुकवि	३१२	१८ वीं शताब्दी	१	
११४	हरिचरण दास	३१५	१८ वीं शताब्दी	१	
११५	हरिदासस्वामी	३१७	१६ वीं शताब्दी	१	
११६	हरिदास निरंजनी	३१८	१६ वीं शताब्दी	१	
११७	हरिराय	३२२	१६ वीं शताब्दी	१	
११८	हिरदैराम	३२४		१	

चतुर्थ परिशिष्ट (ग)

काव्य संग्रहों में आये नवीन कवियों की सूची।

क्रम संख्या	कवियों के नाम
१	अर्जंगी जी
२	अलि किशोरी
३	अलि भगवान
४	आली किशोर
५	उग्र
६	उत्तम
७	उदैराम (महाराज गजसिंह, संभवतः जोधपुर)
८	कंठमनि
९	कमलानंद
१०	करमाबाई
११	कविंद
१२	कवि बखत
१३	कविनाथ
१४	कवि सुंदर
१५	कविनंद
१६	कविनैन
१७	काजी महमद जी
१८	कुसनानंद (? कृतानंद जी)
१९	कृपानिवास
२०	कृपा सखी
२१	खुशिहाल
२२	गोपी
२३	गोपीनाथ हित
२४	चंद गिरधारी
२५	चत्रदास
२६	चरण सहचरि या चरण अलि
२७	छीतम जी
२८	जन केवलराम
२९	जन कुबा
३०	जन कल्याण
३१	जन जंगी
३२	जन गोविंद
३३	जन दुख हरण
३४	जन सोम
३५	जन हरीपाल
३६	जय कृष्णदासी
३७	जीवन गिरधर
३८	जै श्री हित
३९	ज्ञानदेव
४०	ज्ञानिराम
४१	तापा
४२	तारा
४३	तिलोचन जी
४४	तुलाराम
४५	दरसणदास जी
४६	दयासखी
४७	दामोदर हित
४८	दास बसंत
४९	दास बीसंवर
५०	धरमचंद जी
५१	धरमसी जी
५२	धर्मी जी
५३	नरहरिदासी
५४	नारीदास
५५	नागरिया

क्रम संख्या	कवियों के नाम
५६	नागरीदास हरिदासी
५७	निवाज छत्रसाल महाराज के आश्रित
५८	नोल
५९	परगेश जी
६०	प्रमाद जी
६१	फरस जी
६२	शाह फकीर, यारी साहब के शिष्य
६३	बाजींद जी
६४	बालानंद
६५	बावरी साहब
६६	भाव
६७	भीमा
६८	मकरंददास केवट
६९	मछिंद्रनाथ जी
७०	मदन
७१	माथुर पियारे
७२	माधुरी
७३	मोतीराम महाराज, छत्रसाल के पुत्र भाऊसिंह के आश्रित
७४	यारी साहब
७५	रसिक मुरारी स्वामी
७६	राजमती
७७	मौनी रामदास जी
७८	रामावति
७९	लोहन

क्रम संख्या	कवियों के नाम
८०	वंशी अलि, प्रद्युम्न गुसाईं के लड़के, इनके उपनाम वंशी, हित वंशी, अलि वंशी, वंशिका आदि हैं।
८१	विजय सखी
८२	विट्ठल गिरधर
८३	वीरु साहब
८४	वेणी जी
८५	विश्वनाथ, नवाब खानखाना, जहाँगीर काल
८६	सखी सुख
८७	साँवरि सखि
८८	सीया सखि
८९	सीहा जी
९०	सुखदेव दास
९१	सुघरराय
९२	सुखानंद जी
९३	सुधाकर
९४	सूरश्याम मदनमोहन
९५	सेख वहावदी
९६	सोनादास
९७	स्यामदास
९८	हरखचंद (मुनि)
९९	हरिदासी
१००	हित अनूप
१०१	हित अली

पंचम परिशिष्ट

ग्रंथकार और उनके आश्रयदाताओं की नामावली

पंचम परिशिष्ट

ग्रंथकार और उनके आश्रयदाताओं की सूची।

क्रम संख्या	खोजविवरण की संख्या	ग्रंथकार का नाम	आश्रयदाता का नाम	विशेष
१	७	आत्माराम	महाराज सवाई जयसिंह जयपुर	
२	१२	आजम	मुअज्जमशाह	
३	१४	ईसवी खाँ	राजा छत्रसिंह नरवर (ग्वालियर)	
४	१५	उदैराज	राजा उदयसिंह चहुवान सोनगिरि	
५	२४	करणीदान या कविया करणीदान	महाराज अभयसिंह जोधपुर	
६	२९	कुलपति मिश्र	महाराज रामसिंह जयपुर	
७	४३	गंगादत्त	रानीहृदै श्री सिरमौर (पंजाब)	
८	४५	गंगाराम तिवारी	राजा डालचंद	स्थान का पता नहीं
९	४७	गणेश कवि	महाराज ईश्वरी प्रसादसिंह काशी	
१०	५७	गोपालदास चारण	महाराज रामसिंह रतनपुरा (बिलासपुर मध्यप्रांत)	
११	७८	जयसिंह दास	देवकी नंदन (सारंगगढ़ कोट के राजा उद्योतसिंह) के मंत्री	
१२	८५	जैतसिंह महापात्र	मोअज्जम शाह	
१३	९३	दयाल कवि	महाराज सुजानसिंह (संभवतः भरतपुर)	
१४	१०३	दिनेशपाठक	प्रबलसिंह (सोनगंगा के बीच बसे भोजपुर नगर के राजा अमरसाहि के अनुज)	
१५	१११	देवीदास व्यास	अनूपसिंह (महाराज करणेश के पुत्र)	संभवतः बीकानेर के
१६	१२०	नरहरि महापात्र	अकबर बादशाह	

क्रम संख्या	खोजविवरण की संख्या	ग्रंथकार का नाम	आश्रयदाता का नाम	विशेष
१७	१३१	पदुमन (प्रद्युम्न)	दलेलसिंह (वादपनगर के राजा)	खोज विवरण संख्या १०५ पर आये दलेलसिंह भी यही हैं
१८	१३६	साँदू पृथ्वीराज	महाराज अभयसिंह जोधपुर	
१९	१५०	बलदेव	अजमत खाँ (आजमगढ़ के राजा)	
२०	१५४	बाँकीदास आसिया	महाराज मानसिंह (जोधपुर)	
२१	१७९	मंडन	मंगदसिंह (जैतपुर बुंदेलखंड के) राजा	
२२	१८२	मतिराम	स्वरूपसिंह पंचम (ओड़छा बुंदेलखंड)	
२३	१८५	मनिराम	शाहजहाँ बादशाह	
२४	१९१	माखन	राजा राजसिंह (रतनपुरा विलासपुर मध्यप्रांत) के राजा	
२५	२१७	रसानंद	महाराज बलवंत सिंह भरतपुर	
२६	२३३	रूपसाहि	महाराज हिंदुपति सिंह (बुंदेलखंड)	
२७	२४१	लाल या नेवजी लाल दीक्षित	विक्रमसाहि	स्थान का पता नहीं
२८	२४९	वंशमनि या वंशराज	रघुनाथ श्रीवास्तव कायस्थ वीरभानपुर विहार	
२९	२५६	वृंदकवि	साँवतसिंह (नागरीदास), कृष्णगढ़ नरेश	ग्रंथकार महाराज साँवतसिंह के गुरु थे
३०	२७०	श्रीधरमुरलीधर	नवाब मुसल्लेह खान बहादुर	
३१	२७६	सरदार कवि	ईश्वरीप्रसाद सिंह, काशी नरेश	
३२	२८१	साँई झूला	महाराज कल्याण सिंह, ईडर नरेश	
३३	२९३	सूरतिमिश्र	महाराज जसवंत सिंह, जोधपुर	
३४	२९८	सेवक या सेवक राम	रामरतन और हरिशंकर (ऐनापुर नरेश के वंशज) (सं० १६१३ के लगभग)	
३५	३१२	हरिजू मिश्र	रामदत्त (संभवतः जौनपुर निवासी)	

षष्ठ परिशिष्ट

अन्वेषकों द्वारा सभा के लिये प्राप्त किए गए हस्तलिखित ग्रंथों की सूची

षष्ठ परिशिष्ट

सभा के लिए प्राप्त किए गए हस्तलिखित ग्रंथों की सूची

श्री दौलतराम जुयाल द्वारा प्राप्त ग्रंथ

क्रम संख्या	ग्रंथ	ग्रंथकार
१	भक्ति जयमाल	शिवाराम बाबा
२	रामायण (अयो०, लंका, उत्तरकांड)	गो० तुलसीदास
३	रामायण	गो० तुलसीदास
४	रामायण (बाल०, उत्तरकांड)	,, ,,
५	रामायण (अरण्य, किष्किंधा, सुंदरकांड)	,, ,,
६	रामायण बालकांड	,, ,,
७	विनय पत्रिका	,, ,,
८	दोहावली	,, ,,
९	सुदामा चरित्र	हलधर
१०	अलंकार ग्रंथ	हलधर
११	रामचंद्रिका	केशवदास
१२	चाणक्य राजनीति (सं०)	चाणक्य
१३	रसचंद्रिका (बिहारी सतसई की टीका)	नवाब ईसवी खाँ
१४	शब्दावली	बिरंच गुसांई
१५	बैताल पचीसी	×
१६	राजनीति	लल्लूजी लाल (लाल कवि)
१७	रामजन्मकथा और दानलीला	सूरजदास
१८	छप्पैरामायण	गो० तुलसीदास
१९	सुदामाचरित्र	हलधर
२०	अर्जुनगीता	भुआल (जनभुआल)
२१	मंत्री कथा	×
२२	बीजक या बारह भगत की कथा	×
२३	संत उपदेश	शिवनारायण स्वामी
२४	संताक्षरी	,,

क्रम संख्या	ग्रंथ	ग्रंथकार
२५	अर्जुनगीता या रामरतन गीता	कुशलसिंह
२६	चतुर्वेद षट्शास्त्रमत	बलीराम 'बली'
२७	करुणाभरण नाटक	लच्छीराम
२८	सुंदर शृंगार	सुंदरदास
२९	रूपदीप नाम पिंगल	×
३०	कवित्त	रसखान
३१	कवित्त	काशीराम
३२	फुटकर पद और कवित्त	विभिन्न कवि
३३	दोहा सतसती	बिहारी लाल
३४	रसिक प्रिया	केशवदास
३५	आध्यात्म प्रकाश	सुखदेव
३६	ज्ञानमुद्रा	सुंदरदास
३७	निरभैज्ञान	कबीर
३८	विचारमाल	देवमुरारी 'अनाथ'
३९	अखरवती	कबीर
४०	सुखसागर	×
४१	इसतक	भीखासाहब
४२	भक्तिहेतु	दरिया साहब
४३	बोजहन नामा	बोजहनदास
४४	झूलना	पलटू, कबीर आदि
४५	महाभारत करनार्जुनी	ठाकुर
४६	हरिचरित्र (विष्णुपुराण)	×
४७	भाषा कोक	×
४८	एकादशी माहात्म्य	×
४९	सुखसागर	कबीर
५०	कबीर संकराचार्य गोष्ठी	कबीर
५१	संतोष बोध	कबीर
५२	पद	शिवनारायण
५३	पद, भजन (हंसलोक)	हरिनाम
५४	ग्रंथ आतमबोध	हरिनाम
५५	गोसइआ के बयान की कीताब	हरिनाम

क्रम संख्या	ग्रंथ	ग्रंथकार
५६	ब्रह्म हरिनाम (दत्तात्रै अभिनासी शब्द)	×
५७	जैमुनिपुराण	×
५८	बोधलीला	धरमीदास
५९	ककहरा	धरनीदास
६०	ग्रंथ जगसमाधि	×
६१	ज्ञानप्रगास	कबीर
६२	ब्रह्मजिज्ञासा	संकराचार्य (?)
६३	रामायण	बुलाकीनाथ
६४	ज्ञानगीता सार	बुलाकीनाथ
६५	भक्तमाहात्म्य	गिरधारी
६६	सुखदेव चरित्र	×
६७	पदावली	विभिन्न कवि
६८	ज्ञानगीता	ठाकुरदास
६९	रामायण	बुलाकीनाथ
७०	रतनसागर या ज्योतिष रत्नमाला	तुलसीदास
७१	रामसतसई	तुलसीदास
७२	पुराने समय की पाठ्यपुस्तक	×
७३	पदावली	विभिन्न भक्त कवि
७४	जैनधर्म विषयक एक ग्रंथ	विभिन्न लेखक
७५	गीतामृतधारा	रामदास
७६	ग्रंथ अखरवती	कबीर
७७	पदावली	ठाकुरदास
७८	गदरबोध	×
७९	ग्रंथभवतारन	×
८०	शब्दावली	कबीर
८१	महाभारत कथा आरजुनी	ठाकुर कवि
८२	पवन विजय स्वरोदय	मोहनदास
८३	पारसीमत माहरम का गुरा	×
८४	कार्तवीर्य स्तोत्र (संस्कृत)	×
८५	दानलीला	×
८६	भक्तमाल	नाभादास (संभवतः)

क्रम संख्या	ग्रंथ	ग्रंथकार
८७	मासकेतपुराण	×
८८	सुदामाचरित्र	×
८९	दाँवरी बाँधनलीला	×
९०	प्रबोधचंद्रोदय नाटक	सूरत कवि
९१	गोविंदलीलामृत (बंगला)	यदुनाथ दास
९२	रामायण (बाल०, अयोध्या, किष्किंधा)	गो० तुलसीदास

श्रीमहेशचंद्र गर्ग द्वारा प्राप्त ग्रंथ ×

१	रामचंद्रिका	केशवदास
२	भक्तमाल	नाभादास
३	भक्तचरितावली	×
४	कृष्णकीर्तन	×
५	फुटकर कवित्त	गंगाराम
६	बारहमासा	गंगाराम
७	रागरहस्य	रामचरण
८	अनुरागसागर	कबीर
९	फुटकर कवित्त	गंगाराम
१०	शिवसागर	महाराज दलेलसिंह
११	स्वरोदय	चरणदासकृत

श्रीउदयशंकर त्रिवेदी द्वारा प्राप्त ग्रंथ

१	दयाविलास
२	दानलीला
३	नायिकाभेद
४	वैद्यरत्न
५	फारसी व्याकरण
६	नायिकाभेद
७	रसरत्न
८	ज्ञानचंद्रिका

ग्रंथकारों की नामानुक्रमणिका

ग्रंथकारों के आगे लिखे हुए अंक खोज विवरण के परिशिष्ट १ और २ में दी हुई क्रम संख्याएँ हैं।

ग्रंथों की नामानुक्रमणिका (अ)

ग्रंथों के आगे दिए हुए अंक परिशिष्ट १ और २ में आई क्रमसंख्याएँ हैं।

ग्रंथों की नामानुक्रमणिका (आ)

ग्रंथों के आगे दिए अंक परिशिष्ट ३ में आई क्रम संख्याएँ हैं।